उपाध्याय
श्री कन्हैयालालजी म.
'कमल'
99 वीं जन्म जयंती

जैन आगमों में मध्यलोक

(भूगोल एवं खगोल का सचित्र एवं सरल वर्णन हिन्दी में)

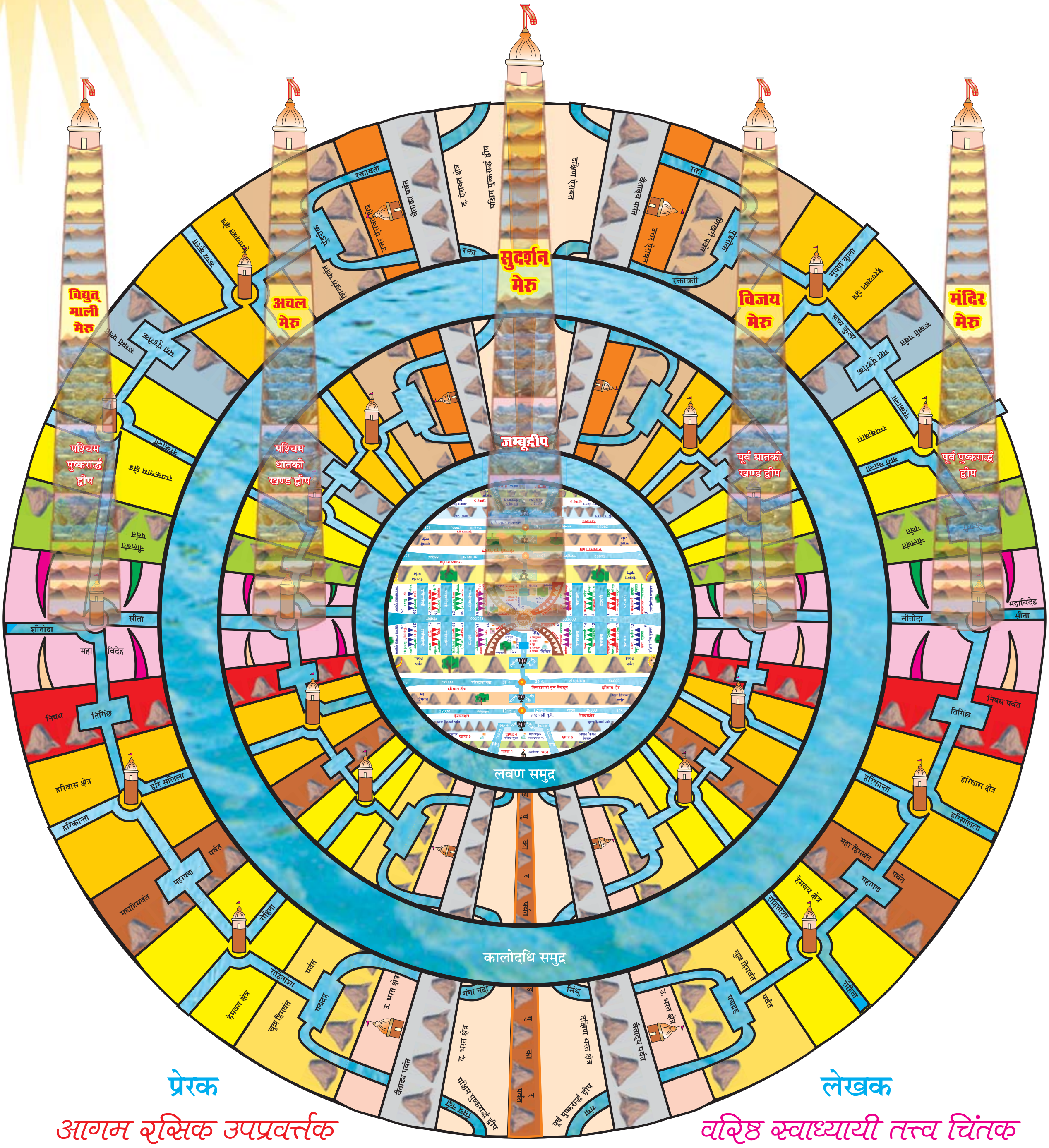

प्रेरक
आगम रसिक उपप्रवर्त्तक
श्री विनयमुनिजी म. 'वागीश'

लेखक
वरिष्ठ स्वाध्यायी तत्त्व चिंतक
श्री विमल कुमार नवलखा

प्रकाशक
जैन मुनि कन्हैयालाल 'कमल' स्मृति ट्रस्ट, आबू पर्वत (राज.)-३०७५०१

// अर्हम् //

उपाध्याय श्री कन्हैयालालजी म. 'कमल' की ९९वीं जन्म जयंती के शुभावसर पर प्रकाशित

जैन आगमों में मध्यलोक

(भूगोल एवं खगोल का सचित्र एवं सरल वर्णन हिन्दी में)

प्रेरक

उपाध्याय श्री कन्हैयालालजी म. 'कमल' के अन्तेवासी

सुशिष्य परम पुरुषार्थी आगम रसिक उपप्रवर्त्तक श्री विनयमुनिजी म. 'वागीश'

लेखक एवं संपादक

वरिष्ठ स्वाध्यायी तत्त्व चिंतक

श्री विमल कुमारजी नवलखा, पीपोदरा, सूरत

प्रकाशक

जैन मुनि कन्हैयालाल 'कमल' स्मृति ट्रस्ट

आबू पर्वत (राज.)-३०७५०१

पुस्तक	-	**जैन आगमों में मध्यलोक**
शुभाशिर्वाद	-	श्रमण संघीय महामंत्री श्री सौभाग्य मुनिजी म. 'कुमुद' सरलमना पूज्य प्रवर्त्तक श्री मदन मुनिजी म. 'पथिक' लोकमान्य संत वरिष्ठ प्रवर्त्तक श्री रूपचंदजी म. 'रजत'
प्रेरक	-	उपप्रवर्त्तक श्री विनय मुनिजी म. 'वागीश'
संप्रेरक	-	मधुर व्याख्यानी उपप्रवर्त्तक श्री गौतम मुनिजी म. 'गुणाकर', तपस्वी श्री संजय मुनिजी म. साधक रत्न श्री फूलचंदजी म., तत्त्व चिंतक श्री सागरमुनिजी म. 'शुभम्'
लेखक	-	वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री विमल कुमारजी नवलखा (जगपुरा राजस्थान वाले) पीपोदरा, त. मांगरोल, जि. सूरत (गुज.)
प्रकाशक	-	जैन मुनि कन्हैयालाल 'कमल' स्मृति ट्रस्ट, आबू पर्वत (राज.)
सौजन्य	-	कमलेश एन. शाह (सी.ए.)-मुम्बई
पुस्तक प्राप्ति स्थान	-	1. श्री वर्धमान महावीर केन्द्र, सब्जी मण्डी के पास आबू पर्वत (राज.)-307501 फोन : 02974-235566 2. आगम अनुयोग ट्रस्ट, स्थानकवासी वाड़ी, स्था. सोसाईटी, नारायणपुरा अहमदाबाद फोन : 079-27551426 3. कमल विहार फालना रोड, साण्डेराव, जि. पाली (राज.) फोन : 02938-244778 4. श्री महावीर कल्याण केन्द्र, ओसवाली मौहल्ला मदनगंज, जि. अजमेर (राज.) 5. श्री वर्धमान महावीर केन्द्र, देवलाली जि. नासिक (महा.) 6. मेघराज सेल्स कॉर्पोरेशन, चम्पा गली मुम्बई- मो. : 09892177999 7. विमल कुमार नवलखा, नवलखा टेक्सटाईल्स ट्रेडर्स, पीपोदरा ता. मांगरोल, जि. सूरत (गुज.) फोन. 02621-234884 मो. 09426883605
सम्पर्क	-	श्री महावीर 'मधुरम्' मो. : 09928506675 Webside : www.kamalkanhaiya.com, E-mail : gurukamalkanhaiya@gmail.com
प्रथमावृत्ति	-	1000
मूल्य	-	100.00 मात्र
मुद्रक	-	स्वदेशी ऑफसेट, उदयपुर 3/17, उमराव की हवेली, श्रीनाथ मार्ग, खेरादीवाड़ा उदयपुर (राज.)-313001 Ph. : 0294-2417204, Mo. : 09784845675 E-mail : swadeshioffset@gmail.com

प्रकाशकीय

जैन आगमों में भूगोल-खगोल सम्बंधी विषय भरा पड़ा है। उसके संकलन का भगीरथ कार्य उपाध्याय श्री कन्हैयालालजी म. 'कमल' ने **'गणितानुयोग'** नामक ग्रंथराज में किया। उन्होंने मूल-अनुवाद सहित अनुयोग के रूप में संकलन किया। वह विषय बहुत ही कठिन है। गणितानुयोग का सर्वप्रथम प्रगकाशन **'आगम अनुयोग प्रकाशन परिषद्'** सांडेराव से हुआ फिर अत्यधिक मांग होने पर अत्यंत परिश्रम के द्वारा अनेक संशोधन के साथ उसका द्वितीय संस्करण **आगम अनुयोग ट्रस्ट, अहमदाबाद** से हुआ। उस ट्रस्ट के संस्थापक, आगमों के प्रति अत्यंत रूचि रखने वाले ज्ञान पिपासु श्री बलदेव भाई डोसाभाई पटेल एवं हिम्मतलाल शामलदास शाह पूज्य गुरुदेव से अनेक बार निवेदन करते रहते थे कि आप एक संस्करण सरल भाषा में संक्षिप्त में तैयार करावें। परंतु पूज्य गरुदेव अनुयोग के विशाल कार्य में व्यस्त होने के कारण एवं स्वास्थ्य प्रतिकूल होने के कारण उस समय नहीं कर सके। समय-समय पर स्वाध्यायियों की भी मांग बनी रही, साथ ही आगम अनुयोग ट्रस्ट के अध्यक्ष तत्त्व ज्ञान में विशेष रूचि रखने वाले श्री नवनीतभाई चुन्नीलाल पटेल एवं परम सेवाभावी वाणी के जादूगर सफल संचालक ट्रस्ट के मानद् मंत्री श्री जयंतिभाई चंदुलाल संघवी भी उपप्रवर्तक श्री विनय मुनिजी म. से आग्रह करते रहे कि 'गणित भाषा' बहुत कठिन पड़ती है अतः संक्षिप्त में सारांश रूप में भी निकाला जाए।

पूज्य श्री विनयमुनिजी इस संबंध में चिंतन कर रहे थे कि उसी समय वरिष्ठ स्वध्यायी अत्यंत परिश्रमी श्री विमलजी नवलखा पूज्य मुनि श्री के संपर्क में आये व उन्होंने यह कार्य करने का उल्लास बताया। उन्होंने पूर्व में भी अनेक पुस्तकें निःस्वार्थ भाव से अपनी स्वयं की रूचि से लिखी है। इस पुस्तक को भी उन्होंने अत्यंत परिश्रम करके गणितनुयोग के अलावा अनेक ग्रंथों को देखकर तैयार की है अतः हम उपप्रवर्तक श्री जी के तो आभारी हैं ही कि उन्होंने हमें ऐसे महत्वपूर्ण ग्रंथ के प्रकाशन का अवसर दिया। साथ ही नवलखाजी के अत्यंत आभारी हैं कि जिन्होंने सिर्फ लेखन ही नहीं किया अपितु प्रूफ रीडिंग संबंधी पूरी जिम्मेदारी भी संभाली। इसी प्रकार भविष्य में भी ज्ञान के प्रचार-प्रसार में वे लगे रहें, यही शुभभावना।

इसके प्रकाशन में मुख्य सहयोगी कमलेश एन. शाह रहे हैं। जिनकी पूज्य गुरुदेव के प्रति विशेष आस्था रही है। ज्ञान की विशेष रूचि है, सामायिक, स्वाध्याय, प्रतिक्रमण नियमित करते हैं। उन्होंने अपनी मातुश्री की स्मृति में इस प्रकाशन में विशेष सहयोग दिया है। अन्य ज्ञान पिपासु बंधुओं ने भी इसमें महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है अतः हम आभारी हैं।

पूज्य गुरुदेव के साहित्य का देश-विदेश के स्वाध्यायी लाभ ले सकें उनका प्रवचन सुन सकें उनकी मांगलिक सुन सकें व अन्य जानकारी भी मिल सके इस हेतु हमारे ट्रस्ट ने संजय जैन मुंबई के मार्फत **'कमल कन्हैया'** के नाम से वेबसाइट भी प्रारंभ की है अतः जिज्ञासु अवश्य लाभ लें।

पूरणचंद जैन	**गोपालसिंह जैन**	**विजयराज बंब**
अध्यक्ष	कार्याध्यक्ष	महामंत्री

जैन मुनि कन्हैयालाल 'कमल' स्मृति ट्रस्ट

आबूपर्वत (राज.)

अन्तर्दर्शन

जैन वाङ्मय में विश्व संरचना के जो उल्लेख है, वे वस्तुतः अत्यन्त विलक्षण और सुव्यवस्थित है।

सम्पूर्ण लोक को तीन लोकों में बांट कर स्पष्ट किया है, ऐसा होने से सारे संसार का ज्ञान व्यवस्थित रूप से किया जा सकता है।

ऊर्ध्वलोक, अधःलोक व मध्य में मध्यलोक है। उसका कार्य क्षेत्र तो विकसित है ही, इस लोक के ज्ञेय योग्य विकल्प भी असंख्य हैं।

सुमेरू पर्वत जो केन्द्रस्थ है, उसके चारों ओर सुव्यवस्थित प्राकृतिक रूप से विश्व संरचना है, वह अद्‌भुत है। प्रकृति का सारा चयोपचय ऐसा सुव्यवस्थित है कि कोई बुद्धिमान व्यक्ति भी कल्पना तक नहीं कर सकता।

प्रकृति की सुव्यवस्थित संरचना को देखकर अनक दार्शनिकों, विद्वानों ने यह कह दिया कि ऐसी सुव्यवस्थित संरचना ईश्वर ही कर सकता है, किन्तु यह विचार उपयुक्त नहीं है। प्रकृति के परिणमन बौद्धिक परिणमन से भी अधिक सुव्यवस्थित देखे जा सकते हैं।

नारिकेल (नारियल-श्रीफल) ही देख लीजिये। एक बहुत लम्बे वृक्ष के अन्त में तीक्ष्ण नोक वाले पत्तों के झुरमुट में नारियल का जन्मना, बढ़ना और पकना, क्या कम आश्चर्यजनक है? नारियल की पपड़ी जटा बदलती है, उसके भीतर एक और कठोर गोला जो बीज की हर स्थिति में रक्षा करता है तथा अन्त में बहुत गहराई में गिरि का होना। आम के बीज के जन्म-विकास और मूल बीज का संरक्षण कितना सुव्यवस्थित और विचित्र है। इस सारे कार्य का श्रेय प्रकृति को जाता है, न कि किसी ईश्वर को या पुरूष को।

मध्यलोक की संरचना भी प्राकृतिक रूप से सहज ही ऐसी बन गई कि सुमेरू पर्वत के दक्षिण में जैसी संरचना है, उत्तर में भी वैसी ही है, केवल नाम बदले हैं। ऐसे ही पूर्व में जो है वेसा ही पश्चिम में है। नदियां, पर्वत, द्रह, अन्तर्द्वीप सभी की संरचना ऐसी है कि देख कर आश्चर्य होता है।

तीन लोक में सर्वाधिक महत्वपूर्ण मध्यलोक इसलिए भी है कि कर्मभूमि, महाविदेह आदि क्षेत्र यहीं है, जहां मुक्ति मार्ग की साधना संभव है। मध्यलोक में सर्वदा तीर्थंकरों का अस्तित्व रहता ही है।

मध्यलोक में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अढ़ाई द्वीप है क्योंकि मानवों की उत्पत्ति और विकास का स्थान यही है। मानुषोत्तर पर्वत के बाद मनुष्योत्पत्ति नहीं है।

इस अढ़ाई द्वीप के मध्य में जम्बूद्वीप है और उसके भी मध्य में सुदर्शन पर्वत है। उसके उत्तर-दक्षिण दिशा को इंगित करते शिखरी, हिमवंत, वैताढ्य आदि पर्वत हैं। इनसे क्षेत्रों का सहज विभाजन है। दोनों तरफ समान लंबाई-चौड़ाई के पर्वत और नदियां हैं, उनसे प्रदेश में खण्ड बन गये हैं। लवण समुद्र जंबू द्वीप से दुगना, उससे दुगना घातकी खंड, उससे और द्विगुणित कालोदधि समुद्र अनन्तर दुगुने व्यास वाला पुष्करद्वीप। इसी के मध्य मानुषोत्तर पर्वत है। मानुषोत्तर पर्वत के इधर वाले भाग को अर्द्ध पुष्कर द्वीप भी कहते हैं।

अर्द्ध पुष्कर द्वीप में मानुषोत्तर पर्वत के पीछे मानवों की उत्पत्ति नहीं है इसलिए इस पर्वत को मानुषोत्तर पर्वत कहते हैं। मानवों की दृष्टि से आगे के द्वीप सुनसान हैं।

जम्बू द्वीप, धातकीखण्ड और अर्द्ध पुष्कर द्वीप मिल कर अढ़ाई द्वीप कहलाते हैं। इन द्वीपों के व्यवस्थित ज्ञान के लिए शास्त्रकारों ने अनेक तरह से इनका वर्णन किया। वर्णन पढ़ते हुए एक अद्‌भुत चित्र सा मानस पर

उभर जाता है। जिन विकल्पों से इनका वर्णन किया गया है, उनमें गणित पद, परिधि, द्वार का अन्तर, वर्षधर पर्वत, शाश्वत कूट, ऋषभ कूट, कोटि शिला, गुफाएं, बिल, तीर्थ संख्या (यहां तीर्थ का अर्थ है कि इन्हें चक्रवर्ती साधते हैं, ये तीर्थ प्रचलित अर्थ वाले नहीं है।) खंड संख्या, खंडों के देश संख्या, छह खंडों के आर्य-अनार्य खंड, किस खंड में कितने देश, विद्याधर आदि श्रेणियां, द्रह संख्या, द्रहों की देवियां, ढ़ाई द्वीप की नदियां, ढ़ाई द्वीप के वृक्ष, विजयों की चौड़ाई, अन्तर नदियों की चौड़ाई, वक्षस्कार पर्वत, वनमुख, भद्रशालवन, गजदंत गिरि, इक्षुकार पर्वत, वृत वैताढ्य, यमक-शमक पर्वत, कंचन गिरि पर्वत, युगलिया क्षेत्र, छप्पन अन्तर्द्वीप, महाविदेह क्षेत्र, लवण समुद्र (देव निवास), कालोदधि समुद्र, पुष्करार्धद्वीप, मानुषोत्तर पर्वत, इनके उपरान्त जगती, कोट, पद्मवर वेदिका नाम हेतु वनखंड, द्वार वर्णन, कलश, नागदंता पुतलियां, जाली, घंटियाँ, वनमाला, प्रकंठक और प्रसादावतंसक, माणवक चैत्य स्तम्भ, सिद्धायतन, देव प्रतिमा, द्वार, नगरियाँ आदि अनेकानेक विकल्पों को सामने रख कर अढ़ाई द्वीप का वर्णन किया गया है।

अढ़ाई द्वीप के वर्णन के अन्तर्गत जिन-जिन विकल्पों से विविध स्थानों का वर्णन किया गया है, वह बहुत मनोरंजक और कलात्मक है। प्रत्येक स्थान के लम्बे-चौड़े विस्तार का वर्णन तो है ही किन्तु उनके आकार और उसमें जो भी स्थापत्य है, उसका सांगोपांग वर्णन अनेक दृष्टि से अत्यन्त कलात्मक हैं।

द्वार वर्णन के अन्तर्गत द्वारों की स्थिति का दिग्दर्शन, उनकी विशालता के साथ उनकी विलक्षण रचना को पढ़कर चित्रकला और स्थापत्य के विद्यार्थियों को बहुत कुछ नया जानने को मिलेगा।

विजय द्वार के वर्णन का छोटा सा परिचय यहाँ देता हूँ। पाठक समझ जाएंगे कि इस अद्‌भुत प्राकृतिक रचना का वर्णन और कहीं उपलब्ध होना नितान्त असंभव है। ''एक-एक गाउ का बारसोद, सफेद दीवाल, स्वर्ण शिखर, इहा मृग, वृषभ, अश्व, मनुष्य, मगरमच्छ, पक्षी, सर्प, किन्नर, देव, चमर मृग, गज, वनलता, पद्‌लता आदि के चित्र चित्रित हैं, खंभों पर चबूतरा, विद्याधर युग के आकार के स्तम्भ। अरिष्ट रत्न के पगथिये, वैडूर्य के खंभे, पांच वर्ण की मणियां जो स्वर्ण मंडित है, उनसे गर्भगृह शोभित है। हंस गर्भरत्न की थैली, गोमेद का टोडला, लोहिताक्ष का बारसोद, वैडूर्य के किंवाड़ आदि-आदि भवन या द्वार के प्रत्येक अंग का बहुत आश्चर्यजनक वर्णन शास्त्रों में पाया जाता है।

जाली, घंटियाँ, वनमाला आदि सभी का वर्णन एक मानव के लिए तो अकल्पनीय है। तोरण, सिंहासन, पताका आदि सभी वस्तुओं का नख शिख वर्णन अत्यन्त लालित्य प्रकट करता है।

इस सभी को पढ़ने के बाद आज की जो भवन रचनाएं हैं वे तो एकदम बौनी लगती है। प्रकृति और दिव्य कला के सुन्दर सामंजस्य, उनके प्रतीकों को मानस चक्षु से देखना हो तो इस वर्णन को पढ़िये।

प्रस्तुत ग्रंथ में पुद्‌गल विज्ञान के वे सिद्धान्त निहित हैं जिनका आज भी कोई खण्डन नहीं कर सकता। उदाहरण स्वरूप देखिये कि परमाणु की व्याख्या अविभाज्य अंश के रूप में है। यह ऐसी स्थिर व्याख्या है कि जो सदा सर्वदा अखंड ही रहने वाली है। विज्ञान ने कहा कि हमने परमाणु को खंडित कर दिया, तो इस व्याख्या के अनुसार कहा जा सकता है कि वह परमाणु था ही नहीं। परमाणु तो खंडित होता ही नहीं। परमाणु खंडन के बाद जो निरंश अंश है वह परमाणु हो सकता है किन्तु यदि वह भी खंडित हो जाए तो वह भी परमाणु नहीं था। अविभाज्य अंश जो भी होगा, वही परमाणु होगा।

आज से हजारों वर्ष पहले परमाणु का यह सिद्धान्त स्थापित होना सिद्ध करता है कि परमज्ञानी सत्‌पुरूष जड़ विज्ञान के सम्पूर्ण प्रस्तोता थे।

यही बात काल विषयक भी समझनी चाहिए। काल के भी अन्त में एक 'समय' होता है जो अविभाज्य है। वह 'समय' आज वैज्ञानिकों के द्वारा स्थापित काल के सूक्ष्म अंश से भी और सूक्ष्म है क्योंकि स्थापित सूक्ष्मांश खंडित हो सकता है। 'समय' काल का निरंश अंश है जिसे किसी भी तरह विभाजित नहीं किया जा सकता।

प्रस्तुत ग्रंथ में बौद्धिक और वैदिक लोक, काल, अणु, परमाणु सिद्धान्तों का भी दिग्दर्शन कराया है। इससे पाठकों को इन विषयों में आये हुए भारतीय चिंतन और निष्कर्षों को समझने का सुन्दर अवसर उपलब्ध हो जाता है। द्वीप और समुद्रों की मान्यताओं का भी जैन वैदिक दोनों दृष्टि से दिग्दर्शन कराया गया है। इनके कोष्ठक बनाकर स्पष्टता के साथ उन्हें दर्शाया है। इससे पाठकों का इस विषयक तुलनात्मक ज्ञान पुष्ट होगा।

यह सम्पूर्ण मध्यलोक और उसके बाहर अनन्त अलोक, अनगिनत तारे, सूर्य, निहारिकाएं आदि-आदि जो तथ्य जैन और आधुनिक वैज्ञानिकों ने दिये, वे लगभग समान है।

आधुनिक विज्ञान द्वारा प्रदत्त भूगोल और खगोल का वर्णन सम्पूर्ण रूप से जैन शास्त्रों में वर्णित भूगोल और खगोल के वर्णन से पूर्ण समानता रखता हो यह मैं नहीं कह सकता, किन्तु मैं इतना अवश्य कहूंगा कि इस विषय के वैज्ञानिक विद्वान जैन शास्त्रों का गहरा अध्ययन कर तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत करे तो कहीं आंशिक व कहीं पूर्ण समानता अवश्य बन जाएगी। अनेक तथ्य अपेक्षाओं से आकलन की अपेक्षा रखते हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ को निराग्रह बुद्धिपूर्वक पढ़कर विश्व रचना के प्राकृतिक स्वरूप को समझने का प्रयास करें तो पाठकों के लिए ज्ञान का अपूर्व खजाना है।

जैन शास्त्रों में सम्पूर्ण संसार को तीन लोकों में माना है और ये तीनों लोक-लोकाकाश के अन्तर्गत आते हैं। शास्त्रों में ऊर्ध्वलोक, अधोलोक और मध्यलोक, तीनों लोकों का सांगोपांग वर्णन विद्यमान है। जैसा कि मैंने पहले लिखा, इन तीन लोकों में मध्यलोक ही सर्वथा महत्वपूर्ण है क्योंकि इसमें मानव, तिर्यंच, देवों और ज्योतिषी देवों का महत्वपूर्ण संचरण विचरण है। वैसे तिर्यंच जीव तो ऊर्ध्वलोक और अधोलोक में भी हैं किन्तु वहां इतनी परिपूर्णता नहीं है।

ऊर्ध्वलोक में देवों की, अधोलोक में नारकों की प्रधानता है किन्तु तिर्यक् लोक में मानव, तिर्यंच और देवों की समान रूप से प्रधानता है। अतः सहज ही मध्यलोक की विशिष्टता सिद्ध हो जाती है।

त्रय लोक विवेचना विषयक अनेकानेक ग्रन्थ प्रकाशित हैं किन्तु वे आम व्यक्तियों के लिए सरलता से पठनीय नहीं हो पाते। उनमें गणित और भूगोल की जटिलता रहती है जिसे सामान्य रूप से समझ पाना कठिन होता है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में सफल स्वाध्यायी श्री विमलजी नवलखा ने अच्छा श्रम किया है और दुरूह विषयों को भी यथा सम्भव बहुत सरलता और स्पष्टता से प्रस्तुत किया है। इससे इस ग्रन्थ की उपयोगिता अधिक व्यापक सिद्ध होगी।

मेरे साथी प्रबल पुरुषार्थी विनयमुनि 'वागीश' व उनके सेवाभवी शिष्य सागरमुनि जो अभी मेरी सेवा में रत है उनको भी धन्यवाद दूंगा कि उन्होंने ऐसे क्लिष्ट विषय को सामान्य जनता हेतु प्रकाशन की प्रेरणा 'स्मृति ट्रस्ट, आबू पवर्त' को दी व मेरे को भी कुछ लिखने का अवसर प्राप्त हुआ अतः मैं बहुत सौभाग्यशाली हूँ।

जैन स्थानक, पनवेल (महाराष्ट्र) | **श्री सौभाग्य मुनि 'कुमुद'**

दि. 10-03-2010 | **श्रमण संघीय महामंत्री**

लेखक के दो शब्द

साहित्य समाज का दर्पण होता है। जिस समाज का साहित्य उच्च कोटि का होता है, उस समाज की गणना उत्कृष्ट कोटि में होती है। इतिहास, अर्थशास्त्र, शिल्पशास्त्र, वास्तुशास्त्र, काव्यशास्त्र, राजनीति, दर्शनशास्त्र, नीतिशास्त्र, गणित, भूगोल, खगोल, तत्त्वज्ञान आदि की जानकारी साहित्य से ही होती है।

विकासशील वैज्ञानिक युग में विश्व चहुँमुखी प्रगति पथ पर अग्रसर हो रहा है। ऐसे में विश्व की भौगोलिक स्थिति के विषय में अधिक से अधिक जानकारी की परम आवश्यकता होती है।

जैन परंपरा, जैनेत्तर भारतीय दर्शनों और पाश्चात्य दर्शनों में आकाश को द्रव्य अथवा तत्त्व के रूप में स्वीकार किया है। आकाश एक अखण्ड और सर्वव्यापी तत्त्व है। अनंत और असीम है, सर्वत्र है। जैन दर्शन के अनुसार आकाश अमूर्तिक द्रव्य है, परन्तु अन्य द्रव्यों की तरह सद्‌भावात्मक है। अन्य द्रव्यों का अवगाहन करना उसका गुण है। आकाश यदि सत्तामय द्रव्य न होता तो अवगाहन देने की क्रिया नहीं कर सकता था, अतः आकाश को सद्‌भावात्मक द्रव्य स्वीकार करना ही युक्तिसंगत होता है।

अन्य द्रव्यों की सत्ता की अस्ति-नास्ति के कारण आकाश के दो विभागों की कल्पना की जा सकती है। जिसमें जीव, पुद्‌गल, धर्म-अधर्म द्रव्य रहते हैं, वह लोकाकाश है और जो विभाग इससे रहित (शून्य) हैं, वह अलोकाकाश है। सभी तरफ असीम रूप से फैले हुए आकाश में ''लोकाकाश'' एक अतिशय छोटा-सा खण्ड है। लोकाकाश ऊपर से नीचे चौदह रज्जू प्रमाण परिमित है। यह चौड़ाई सर्वत्र सरीखी नहीं है। सबसे नीचे वह सात रज्जू चौड़ा है। ऊपर की ओर क्रमशः संकीर्ण होता हुआ सात रज्जू की ऊँचाई पर मात्र एक रज्जू चौड़ा रह गया है। उसके ऊपर वह चौड़ाई बढ़ती जाती है और 10½ रज्जू ऊपर जाने पर पाँच रज्जू चौड़ा हो गया है, आगे पुनः संकीर्ण होता हुआ अंत में केवल एक रज्जू रह गया है। यह लोक पैर फैलाकर कमर पर हाथ रखकर खड़े पुरुष के आकार का है।

लोक के तीन विभाग किये गये हैं (1) अधो लोक, (2) मध्य लोक, (3) ऊर्ध्व लोक। अधोलोक में नारकावास है व ऊर्ध्व लोक में देवों और सिद्धबुद्ध मुक्त आत्माओं का स्थान है। मध्यलोक समतल भूमि से 900 योजन ऊपर और 900 योजन नीचे यों 1800 योजन का है, इसका झालर के समान आकार है।

मध्य लोक के बीचोंबीच एक लाख योजन का ऊँचा सुमेरू पर्वत है। इसके चारों ओर एक लाख योजन का गोलाकार जम्बूद्वीप है। इस जम्बूद्वीप को घेरकर एक के पश्चात् एक समुद्र और द्वीप हैं, जो एक-दूसरे से दुगुने-दुगुने विस्तार के हैं और असंख्याता हैं। जम्बूद्वीप को घेरकर लवण-समुद्र दो लाख योजन का कुण्डलाकार है। इसके पश्चात् धातकी खण्ड चार लाख योजन का, इससे आगे आठ लाख योजन का कालोदधि समुद्र है, जिसे चारों ओर से पुष्कर द्वीप ने घेरा है। पुष्कर द्वीप के मध्य में कुण्डलाकार एक पर्वत है जिसे मानुषोत्तर पर्वत कहते हैं। इस पर्वत तक ही मनुष्यों का निवास है। इससे आगे के समुद्रों, द्वीपों में मनुष्यों का अस्तित्व नहीं है। जैन मान्यतानुसार जम्बूद्वीप, धातकी खण्ड और आधे पुष्कर द्वीप इन अढ़ाई द्वीपों में मनुष्य रहते हैं, जिसे मनुष्य क्षेत्र कहते हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ में उपरोक्त अढ़ाई द्वीप का सांगोपांग वर्णन करने का प्रयत्न किया है, साथ ही साथ आगे के द्वीप-समुद्रों का भी वर्णन दिया है। ज्योतिषी लोक भी मध्य लोक का ही एक भाग है, अतः उसका भी वर्णन किया गया है।

अढ़ाई द्वीप, जगती, विजया राजधानी, भरत क्षेत्र, वैताढ्य पर्वत, चुल्ल हेमवंत पर्वत, महाहिमवंत पर्वत, हेमवय, हैरण्यवय, हरिवर्ष, रम्यक्वर्षादि युगलिक क्षेत्रों का व निषध, नीलवंत, शिखरी आदि पर्वतों का तथा नदी, द्रह, कुण्ड आदि की संख्या एवं गहराई आदि का पूरा विवरण यथा योग्य स्थान पर किया है। महाविदेह क्षेत्र, भरत-एरवत क्षेत्र उनके छह आरा, छप्पन अन्तर्द्वीपा, पुष्कर द्वीप, धातकी खण्ड, मानुषोत्तर पर्वत आदि का वर्णन किया गया है। ज्योतिषी देव का भी वर्णन किया है। शीलांगादि रथ भी दर्शाए हैं। जैन मान्यतानुसार लोक वर्णन तथा तुलनात्मक रूप से बौद्ध और वैदिक मान्यतानुसार लोक वर्णन भी दिया है। जैन गणित, जैन भूगोल, जैन खगोल का वर्णन इस प्रकार से देने का प्रयास किया है कि पाठक को अन्यत्र ढूँढ़ने की आवश्यकता नहीं रहे। परिधि, गणितपद, जीवा, जीवा वर्ग, इषु, धनुःपृष्ठ, बाहा, प्रतर, घनफल आदि का क्षेत्रफल माप आदि का व्यवस्थित सरलीकरण करने के लिए उत्कृष्ट गणित का उपयोग किया गया है।

ग्रंथ को तुलनात्मक प्रमाणभूत बनाने के लिए अनुयोग द्वार, ठाणांग, समवायांग, व्याख्या प्रज्ञप्ति, उत्तराध्ययन, जीवाजीवाभिगम, रायप्पसेणि, पन्नवणा, ज्ञाता धर्मकथा, सूर्य प्रज्ञप्ति, चन्द्र प्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति आदि आगम सूत्रों का तथा त्रिलोकसार, तिलोयपण्णति, जैन तत्व प्रकाश, गणित सार संग्रह, लघु क्षेत्र समास, गोम्मटसार, षट्खंडागम, लोक प्रकाश आदि प्रमाणभूत ग्रंथों, पुस्तकों से यह संग्रह किया गया है।

अनुयोग प्रवर्त्तक पूज्य उपाध्याय श्री कन्हैयालालजी म. 'कमल' सम्पादित **'गणितानुयोग'** को विशेष रूप से आधार रूप माना है, खंभात सम्प्रदाय के पूज्य श्री नवीन ऋषिजी म. द्वारा सम्पादित जैन दृष्टिअे मध्यलोक गुजराती संस्करण का भी सम्पादन में सहयोग लिया।

आगम साहित्य का पठन, पाठन और अन्वेषण की मेरी कई वर्षों से रुचि रही है। भूगोल, खगोल और गणित मेरे प्रिय विषय रहे हैं। जैन समाज के समक्ष मध्य लोक का साहित्य रखने की मेरी उत्कट अभिलाषा हुई, हिन्दी में ऐसा साहित्य उपलब्ध नहीं है। भूगोल, खगोल और गणित का विषय क्लिष्ट और रूखा अवश्य है, परन्तु गुणवत्ता की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। अनमोल निधि है।

इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि इसमें मैंने आगमों का आधार लेकर क्रमबद्ध आलेखन किया है और साथ में सर्वत्र चित्रादि उपलब्ध कराये हैं। पाठक क्षेत्रादि का वर्णन पढ़ते समय चित्र देखकर वस्तुस्थिति से अवगत हो जाता है, यही इस ग्रंथ की सुन्दर उपलब्धि है। भौगोलिक ग्रंथ जैन समाज का अनमोल खजाना है, यह कोई सामान्य पुस्तक नहीं है, अनमोल कृति है। जैन समाज के लिए अत्यंत उपयोगी है ऐसे अनमोल ग्रंथ कम ही प्रकाशित होते है।

पूज्य उपाध्याय श्रीजी के सुयोग्य शिष्य आगम पिपासु परम पुरुषार्थी उपप्रवर्त्तक **श्री विनय मुनिजी म. 'वागीश'** को मैंने अपनी भावना बताई उनको यह ग्रंथ अवलोकन कराया, आपकी गणित जिज्ञासा प्रसंशनीय रही है। उन्होंने कुछ सुझाव भी दिए व उन्होंने **जैन मुनि कन्हैयालाल 'कमल' स्मृति ट्रस्ट, आबू पर्वत** को प्रेरणा

दी व दान-दाताओं ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। अतः मैं मुनिश्री का, ट्रस्ट का एवं दान-दाताओं का बहुत आभारी हूँ। उन सभी के सहयोग से ही मेरी यह भावना सफल हो पाई।

मेरी विदुषी बहन **साध्वी रत्ना श्री शीलप्रभाजी म.सा. एवं श्री सत्यप्रभा जी म.सा.** का मुझ पर महान् उपकार रहा है, जिन्होंने अत्यंत गूढ़ गणित विषय के प्रतिपादन में सहयोग प्रदान किया। परिधि, जीवा, धनुःपृष्ठ, ईषु, बाहा, प्रतर, जीवा वर्ग, घनफल आदि समीकरणों का इतना अच्छा सरलीकरण प्रस्तुत किया जो इस ग्रंथ की शोभा में चार चाँद लगा देने वाले हैं।

मेरा उद्देश्य सिर्फ ज्ञानार्जन, उपार्जन और प्रचार-प्रसार का है। पूर्व में जैनागम सारांश, आगम प्रश्नोत्तर आदि का संयोजन कर विगत 24-25 वर्षों से जैन समाज की आगम सम्बन्धी सेवा में लगा हुआ हूँ। ''अंतर्मन के मोती'' पुस्तक में पर्यूषण प्रवचन का संग्रह लिखा जिससे सम्पूर्ण भारत के मेरे स्वाध्यायी बंधु लाभान्वित हो रहे हैं। हाल ही में मैंने जैन तत्त्व दर्शन खण्ड-1 एवं 2 इन दोनों पुस्तकों में क्रमशः भगवती सूत्र, प्रज्ञापना सूत्र एवं विविध सुत्तागमों के थोकड़े दिए हैं, जिससे पूरा समाज लाभान्वित हो रहा है। मेरी यह कृति ''जैन आगमो में मध्यलोक'' जैन जगत में अनमोल कृति होगी ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। भूगोल, खगोल और गणित का सुमेल इस ग्रंथ की उपयोगिता दर्शाएगा इसमें कोई शंका नहीं है।

लगभग 2550 वर्ष पूर्व चरम तीर्थंकर श्रमण भगवान महावीर केवलज्ञान केवल दर्शन की अनुपम शक्ति से भरत क्षेत्र को आप्लावित कर रहे थे। गणधरादि प्रभु वाणी का गुंथन कर रहे थे।

''सुत्तं गुंथंति गणहरा निउणा, अत्थं भासई अरहा''

तीर्थंकर महाप्रभु अत्यंत तेजस्वी होते हैं **''आइच्चेसु अहियं पयासयरा''** अपनी ज्ञान रश्मियों से वे तीनों लोकों को आलोकित करते हैं। उनके उपदेश स्व-पर हितकारक ही होते हैं। उनकी प्ररूपणा मौलिक होती है, उसमें परंपरावादिता नहीं होती। आगम शास्त्र विज्ञान प्रकाशक हैं, उनमें वीतरागता का दर्शन होता है। इनसे तत्त्व बोध और तत्त्व निर्णय प्राप्त होता है।

प्रभु महावीर ने संपूर्ण लोकाकाश का दिग्दर्शन कराया है। आज पंचम आरे की विशेषताओं के कारण वह समग्र ज्ञान तो हमारे सम्मुख विद्यमान नहीं है, परन्तु उसका आलोक रूप शास्त्र हमारे पास अवश्य है, जिनका हम अवलोकन कर निर्णयात्मक सत्य प्राप्त कर सकते हैं। इन्हीं आगम शास्त्रों का दोहन कर लोक और उसकी स्थिति, मध्यलोक और उसकी भौगोलिक स्थिति का ज्ञान कथंचित् प्राप्त कर सकते हैं। बहुत परिश्रम करके मध्यलोक के बारे में कुछ संग्रह प्राप्त किया है उसे विस्तारपूर्वक लिखने का साहस कर रहा हूँ।

आज के विश्व में वैज्ञानिक आविष्कारों के युग में यह सब लिखना एक चुनौती से कम नहीं है। विदित विश्व और लिखित विश्व में कई गुणा अंतर है। उसका कारण है विज्ञान की अल्पता। जिस वैज्ञानिक को जितना मिला उसकी घोषणा कर दी, अन्य को विशेष मिला तो उसकी भी घोषणा कर दी। कोई चन्द्र पर जा रहा है तो दूसरा उसका खण्डन कर रहा है। यह सब कुछ अल्पज्ञता की निशानी है। धर्म में ऐसा कभी नहीं होता। तीर्थंकर केवलज्ञान केवल दर्शन से जानकर प्रतिपादन करते हैं, जिसका खण्डन-मंडन नहीं होता मात्र सत्य का ही प्रतिपादन होता है। संशय का वहाँ कोई स्थान होता ही नहीं है।

उन्हीं आगमों के आधार से 'जैन आगमों में मध्यलोक' नामक इस ग्रंथ का संकलन किया है। समाज के समक्ष जैन गणित, भूगोल, खगोल का विषय रखते हुए आनंद का अनुभव हो रहा है। जैन समाज की सेवा करने का अनुपम अवसर मिला है, जिनवाणी का रसास्वादन कर अपूर्व हर्षानुभव हो रहा है।

''कव सूर्य प्रभवो वंशः कव चाल्प विषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम् ।।''

मैं अल्पमति हूँ, मैंने महान् दुष्कर समुद्र को नौका से पार करने जैसा साहस किया है, परन्तु मैं सिर्फ ग्रंथ की उपयोगिता और हृदय की लालसा से कर रहा हूँ।

ग्रंथ की विषय वस्तु - अढ़ाई द्वीप का पूर्व-पश्चिम तथा उत्तर-दक्षिण 45-45 लाख योजन विस्तार, खण्ड प्रमाण, गणित पद, परिधि, विजयादि द्वारों का अंतर, वर्षधर क्षेत्र, पर्वत, नदियाँ, द्रह, कुण्ड, कूट, गुफाएँ, बिल मागधादि तीर्थ, देश, आर्य, अनार्य देश। किस खण्ड में कितने देश? शब्दापाती, विकटापाती, वृत्त वैताढ्य, वक्षस्कार पर्वत, मेरुपर्वत, भद्रशाल वन, गंधमादनादि गजदंत गिरि। जम्बूद्वीप उनके महाविदेह क्षेत्र, विजय, जम्बू वृक्ष, देव कुरू, उत्तर कुरू, युगलिया क्षेत्र, छप्पन अन्तर्द्वीपा वर्णन। लवण समुद्र, धातकी खण्ड, जगती, द्वीप, पाताल कलश, वनखण्ड, कालोदधि समुद्र, पुष्कर द्वीप, मानुषोत्तर पर्वत, असंख्याता द्वीप-समुद्र सभी का विस्तार युक्त वर्णन है।

आठ प्रकार की गणित, परिधि, गणित मान, गणित पद, जीवा, ईषु, धनुःपृष्ठ, बाहा, प्रतर, घनफल शास्त्रीय और आधुनिक गणित का अवलोकन जीवा आदि की गणित संग्रह की गाथाएँ देकर भी सरलीकरण करने का प्रयत्न किया है।

ज्योतिषी देव चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारा इन सभी का विस्तार से वर्णन है। शीलांगादि के 21 रथ आदि तथा जैन मान्यता से लोक वर्णन, सामान्य लोक स्वरूप, बौद्ध ग्रंथों से प्राप्त लोक विवरण, वैदिक मान्यतानुसार लोक वर्णन, आधुनिक लोक में विश्व एवं उन सभी का तुलनात्मक अध्ययन भी दिया है।

तमस्काय, सिद्ध लोक, माप, कालचक्र आदि का वर्णन भी किया है। सभी के वर्णनों के साथ यथा स्थान पर चित्र देने का पूरा ध्यान रखा है, जिससे पाठकों को सही तरीके से समझ में आ सकें अर्थात् बुद्धि गम्य हो सके।

जैन धर्म का प्रचार-प्रसार हो, समाज में वास्तविक एवं भौगोलिक जानकारी बढ़े, भव्य जीवों की उत्सुकता बढ़े, यही भावना संजोकर लेखन किया है। गणित, भूगोल, खगोल जैसे नीरस विषय को सरलीकरण से समाज के सम्मुख लाने का प्रयास किया है। ज्ञान खजाना बढ़े यही मनोकामना रही है। पाठक वृन्द से अशुद्धियाँ सुधारकर पढ़ने का विशेष अनुरोध है।

अनेक आगम ग्रंथों और कई रचना ग्रंथों का सम्मिश्रण कर यह अनुपम ग्रंथ तैयार किया है। अरिहंत भगवंतों की अविनय आशातना हुई हो तो मैं क्षमा प्रार्थी हूँ। सुज्ञ पाठक वृन्द से अनुरोध है कि शीघ्र प्रयास में जानते-अजानते, दृष्टि अथवा लिपि दोष रह गया हो तो विशाल हृदय रखकर व मुझे लघु भ्राता समझकर क्षमा प्रदान करें।

लेखक

पीपोदरा
07.09.2011

विमल कुमार नवलखा
(जगपुरा वाला)

अनुक्रमणिका

1.	चौदह रज्जूलोक	1	27.	अंतर नदियों की चौड़ाई	13
2.	अढ़ाई द्वीप	3	28.	वक्षस्कार पर्वत	13
3.	खण्ड प्रमाण	6	29.	वनमुख	13
4.	योजन प्रमाण	6	30.	भद्रशालवन	13
5.	गणित पद	7	31.	गजदंत गिरि	13
6.	परिधि	7	32.	इक्षुकार पर्वत	14
7.	द्वार का अंतर	7	33.	वृत्त वैताढ्य	14
8.	वर्षधर पर्वत	8	34.	यमक-समक पर्वत	14
9.	शाश्वत पर्वत	9	35.	कंचन गिरि पर्वत	14
10.	शाश्वत कूट	9	36.	युगलिया क्षेत्र	14
11.	ऋषभ कूट	9	37.	छप्पन अंतर्द्वीपा	15
12.	कोटि शिला	9	38.	महाविदेह क्षेत्र	15
13.	गुफाएँ	9	39.	लवण समुद्र	16
14.	बिल	9	40.	पाताल कलश	16
15.	तीर्थ संख्या	9	41.	देव निवास	17
16.	खण्ड संख्या	10	42.	कालोदधि समुद्र	18
17.	खण्डों में देश संख्या	10	43.	पुष्करार्द्ध द्वीप	18
18.	छ खण्डों में आर्य-अनार्य	10	44.	मानुषोत्तर पर्वत	18
19.	खण्डों में देश	10	45.	जगती कोट	18
20.	विद्याधर श्रेणियाँ	10	46.	पद्मवर वेदिका	19
21.	द्रह संख्या	10	47.	वनखण्ड	20
22.	द्रहों की देवियाँ	11	48.	द्वार वर्णन	21
23.	अढ़ाई द्वीप की नदियाँ	11	49.	कलश, नागदंता	22
24.	नदियों की लंबाई चौड़ाई	12	50.	पुतलियाँ जालियाँ वनमाला	23
25.	अढ़ाई द्वीप में वृक्ष	12	51.	प्रकंठक, प्रासादावतंसक	23
26.	विजयों की चौड़ाई	13	52.	विजया राजधानी	26

53.	माणवक चैत्य स्तंभ	28	81.	पूर्व महाविदेह की 16 विजय	57
54.	सिद्धायतन	29	82.	पश्चिम महाविदेह की 16 विजय	58
55.	देव प्रतिमाएँ	29	83.	विजय की नदियां	60
56.	वैजयंत, जयंत, अपराजित द्वार	30	84.	अधोलोक के गाँव	61
57.	भरत क्षेत्र	30	85.	जम्बूद्वीप की दक्षिण की 7 नदियाँ	62
58.	अयोध्या, मागधादि तीर्थ, वैताढ्य	31	86.	जम्बूद्वीप की उत्तर की 7 नदियाँ	62
59.	उत्तरार्द्ध भरत, ऋषभ कूट पर्वत	36	87.	तीर्थंकर चक्रवर्ती के उत्पत्ति के स्थान	62
60.	चुल्ल हिमवंत पर्वत, पद्मद्रह	36	88.	नीलवंत पर्वत	63
61.	अन्य द्रहादि	37	89.	रम्यक् वर्ष क्षेत्र	63
62.	हेमवंत युगलिया क्षेत्र	40	90.	रुक्मी पर्वत	63
63.	महाहिमवंत पर्वत	41	91.	हैरण्यवत यु. क्षेत्र	63
64.	हरिवर्ष युगलिया क्षेत्र	42	92.	शिखरी पर्वत, एरवत क्षेत्र	64
65.	निषध वर्षधर पर्वत	42	93.	काल चक्र	64
66.	नदी द्रह, कुंड	44	94.	छप्पन अंतर्द्वीपा	72
67.	नदी विस्तार, गहराई	45	95.	लवण समुद्र	78
68.	पाँच क्षेत्र की नदी	45	96.	गौतम द्वीप	84
69.	जम्बूद्वीप की नदियाँ	46	97.	लवण समुद्र में चन्द्र-सूर्य द्वीप	85
70.	महाविदेह क्षेत्र	46	98.	उद्वेध (ज्वार)	86
71.	महाविदेह के गजदंता गिरि	47	99.	धातकी खण्ड द्वीप	88
72.	महाविदेह का उत्तर कुरू क्षेत्र	49	100.	क्षेत्रांक	92
73.	उत्तर कुरू का नीलवंत द्रह	49	101.	ध्रुवांक	92
74.	उत्तर कुरू का जम्बू वृक्ष	50	102.	कालोदधि समुद्र	93
75.	महाविदेह का देव कुरू क्षेत्र	51	103.	पुष्कर द्वीप	94
76.	कुलगिरि, यमक, पाँच द्रह	52	104.	मानुषोत्तर पर्वत	97
77.	मेरू के 7 अंतरे	52	105.	संख्यात असंख्यात द्वीप समुद्र	98
78.	मेरू पर्वत	52	106.	उद्धार सागरोपम	104
79.	16 पुष्करणियाँ	55	107.	पल्य	105
80.	अभिषेक शिला	55	108.	गणित	107

109. क्षेत्र का प्रकार 107
110. 8 प्रकार का गणित 108
111. परिधि 108
112. गणित पद 117
113. जीवा 119
114. ईषु 126
115. धनु:पृष्ठ 127
116. बाहा 134
117. प्रतर 136
118. घन 149
119. जीवा संग्रह गाथाएँ 157
120. धनु:पृष्ठ बाहा संग्रह गाथाएँ 158
121. प्रतर प्रमाण संग्रह गाथाएँ 159
122. घन गणित संग्रह गाथाएँ 160
123. ज्योतिषी देव 161
124. चंद्र मंडल 164
125. सूर्य मंडल 166
126. सूर्य का ताप क्षेत्र 170
127. ग्रहों का वर्णन 170
128. राहु ग्रह 172
129. नक्षत्र 173
130. नक्षत्रों के स्वामी देव 174
131. नक्षत्रों के तारा 176
132. नक्षत्रों के संस्थान 178
133. नक्षत्रों के द्वार 178
134. शीलांगादि 21 रथ 180
135. जैन मान्यतानुसार लोक 180
136. सामान्यतया लोक स्वरूप 180
137. अधोलोक 181
138. मध्य (तिर्च्छा) लोक 182
139. कर्मभूमियाँ 183
140. अकर्मभूमियाँ 183
141. छप्पन अंतर्द्वीपा 183
142. ज्योतिषी लोक 184
143. ऊर्ध्व लोक 185
144. तमस्काय 186
145. सिद्धलोक 186
146. माप क्षेत्र 186
147. काल माप 187
148. दिगम्बर मान्यता द्वारा काल माप 187
149. बौद्ध मतानुसार लोक का वर्णन 188
150. बौद्ध मतानुसार लोक की रचना तुलना एवं समीक्षा 189
151. वैदिक धर्म अनुसार लोक का वर्णन 190
152. मर्त्य लोक 190
153. नरक लोक 193
154. ज्योतिर्लोक, स्वर्ग लोक 193
155. तुलना और समीक्षा 193
156. वैज्ञानिक मतानुसार आधुनिक विश्व 197
157. भूमण्डल 197
158. चन्द्र का क्षेत्रफल 199
159. प्रकाश वर्ष 200
160. ताराओं की संख्या 200
161. निहारिका 201
162. आकाश गंगा 201
163. ग्रह 202

चित्रों का अनुक्रम

1.	चवदह रज्जू लोक-तीनलोक	1
2.	लवण समुद्र	16
3.	चन्द्र सूर्य के द्वीप	17
4.	जम्बूद्वीप	18
5.	जगती (कोट)	19
6.	पद्मवर वेदिका	19
7.	विजयद्वार	22
8.	नागदंता	23
9.	सिंहासन	24
10.	अष्टमंगल	24
11.	विजयद्वार पाँचवीं मंजिल	25
12.	भ्रद्रासन	25
13.	विजया राजधानी	26
14.	विजया राजधानी के 4 वनखंड 4 प्रासादावतंसक	26
15.	85 महल (प्रासाद)	27
16.	महेन्द्र ध्वज	27
17.	पुष्करिणी	28
18.	माणवक चैत्य स्तंभ	28
19.	दाभड़ा	28
20.	देवशैया	28
21.	शस्त्र भंडार	28
22.	सिद्धायतन	29
23.	अलंकार सभा	29
24.	अभिषेक सभा	30
25.	द. भरत क्षेत्र	31
26.	(1) बाहा (2) धनुःपुष्ठ (3) जीवा (4) ईषु	31
27.	वैताढ्य की दक्षिणोत्तर श्रेणी स्थपना	32
28.	ऋषभ कूट पर्वत	32
29.	वैताढ्य पर्वत	33
30.	उमग जला-निमग जला नदियां	33
31.	49 मांडला	34
32.	वैताढ्य की गुफा	34
33.	गुफा का द्वार	35
34.	वैताढ्य के 9 कूट	35
35.	वैताढ्य के अलग अलग विभाग	35
36.	चुल्लहिमवत पर्वत 11 कूट सहित	36
37.	लक्ष्मीदेवी का कमल	36
38.	प्रत्येक वलय में देव देवी का वर्णन	37
39.	पद्मद्रह, पुंडरीकद्रह, द्रहों से निकलती नदियां	38
40.	महापद्मादि 4 द्रह	38
41.	गंगावर्त्तन कूट	38
42.	जीभ-परनाली	39
43.	मुक्तावली हार	39
44.	हेमवंत युगलिया क्षेत्र	40
45.	महाहिमवंत के 8 कूट	41
46.	हरिवर्ष युगलिया क्षेत्र	42
47.	निषध पर्वत के 9 कूट	44
48.	महाविदेह की 32 विजय	46
49.	महाविदेह की 32 विजय	46

50.	माल्यवंत गजदंत के 9 तथा गंध मादन के 7 कूट	47
51.	उत्तर कुरू दक्षिण कुरू	49
52.	जम्बू वृक्ष	50
53.	उत्तरकुरू की जम्बू पीठिका	50
54.	जम्बू पीठिका, पद्मवर वेदिका, वन खंड	50
55.	8 कूट	51
56.	सुदर्शन मेरू पर्वत तीन कांड सहित	52
57.	अलग अलग रत्नमय मेरू पर्वत	53
58.	भद्रशाल वन, 4 गजदंत गिरि, सीता सीतोदा नदी	54
59.	नंदनवन	54
60.	सौमनस वन	54
61.	पंडक वन	55
62.	अभिषेक शिला	55
63.	नीलवंत पर्वत के 9 कूट	63
64.	रम्यक् वर्ष युगलिया क्षेत्र	63
65.	रूक्मी पर्वत के 8 कूट	63
66.	हेरण्यवत् युगल क्षेत्र	64
67.	शिखरी पर्वत 11 कूट सहित	64
68.	कालचक्र	64
69.	विग्रहगति (सूत्रानुसार)	68
70.	विग्रह गति (ग्रंथानुसार)	68
71.	छ संहनन्	68
72.	दाढ़ाएं	73
73.	56 अन्तरद्वीप	73
74.	लवण समुद्र (1) चन्द्र (2) सूर्य (3) पाताल कलश	78
75.	समचक्रवाल संस्थान	78
76.	लवण समुद्र के 4 द्वार	78
77.	पाताल कलश	80
78.	लघु पाताल कलश	80
79.	गोतीर्थ	82
80.	शिखा	82
81.	समतल	83
82.	वेलंघर पर्वत	83
83.	वेलंधर अणुवेलंधर आवास पर्वत	84
84.	चक्राकार घातकी खंड 14 आरा, 14 पर्वत, 14 क्षेत्र	89
85.	दो इक्षुकार पर्वत	89
86-87.	पूर्व पश्चिम घातकी, महाविदेह और गजदंत तथा वनमुख	91
88.	1 से 8 द्वीप समुद्र	100
89.	9 से 15 द्वीप समुद्र	102
90.	पाला (पल्य)	104
91.	त्रिज्या	113
92.	व्यास	113
93.	क्षेत्रफल	113
94.	जीवा	119
95.	ईषु	126
96.	धनुःपृष्ठ	127
97.	बाहा	134
98.	प्रतर-1	137

99.	प्रतर-2	138
100.	हस्तदन्त क्षेत्र	146
101.	यवाकार क्षेत्र	146
102.	मुरजाकार क्षेत्र	146
103.	पणवाकार क्षेत्र	146
104.	वज्राकार क्षेत्र	146
105.	उभय निषेध क्षेत्र	146
106.	एक निषेध क्षेत्र	146
107.	संस्पृशी तीन वृत्त वाला क्षेत्र	146
108.	संस्पृर्शी चार वृत्त वाला क्षेत्र	146
109.	त्रिभुज की अवधाएं	148
110.	आयतन	148
111.	वैताढ्य पर्वत मेखला युक्त	149
112.	चन्द्र सूर्य की माला	163
113.	सूर्य चन्द्र मण्डल	164
114.	चन्द्र मण्डल	164
115.	चन्द्र मण्डल और आंतरे	165
116-117.	सूर्य मण्डल के मांडले उत्तरायण - दक्षिणायण	167
118-119.	सूर्य मण्डल एवं उनके आंतरे	169
120.	तापक्षेत्र	169
121.	अभिजितादि 28 ताराओं के आकार	175
122.	नक्षत्रों के तारागण आकार सहित	177
123-143	शीलांगादि 21 रथ	179
144.	14 रज्जूमय तीन लोक	180
145.	अधोलोक	181
146.	घनोदधि (नरक)	181
147.	ऊर्ध्वलोक	185
148.	तमस्काय	186
149.	कृष्णराजी	186
150.	सिद्ध शिला	186
151.	सिद्ध शिला	186

चवदह रज्जू लोक

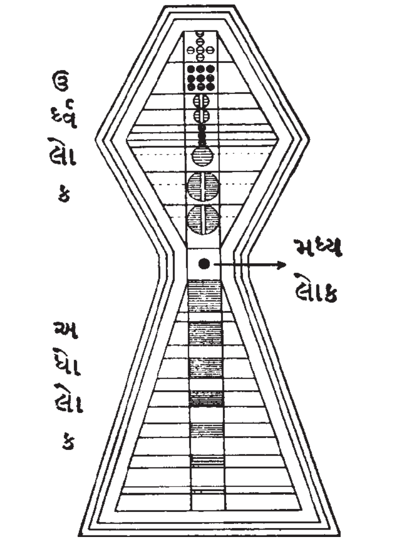

(चित्र सं. 1) 14 रज्जू लोक तीन लोक

लोक असंख्यात क्रोड़ाक्रोड़ी योजन विस्तार में है, इसमें पंचास्तिकाय भरी हुई है, अलोक में आकाश के अलावा कुछ नहीं है, लोक का प्रमाण बताने के लिए राज या रज्जू संज्ञा (माप) है। यह राज यानि रज्जू का मतलब है 3, 81, 12, 970 मण का एक भार, इस प्रकार के एक हजार भार का वजन वाला (कल्पनाशील) एक गोला, जिसको उठाकर नीचे की ओर फेंके, वह गोला 6 मास, 6 दिन, 6 प्रहर, 6 पल में जितना नीचे आवे, उतना क्षेत्र एक रज्जू कहलाता है, ऐसा 14 रज्जू लंबा (ऊँचा) यह लोक है। राज के 4 प्रकार-घन राजू (लंबाई-चौड़ाई, मोटाई में एक-एक राजू) प्रतर राजू (घनराजू का चौथा भाग) सूचिराजू (प्रतर राजू का चौथा भाग) खंडराजू (सूचि राजू का चौथा भाग) **अधोलोक**-अधोलोक 7 राजू झझेरा जाडाई में हैं, इसमें एक-एक राजू जाड़ी ऐसी 7 नरक है, इनका विस्तार इस प्रकार है-

नरक का नाम	जाड़ी राजू	चौड़ी राजू	घन राजू	प्रतर राजू	सूचि राजू	खंड रज्जू
रत्नप्रभा	1	1	1	4	16	64
शर्कराप्रभा	1	2½	6¼	25	100	400
बालुकाप्रभा	1	4	16	64	256	1024
पंकप्रभा	1	5	25	100	400	1600
धूम्रप्रभा	1	6	36	144	576	2304
तमःप्रभा	1	6½	42¼	179	676	2704
तमःतमाप्रभा	1	7	49	196	784	3136
योग	7	32	175½	702	2808	11232

तिर्च्छालोक-1800 योजन जाड़ाई में एक राजू विस्तार वाला तिर्च्छालोक है, जिसमें असंख्यात द्वीप, समुद्र (मनुष्य तिर्यंच के स्थान) और ज्योतिषी देव है, तिर्च्छा और ऊर्ध्व लोक मिलाकर 7 राजू माठेरा (कुछ कम) है। **ऊर्ध्वलोक**-समभूमि से 1½ राजू ऊपर में पहला दूसरा देवलोक, उससे 1 राजू ऊपर तीसरा चौथा देवलोक, उसमें 3/4 (पोना) राजू ऊपर पाँचवाँ, उससे 1/4 (पाव) रज्जू ऊपर छठा वहाँ से पाव रज्जू ऊपर सातवाँ, उससे पाव राजू

ऊपर आठवाँ उससे 1/2 रज्जू ऊपर नवमाँ दसवाँ उससे आधा रज्जू ऊपर ग्यारवाँ बारहवाँ देवलोक है, उससे एक रज्जू ऊपर नवग्रैवेयक उससे एक रज्जू ऊपर पाँच अणुत्तर विमान है उसका यंत्र इस प्रकार-

स्थान	जाड़ाई	विस्तार	घनराजू	प्रतर राजू	सूचिराजू	खण्डराजू
समभूमि से ऊपर	½	1	½	2	8	32
वहाँ से	½	1½	1+1/8	4½	18	72
वहाँ से	¼	2	1	4	16	64
पहला दूसरा देवलोक से	¼	2½	1½+1/16	6¼	25	100
वहाँ से	½	3	4½	18	72	288
3-4 देवलोक से	½	4	8	32	128	512
पाँचवाँ देवलोक	¾	5	18¾	75	300	1200
छठा देवलोक	¼	5	6¼	25	100	400
सातवाँ देवलोक	¼	4	4	16	64	256
आठवाँ देवलोक	¼	4	4	16	64	256
9-10 देवलोक	½	3	4½	18	72	288
11-12 देवलोक	½	2½	3+1/8	12½	50	200
वहाँ से	¼	2½	1½+1/16	6¼	25	100
9 ग्रैवेयक	¾	2	3	12	48	192
वहाँ से	½	1½	1+1/8	4½	18	72
5 अणुत्तर विमान	½	1	½	2	8	32
	7	44½	63½	254	1016	4064

ऊर्ध्वलोक 63½ घनरज्जू और संपूर्ण लोक के 343 घनराजू प्रमाण है।

अढ़ाई द्वीप

चार गतियों के समस्त जीवों में मनुष्य गति को सर्वश्रेष्ठ माना है, क्योंकि मनुष्य गति से ही जीव समस्त कर्म क्षय कर सिद्धत्व, अमरत्व प्राप्त कर सकता है। मनुष्य की उत्पत्ति का स्थान मात्र अढ़ाई द्वीप है। इन अढ़ाई द्वीपों में उत्पन्न होकर वह कर्मावरण से मुक्त हो सकता है, अन्यत्र इस की उत्पत्ति नहीं होती। आइए हम अढ़ाई द्वीप की समग्र जानकारी प्राप्त करें।

तिरछा (मध्य) लोक एक रज्जू प्रमाण है, जिसमें असंख्याता द्वीप एवं समुद्र हैं। इन सभी के बीचों बीच मध्य में जम्बूद्वीप है और अन्त में स्वयंभूरमण समुद्र है। इन सभी की गिनती की जाये तो अढ़ाई सागरोपम यानि पच्चीस क्रोड़ाक्रोड़ी उद्धार पल्योपम में जितने समय होते हैं, उतने द्वीप समुद्र हैं। सभी गोलाकार संस्थान तथा एक दूसरे से दुगुने विस्तार के हैं। प्रथम द्वीप (जंबूद्वीप) से प्रथम समुद्र दुगुना, उससे अगला द्वीप दुगुना विस्तार इस प्रकार आगे से आगे समुद्र से द्वीप और द्वीप से समुद्र एक-एक से दुगुना-दुगुना विस्तारमय है। सुप्रशस्त और सुन्दर वस्तुओं के जो नाम हैं, उन सभी नाम वाले द्वीप और समुद्र है, ऐसे एक-एक नाम वाले भी असंख्याता-असंख्याता द्वीप समुद्र हैं, जैसे जंबूद्वीप जो सर्वमध्य है, उस नाम से अन्य असंख्याता जम्बूद्वीप हैं।

जम्बूद्वीप सभी के मध्य में अवस्थित है, तिर्यक् लोक के बीचों बीच मध्यवर्ती, सभी द्वीप समुद्रों में सबसे छोटा है। इसमें जंबू सुदर्शन नाम का वृक्ष है, इसलिए इसका नाम जंबूद्वीप है। यह जगती सहित प्रमाणांगुल से (जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति वक्ष.1) एक लाख योजन लम्बा चौड़ा, थाली, कमल डोडा एवं तेल के पुए जैसे आकार का गोल है, पूर्णचंद्र, रथ के पहिए अर्थात् गोल आकार की वस्तुओं जैसा गोलाकार जंबूद्वीप है। इसकी 3,16,227 योजन 3 गाऊ 128 धनुष, 13 अंगुल, 5 यव (जव), एक जूं, एक लीख, चार बाल और एक बाल के 60/7 और उस साठिया एक भाग का यानि एक भाग में से 61 भाग करें तो, उसके दसवें भाग से कुछ अधिक विस्तार की परिधि है। अन्य सभी जम्बूद्वीप चूड़ी के आकारमय जानना चाहिए जो असंख्याता क्रोड़ा क्रोड़ी योजन लम्बाई-चौड़ाई वाले हैं, यह जम्बूद्वीप प्रथम द्वीप है, बाकी के असंख्याता द्वीप समुद्रों से घिरे हुए हैं।

जंबूद्वीप जगती सहित एक लाख योजन का है, इसके चारों तरफ लवण समुद्र है, जो जगती सहित दो लाख योजन विस्तारयुक्त है। लवण समुद्र के चारों तरफ धातकी खंड है, जगती सहित चार लाख योजन का है। उसके चारों ओर कालोदधि समुद्र, जो जगती सहित आठ लाख योजन का है। उसके चारों तरफ पुष्करवर द्वीप है, जो संपूर्ण 16 लाख योजन विस्तार का है, परन्तु आठ लाख योजन प्रमाण अर्द्धद्वीप (आधा) मानुषोत्तर पर्वत से गोलाकार घिरा हुआ है, जिसके अन्दर-अन्दर मनुष्यों की बस्ती है, बाहर का आधा द्वीप मनुष्य बिना का है। वहां मनुष्य नहीं होने के कारण पुष्करवर द्वीप का आधा भाग अढ़ाई द्वीप की गिनती में लिया है, इसलिए उसका नाम पुष्करार्द्ध द्वीप रखा है।

इस प्रकार एक लाख योजन जंबूद्वीप, चार लाख योजन (2 लाख पूर्व, 2 लाख पश्चिम) लवण समुद्र, धातकी खंड के आठ लाख योजन (4 लाख पूर्व, 4 लाख पश्चिम), कालोदधि समुद्र के 16 लाख योजन (8 लाख पूर्व में, 8 लाख पश्चिम में) मिलाकर 29 लाख योजन हुए, उसके साथ पुष्करवर द्वीप के अर्धद्वीप का पूर्व और पश्चिम के आठ-आठ लाख यों 16 लाख योजन मिलाने से 45 लाख योजन प्रमाण अढ़ाई द्वीप होते हैं, इन अढ़ाई द्वीप के अन्दर मनुष्य रहते हैं अर्थात् मनुष्य बस्ती है।

अढ़ाई द्वीप प्रमाण मनुष्य क्षेत्र के विष्कंभ (लम्बाई-चौड़ाई) का प्रमाण पूर्व से पश्चिम 45 लाख योजन है, ऐसे ही उत्तर दक्षिण में भी विष्कंभ 45 लाख योजन प्रमाण है। जो-जो शाश्वत विभाग इसमें है, उनका चित्रों सहित सामान्यतया यथास्थान विवरण दिया है। **पूर्व पश्चिम 45 लाख योजन इस प्रकार है-**

क्र.सं.	विवरण	योजन
1.	पुष्करार्द्ध द्वीप के पूर्व और पश्चिम दोनों तरफ मानुषोत्तर पर्वत के पास दो बड़े वनमुख हैं, प्रत्येक 11,688 योजन से	23,376
2.	पुष्करार्द्ध में दोनों तरफ 32-32 विजय हैं प्रत्येक की लम्बाई चौड़ाई (विष्कंभ) 19,794¼ योजन है इन्हे 32 से गुणा करने से	6,33,416
3.	पुष्करार्द्ध में 16 वक्षस्कार पर्वत है, प्रत्येक दो हजार योजन से	32,000
4.	पुष्करार्द्ध की 12 अंतर नदी, प्रत्येक 500 योजन प्रमाण से	6,000
5.	पुष्करार्द्ध के दो मेरू के दो वन, प्रत्येक वन 4,40,916 योजन प्रमाण से	8,81,832
6.	पुष्करार्द्ध के अन्दर की तरफ रहे, (समुद्र तरफ) दोनों बाजू दो वनमुख जगती के योजन बाद करके प्रत्येक 11,676 योजन प्रमाण से	23,352
7.	अढ़ाई द्वीप में जंबूद्वीप, लवण समुद्र, धातकी खंड, कालोद समुद्र इन चार की जगती पूर्व और पश्चिम दिशा दोनों तरफ की 8 जगती है, (पुष्करार्द्ध के चारों तरफ मानुषोत्तर पर्वत है, उसकी जगती अढ़ाई द्वीप पूर्ण होने पर होने से नहीं गिनी) शेष 8 जगती प्रत्येक 12 योजन प्रमाण	96
8.	कालोदधि समुद्र दोनों तरफ 8-8 लाख योजन प्रमाण गिनने से	16,00,000
9.	धातकी खंड के दोनों तरफ चार वनमुख, प्रत्येक तरफ के दोनों वनमुख जगती बाद करके 11,664 योजन प्रमाण से	23328
10.	धातकी खंड की दोनों तरफ 32 विजय, प्रत्येक विजय 9,603 और एक योजन का आठ तीसरा भाग (3/8) भाग	3,07,308
11.	धातकी खंड के दोनों तरफ 16 वक्षस्कार पर्वत, प्रत्येक एक हजार योजन	16,000
12.	धातकी खंड की 12 अंतर नदी, प्रत्येक 250 योजन से	3,000
13.	धातकी खंड के दोनों तरफ दो मेरु के पास भद्रशाल वन, प्रत्येक तरफ 2,25,158 योजन प्रमाण से	4,50,316
14.	लवण समुद्र दोनों तरफ (पूर्व पश्चिम) दो-दो लाख योजन से	4,00,000
15.	जंबूद्वीप के वनमुख की दोनों तरफ की जगती के 12-12 योजन बाद करके 2,910 योजन प्रमाण से दोनों तरफ	5,820

16.	जंबूद्वीप में महाविदेह की प्रत्येक विजय के 2,212 योजन एवं एक योजन का आठिया सात भाग (7/8) ऐसे 16 विजय है (जंबू में 32 विजय हैं, परंतु पूर्व पश्चिम में ऊपर नीचे दो-दो विजय का एक-एक भाग गिनने से 16 विजय चौड़ाई के हिसाब से गिननी, इसी तरह धातकी खंड और पुष्करार्द्ध में भी गिननी)	35,406
17.	जंबूद्वीप में 8 वक्षस्कार पर्वत हैं, प्रत्येक 500 योजन प्रमाण से	4,000
18.	जंबूद्वीप में 6 अंतर नदियां, प्रत्येक सवा सौ योजन प्रमाण	750
19.	जंबूद्वीप के मेरु तथा भद्रशाल वन का योजन	54,000
	कुल योग अढ़ाई द्वीप पूर्व-पश्चिम योजन	**45,00,000**
	दक्षिण-उत्तर विष्कंभ 45 लाख योजन इस प्रकार-	
1.	पुष्करार्द्ध में दोनों तरफ दो इक्षुकार पर्वत जगती के साथ, प्रत्येक आठ लाख योजन	16,00,000
2.	कालोदधि के प्रत्येक तरफ (दोनों) आठ-आठ लाख योजन से	16,00,000
3.	धातकी खंड के इक्षुकार पर्वत के दोनों तरफ जगती सहित चार लाख योजन प्रमाण से	8,00,000
4.	लवण समुद्र के दोनों तरफ दो-दो लाख योजन प्रमाण से	4,00,000
5.	दक्षिण भरतार्द्ध तथा दक्षिण एरवतार्द्ध प्रत्येक के 229 योजन तथा एक योजन का उन्नीसवां तीन भाग (3/19) प्रमाण से	$458\frac{6}{19}$
6.	भरत क्षेत्र में वैताढ्य पर्वत का पचास योजन	50
7.	एरवत क्षेत्र के वैताढ्य पर्वत का पचास योजन	50
8.	दक्षिण भरतार्द्ध की अयोध्या नगरी की चौड़ाई	9
9.	उत्तर एरवत की अयोध्या नगरी की चौड़ाई	9
10.	उत्तर भरतार्द्ध	$238\frac{3}{19}$
11.	दक्षिण एरवतार्द्ध	$238\frac{3}{19}$
12.	चुल्ल हिमवंत पर्वत की चौड़ाई	$1052\frac{12}{19}$
13.	शिखरी पर्वत की चौड़ाई	$1052\frac{12}{19}$
14.	हेमवंत (युगलिया) क्षेत्र की चौड़ाई	$2105\frac{5}{19}$
15.	हेरण्यवत (युगलिया) क्षेत्र की चौड़ाई	$2105\frac{5}{19}$
16.	महाहिमवंत पर्वत दक्षिणोत्तर की चौड़ाई	$4210\frac{10}{19}$
17.	रूपी पर्वत दक्षिणोत्तर की चौड़ाई	$4210\frac{10}{19}$
18.	हरिवर्ष (युगलिया) क्षेत्र की दक्षिणोत्तर की चौड़ाई	$8421\frac{1}{19}$
19.	रम्यक् वर्ष (युगलिया) क्षेत्र की दक्षिणोत्तर की चौड़ाई	$8421\frac{1}{19}$

20.	निषध पर्वत की दक्षिणोत्तर चौड़ाई	$16842\frac{2}{19}$
21.	नीलवंत पर्वत की दक्षिणोत्तर चौड़ाई	$16842\frac{2}{19}$
22.	देवकुरु (युगलिया) क्षेत्र की दक्षिणोत्तर चौड़ाई	$11842\frac{2}{19}$
23.	उत्तर कुरु (युगलिया) क्षेत्र की दक्षिणोत्तर चौड़ाई	$11842\frac{2}{19}$
24.	मेरु पर्वत का दक्षिणोत्तर विष्कंभ	10,000
	अढ़ाई द्वीप दक्षिणोत्तर विष्कंभ कुल योजन योग	**45,00,000**

अढ़ाई द्वीप में जंबूद्वीप से मानुषोत्तर पर्वत तक समय क्षेत्र कहलाता है, इसमें जो भी शाश्वत पदार्थ, नित्य पदार्थ, ध्रुव पदार्थ अवस्थित भाव से हैं, उन्हे 41 बोलों से बताया गया है।

1. खण्ड का प्रमाण- पहले बोल में (जम्बूद्वीप प्र.वक्ष. 6) खण्ड प्रमाण-जंबूद्वीप एक लाख योजन का है, इसके 190 खंड होते हैं। प्रत्येक खंड 526 योजन एवं एक योजन के 19 में से 6 भाग=526 तथा 6/19 योजन विस्तार का है इसे 190 से गुणा करने से एक लाख योजन दक्षिणोत्तर जंबूद्वीप हो जाता है। इस प्रकार 190 खंड होते हैं-

खंड	क्षेत्रादि का नाम
1	भरत क्षेत्र का एक खंड
2	चुल्लहिमवंत पर्वत दो खंड
4	हिमवंत युगलिया क्षेत्र के 4 खंड
8	महाहिमवंत पर्वत के 8 खंड
16	हरिवास युगलिया क्षेत्र के 16 खंड
32	निषध पर्वत के 32 खंड
64	महाविदेह क्षेत्र के 64 खंड
32	नीलवंत पर्वत के 32 खंड
16	रम्यक् क्षेत्र युगलिया के 16 खंड
8	रूपी पर्वत के 8 खंड
4	हेरण्यवत क्षेत्र युगलिया के 4 खंड
2	शिखरी पर्वत के 2 खंड
1	एरवत क्षेत्र का एक खंड
190 खंड	योग

2. योजन प्रमाण- दूसरे बोल में योजन प्रमाण से जंबूद्वीप के दक्षिण दरवाजे से चुल्ल हिमवंत पर्वत के ऋषभकूट तक 526 योजन 6 कला प्रमाण भरत क्षेत्र है इसी प्रकार आगे अन्य इस प्रकार से हैं-

क्र.सं.	क्षेत्रादि का नाम	योजन कला (चौड़ाई)
1	भरत क्षेत्र	526-6
2	चुल्ल हिमवंत पर्वत	1052-12
3	हेमवंत युगलिया क्षेत्र	2105-5
4	महाहिमवंत पर्वत	4210-10
5	रम्यक् वर्ष युगलिया क्षेत्र	8421-1
6	निषध पर्वत	16842-2
7	महाविदेह क्षेत्र	33684-4
8	नीलवंत पर्वत	16842-2
9	हरिवास युगलिया क्षेत्र	8421-1
10	रूक्मि (रूपी) पर्वत	4210-10
11	हेरण्यवत युगलिया क्षेत्र	2105-5
12	शिखरी पर्वत	1052-12
13	एरवत क्षेत्र	526-6
	कुल योग	**100000**

3. गणित पद- तीसरे बोल में गणित पद- सात सौ नब्बे करोड़, छप्पन लाख चौराणु हजार एक सौ पचास योजन से कुछ विशेष, इतना जम्बूद्वीप का गणित पद है। परिधि को विष्कंभ के चौथे भाग से गुणा करने से गणित पद आता है।

4. परिधि- चौथे बोल में परिधि- 3,16,227 योजन तीन गाऊ, अठाईस धनुष, 13 अंगुल झाझेरी इतनी जंबूद्वीप की परिधि तथा 15,81,139 योजन से कुछ न्यून लवण समुद्र की परिधि, 41,10,961 योजन धातकी खंड की परिधि और 91,70,205 योजन से विशेषाधिक (दुगुनी से एक भी संख्या कम हो उसे विशेषाधिक कहते हैं) परिधि कालोदधि समुद्र की तथा 1,42,30,249 योजन जितनी आभ्यंतर पुष्कराद्ध की परिधि जाननी।

5. द्वार का अंतर- पूर्व से दक्षिण, दक्षिण से पश्चिम उत्तर तक द्वारों का अंतर इस प्रकार-

क्षेत्रादि	अंतर
जंबूद्वीप के एक से दूसरे दरवाजे का	79052 योजन, एक गाऊ, 1532 धनुष, तीन अंगुल
लवण समुद्र के एक से दूसरे दरवाजे का	395280 योजन, एक गाऊ
धातकी खंड के एक से दूसरे दरवाजे का	1027735 योजन, तीन गाऊ
कालोदधि समुद्र के एक से दूसरे दरवाजे का	2292647 योजन, तीन गाऊ

यह एक से दूसरे दरवाजे का अंतर है, पुष्कराद्ध के दरवाजे नहीं है, पूर्ण पुष्कर द्वीप के (16 लाख योजन) दरवाजे हैं, अर्द्धद्वीप के नहीं है। प्रत्येक द्वीप-समुद्र की परिधि के योजन का चौथा भाग कर उसमें से दरवाजे का साढ़े चार योजन (बारणा की चौड़ाई) बाद करके, बाकी का एक से दूसरे दरवाजे का अन्तर समझना।

जंबूद्वीप के चार दरवाजे (जं.प्र. वक्ष 1) इस प्रकार- पूर्व में विजय, दक्षिण में वैजयंत, पश्चिम में जयंत, उत्तर में अपराजित। इन दरवाजों के द्वारपालों के नाम भी ये ही हैं। जम्बूद्वीप का कोट मूल में 12 योजन, मध्य में 8 योजन ऊपर में 4 योजन चौड़ा है। सभी दरवाजे 8 योजन ऊंचे और चार योजन चौड़े हैं, दोनों तरफ एक-एक गाऊ की बारसोद (बारसाख) है। जंबूद्वीप के दरवाजों के सामने चारों तरफ समानान्तर एक सरीखे सभी द्वीप-समुद्रों के दरवाजे हैं। सभी के नाम एक सरीखे हैं।

6. वर्षधर क्षेत्र- (जंबूद्वीप प्र. वक्ष. 6, ठाणांग 7 सूत्र 555, सम. 7 सूत्र 5) छठे बोल में सात वर्षधर क्षेत्र जंबूद्वीप में कहे हैं, भरत, हेमवत युगल क्षेत्र, हरिवास युगल क्षेत्र, एरवत, हेरण्यवत युगल क्षेत्र, रम्यक वास युगल क्षेत्र, महाविदेह क्षेत्र ये सात जंबूद्वीप में, तथा धातकी खंड में इनसे दुगुने यानि 14 वर्षधर क्षेत्र है, पुष्करार्द्ध में भी 14 वर्षधर क्षेत्र यों सभी मिलाकर 35 क्षेत्र अढ़ाई द्वीप में है। इनकी लम्बाई चौड़ाई आगे कही जायेगी।

7. वर्षधर पर्वत- 1. चुल्ल हिमवंत 2. महाहिमवंत 3. निषध 4. शिखरी 5. रूपी (रुक्मि) 6. नीलवंत 7. मेरु ये 7 जंबूद्वीप में है, **धातकी खंड** में इनसे दुगुने यानि चौदह है। सभी जंबूद्वीप के प्रमाण ऊंचे हैं, परन्तु लंबाई में चार-चार लाख योजन है।

चौड़ाई- दो चुल्लहिमवंत, दो शिखरी ये चार पर्वत 2105 योजन तथा योजन का 5वां भाग तथा दो महाहिमवंत और दो रूपी (रुक्मि) ये चार पर्वत 8421 योजन और योजन का एक भाग है। दो निषध तथा दो नीलवंत पर्वत ये चारों 33,684 योजन और योजन का चार भाग ऊपर है।

पुष्कराद्ध में भी जंबूद्वीप से दुगुने 14 पर्वत हैं, ये सभी लंबाई में 8 लाख योजन प्रमाण है, **चौड़ाई** में दो चुल्ल हिमवंत दो शिखरी ये 4 पर्वत 4,210 योजन तथा योजन का 10वां भाग है। दो महाहिमवंत तथा दो रुक्मि ये 4 पर्वत 16,842 योजन तथा ऊपर दो भाग है। तथा दो निषध दो नीलवंत ये चार पर्वत 67,368 योजन ऊपर योजन का 8वां भाग है।

पांच मेरु की ऊंचाई चौड़ाई- प्रथम जंबूद्वीप का मेरु एक हजार योजन धरती में गहरा है (ठाणांग 10 सूत्र 721, सम. 84/6, 85/2, 99/1) और 99 हजार योजन ऊपर ऊंचा है। कुल एक लाख योजन ऊंचा है। मूल में मेरु समतल भूमि (पृथ्वी) तक एक हजार योजन ऊंचा है तथा समतल भूमि से 500 योजन ऊपर नंदनवन, नंदनवन से 62,500 योजन ऊंचा सौमनस वन है, सौमनस वन से 36,000 योजन ऊंचा पंडक वन है, इस प्रकार ऊंचाई का एक लाख योजन हुआ। ऊपर 40 योजन की ऊंची चूलिका है, चोटी जैसी। **मेरु की चौड़ाई-** मूल धरती में 10,090 योजन तथा एक योजन के 11 में से 10 भाग इतनी चौड़ाई है। उसमें से प्रदेश-प्रदेश कम होते समभूमि पर दस हजार योजन चौड़ाई है। नंदन वन के पास 9,954 योजन तथा एक योजन का 11 में से 6 भाग प्रमाण है। सौमनस वन के पास 4,272 योजन उपरांत 11 में से 8 भाग एक योजन का विष्कंभ है। पंडक वन के पास 1,000 योजन विष्कंभ है। धातकी खंड के दो तथा पुष्करार्द्ध द्वीप में भी दो यों चार मेरु हैं। ये प्रत्येक एक हजार योजन पृथ्वी में है और 84 हजार योजन ऊपर है। कुल 85 हजार योजन ऊंचे हैं, इन चारों पर चूलिकाएं नहीं है, इस प्रकार अढ़ाई द्वीप में 35 वर्षधर पर्वत है।

8. शाश्वत पर्वत संख्या- अढ़ाई द्वीप में शाश्वत् पर्वत इस प्रकार- जंबूद्वीप में 7 वर्षधर पर्वत ऊपर कहे हैं, तथा 34 वैताढ्य पर्वत है। इस प्रकार-एक भरत क्षेत्र के मध्य, एक एरवत क्षेत्र के मध्य तथा 32 विजय

महाविदेह की है, उनमें 32 पर्वत हैं। चार युगलिया क्षेत्र के मध्य चार गोल वृत्त वैताढ्य हैं तथा कुरुक्षेत्र के यमक, समक, चित्र और विचित्र ये चार, नीलवंत के दो गजदंता, निषध के दो गजदंता ये चार गजदंता पर्वत हैं। निषध के नीचे पांच कुंड के दोनों तरफ 100 कंचन गिरी हैं और नीलवंत के 5 कुंड के दोनों ओर 100 कंचन गिरी हैं। कुल 200 कंचनगिरी हुए। महाविदेह में पूर्व पश्चिम कुल 16 वक्षस्कार पर्वत हैं, ये सभी कुल 269 पर्वत जंबूद्वीप में हुए। इनसे दुगुने 538 धातकी खंड में हैं, इनमें दो इक्षुकार पर्वत मिलाने से 540 पर्वत हुए। धातकी खंड की तरह पुष्करार्द्ध में भी 540 पर्वत जानना। लवण समुद्र में चार दिशा के वेलंधर देवों के 8 पर्वत मिलाने से कुल 1,357 शाश्वत पर्वत अढ़ाई द्वीप में होते हैं।

9. शाश्वत कूट– जंबूद्वीप में 269 पर्वत हैं उनके ऊपर कूट इस प्रकार हैं- वैताढ्य पर्वत 34 हैं, उनके प्रत्येक पर 9 कूट है कुल 306 कूट, चुल हिमवंत पर 11, महाहिमवंत पर आठ, निषध पर नौ, शिखरी पर ग्यारह, रुक्मि पर आठ, नीलवंत पर नौ, दो गजदंत पर नौ-नौ तथा दो गजदंत पर सात-सात यों चारों गजदंत पर 32 कूट, 16 वक्षस्कार पर्वतों पर चार-चार से 64 कूट, मेरु पर नौ कूट हैं यों कुल 61 पर्वत के ऊपर 467 कूट हुए तथा यमकादि चार तथा वृत्त वैताढ्य चार यों 8 पर्वतों पर कूट नहीं हैं। धातकी खंड में इनसे दुगुने 934 तथा पुष्करार्द्ध में भी 934 कुल मिलाकर 2,335 कूट अढ़ाई द्वीप में हैं।

10. ऋषभकूट– चक्रवर्त्ती अपना नाम लिखते हैं, उसे ऋषभकूट पर्वत कहते हैं। जंबूद्वीप में 32 विजय के नीलवंत पर्वत के पास 16 तथा निषध पर्वत के पास 16 कूट हैं ये 32 तथा भरत क्षेत्र के चुल हिमवंत पर्वत के पास एक तथा एरवत क्षेत्र के शिखरी पर्वत के पास एक कूट यों कुल 34 ऋषभकूट जंबूद्वीप में हैं, इनसे दुगुने 68-68 कूट धातकी खंड तथा पुष्करार्द्ध में है। कुल 170 ऋषभकूट अढ़ाई द्वीप में हैं।

11. कोटिशिला– तीन खंड साधकर वासुदेव जो शिला उठाते हैं, वह कोटिशिला है। ऐसी शिला जंबूद्वीप में 34, धातकी खंड में 68, पुष्करार्द्ध में 68 यों 170 कोटिशिलाएं हैं।

12. गुफाएं– प्रत्येक वैताढ्य पर्वत के तमिश्रा और खंड प्रपात ऐसी दो-दो गुफाएं हैं, इस प्रकार जंबूद्वीप के 34 वैताढ्य की 68 गुफाएं, धातकी खंड के 68 वैताढ्य की 136 गुफाएँ तथा पुष्करार्द्ध की 136 गुफाएँ, यों 340 गुफाएँ अढ़ाई द्वीप में हैं।

13. बिल– जंबूद्वीप में भरत क्षेत्र की गंगा और सिंधु इन दो नदियों के 72 बिल तथा एरवत क्षेत्र की रक्ता और रक्तावती नदी के 72 बिल तथा 32 विजय में भी प्रत्येक विजय की गंगा और सिंधु इन दो नदियों के 72-72 बिल गिनने से 2,304 बिल महाविदेह में है कुल 2,448 जंबूद्वीप में तथा धातकी खंड में 4,896 तथा पुष्करार्द्ध में 4,896 कुल 12,240 बिल अढ़ाई द्वीप में हैं।

14. तीर्थ संख्या– मागधादि तीर्थ संख्या जंबूद्वीप में मागध, वरदाम और प्रभास ये तीन तीर्थ चक्रवर्त्ती साधते हैं। भरत के तीन तीर्थ दक्षिण दरवाजे समुद्र में है, एरवत के तीन तीर्थ उत्तर दरवाजे समुद्र में है, ये 6 तीर्थ हुए। पूर्व महाविदेह की 16 विजय है, वहां आमने-सामने 8-8 विजय बीच सीता नदी में तीन-तीन तीर्थ गिनने से 16×3=48 तीर्थ तथा पश्चिम महाविदेह में 16 विजय आमने-सामने 8-8 विजय है। बीच में सीतोदा नदी में आमने-सामने तीन-तीन तीर्थ गिनने से 48 तीर्थ ये 96 तीर्थ हैं। भरत-एरवत के तीन-तीन मिलाने से 96+3+3=102 तीर्थ जंबूद्वीप में हैं, इनसे दुगुने धातकी खंड में 204 तथा पुष्करार्द्ध में 204 यों कुल अढ़ाई द्वीप में 510 तीर्थ हैं।

15. खंड संख्या- पांच भरत, पाँच एरवत तथा पांच महाविदेह की 32 विजय के 160 स्थान यों कुल 5+5+160=170 स्थानक अढ़ाई द्वीप में हुए। इन प्रत्येक में 6-6 खंड होने से 170×6=1,020 खंड हुए। जंबूद्वीप में 204, धातकी खंड में 408, पुष्करार्द्ध में 408 खंड जानना।

16. खंडों में देश संख्या- 6 खंड (एक स्थानक) में 32 हजार देश होते हैं। कुल देश संख्या जंबूद्वीप में एक भरत, एक एरवत, 32 विजय इन 34 स्थानों में 6-6 खंड हैं, प्रत्येक स्थानक के 32 हजार देश गिनने से 10,88,000 देश जंबूद्वीप में है, तथा इनसे दुगुने धातकी खंड में 21,76,000 तथा पुष्करार्द्ध में 21,76,000 देश है, कुल 54,40,000 देश अढ़ाई द्वीप में हैं।

17. छह खंडों में अनार्य आर्य खंड- 6 खंडों में 5 अनार्य खंड, एक आर्य खंड है। आर्य खंड में अयोध्या नगरी है इसकी संख्या-जंबूद्वीप में 34 धातकी खंड में 68 पुष्करार्द्ध में 68 यों 170 अयोध्या नगरियां अढ़ाई द्वीप में हैं। आर्य खंड भी 170 हैं। अयोध्या नगरी 12 योजन लंबी 9 योजन चौड़ी है। इसी प्रकार सभी का प्रमाण समझना। जहां आर्य खंड है, वहीं धर्म होता है, उसी में तीर्थंकर, गणधर, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव प्रमुख 63 शलाका (श्लाघनीय) पुरुष उत्पन्न होते हैं। उन्हीं आर्यखंडों में से मोक्ष गमन होता है। पांच अनार्य खंड में धर्म नहीं होता, क्योंकि वहां सभी म्लेच्छ उत्पन्न होते हैं।

18. किस खंड में कितने देश- 6 खंड में कुल 32 हजार देश होते हैं। उनमें से पाँच अनार्य खंड में प्रत्येक में 5,336 देश होते हैं और छठे आर्य खंड में 5,320 देश होते है। उनमें से 25½ (साढ़े पच्चीस) देश आर्य और बाकी देश अनार्य होते हैं। इस प्रकार अढ़ाई द्वीप के सभी खंडों में देशों की मर्यादा जाननी।

19. विद्याधर आदि श्रेणियां- विद्याधर और आभियोगिक देवों की वैताढ्य पर्वत पर श्रेणियां इस प्रकार- प्रत्येक वैताढ्य के तीन कांड है, इसमें समतल भूमि से 10 योजन ऊपर प्रथम कांड है, उनमें दक्षिण तरफ 50 नगर तथा उत्तर तरफ 60 नगर विद्याधरों के हैं। यों दो-दो श्रेणियां विद्याधरों की है यों जंबूद्वीप में 34 वैताढ्य की 68 श्रेणियां विद्याधरों की है तथा इनसे दुगुनी 136-136 धातकी खंड तथा पुष्करार्द्ध में समझनी। वैताढ्य के प्रथम कांड से 10 योजन ऊपर दूसरा कांड है, जहां उत्तर दक्षिण दोनों तरफ आभियोगिक देवों की दो श्रेणियां हैं। पूर्व कहे अनुसार 340 श्रेणियां अढ़ाई द्वीप में है। यों दोनों की 340-340 श्रेणियां कुल 680 श्रेणियां अढ़ाई द्वीप में है।

20. द्रह संख्या- जंबूद्वीप में 16 द्रह है हिमवंत पर्वत पर पद्मद्रह, महाहिमवंत पर्वत पर महापद्मदह, निषध पर्वत पर तिगिच्छद्रह, शिखरी पर्वत पर पुंडरीक द्रह और पांचवे रुक्मि पर्वत पर महापुंडरीक द्रह तथा नीलवंत पर्वत पर केशरी द्रह इस प्रकार 6 द्रह पर्वतों पर हैं, शेष 10 द्रह धरती पर इस प्रकार-

निषध पर्वत पर से शीतोदा नदी पृथ्वी पर पड़ती है वह पांच द्रहों को दो विभागों में विभक्त करती हुई आगे बढ़ती है।

1. निषध द्रह 2. देवकुरु द्रह 3. सुरप्रभद्रह 4. सुलस द्रह 5. विद्युतप्रभ द्रह ये पांच। नीलवंत पर्वत पर से सीता नदी गिरती है वह पांच द्रहों में इसी प्रकार होकर आगे जाती है- ये 1. नीलवंत द्रह 2. उत्तर कुरुद्रह 3. चंद्रद्रह 4. एरवत द्रह 5. माल्यवंत द्रह इस प्रकार ये 10 द्रह धरती पर हैं, इनमें पूर्वोक्त 6 द्रह मिलाने से 16 द्रह जम्बूद्वीप में है, इसके दुगुने 32 द्रह धातकी खंड और 32 द्रह पुष्करार्द्ध में यों कुल मिलाकर अढ़ाई द्वीप में 80 द्रह हैं।

21. द्रहों की देवियां- चुल्ल हिमवंत पर्वत पर पद्म द्रह हैं इसके मध्य में एक मुख्य बड़ा कमल है। उसके बाद लघु कमलों के 6 वलय हैं, उनमें 1,20,50,120 लघु कमलों का घेरा है। बड़े (मुख्य) कमल पर श्री देवी रहती है। पद्मद्रह 10 योजन गहरा, पांच सौ योजन चौड़ा, एक हजार योजन लम्बा है। श्री देवी भवनपति देवी की जाति की है। महाहिमवंत पर्वत पर महापद्म द्रह 10 योजन गहरा, 1000 योजन चौड़ा, 2 हजार योजन लम्बा है। मध्य में बड़ा कमल उसके बाहर 12 वलयों में 2,41,00,240 लघु कमल हैं (चारों तरफ घेरा है कमलों का)। मध्य कमल पर ह्री देवी का वास है। निषध पर्वत पर तिगिच्छ द्रह है, उसके मध्य मुख्य कमल के चारों तरफ 24 वलयों में 4,82,00,480 कमल है (घेरा है)। वहां धृति देवी का निवास है, एक पल्य की देवी की आयु है, यह द्रह 10 योजन गहरा, 2 हजार योजन चौड़ा, 4 हजार योजन लम्बा है। एरवत क्षेत्र के शिखरी पर्वत पर पुंडरीक द्रह है, यह चुल्ल हिमवंत पर्वत के पद्म द्रह की तरह है, इसमें लक्ष्मी देवी का निवास है, देवी का एक पल्य का आयुष्य है। पांचवें रुक्मि पर्वत पर महापुंडरीक द्रह है, यह महाहिमवंत पर्वत के महापद्म द्रह जैसा है इस पर बुद्धि देवी का निवास स्थान है, जिसका एक पल्य का आयुष्य है। छठे नीलवंत पर्वत पर केशरी द्रह है, यह निषध पर्वत के तिगिच्छ द्रह जैसा है, इसमें कीर्त्ति देवी का निवास है, इनका एक पल्य का आयुष्य है। ये 6 वर्षधर पर्वतों के 6 द्रह है, इनकी देवियों का वर्णन इस प्रकार है।

पर्वत	द्रह	देवी	गहराई × चौडाई × लम्बाई	कमल
चुल्ल हिमवंत पर्वत	पद्मद्रह	श्री देवी	10 × 500 × 1000 योजन	1,20,50,120
महाहिमवंत	महापद्मद्रह	ह्री देवी	10 × 1000 × 2000 योजन	2,41,00,240
निषध पर्वत	तिगिच्छ द्रह	धृति देवी	10 × 2000 × 4000 योजन	4,82,00,480
शिखरी पर्वत	पुंडरीक द्रह	लक्ष्मी देवी	10 × 500 × 1000 योजन	1,20,50,120
रुक्मि पर्वत	महापुंडरीक द्रह	बुद्धि देवी	10 × 1000 × 2000 योजन	2,41,00,240
नीलवंत पर्वत	केशरी द्रह	कीर्त्ति देवी	10 × 2000 × 4000 योजन	4,82,00,480

पृथ्वी पर 10 द्रह है इनमें देवताओं का निवास है, जिस प्रकार पर्वत पर लक्ष्मी देवी वगैरह की संख्या संकलन बताई, उसी प्रकार देव कुरु-उत्तर कुरु में बड़ा जंबू वृक्ष है, वह भी इतने ही लघु जम्बू वृक्षों से घिरा है (आगे विवरण है) इस प्रकार जंबूद्वीप में 6 देवियां 10 देवता हैं। इसी प्रकार धातकी खंड में दुगुने 12 देवी 20 देवता और पुष्करार्द्ध में भी 12 देवी 20 देवता यो मिलकर 30 देवियां 50 देवता अढ़ाई द्वीप में हैं।

22. अढ़ाई द्वीप की नदियां- जंबूद्वीप में कुल 14,56,000 नदियां है। मूल 14 महा नदियां है। भरत क्षेत्र में गंगा, सिंधु, एरवत में रक्ता, रक्तवती, ये चार महा नदियों के 14-14 हजार नदी परिवार है। हेमवंत क्षेत्र में रोहिता, रोहितांसा, हेरण्यवत में रुप्यकला, सुवर्णकला इन चार महानदियों के 28-28 हजार नदी परिवार है। हरिवास में हरिकांता, हरि सलिला, रम्यकवास में नरकांता नारीकांता इन चार महानदियों के 56-56 हजार नदी परिवार है। पूर्व महाविदेह में सीता, पश्चिम महाविदेह में सीतोदा इन दो महानदियों के 10,64,000 नदी परिवार है। ये 14 महानदियां जंबूद्वीप में हुई। सीता नदी नीलवंत पर्वत से निकलकर पूर्व महाविदेह में गई, इसके दोनों तरफ 8-8 विजय है, इन 16 विजयों की गंगा और सिंधु ये 32 तथा 6 अन्तर नदियां मिलाकर 38 महानदियां हुई, इनके प्रत्येक के 14 हजार नदी परिवार से 5,32,000 नदी परिवार हुआ। ये सभी सीता महानदी में गिरती हैं। इसी प्रकार

निषध पर्वत से सीतोदा नदी निकली, जो पश्चिम महाविदेह में गई वहां उसके भी 5,32,000 नदी परिवार हैं ये दोनों महानदियों के इस प्रकार 10,64,000 नदी परिवार तथा पूर्वोक्त 12 महानदियों के 3,92,000 नदी परिवार मिलाने से 14,56,000 नदी परिवार हुआ। जम्बू द्वीप से दुगुना नदी परिवार धातकी खंड में 29,12,000 तथा पुष्करार्द्ध में भी 29,12,000 नदी परिवार है। यों कुल अढ़ाई द्वीप में 72,80,000 नदी परिवार है।

क्षेत्र (जम्बूद्वीप)	महानदियां	नदी परिवार	कुल नदियां
भरत क्षेत्र	गंगा, सिंधु	14000	28000
एरवत क्षेत्र	रक्ता, रक्तवती	14000	28000
हेमवंत (युग.) क्षेत्र	रोहिता, रोहितांसा	28000	56000
हेरण्यवत (युग.) क्षेत्र	रूप्यकला, सुवर्णकला	28000	56000
हरिवास (युग.) क्षेत्र	हरिकांता, हरिसलिला	56000	112000
रम्यक वास (युग.) क्षेत्र	नरकांता, नारीकांता	56000	112000
पूर्व महाविदेह	सीता (16 गंगा, 16 सिंधु, 6 अंतर नदी)	38×14000	532000
पश्चिम महाविदेह	सीतोदा (16 गंगा, 16 सिंधु, 6 अंतर नदी)	38×14000	532000
धातकी खंड द्वीप	जम्बू से दुगुनी		2912000
पुष्करार्द्ध द्वीप	जम्बू से दुगुनी		2912000
		नदियां	**7280000**

23. नदियों की लम्बाई चौड़ाई- भरत और एरवत की दो-दो ये चार महानदियों की मूल में चौड़ाई 6¼ (सवा छः) योजन, बढ़ती हुई समुद्र में प्रवेश करे तब 62½ (साढ़े बासठ) योजन चौड़ी है, शेष वर्णन इस चार्ट से-

क्षेत्र की नदी	मूल में चौड़ाई	समुद्र में गिरते चौड़ाई
भरत, एरवत की 4	सवा छः योजन	साढ़े बासठ योजन
हेमवंत, हेरण्यवत की 4	साढ़े बारह योजन	125 योजन
हरिवास, रम्यकवास की 4	25 योजन	250 योजन
सीता सीतोदा 2	50 योजन	500 योजन

धातकी खंड और पुष्करार्द्ध की नदियों की चौड़ाई भी नदियों की दुगुनी संख्या से जानना।

24. अढ़ाई द्वीप में वृक्ष- जम्बूद्वीप में देवकुरु क्षेत्र में एक बड़ा जंबू वृक्ष है, जिसके लघु जम्बूवृक्ष के 6 वलय है, बड़ा जम्बू इन लघु जम्बु वृक्षों से घिरा हुआ है। 6 वलयों के जम्बु वृक्षों की संख्या 1,20,50,120 है। बड़ा जम्बू इन सभी के बीच में (घिरा हुआ चारों ओर से) है। इस पर अनादृत देव रहता है।

इसी प्रकार उत्तर कुरु में शाल्मलि वृक्ष (विवरण उपरोक्त) है उस पर गरुड़ देव का निवास है। धातकी खंड में 2 देवकुरु, उसमें दो बड़े शाल्मलि वृक्ष है, इनके 12 लघु वलय है वृक्ष संख्या 2,41,00,240 लघु शाल्मलि वृक्ष हैं। इन पर भी गरुड़ देव रहते हैं। धातकी खंड के 2 उत्तर कुरु में दो बड़े धावड़ी वृक्ष हैं, प्रत्येक धावड़ी वृक्ष

12 लघु वलयों के धावड़ी वृक्षों से चारों ओर से घिरा है 2,41,00,240 धावड़ी वृक्ष है। उन पर सुदर्शन और प्रिय दर्शन दो देवों के निवास हैं। पुष्करार्द्ध के महाविदेह के 2 देवकुरु में दो बड़े शाल्मलि वृक्ष है, जिसके 24 वलय है, इनकी वृक्ष संख्या 4,82,00,480 है बड़े वृक्ष पर गरुड़ देव का निवास है। पुष्करार्द्ध के उत्तर कुरु में एक मोटा पद्म वृक्ष है जिसके 24 वलय है, इसके ऊपर पद्म देव का निवास है। पुष्करार्द्ध के पश्चिम महाविदेह के उत्तर कुरु में मुख्य पद्म वृक्ष 24 वलयों से घिरा है (संख्या पूर्ववत्) उस पर पुंडरीक देव का निवास है। ये सभी मुख्य वृक्ष वेदिका और वनखंडों सहित है। इनकी पीठ 500 योजन चौड़ी 12 योजन ऊंची है। वृक्षों पर देवनिवास स्थान तथा जिनभवन है, सभी वृक्ष रत्नमय पृथ्वीकाय के हैं, शाश्वता हैं।

25. विजयों की चौड़ाई- जंबूद्वीप की प्रत्येक विजय वक्षस्कार पर्वत तक चौड़ी यानि 2,213 योजन (कुछ न्यून) है, नीलवंत पर्वत से सीता नदी तथा निषध पर्वत से सीतोदा नदी तक 16,592 योजन दो कला जितनी लम्बी है। धातकी खंड में प्रत्येक विजय 9,603 योजन तथा सोलहवां 6 भाग (6/16) भाग जितनी चौड़ी तथा 16 विजय 1,53,654 योजन चौड़ी है। पुष्करार्द्ध की एक-एक विजय 19,794¼ योजन चौड़ी है, 16 विजय 3,16,708 योजन चौड़ी है।

26. अन्तर नदियों की चौड़ाई- जम्बूद्वीप के महाविदेह की 12 अन्तर नदियों की 125 योजन चौड़ाई है, धातकी खंड की प्रत्येक अन्तर नदी 250 योजन चोड़ी, पुष्करार्द्ध की प्रत्येक अन्तर नदी 500 योजन चौड़ी है। 12+24+24=60 अन्तर नदियां अढ़ाई द्वीप में है।

27. वक्षस्कार पर्वत- जम्बूद्वीप के वक्षस्कार पर्वत 500 योजन ऊंचे और चौड़े है। धातकी खंड के 1,000 योजन ऊंचाई, चौड़ाई, पुष्करार्द्ध में चौड़ाई, ऊंचाई 2,000 योजन है।

28. वनमुख- जम्बूद्वीप में दरवाजे के आगे पूर्व पश्चिम में एक-एक वनमुख जगती के साथ 2,922 योजन का है, धातकी खंड का एक-एक वनमुख 11,688 योजन का है। पुष्करार्द्ध का एक-एक वनमुख 11,688 योजन का है।

29. भद्रशाल वन- जम्बूद्वीप में भद्रशाल वन 22,000 योजन लम्बा है, धातकी खंड में प्रत्येक (एक-एक) भद्रशाल वन मेरु पर्वत सहित 2,25,158 योजन लम्बा है और पुष्करार्द्ध में प्रत्येक भद्रशाल वन 4,40,916 योजन लम्बा है।

30. गजदंतगिरी- (20 गजदंत गिरी)- जम्बूद्वीप में निषध पर्वत से दो गजदंत पर्वत निकले, मेरु पर्वत तरफ गये है- इनमें से पहला सौमनस गजदंत सफेद रंग का है, वह आग्नेय कोण में मुड़ा। दूसरा विद्युत्प्रभ गजदंत लाल वर्ण का है, नैऋत्य कोण में गया। नीलवंत पर्वत से दो गजदंत निकले जो मेरु तरफ चले, उनमें से पहला गंधमादन गजदंत पीला वर्ण का है, जो वायव्य कोण में मुड़ गया दूसरा माल्यवंत गजदंत नीलवर्णी है। यह ईशानकोण में मुड़ा। ये **चार गजदंत** समझना। ये चारों गजदंत पर्वत 30,209 योजन 6 कला लम्बा है। निषध-नीलवंत से निकले वहां धरती से 400 योजन ऊंचा है, बढ़ते बढ़ते मेरु पर्वत के पास 500 योजन ऊंचाई हो गई हैं। इसी प्रकार **धातकी** खंड में पूर्व- पश्चिम में दो मेरु पर्वत हैं इसलिए वहां **8 गजदंत पर्वत** हैं, जम्बूद्वीप की तरह 2-2 यों चार गजदंत 3,56,227 योजन लम्बाई है। दूसरे 2-2 चार गजदंत 5,69,259 योजन लम्बा है। **पुष्करार्द्ध** में भी दो मेरु **8 गजदंत** पर्वत है। आगे की तरफ की दो-दो यों चार गजदंत धातकी की तरह 16,26,116 योजन लम्बा है, पीछे की तरफ के दो-दो यों चार गजदंत 20,43,219 योजन लम्बे है। सभी गजदंत मेरु तरफ जाते प्रथम 400 योजन ऊंचे और अंत में मेरु के पास 500 योजन ऊंचे हैं।

31. इक्षुकार पर्वत- जम्बूद्वीप में इक्षुकार पर्वत नहीं है। धातकी खंड में दो इक्षुकार पर्वत हैं। बीच में आ जाने से दो भरत दो एरवत बन जाते हैं इनकी लम्बाई चार-चार लाख योजन है, ऊंचाई 500 योजन है, चौड़ाई एक हजार योजन है। ऊपर में एक-एक जिन प्रासाद है। पुष्कराद्ध द्वीप में भी दो पर्वत है, यह भी बीच में आ जाने से दो-दो भरत एरवत बन गये है, इनकी लम्बाई 8 लाख योजन, चौड़ाई एक हजार योजन, ऊंचाई 500 योजन है। इनके ऊपर एक-एक जिन प्रासाद है। इक्षु का अर्थ है गन्ना, सांठा, सेलड़ी जैसे यह लम्बा होता है, वैसे ही यह पर्वत भी लम्बा है, इसलिए इसका नाम इक्षुकार पर्वत है।

32. वृत्त वैताढ्य- जम्बूद्वीप में भरत क्षेत्र तरफ हेमवंत युगल क्षेत्र में शब्दापाती वृत्त वैताढ्य है, हरिवास युगल क्षेत्र में गंधापाती वृत्त वैताढ्य है। एरवत क्षेत्र तरफ हेरण्यवत युगल क्षेत्र में विकटापाती वृत्त वैताढ्य और रम्यकवास युगल क्षेत्र में माल्यवंत वृत्त वैताढ्य है। ये चार जम्बूद्वीप में है। इन्ही नामों से 8 वृत्त वैताढ्य धातकी खंड में और 8 पुष्कराद्ध में है। कुल अढ़ाई द्वीप में 20 वृत्त वैताढ्य है, सभी वैताढ्य पर्वत पाले के आकारवत गोल हैं, मूल में एक हजार, ऊपर भी एक हजार, ऊंचाई भी एक हजार योजन है।

33. यमक समक पर्वत- जम्बूद्वीप के उत्तर कुरु में यमक और समक तथा देवकुरु में चित्र-विचित्र ये दो कुल चार पर्वत है, धातकी खंड तथा पुष्कराद्ध में 8-8 पर्वत यों ढ़ाई द्वीप में 20 पर्वत है। ये सभी एक-एक हजार योजन ऊंचे है।

34. कंचन गिरि पर्वत- जम्बूद्वीप में निषध पर्वत के नीचे शीतोदा नदी के दोनों तरफ कुल 100 कंचन गिरि है तथा नीलवंत पर्वत के नीचे सीता नदी के दोनों तरफ दोनों बाजू में 100 कंचन गिरि है, यों जम्बू द्वीप में 200 कंचन गिरि है। इनसे दुगुने 400-400 धातकी खंड और पुष्कराद्ध में है। अढ़ाई द्वीप में कुल 1000 कंचन गिरि है। इनके ऊपर तिर्यक् जृंभक देवता का निवास है। इन सभी पर्वतों की ऊंचाई 100-100 योजन है।

35. युगलिया क्षेत्र- जम्बूद्वीप में भरत की दिशा में पहला हेमवत युगल क्षेत्र है एरवत दिशा में पहला हेरण्यवंत युगल क्षेत्र है, इनमें तीसरे आरा जैसा भाव वर्तता है। वहां के मनुष्यों का शरीर एक गाऊ प्रमाण है, एक पल्योपम आयुष्य है। एकान्तर से (आमला (आंवला) प्रमाण) आहार कल्पवृक्षों से प्राप्त होता है। 64 पसलियां होती है। संतान का पालन 79 दिन करते हैं, माता पिता 79 दिन पालन पोषण करके देवगति में जाते हैं। भरत की तरफ हरिवास और एरवत की तरफ रम्यक क्षेत्र हैं इन दोनों युगल क्षेत्रों में दूसरे आरे जैसा वर्ताता है, इनका शरीर (युगलियों का) दो गाऊ प्रमाण, आयुष्य दो पल्योपम, 128 पसलियां और छट्ठ भक्त आहार है। 64 दिन संतान (युगलिया) का पालन कर माता पिता स्वर्ग जाते हैं। इस हरिवास में एक वनमाला नामक राजा युगलिया था, जिसका एक द्वेषी वीराशालवी नामक जीव किल्विषी देव बना, उसने क्रोधवश इस युगलिये को नरक में भेजने के लिए हरिवास से अपहरण कर(उठाकर) चंपा नगरी में रखा और दो पल्योपम के आयुष्य को तोड़कर उस समय प्रमाण आयुष्य पूर्ण किया (एक करोड़ पूर्व बाकी रहने पर) उस युगलिये को राज सिंहासन पर बिठाकर, मद्य, मांस, कुकर्म सिखाकर नरक में भेजा। यह एक आश्चर्यजनक घटना (अच्छेरा) हुई। यह घटना हरिवास क्षेत्र में हुई।

निषध पर्वत के नीचे देवकुरु क्षेत्र, दूसरी तरफ नीलवंत पर्वत के नीचे उत्तर कुरु ये दोनों युगल क्षेत्र है। इनमें पहला आरावत् वर्तता है, इनका शरीर तीन गाऊ प्रमाण, आयुष्य तीन पल्योपम, 256 पसलियां है। 49 दिन संतान

का पालन करते हैं। तुवर प्रमाण कल्पवृक्ष से आहार, अठ्ठम भक्त (चौथे दिन) आहार करते हैं। इनके पुण्य प्रभाव से 10 प्रकार के कल्पवृक्ष आहारादि सभी जरूरत की वस्तुएं देते हैं। यह इन वृक्षों का स्वभाव है, ये वस्तुएं देवता नहीं देते। ये सभी युगल भद्रिक स्वभाव वाले होते हैं। इनमें क्रोध नहीं होता, मात्र छींक उबासी खांसी आते ही मरण हो जाता है। इस प्रकार जम्बूद्वीप में 6 युगलिया क्षेत्र हैं, उससे दुगुने 12 क्षेत्र धातकी खंड में तथा 12 पुष्करार्द्ध में है, सभी सरीखे भाव है, एक सरीखी मर्यादा आदि कथन है। कुल 30 युगलिया क्षेत्र अढ़ाई द्वीप में हैं।

36. छप्पन अन्तर द्वीप- जम्बूद्वीप में भरत तरफ चुल्ल हिमवंत पर्वत और एरवत तरफ शिखरी पर्वत है। जम्बूद्वीप के कोट से पर्वत की चार-चार दाढ़ा निकली है, जो विदिशा तरफ मुड़ गई, लवण समुद्र के पाणी से ऊपर ऊंची दिखती है। अढ़ाई योजन ऊंची तथा 8,400 योजन लम्बी है। ये आठ दाढ़ाएं अद्धर गई है। एक-एक दाढ़ा पर 7-7 अन्तर द्वीप है, 8 दाढ़ा के 56 अन्तर द्वीप हुए। इनके ऊपर युगलिया निवास करते हैं। इनका शरीर 800 धनुष का, आयुष्य पल्योपम के असंख्यातवें भाग का होता है, ये मरकर भवनपति आदि देवों में उत्पन्न होते हैं। इन द्वीपों में तीसरे आरे के अन्त में जैसा भाव वर्तता है (नाभिराजा के पिता छठे कुलकर थे, उस समय जैसा)। ऐसा भाव यहां हमेशा विद्यमान रहता है।

37. महाविदेह क्षेत्र- महाविदेह क्षेत्र में चौथा आरा जैसा भाव वर्तता है। 500 धनुष का शरीर प्रमाण, पूर्व कोटि वर्ष आयुष्य, नित्याहारी होते हैं। जम्बूद्वीप के विदेह क्षेत्र में चार तीर्थंकर हैं। पूर्व विदेह के वनमुख के समीप आठवीं पुष्कलावती विजय में पुंडरीकणी नगरी है, जहां सीमंधर नाम के तीर्थंकर विरहमान है, तथा पश्चिम विदेह के वनमुख के पास पच्चीसवीं वप्रा विजय और विजयानगरी है, वहां श्री युगमंधर नामक दूसरे तीर्थंकर विरहमान हैं, पूर्व विदेह के वनमुख के पास नवमीं वच्छ विजय, सुसमा नगरी में तीसरे बाहु स्वामी तीर्थंकर विरहमान है। पश्चिम विदेह के वनमुख के पास नलिनावती विजय, अयोध्या नगरी में चौथे सुबाहु नामक तीर्थंकर विरहमान हैं, इस प्रकार जंबूद्वीप में 4 तीर्थंकर विरहमान हैं। धातकी खंड में दो मेरु, दो महाविदेह हैं, इनमें 4 तीर्थंकर पूर्व विदेह में और 4 तीर्थंकर पश्चिम महाविदेह में यों आठ तीर्थंकर हैं, इसी प्रकार पुष्करार्द्ध में भी दो मेरु हैं। महाविदेह के पूर्व विदेह में चार, पश्चिम विदेह में चार यों आठ तीर्थंकर, यों कुल अढ़ाई द्वीप में बीस विरहमान तीर्थंकर हैं।

जिस प्रकार जम्बूद्वीप में आठवी, पच्चीसवीं, नवमी चौवीसवीं विजय में अनुक्रम से चार तीर्थंकर हैं, इसी प्रकार धातकी खंड और पुष्करार्द्ध में भी इतनी ही विजय, ये ही विजय और नगरी नाम वगैरह समझना।

भरत क्षेत्र में सतरहवां श्री कुंथुनाथ और अठारवां श्री अरहनाथ तीर्थंकर के आंतरे (बीच में) में अढ़ाई द्वीप में 20 तीर्थंकरों का जन्म एक समय में साथ में हुआ और मुनिसुव्रत स्वामी तथा नमिनाथ स्वामी (20वां 21वां) के अंतराल में एक ही समय में 20 तीर्थंकरों ने दीक्षा ली, सभी एक हजार वर्ष छद्मस्थ दीक्षा पालकर केवल ज्ञानी बने। अभी वर्त्तमान में 20 जिन केवली हैं, ये सभी हमारे यहां की आगामी चौबीसी के सातवें आठवें तीर्थंकर के मध्यकाल में एक ही समय में सभी 20 तीर्थंकर मोक्ष पधारेंगे।

इन सभी तीर्थंकरों के 84-84 गणधर हैं, इनका 84 लाख पूर्व का आयुष्य है, इनके 500-500 धनुष प्रमाण शरीर है, प्रत्येक के 10-10 लाख केवली संख्या है। सौ-सौ करोड़ मुनिराज हैं, सौ सौ करोड़ साध्वीजी हैं, इस प्रकार बीस विरहमान के दो करोड़ केवली, दो हजार करोड़ साधु, दो हजार करोड़ साध्वी हैं।

20 विजयों में हमेशा एक-एक तीर्थंकर के सहचारी 84-84 तीर्थंकर होते हैं, इनमें से एक केवल ज्ञान सहित, बाकी 83 में से कोई राजा, युवक बालक इस प्रकार होते हैं, सभी का आयुष्य 84 लाख पूर्व होता है। जब 84 वें तीर्थंकर मोक्ष पधारते हैं, तब 83वें तीर्थंकर को केवल ज्ञान उत्पन्न होता है, तब वे 84वें कहलाते हैं, उस समय एक और का जन्म होता है इस प्रकार 84 की परंपरा सहचारी है। यहां कोई शंका करे कि एक क्षेत्र में एक से अधिक तीर्थंकर, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव नहीं होते, तो एक क्षेत्र में 84 तीर्थंकर कैसे संभव? परंतु इन बीस विजयों में ये शाश्वत् भाव है, यही वृद्ध परंपरा है (तत्व केवलिगम्य)

यहां जघन्य एक समय 20 तीर्थंकर होते हैं, एक-एक तीर्थंकर लाख पूर्व के (जन्म समय से) होते हैं, तब दूसरे तीर्थंकर का जन्म होता है, दूसरे गर्भ में होते हैं, यो 84 लाख पूर्व में 83 तीर्थंकर दूसरे होते हैं, इनको 20 से गुणा करने से 1,660 होते हैं, मूल 20 तीर्थंकर (वर्तमान के) जोड़ने से जघन्य काल में 1,680 तीर्थंकर होते हैं। जबकि उत्कृष्ट 170 तीर्थंकर विचरते हों, तब भरत और एरवत के 5-5 तीर्थंकर बाद करने से (इनमें एक के पीछे दूसरे भाव नहीं) 160 तीर्थकर पांच महाविदेह की विजयों के हुए, इन प्रत्येक को 83 से गुणा करने से 13,280 होता है, इनके साथ 170 विरहमान योग करने से कुल 13,450 जितने तीर्थंकर उत्कृष्ट काल से होते हैं, यह विचार महाविदेह की उत्कृष्ट जिन संख्या के योग से होता है।

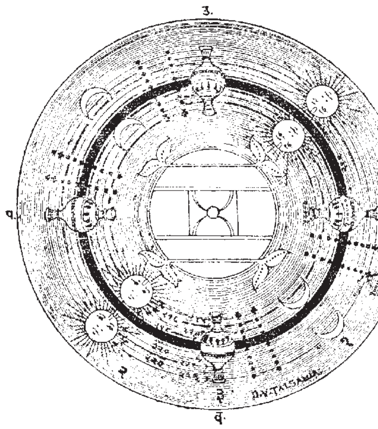
1. चंद्र
2. सूर्य
3. पाताल कलश

(चित्र सं. 2)-लवण समुद्-लवण समुद्र

38. लवण समुद्र- असंख्याता समद्र हैं, ये सभी प्रारंभ से अंत तक एक-एक हजार योजन गहरा है, परन्तु एकमात्र लवण समुद्र थोड़ा थोड़ा गहरा होकर जम्बूद्वीप से 95 हजार योजन जाने पर तथा धातकी खंड से भी 95 हजार योजन आने पर (लवण समुद्र में) मध्य भाग में एक हजार योजन गहरा है। उसे गो तीर्थ कहते हैं, यह स्थान दस हजार योजन चौड़ा एक हजार योजन गहरा तथा 16 हजार योजन ऊंचा कोट की तरह दगमाला है (उदकमाल)। यह 16 हजार योजन ऊंचा उठा हुआ (पानी) है, इसके ऊपर दो गाऊ की वेल दो बार एक अहोरात्रि में ऊपर चढ़ती है, ऊंचा उठती है, पानी उछलता है, इसका कारण इस प्रकार है-

पाताल कलश- पूर्व में वलय मुख, दक्षिण में केतुक, पश्चिम में यूप, उत्तर में ईश्वर ये चार बड़े पाताल कलश हैं। ये एक लाख योजन ऊंचा, लाख योजन पेट में चौड़ा, दस हजार योजन मुंह के पास चौड़ा है, दस हजार योजन की परिघ (पैंदा), एक हजार योजन की ठीकरी (जाड़ी) है। इनमें 33,333 योजन चारों कलशों में नीचे वायु है, 33,333 योजन (1/3 भाग) मध्य में वायु और पानी है, इसी प्रकार ऊपर के तीसरे हिस्से यानि 33,333 योजन में पानी है, जो मध्य के वायु योग से उछलता है (सभी तीनों भाग सरीखे 1/3 हिस्से समझना)।

पूर्व के और दक्षिण के बड़े कलशों के बीच में तथा दक्षिण और पश्चिम के तथा पश्चिम और उत्तर के तथा उत्तर और पूर्व के इन चारों कलशों के मध्य में 215-216-217-218-219-220-221-222-223 इन संख्या से नव पंक्तियों में लघु कलश है। इन चारों पंक्तियों में कुल 7884 लघु पाताल कलश हैं, ये 10 हजार योजन गहरे,

इतने ही मध्य में चौड़े, एक हजार योजन का मुख है, एक हजार योजन की परिघ (पैंदा) है, सौ-सौ योजन की ठीकरी (जाड़ाई) है। 3333 योजन तथा एक योजन का तीसरा भाग इस प्रकार के तीन भाग (10 हजार योजन के तीन भाग) पहले में (नीचे के) वायु, मध्य में वायु और पानी, ऊपर में पानी है। इन कलशों के अंदर से पानी उछलता है, इससे लवण समुद्र के बीचों बीच पानी का गोल कोट बनता है।

चार महाकलश के अधिष्ठाता पूर्व में काल, दक्षिण में महाकाल, पश्चिम में वेलंब उत्तर में प्रभंजन ये चार देव हैं। सोलह हजार योजन की उदक माला (दगमाला) के ऊपर दो गाऊ की वेल बढ़ती है, उसे दबाने के लिए जंबूद्वीप की दिशा तरफ से 42,000 देवता, तथा बेल ऊपर से 60,000 देवता तथा धातकी खण्ड दिशा तरफ से बेल ऊपर 72,000 देवता हैं, ये सभी वेलंधर और अनुवेलंधर देव है, कुल 1,74,000 देवता इसे दबाते हैं।

देवनिवास- जम्बूद्वीप के दरवाजों से 4 दिशा 4 विदिशा में 42-42 हजार योजन जाने पर वेलंधर-अनुवेलंधर नागराजा के आठ पर्वत हैं। पूर्व में गोस्तूप (गोस्तूप देव), दक्षिण में दिगभास पर्वत (शिव देवता), पश्चिम में शंखनाम पर्वत (शंख देव), उत्तर में दगसीमी पर्वत (माणोसल देव), ईशान कोण में कर्कोटक पर्वत (कर्कोटक देव), अग्निकोण में विद्युत्प्रभ पर्वत (कर्दम देव), नैऋत्य कोण में कैलाश पर्वत (कैलाश देव), वायव्य कोण में अरुणप्रभ पर्वत (अरूणप्रभ देव) हैं। ये आठों पर्वत 1,022 योजन नीचे चौड़ा, और 424 योजन झाझेरा ऊपर में चौड़ा है तथा 1,721 योजन ऊंचा है, पूर्वादि चारों दिशा में क्रमशः कनकमय, अंक रत्नमय, रूपामय, स्फटिक मय तथा चारों विदिशा के पर्वत रत्नमय हैं।

जम्बूद्वीप से 42 हजार योजन लवण समुद्र में जाने पर वहां 309 योजन तथा 95 का 45 भाग जितनी जलवृद्धि है, और 442 योजन तथा 95 का 10 भाग जितना पर्वत गहरा है तथा 969 योजन तथा 95 का 40 भाग जितना जंबूद्वीप तरफ दिखाई देता है तथा 963 योजन और 95 का 77 भाग जितना शिखा तरफ दिखाई देता है।

मेरु पर्वत के पश्चिम दरवाजे से 12 हजार योजन समुद्र में जाने पर लवण समुद्र केअधिष्ठाता सुस्थित देव का गौतम द्वीप आता है, गौतम द्वीप के दोनों तरफ जम्बूद्वीप के दो सूर्य के दो द्वीप हैं, तथा लवण शिखा के इस तरफ के दो सूर्य के दो द्वीप हैं। इस प्रकार 4 सूर्य के 4 द्वीप गौतम द्वीप के समीप है। ये गौतम द्वीप सहित पांचों द्वीप 12-12 हजार योजन लम्बे चौड़े है।

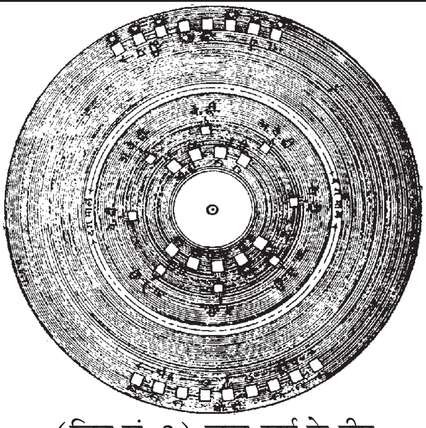

(चित्र सं. 3)-चन्द्र-सूर्य के द्वीप

मेरु पर्वत से पूर्व दिशा में जगती के दरवाजे से 12 हजार योजन लवण समुद्र में जाने पर जंबूद्वीप के दो चंद्र तथा लवण शिखा से इस तरफ के दो चंद्र इन चार चंद्र के चार द्वीप हैं।

इसी प्रकार पश्चिम में शिखा के उस तरफ (शिखा के उस पार) लवण समुद्र के दो तथा धातकी खंड के 6 सूर्य यों 8 सूर्य के आठ द्वीप हैं, तथा पूर्व दिशा में शिखा पार की तरफ के लवण समुद्र के दो चंद्र तथा धातकी खंड के 6 चंद्र यों 8 चंद्र के 8 द्वीप हैं। लवण समुद्र में 500 योजन के मत्स्य हैं। लवण समुद्र की शिखा में जो ज्योतिष चक्र चलता है, उनके विमान दिग स्फटिक रत्नों के हैं।

39. कालोदधि समुद्र– कालोदधि समुद्र पहले दरवाजे से सामने के दरवाजे तक 8 लाख योजन चौड़ा है, एक हजार योजन गहरा है, इसमें गोतीर्थ नहीं, वेल नहीं है। पहले दरवाजे से पूर्व तरफ 42,000 योजन जाने पर काल नामक देव और पश्चिम में भी इतना जाने पर महाकाल नामक देव ये दोनों समुद्र के अधिष्ठायक देवों के द्वीप हैं। उसी प्रकार पश्चिम में 12 हजार योजन जाने पर कालोदधि के 21 सूर्य के 21 द्वीप हैं। पूर्व में 12 हजार योजन जाने पर कालोदधि के 21 चन्द्रमा के 21 चन्द्रद्वीप हैं। इस समुद्र में 700 योजन के शरीर प्रमाण वाले मत्स्य हैं। इसके पानी का स्वाद अच्छा है। धातकी खंड के सूर्य चंद्र के द्वीप पानी से दो गाऊ ऊपर (उघाड़े) हैं।

40. पुष्करार्द्ध द्वीप– पुष्कर द्वीप16 लाख योजन चौड़ा है, इसके मध्य में मानुषोत्तर पर्वत होने से दो भाग हो जाते हैं। अगले भाग 8 लाख योजन में मनुष्य बस्ती है, पर्वत पार दूसरी ओर 8 लाख योजन मनुष्य बस्ती से शून्य है।

41. मानुषोत्तर पर्वत– मानुषोत्तर पर्वत सिंह के आकार का है, पुष्करवर द्वीप के मध्य भाग में वलयाकार है, नीचे 1,022 योजन चौड़ा, मध्य में 723 योजन, ऊपर में 424 योजन चौड़ा है। ऊंचाई 1,721 योजन (वेलंधर के समान) है, भूमि में चौथा भाग है। अन्दर की परिधि 1,42,30,249 योजन और मानुषोत्तर से बाह्य परिधि 1,42,36,914 योजन है। इतनी परिधि सिद्धशिला की भी है। सिद्धशिला और अढ़ाई द्वीप दोनों बराबर है। इस अढ़ाई द्वीप रूप मनुष्य क्षेत्र में नौ वस्तुएं होती है- (नववांना) नदी, द्रह, मेघ, गर्जरव, अग्नि, तीर्थंकर, गणधरादि मनुष्य, इनके जन्म मरण, रात्रि दिवस।

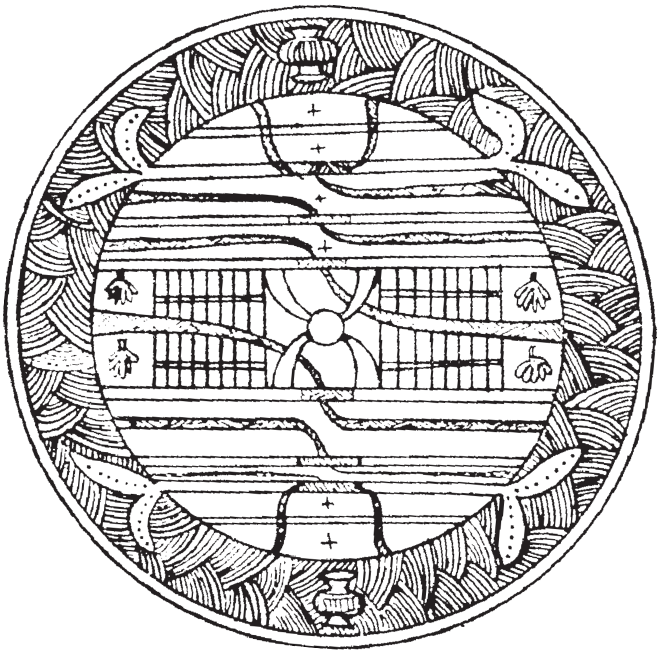

(चित्र सं. 4)-जम्बूद्वीप

इस अढ़ाई द्वीप के मध्य में प्रथम जम्बूद्वीप है, ये सभी द्वीप और समुद्र जगती से घिरे हुए हैं, सभी द्वीप और समुद्र पद्म वर वेदिका वाले हैं, यानि द्वीप समुद्रों के चारों तरफ पद्मवर वेदिका और आगे वनखंड भी दोनों तरफ हैं।

जगती कोट – जम्बूद्वीप किसी बड़े नगर के किले (गढ़) की तरह वज्रमय जगती से चारों तरफ लिपटा हुआ (घेरे में) है। यह कोट 8 योजन ऊंचा है। धरती के मूल में 12 योजन चौड़ा है, ऊपर अनुक्रम से चौड़ाई घटती हुई, एक योजन ऊपर जाने पर 11 योजन चौड़ाई रह जाती है, इसी प्रकार 2 योजन चढे तो 10 योजन, 3 तीन योजन चढ़े तो 9 योजन, चार योजन चढ़े तो 8 योजन चौड़ा है इसी प्रकार 8 योजन चढ़ने पर चौड़ाई 4 योजन रहती है, यह कोट गाय के पूंछ को ऊँचा करे ऐसे आकार का है। गाय की पूंछ मूल में चौड़ी फिर आगे आगे

पतली होती है इसी प्रकार जगती भी मूल में जाड़ी, ऊपर में पतली होती जाती है।

जगती सर्वप्रदेश से वज्ररत्न मय है, दीवाल (भींत) मणिरत्न की है, खंभे वैडूर्यरत्न के हैं, लोहिताक्ष रत्न के खीले हैं, छत सोना चांदी की पाटों के हैं, आकाश जैसी स्वच्छ है, सुकोमल है, घिसी, मांजी, सुंवाली है, रजरहित, मल रहित, कीचड़ रहित, छाया आवरण रहित शोभायुक्त है, अनुपम कांतिमय, उद्योत-प्रकाश युक्त है, दर्शनीय, मनोहर, देखने में मनोज्ञ, उसमें प्रतिबिंब पड़े ऐसी जगती है। कलश, मंगल, तोरण, विजय, वेदिका, सिंहासन, झरोखा, जालीयें सभी रत्नमय रमणीक है। जगती के ऊपर जंबूद्वीप के पास एक जालकटक (जाली समूह) चारों दिशा में लिपटा हुआ है, यह जाली आधा योजन ऊंची, पांच सौ धनुष चौड़ी, जाड़ी है, रत्नमय है, निर्मल है, सुकोमल यावत् दर्शनीय, योग्य, मनोहर है।

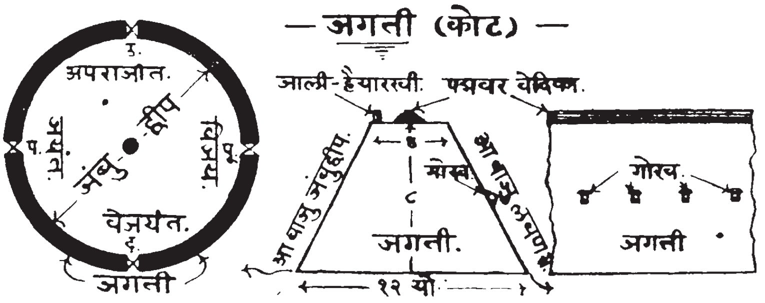

(चित्र सं. 5)

जगती मोटा गवाक्षों के घेरे में सभी दिशाओं में चारों तरफ से घिरी हुई है, ये सभी गोखड़े रत्नमय हैं, प्रत्येक गोखड़ा दो गाऊ ऊंचा पांच सौ धनुष चौड़ा और आधा गाऊ लम्बा है, निर्मल यावत् प्रतिरूप है। सभी गवाक्ष लवण समुद्र के पास जगती के मध्य भाग में चारों तरफ जानना।

पद्मवर वेदिका- जगती के ऊपर की भूमि के मध्य भाग में चारों तरफ एक बड़ी पद्मवर वेदिका है। पद्मवर वेदिका देवताओं का क्रीड़ा स्थल है। यह आधा योजन ऊंची पांच सौ धनुष चौड़ी है। जगती के मध्य भाग की जितनी परिधि है, उतनी पद्मवर वेदिका की परिधि है। संपूर्ण रत्नमय है, जगती के चारों तरफ कोट की तरह है, इसकी भूमि वज्ररत्न की है, भूमि भाग से बाहर निकले प्रदेश (नेमा) वज्ररत्न मय है, अरिष्ट रत्न के मूल पगथिया, वैडूर्य रत्न के खंभे, सोना रुपा के पगथिया का पाटिया है, वज्र रत्न से सांधे भरे हैं, पाटियों के बीच लोहिताक्ष रत्न के खीले हैं। वहां अलग अलग तरह के मनुष्यों के युगल शरीराकार (चित्र) है। उन युगलों का रूप विविध मणि रत्नों का है, वहां अलग अलग मनुष्यों के एकाकी रूप भी हैं, सभी अंक रत्नों के बने हैं। ज्योति रस रत्न के बांस दाये बांये दोनों तरफ बांधे हैं, बड़े बांसों को स्थिर करने दोनों ओर तिरछे रखे बांस भी ज्योति रस के रत्नों से बने है। बांसो के ऊपर छत

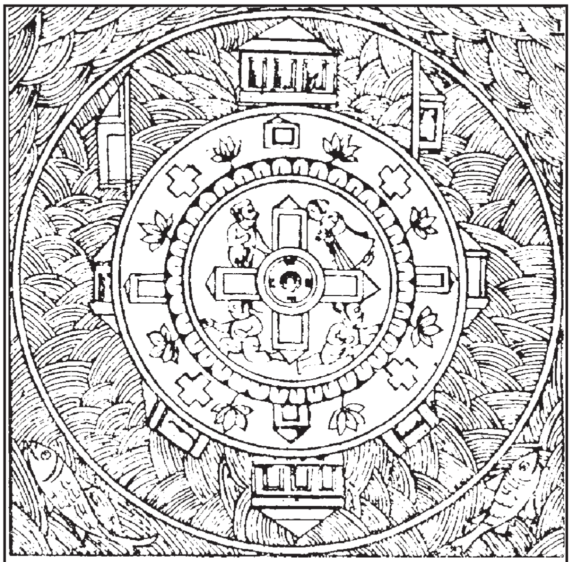

(चित्र सं. 6)-पद्मवर वेदिका

(छापरा) पर लम्बी बलियों की जगह चांदी की पट्टीयां है, उसके ऊपर सोने का ढ़क्कन है, और उसके भी ऊपर वज्ररत्न का मजबूत ढ़क्कन है। उसके ऊपर श्वेत रूपामय आच्छादन रूप है, ऐसी यह पद्मवर वेदिका है।

इस पद्मवर वेदिका में सुवर्ण की घूघरों की, मोतीयों की, कमल की मालाएं आदि है, ये सभी रत्नमय है, तथा पीला स्वर्णमय है, पद्मकार माला समूह सभी दिशा-विदिशाओं में व्याप्त है। इन मालाओं के रक्त स्वर्ण झूमका है, अलग अलग तरह के मोतियों, रत्नों के हारमय, अर्द्ध हारमय शोभा देते है। एक दूसरों से कुछ भिन्नता लिये है, पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर मंद मंद वायु से कम्पती है, लम्बाती है, झन झन आवाज करती, कान और मन को अच्छा लगे, ऐसे मधुर शब्द चारों दिशा में करती शोभायुक्त हैं। जहाँ एक युगल है, वहां बहुत घोड़े, हाथी, मनुष्य, किन्नर, व्यंतर देव, किंपुरुष, महोरग, गंधर्व, वृषभ आदि के युगल हैं। ये सभी सर्व रत्नमय निर्मल, सुकोमल, यावत् प्रतिरुप है, वहां घोड़े के मिथुन के रूप यानि स्त्री सहित रुप भी है, उस जगह बहुत सी पद्मलता, नाग लता, अशोक लता, चंपक लता, आम्रलता, जुई लता, मचकुंद (मोगरा) लता, श्यामलता आदि प्रमुख लताएं हैं, ये सभी फूली फाली मंजरियों से युक्त हैं, सभी रत्नमय यावत् प्रतिरूप है, और जगह जगह बहुत से रत्नमय अक्षत के स्वस्तिक हैं। (विशेष वर्णन के लिए जीवाभिगम सूत्र देखें)।

नाम का हेतु- वेदिका में सभी जगह पर, वेदिका के पास में, वेदिका के पाटिये के ऊपर, वेदिका के पुटांतर में, खंभों में, खंभों के पास में, खंभों पर, खंभों के पुटांतर में, खीली में, खीली के मुख में, खीली के पाटिये में, खीली के पुटांतर में, खीली के पास में, पास के स्थान में, अन्तःस्थान में, सभी स्थान पर बहुत से उत्पल तथा सूर्य विकसित कमल, यावत् लाख पंखुड़ियों के कमल हैं। ये सभी रत्नमय हैं, चौमासे में उत्पन्न छत्राकार वनस्पति जैसा मोटा प्रमुख कमल है। ये सभी पद्मवर वेदिका में रत्नमय है, इसलिए इसका नाम पद्मवर वेदिका रखा गया है, यह शाश्वत है।

वनखण्ड- पद्मवर वेदिका की पूर्व-पश्चिम दोनों में दो वनखंड है। देश ऊणा (250 धनुष कम) दो योजन चक्रवाल रूप चौड़ा है, यानि जगती के ऊपर 500 धनुष की वेदिका चौड़ी, और वेदिका के बाहर समुद्र तरफ वन दो योजन में 250 धनुष कम चौड़ा, इसी तरह जम्बूद्वीप की तरफ भी इतना ही चौड़ा है, यानि कुल योग जगती की ऊपर की चौड़ाई चार योजन कही है। इतनी ही हुई। दोनों तरफ के वन जगती समान परिधि वाले चारों तरफ हैं। इनकी कृष्ण वर्ण जैसी नीली शोभा है, वन की भूमि चमड़े के पट जैसी समतल है। कांच का तल, हथेली का तल, चंद्र के मंडल, सूर्य के मंडल, भेड़ का, वृषभ का, वराह का, सिंह का, चीते का, बकरी का, आदि के चर्म जैसी भूमि है। इस वन में अनेक प्रकार के काले, पीले, सफेद, लाल, नीले ऐसे मणिरत्नों के त्रण है। इनके मनोज्ञ शब्द हैं, रूप हैं, चारों दिशा में वायु चले तब तृण एक दूसरे से टकराते हैं, तब उनमे से छत्तीस राग रागिणी के आलाप जैसी ध्वनि निकलती है, तब मानों 32 तरह के नाटक, 49 तरह के वाद्य बजते हों, गंधर्व देव गीत गाते हों, इस प्रकार के शब्द निकलते हैं। वन में छोटी-छोटी बावड़ियां उनमें बहुत से कमल, ऐसी चौखुणी, गोल बावड़ियां जिन्हे पुष्करणी कहते हैं। तथा गुंजालिका जो ढ़ंकी हुई बावड़ियां, दीर्घिका ये लम्बी बावड़ियां तथा एक पंक्ति में रहे अनेक तालाब की पंक्तियां जिन्हें सरपंक्ति कहते हैं, ऐसी सरपंक्ति जिनमें एक का पानी दूसरी में आगे-आगे आता हों वे सर पंक्ति कहलाती है। तथा बिल-कुंआ की पंक्तियां है। ये सभी सुकोमल है, चांदी के किनारे, वज्रमय पत्थरों से

किनारे बांधे हुए, सोने का तलिया, वैडूर्य रत्न और स्फटिक मय उनके किनारों के प्रदेश हैं, सुवर्ण और शुभ्र रजत की वेलु है, आसानी से प्रवेश करने योग्य है, सरलता से उतरने योग्य है, अनेक प्रकार के रत्नों से बंधी भींत है, घाट बंधे हैं, चारु खुणी, समान तट, पानी के नीचे का तलिया झुका झुका वहां गंभीर शीतल जल है। वहां विसमृणाल नामक नीलकमल के बहुत पत्तों वाले उत्पल, कुमुद, नलिन आदि अनेक तरह के कमलों वाली पुष्करणियां है। उनके आस पास भंवरे मंडराते हैं, निर्मल जल से परिपूर्ण बावड़ियां है, जिनमें मत्स्य, कछुए वगैरह, बहुत से जीव तथा अनेक पक्षी युगल क्रीड़ा करते हैं, ये सभी बावड़िया पद्मवर वेदिका वनखंडों से युक्त है।

कईं बावड़ियों का जल मदिरा समान है, कितनीक का वारुणिवर समुद्र जैसा है, कितनीक का गाय के दूध जैसा, घी जैसा, गन्ने (शेरड़ी) के रस जैसा, अमृत जैसा, और कितनीक का साधारण पानी जैसा है। ये सभी दर्शनीय है (विशेष वर्णन जीवाभिगम में देखें) फल, फूल, पत्ते, आम, नींबू, दाड़म, वगैरह पदार्थ इस वन खंड में रत्नों को समझना।

वन में जगह जगह उत्पाद पर्वत है, व्यंतर प्रमुख देव क्रीड़ा करने (वैक्रिय शरीर से क्रीड़ा करने) आते हैं। पर्वतों पर स्फटिक रत्न के मंडप, स्फटिक के कांच, स्फटिक प्रासाद, झूले, पक्षियों के बैठने के स्थान ये सभी रत्नों के हैं। हंस, क्रोंच, गरुड़ वगैरह आकार के अनेक सिंहासन हैं, इस प्रकार बावड़ियां, तोरण, पुतलियां महल ये सभी रत्नमय है, छहों ऋतुओं में सभी स्थान देखने लायक है। रमणीक है।

वन खंड में जगह जगह केले के घर, लता के घर, अवस्थान घर, स्नान घर, प्रसाधन घर, आदि अनेक घर हैं। जूई वगैरह बहुत फूलों के मंडप हैं, उत्तम शैया, आसन आदि पृथ्वी शिला पट्टक है, वहां बहुत से व्यंतर देव देवी बेठते हैं, विश्राम करते हैं, सोते हैं, शरीर लम्बाते (नींद नहीं लेते) बैठते हैं, करवट बदलते हैं, खेलते हैं, इच्छित सुख भोगते हैं, मैथुन सेवन करते हैं, पूर्व भव में किये सत्कार्यों से उपार्जित शुभ विपाक फल भोगते देव देवी युगल विचरते हैं। जगती के ऊपर और पद्मवर वेदिका के अन्दर के भाग में एक विशाल वनखंड है, यह दो योजन से न्यून विस्तारमय है, इस वन में तृण या मणियां नहीं होती, क्योंकि पद्मवर वेदिका के अन्दर के भाग में होने से यहां वायु वगैरह नही होने से हिलती नहीं यह दोनों वनों में फरक है, यह समझना।

द्वार वर्णन– जंबूद्वीप के पूर्व दिशा में विजय नामक द्वार है, उसका विजय देव है। दक्षिण में वैजयंत द्वार है, उसका वैजयंत देव है। तीसरा पश्चिम दिशा में जयंत द्वार है, उसका जयंत देव है, चौथा उत्तर में अपराजित द्वार है, अपराजित देव है। इस प्रकार विजयादि चार अणुत्तर विमानों के नाम से ये चार दरवाजों के भी नाम हैं।

मेरु पर्वत की पूर्व दिशा में 45 हजार योजन जाने पर जंबूद्वीप के पूर्व किनारे लवण समुद्र में पूर्वार्द्ध के पश्चिम भाग में सीता महानदी के ऊपर विजय नामक द्वार है। यह 8 योजन ऊंचा, चार योजन चौड़ा, चार योजन लम्बा प्रवेश द्वार है इसके दोनों तरफ एक-एक गाऊ की बारसोद की दीवाल सफेद रंग की है, शिखर सोना का है। यहां इहामृग, वृषभ, अश्व, मनुष्य, मगरमच्छ, पक्षी, सांप, किन्नर नामक व्यंतर देव, मृग, चमर (मृग), जंगली हाथी, वनलता, पद्मलता, वगैरह चित्रादि है, खंभों पर सुन्दर चबूतरा है। विद्याधरों के युगलों के आकार वाले खंभे हैं। सूर्य किरणों से हजार गुणा अधिक प्रकाशित और तेजस्वी हैं, नयन रम्य, सुखकारी, स्पर्श वाला सुन्दर शोभनीय है। भूमि भाग से ऊपर उठे उसके प्रदेश वज्र रत्न के हैं, अरिष्टरत्न के मूल पगथिये हैं, वैडूर्य (नीलम) के खंभे है,

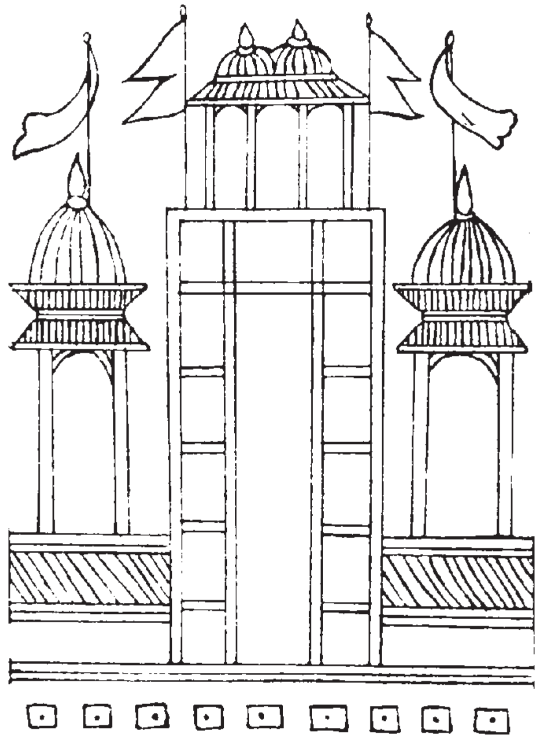

(चित्र सं. 7)-विजय द्वार

सुवर्ण के उत्तम पांच वर्णा मणिरत्नों से खंभों के गर्भगृह (भोंयरा) बांधे है, हंस गर्भरत्न की थली (ऊमरा) है, गोमेद (पुखराज) का नीचे का टोडला है, लोहिताक्ष (माणक) का बारसोद है, ज्योति रस रत्न की बारणा के ऊपर लकड़ी (काष्ठ) है। वैडूर्य रत्न के किंवाड, वज्र रत्न की पाटियों की संधि जड़ी है। लोहिताक्ष रत्नमय दो पाटों के बीच खीली है, अनेक मणियों की जड़ाई है। वज्र रत्न की भूंगल, वज्ररत्नमय आवर्त्तन पीठिका (खंभे के बेठक के आधार) है, जहां आगल लगती है वह जगह समझना। अंक स्फटिक रत्न के द्वार के दो भाग है, ऐसे आंतरा बिना निबिड़ (एक-सघन-बिना छिद्र का) अभंग किवाड़ है।

इस द्वार के दोनों तरफ बेठने के चोखुणे चबूतरे हैं, उनके पास भी तीन-तीन की 56 पंक्ति ऐसी 168 खूंटियां है, 168 शैयाएं है, अनेक प्रकार के मणिरत्नों के सर्प की आकृतियाँ है, इस द्वार के दोनों तरफ अनेक प्रकार की लीलाएं करती हुई पुतलियां है, वज्ररत्न मय इसका शिखर है, शिखर पर रूपा का पीठ (स्थान) है। मध्य में चन्दरवा रूप छत का हिस्सा सोना का है। अनेक प्रकार के मणिरत्न के दरवाजे में जालियां (गोखड़े) है। उनका मणिमय ऊपर का बांस है, लोहिताक्ष रत्नमय बांस के सामने का बांस (प्रति बांस) है। रूपामय भूमि है। इनके दोनों दरवाजों में आडसर (आडी पाटी या खांगा) तथा अन्य भी खांगा सभी अंक रत्नमय है, ज्योति रस रत्न की बांस की बल्ली है, ज्योति रत्न जड़े हुए, बांसों के ऊपर अनेक खपाटिया है, उनके ऊपर रुपामय पीठ (पाटिया) है, मध्य में सुवर्णमय पतली बल्ली है, उसके बीच सूक्ष्म तृण समान आच्छादन ढक्कन रूप है। उसके ऊपर भी श्वेत रूपामय ढक्कन है। अंक रत्नमय आसपास का भाग है। तथा सुवर्ण का मुख्य शिखर है, उसके ऊपर छोटे छोटे थूमिका (शिखर) है। उस द्वार का ऊपरी भाग श्वेत दक्षिणावर्त्त शंख का है, जैसे निर्मल दही के घट्टों, गाय का दूध, समुद्र का झाग, रूपा का पुंज हो ऐसा, जैसे उज्जवल प्रकाश हो। तिलक रत्न तथा अर्द्धचंद्र वाले अनेक चित्र हैं। अनेक प्रकार की रत्न मालाओं से द्वार का मुख शोभायमान है, अन्दर बाहर से सुकोमल है, पोल (द्वार) के अन्दर सोना की चटाई (वेलू) बिछी है उसका स्पर्श शुभ है, शोभनिक रूप है, दर्शनीय है यावत् प्रतिरुप है।

कलश- विजय द्वार के दोनों तरफ नैषेधिकी (चबूतरा) है, उसके ऊपर चन्दन लगे दो-दो कलश हैं, ये उत्तम कमलों पर स्थापित हैं, सुगंधित उत्तम जल से परिपूर्ण हैं, चंदन लिपटे कलशों के गले में लच्छे (लाल सूत का डोरा) बंधे हैं, मुख पर कमल के ढक्कन हैं, कलश रत्नजड़ित है। निर्मल, सुकोमल यावत् प्रतिरूप है, बड़े-बड़े महेन्द्र कुंभ (महाकलश) समान है।

नागदंता- द्वार के दोनों तरफ चबूतरे पर बेठने के स्थान पर दो-दो नागदंता हाथी दांत जैसी खूंटियां लगी है, इन नागदंता पर बहुत सी मोतियों की मालाएं हेम की मालाएं, गवाक्ष आकार की रत्नों की और घूघरों की मालाएं लटकी हुई है, ऊंची, सामने, तिरछी यों सुन्दर तरीके से लटकी है। नीचे सर्प के अर्द्ध आकार समान हैं। सभी रत्नमय हैं, निर्मल यावत् प्रतिरुप हैं। ऐसे मोटे नागदंत-हाथी के दांत समान है, इन नागदंतों पर बहुत सी काला, नीला, लाल, पीला, सफेद डोरे से बंधी फूलों की मालाएं लटकायी हैं, इन मालाओं को सोने के झूमकों, सोने के पतरों से मढ़ी है। अनेक मणिरत्नों, विविध प्रकार के हारों, अर्द्धहारों से शोभित है। इन नागदंता पर दूसरे दो नागदंता हार है, मोतियों की जालियों से शोभित है, अन्य वर्णन उपरोक्त अनुसार समझना। इन नागदंताओं पर बहुत से छींके लटके हैं, जिनमें धूपदानियां हैं, इनमें कालागुरू (अगर) कुंदरुक वगैरह धूप की सुगंध से मनोहर और सुगंधित है, ये धूपदानियां गंध की गोली समान, मनपसंद, मनोहर तथा नासिका और मन को सुख देती सुगंध चारों दिशा में फैलाती अत्यन्त शोभास्पद हैं।

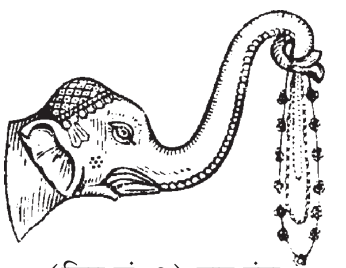

(चित्र सं. ४)-नाग दंता

पुतलियां- विजय द्वार के दोनों तरफ चबूतरे की बेठक में दो-दो पुतलियां हैं। ये ललितांग, मनोहर क्रीड़ा करने वाली चित्रित हैं। सुन्दर वेश-आभूषणों से सजी हैं, अलग अलग तरह के वस्त्रों से सज्जित हैं। तरह तरह की फूल मालाएं गले में पहनायी हैं, उनका कटि प्रदेश मुठ्ठि में समाए जैसा है, उनके शिखर जैसे युगल गोलाकर ऊंचे स्तन हैं, लाल नैत्र हैं, बाल काले भ्रमर जैसे हैं, कोमल, निर्मल, शुभ लक्षणोपयुक्त, प्रशस्त गूंथा हुआ माथे का अम्बोड़ा है। शरीर अशोक वृक्ष आश्रित है, बायें हाथ में अशोक वृक्ष की शाखा ग्रहण कर रखी है, तिरछे कटाक्ष से देवेन्द्र को आकर्षती मानों एक दूसरे की सुन्दरता से बढ़कर हो, इर्षित (एक दूसरे से ईर्ष्या) हो, ऐसी पृथ्वीकाय की पुतलियां हैं, ये शाश्वत हैं, इनका मुख चन्द्र समान है, चन्द्र जैसा विलास है, अर्द्ध चन्द्र सम ललाट है, चन्द्र से भी अत्यधिक सुन्दर दर्शनीय, उल्का (बिजली) पात जैसे चमकती, बादलों की बिजली जैसी दैदीप्यमान है, सूर्य से भी अधिक प्रकाश युक्त, सोलह सिणगार सजी, मनोहर वेशभूषा वाली, दर्शनीय यावत् प्रतिरूप है, अत्यंत शोभास्पद है।

जाली और घंटियां- विजय द्वार के दोनों तरफ चबूतरों पर दो-दो जालियां है। ये जालियां पूरी रत्नमय है यावत् प्रतिरूप है। दोनों चबूतरों पर दो-दो घंटियों की लाइन है, ये जंबूनद रत्नों से बने हैं। इनके वज्ररत्न मय लोलक (घंटे में बजाने की डंडी जैसी) हैं। अनेक मणियों से जड़ित घंटे की दीवालें, सोने की सांकल, रूपामय रस्सी है। उन घंटियों का ओघ स्वर (एक बार बजाये अनेक बार सुनाई दे), मेघना स्वर (मेघ जैसा गंभीर स्वर) हंस (धीरे धीरे मंद हो) स्वर, क्रोंच पक्षी (धीरे धीरे कोमल हो) स्वर, सिंह (तेज स्वर) स्वर, मीठा (प्रिय) स्वर, रूड़ा (शोभित) स्वर है। उस स्थान के प्रदेश उदार और मनोज्ञ हैं। कान और मन को सुख पहुंचाने वाले गुंजायमान है।

वनमाला- विजय द्वार के दोनों तरफ दो दो वनमालाओं की पंक्तियां हैं, पत्र, पुष्प, फल, अंकुर और शाखा एक साथ गूंथे हों, उसे वनमाला कहते हैं। ये वनमालाएं अनेक प्रकार के फूल, लता, कलियां, अंकुरों से युक्त हैं। उस पर भंवरे आदि रसपान करते होने से शोभायमान, मनोहर, दर्शनीय यावत् प्रतिरूप हैं। ये प्रदेश सुगंध से नाक को सुगंधित करती, मन को शांति देते रहते हैं।

प्रकंठक और प्रसादावतंसक- विजय द्वार के दोनों तरफ चबूतरा पर दो-दो प्रकंठक (बाजोट आकार का चौखुणा बेठने हेतु) हैं, चार योजन लम्बा चौड़ा है, दो योजन जाड़ा (मोटाई) है, वज्ररत्न मय निर्मल यावत् प्रतिरुप हैं। उन प्रकंठकों पर एक-एक प्रसादावतंसक (उत्तम मुकुट जैसा महल) (देवों के रहने लायक) है। यह चार योजन ऊंचा तथा दो-दो योजन लम्बा चौड़ा है, सभी दिशाओं में फैली हुई प्रभा की जैसा चमकता है, रंग बिरंगे विविध मणिरत्न लगे हैं, विजय और वैजयंती ध्वजा हवा से फरकती है। ध्वजा अद्‌भुत दिखती है। उन पर छत्र और अन्य और छत्र है, शिखर इतने ऊंचे है, मानों आसमान छू रहे हों। उन भवनों की दीवालों में जालियां है, उनकी शोभा हेतु रत्न जड़े हैं। जैसे पिंजरे में रत्न जड़े हों ऐसी शोभा है। उन पर मणि और सोने के शिखर हैं। उनके बारणों (दरवाजों) में खिलते शत पत्र तथा पुंडरीक कमल तथा तिलक वृक्ष वगैरह रत्नमय है, अर्द्ध चन्द्रमय आकृतियां द्वारों पर चित्रित हैं (खुदाई हुई)। अनेक प्रकार की मणि मालाएं प्रासाद के द्वार पर शुभित है, ये प्रासाद अन्दर बाहर से सुकोमल है, सोने की जाजम बिछी है, उसका स्पर्श सुखकारी, शोभायुक्त, मनोहर, दर्शनीय, यावत् प्रतिरूप है। प्रत्येक प्रसादावतंसक के अन्दर अत्यंत सम और मनोहर भूमि भाग है। मुरज (एक प्रकार का ढ़ोल) के तलिये जैसा समान यावत् मणियों से शोभित है। मणियों के वर्ण, स्पर्शादि पूर्वोक्त समझना, उनके मध्य चन्द्रोदय, पद्मलता प्रमुख यावत् शामलिका नामक वनस्पति वगैरह चित्र हैं, सभी स्वर्णमय, निर्मल यावत् प्रतिरूप है।

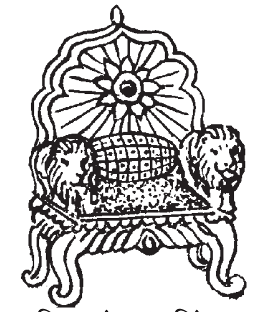
(चित्र सं. 9)-सिंहासन

उस सम-मनोहर भूमि भाग के मध्य में मणिमय पीठिका चबूतरे की भांति है, एक योजन लम्बी चौड़ी है, आधा योजन जाड़ी है रत्नमय यावत् प्रतिरूप है। प्रत्येक मणिपीठिका पर एक सिंहासन है, सिंहासन के नीचे पाया के नीचे का भाग सोना का है, सिंह रूपा का है, अनेक प्रकार के रत्नमय बाजोट हैं। जंबूनंद रत्नमय सिंहासन का कलेवर है, सांधे वज्ररत्न से भरे हैं। सिंहासन का तलिया अनेक रत्नों जड़ित हैं, सिंहासन पर ईहामृग, वृषभादि के चित्र हैं, सिंहासन के मणिरत्न का बाजोट है, उस पर मशरूना (वेलवेट) जैसा कोमल स्पर्श वाला, सिंह की केशराशि जैसा वस्त्र ढ़ंका है, सुन्दर चादर जैसा लाल वस्त्र पादपीठ पर ढ़ंका है उसका स्पर्श मृगचर्म, रुई, मक्खन, आक की रूई जैसा कोमल है। प्रत्येक सिंहासन पर विजय दुष्य वस्त्र, शंख, मचकुंद (मोगरा का फूल), पानी का फव्वारा, मंथन किया अमृत झाग, समुद्र के झाग जैसा श्वेत वर्ण वाला है, सभी वस्त्र रत्नों के हैं। प्रत्येक विजय दुष्य वस्त्र के मध्य वज्र रत्न के अंकुशाकार मोतियों की मालाओं के स्थान हैं।

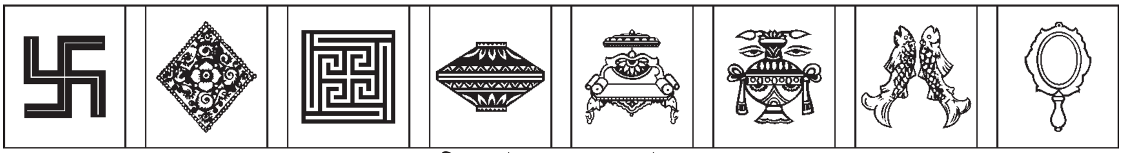
(चित्र सं. 10)-अष्ट मंगल

अंकुशों पर कुंभ समान मोतियों की मालाएं है, उनके पास भी अर्द्ध आकार की कुंभ समान मोती की मालाएं सभी दिशाओं में चारों तरफ लिपटी है। ये मालाएं सोना के फूल के झूमकों और सोना के पतरों से मढ़ी हैं। इन प्रासादावतंसक पर आठ-आठ मांगलिक है। इसके द्वार के दोनों तरफ दो चबूतरे हैं, उन पर दो-दो तोरण है

(जंबूद्वीप के विजय द्वार के जैसा वर्णन) इन तोरणों के आगे दो-दो पुतलियां हैं, तथा दो-दो नागदंता है, नागदंता को (खूंटियों) मोती की मालाएं पहनायी हैं। नागदंता पर बहुत सी काली आदि पंचरंगी डोरी से बांधी गोल-गोल फूलों की मालाएं स्थापित है। उन तोरणों के आगे घोड़े के आकार की दो-दो जोड़ियां है, वहां बावड़ियों की पंक्ति तथा दो-दो पद्मलता तथा अक्षत स्वस्तिक है। उत्तम कमल पर चंदन लिपटे कलश स्थापित हैं, उन कमलों पर दो-दो भ्रमर स्थापित हैं, ये मदोन्मत्त हाथी के मुख समान आकार वाले हैं।

(चित्र सं. 11)-विजय द्वार पाँचवीं मंजिल

तोरण के आगे दो अरिसा (कांच) हैं, अरीसा घर सोना का है, पकड़ने की मूठ वैडूर्य रत्न की है, वज्ररत्न का हाथी है, अनेक मणि श्रृंखलाओं से लिपटा और शोभायमान है। अंक रत्नमय मंडल यानि रुप देखने का काम है, उसके प्रतिबिंब में सबकुछ दृश्यमान है, अनुबंध (सांकल) सहित है, चंद्रमंडल जैसा गोलाकार, देखने वाले के शरीर का आधा भाग जितना बड़ा है। तोरण के आगे वज्र की नाभि जैसे दो थाल हैं, स्फटिक जैसे, उनमें मूसल से खंडे हुए शालि के (धान) चावल भरे हैं, वे चावल और थाल सभी जंबूनद रत्न के हैं। मोटे-मोटे रथ के पेड़ों के समान थाल हैं, वे चावल और थाल सभी जंबूनद रत्न के हैं। उन तोरणों के आगे दो-दो पात्र हैं जैसे निर्मल जल भरा हो ऐसा लगता है, और अनेक प्रकार के पंचवर्णी पुष्पों से सजाया हुआ है, वहां दो-दो सरावले (सुप्रतिष्ठक) हैं, वे भी अनेक प्रकार की पूजा की सामग्री-उपकरणों,

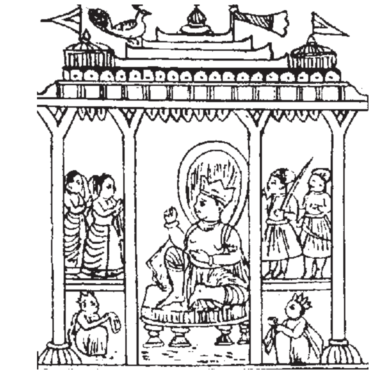
(चित्र सं. 12)-भद्रासन

औषधियों से भरे है, दो-दो मनोगुलिका, पीठीकाएं हैं। उनके सोना, रुपा के बहुत से पाटिया हैं। उन पार्टियों में कई वज्रमय नागदंता हैं, उन नागदंता में बहुत से रुपा के छीके हैं, उन पर वातकारक-बिना पानी के घड़े रखे हैं, उन तोरण के आगे चित्रकारी किये हुए रत्नों के दाभड़े, कंठे हैं। यावत् दो-दो वृषभ के आकार के टोडले वगैरह बहुत पदार्थ हैं। (सविशेष जीवाभिगम सूत्र से जानना)। विजय द्वार पर चक्र, मृग, गरुड़, बगुला, मोर पींछ, शकुनि-पक्षी, छत्र, सिंह, बैल, सफेद चार दांत वाले उत्तम हस्ती इन दसों की एक-एक चिन्ह वाली 108-108 ध्वजाएं हैं, कुल 1080 ध्वजाएं विजय द्वार पर हैं। विजय द्वार नौमंजिल का है। जिसके मध्य में पांचवी मंजिल में एक बड़ा सिंहासन है। उस सिंहासन के वायव्य कोण तथा उत्तर दिशा और ईशान कोण में विजय देवता के 4000 सामानिक देव तथा उनके भद्रासन हैं, सिंहासन के पूर्व दिशा में विजयदेव की 4 अग्रमहिषियों के परिवार सहित भद्रासन हैं, आग्नेय कोण में विजय देव के आभ्यंतर परिषद के 8 हजार देव तथा उनके भद्रासन हैं, दक्षिण दिशा में दूसरे मध्य परिषद के 10 हजार देव तथा उनके भद्रासन हैं, तथा नैऋत्य दिशा में बाह्य परिषद के 12 हजार देव और उनके भद्रासन हैं। सिंहासन के पश्चिम दिशा में सात सेना के सेनापतियों के सात भद्रासन हैं। सिंहासन के पूर्वादिक चारों दिशा में एक-एक के चार-चार हजार भद्रासन हैं। इन विजय देव के 16 हजार आत्म रक्षक देव हैं, उनके चारों दिशा में कुल 16 हजार भद्रासन हैं। शेष 8 मंजिलों में प्रत्येक जो भद्रासन बताये उन सामानिक देवों के सिंहासन (उनके परिवार रहित कहे है) हैं।

ऊपर ऊपर की मंजिल में 16 प्रकार के रत्नों से शोभायमान 8-8 मांगलिक हैं। उनके ऊपर कृष्णादि 5 वर्णों की चामर की बहुत सी ध्वजाएं हैं, सभी रत्नमय हैं। बहुत से छत्रातिछत्र पूर्ववत समझना।

विजय नामक द्वार में विजय देव महर्द्धिक, महा द्युति वान, महानुभाव का धणी, एक पल्योपम आयुष्य वाला रहता है, इसके 4 हजार सामानिक देव, 4 अग्रमहिषियां तीन देव परिषद, सात सेना, उनके सेनापति, 16 हजार आत्म रक्षक देव और अन्य अनेक विजया राजधानी के देव-देवांगनाओं का अधिपत्य करता हुआ, देव संबंधित भोग भोगता विचरण करता है, इसलिए इस विजय द्वार का नाम शाश्वत है।

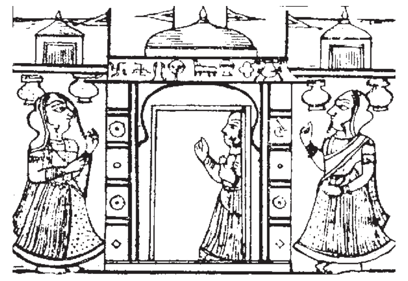

(चित्र सं. 13)-विजया राजधानी की स्थापना

विजया राजधानी- विजय द्वार के विजय देव की विजया राजधानी है, जो विजय द्वार के पूर्व दिशा में तिर्च्छा असंख्याता द्वीप-समुद्र के आगे अन्य जंबूद्वीप है, वहां 12 हजार योजन जाने पर विजया राजधानी है। यह राजधानी 12 हजार योजन लम्बी चौड़ी 37,948 योजन से ज्यादा इसकी परिधि है। यह राजधानी एक प्राकार (गढ़) से चारों दिशा में लिपटी है यह गढ़ साढ़े सैंतीस योजन ऊंचा है, मूल (पाया) में साढ़े बारह योजन चौड़ा मध्य में सवा छः योजन, ऊपर साढ़े तीन योजन चौड़ा है। मूल में विस्तृत मध्य में संकड़ा ऊपर पतला है। बाहर गोल, मध्य में चौरस है, गोपुच्छ आकार का है। स्वर्णमय है, निर्मल यावत् प्रतिरुप है (जिसके समान दूसरा न हो)। यह गढ़ अनेक पांच वर्णी कांगरों से शोभित है, ये कांगरे आधे योजन लंबे पांच सौ धनुष चौड़े, देशोन आधा गाऊ ऊंचे हैं। विजया राजधानी के प्रत्येक दिशा में 125-125 दरवाजे हैं, यों चारों दिशा में 500 दरवाजे हैं। प्रत्येक दरवाजा 62½ योजन ऊंचा, 31¼ योजन चौड़ा और 31¼ योजन प्रवेश मार्ग है, उत्तम सफेद स्वर्ण के छोटे छोटे शिखरों से युक्त है, यहां ईहामृग आदि के चित्रादि वर्णन विजय द्वार जैसा समझना।

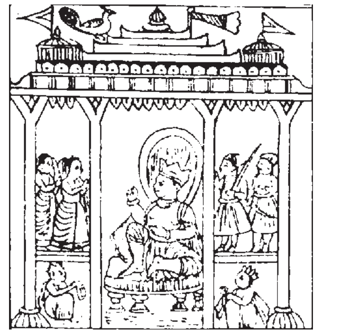

(चित्र सं. 14)
विजया राजधानी के 4 वनखंड 4 प्रासादावतंसक

इसके दरवाजे (प्रत्येक) में 17 मंजिलें है, इसके भूमि भाग तथा अन्दर के भाग में पद्मलता वगैरह चित्रादि हैं। यहां सिंहासनादि चबूतरा, प्रासादावतंसक ये सभी (जीवाभिगम से समझनी) 500 द्वारों में बताये हैं। विजया राजधानी की चारों दिशा में चार वनखंड हैं। पूर्व दिशा में आसोपालव अशोक वन है, दक्षिण में सप्तवर्ण (सड़सड़ा) वन, पश्चिम में चंपक वन उत्तर में आम्रवन है। ये वनखंड 12 हजार योजन से कुछ अधिक लम्बे हैं, पांच सो योजन चौड़े हैं, सभी गढ़ सहित हैं, कृष्ण शोभा है, यावत् बहुत से व्यंतर देव देवांगना विश्राम करते हैं, (सभी वर्णन पूर्ववत समझना) चार वनों में प्रासादावतंसक है, वहां चार नाम के देव सपरिवार रहते हैं, (अन्दर का वर्णन विशेष जीवाभिगम से जानें) विजया राजधानी के मध्य (देशभाग) में एक चबूतरा (उपकारिका लयन विश्राम स्थल) है। बारह हजार योजन लम्बा और चौड़ा है, 37948 योजन साधिक घेरावा है। आधा गाऊ जाड़ा है, जम्बूनन्द रत्न का

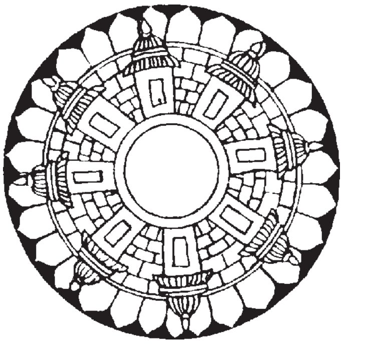
(चित्र सं. 15)-85 महल (प्रासाद)

है। यह चबूतरा एक पद्मवर वेदिका और वनखंड से चारों दिशा से लिपटा है (वनखंड, पद्मवर वेदिका का वर्णन पूर्ववत् समझना)। यह वनखंड देशोन दो योजन परिधि में चौड़ा है चबूतरे के चारों तरफ है। चबूतरे के चारों दिशा में तीन-तीन पगथिये है, प्रत्येक पगथिये के ऊपर तोरण और छत्रातिछत्र हैं।

चबूतरे के मध्य भाग में एक मूल प्रासादावतंसक है, 62½ योजन ऊंचा 31¼ योजन लम्बा और इतना ही चौड़ा है। इसके मध्य भाग में एक और मणिपीठिका (चबूतरा) है, यह मणिपीठिका एक योजन लम्बी चौड़ी है, आधे योजन जाड़ी है। इसके ऊपर एक बड़ा सिंहासन है (सिंहासन वर्णन पूर्ववत समझना) यह मूल प्रासादावतंसक और इसके चारों दिशा में चार प्रासादावतंसक हैं, ये चारों 31¼ योजन ऊँचे, 15½ योजन और आधा गाऊ लम्बे चौड़े हैं। ये प्रत्येक प्रासादावतंसक फिर 4-4 प्रासादावतंसक 15½ योजन आधा गाऊ ऊंचे, देशोन 8 योजन लंबा चौड़ा है। ये प्रासाद अन्य चार-चार प्रासादों से चारों तरफ से घिरे हैं, ये प्रासाद 7¾ योजन और ¼ गाऊ ऊंचा और 750 धनुष कम 4 योजन लम्बा चौड़ा है। ये सभी मिलकर 85 प्रासाद हैं। इस प्रकार एक मध्य में (मूल) उसके चारों दिशा में चार उनके पीछे 4-4 प्रासाद उन प्रत्येक के पीछे 4-4 ये कुल 85 प्रासाद हुए।

इस मूल प्रासादावतंसक के ईशानकोण में विजय देव की सुधर्म सभा है। यह 12½ योजन लम्बी 6¼ योजन चौड़ी और 9 योजन ऊंची है, उसमें अनेक खंभे हैं। ऊंचे खंभे पर वज्र रत्न की ऊपर की कुंभी है, उसके उत्तम तोरणों पर बाहर के दरवाजों की शोभा बढ़ाने वाली अति रमणीय पुतली है, उत्तम मनोज्ञ संस्थान युक्त है। वैडूर्य रत्नमय उसके खंभे हैं, अलग अलग भांति के रत्न, सुवर्ण और मणियों वाला निर्मल विस्तार से सम, मजबूत, आश्चर्यकारी, मनोहर इस सुधर्म सभा का भूमि भाग है। इस सभा में ईहामृग, वृषभ, अश्व, मनुष्य, मगर, मत्स्य, पंखीसर्प, किन्नर देव, चमगादड़, वन हस्ती, वनलता, विद्याधर युगल, पद्मलता वगैरह के चित्र हैं। अनेक प्रकार की पताकाओं, पंचवर्णी घंटियों से शोभित है। दीवालों पर चंदन के नील रक्तवर्णी जगह जगह हाथों के छापे हैं। प्रवेश द्वार पर चंदन कलशों के तोरण रखे हैं, सुधर्म सभा के ऊपर के भाग के अंदर की दीवाल पर बड़ी और गोल फूल मालाएं, पंचवर्णी सुगंधित फूलों के ढ़ेर है, कृष्णागर, कुंदरूक आदि धूप से सुगंधित हैं। अप्सरा समुदाय से व्याप्त है, देवों के वाजिंत्र मृदंगादि के स्वरों से सभा गूंजती है, पश्चिम के अतिरिक्त तीनों दिशा में तीन द्वार है, प्रत्येक द्वार दो-दो योजन ऊंचा एक-एक योजन चौड़ा है, एक योजन प्रवेश है, प्रासाद के ऊपर सफेद उत्तम स्वर्ण शिखर है यावत् वनमालाओं और द्वार का वर्णन पूर्ववत् समझना।

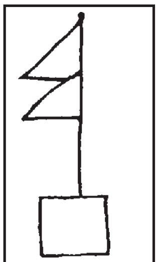
(चित्र सं. 16)-
महेन्द्र ध्वज

द्वार के आगे एक-एक चौक (मुख मंडप) है यह 12½ योजन लंबा 6¼ योजन चौड़ा है। 2 योजन से अधिक ऊंचा है। मंडप में अनेक खंभे है। (वहां चंदरवा और भूमि भाग वर्णन पूर्ववत् समझें) प्रत्येक मुख मंडप पर आठ-आठ मांगलिक है। मुख मंडप के आगे एक-एक प्रेक्षाघर (मंडप) है। यह भी इतना ही लम्बा चौड़ा है। प्रत्येक प्रेक्षाघर के मध्य में चौखुणा वज्र रत्नमय क्रीडांगण है, इस क्रीड़ांगण के मध्य में एक मणिपीठिका है, यह एक योजन लम्बी चौड़ी आधा योजन जाड़ी है। प्रत्येक

(चित्र सं. 17)-पुष्करिणी

मणिपीठिका पर एक एक सिंहासन है। प्रेक्षाघर मंडप के आगे तीन दिशा में तीन मणिपीठिकाएं (चबूतरा) है, प्रत्येक दो योजन लम्बी, चौड़ा एक योजन जाड़ी है, प्रत्येक मणिपीठिका पर एक चैत्य स्तूप (चित्त को आकर्षे ऐसा स्तूप) हैं। इन चैत्य स्तूपों के आगे तीन दिशा में एक मणिपीठिका, उन मणिपीठिकाओं पर चैत्य वृक्ष है, चैत्य वृक्ष के आगे तीन दिशा में तीन मणिपीठिकाएं है, प्रत्येक पर महेन्द्र ध्वज है, जो हजारों की संख्या में छोटे ध्वजों से घिरा हुआ है। उन पर 8-8 मंगल हैं। महेन्द्र ध्वज के आगे पश्चिम सिवाय तीन दिशा में तीन नंदा पुष्करिणीयां हैं। ये 12½ योजन लम्बी 6¼ योजन चौड़ी 10 योजन गहरी हैं, प्रत्येक पुष्करिणी पद्मवर वेदिका, वनखंडों से युक्त हैं, प्रत्येक पुष्करिणी की तीन दिशा में पगथिये हैं। सुधर्मा सभा में 6 हजार मनोगुलिकाएं (बेठक, आसन) है। इसमें पूर्व-पश्चिम में 2-2 हजार, उत्तर व दक्षिण में एक-एक हजार बेठकें हैं, उन बेठकों पर सोना-रुपा के पाटिये हैं, उन पाटियों के बहुत सी वज्रमय नागदंताएं हैं, उन नागदंताओं पर कृष्णादि पांच प्रकार के धागों से गुंथी हुई फूल मालाएं हैं, उन मालाओं के सोने के फूल हैं। सुधर्मा सभा में 6 हजार गोमानसिका (लंबे चबूतरे) शैया रूप हैं, ये भी पूर्व एवं पश्चिम में दो-दो हजार उत्तर एवं दक्षिण में हजार हजार हैं। इन गोमानसिका (शैया) पर बहुत से सोना-रुपा के पाटिये हैं,

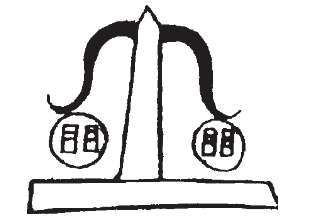
(चित्र सं. 18)-मणवक चैत्य स्तंभ

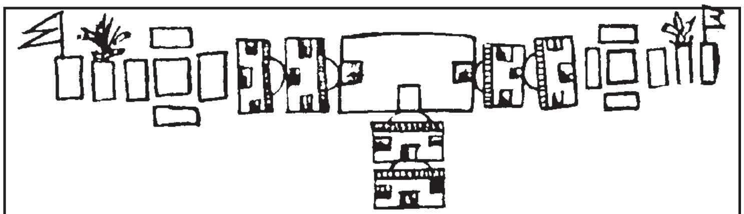
(चित्र सं. 19)-दाभड़ा

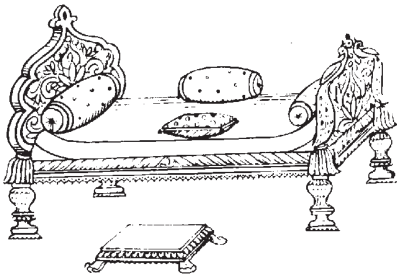
(चित्र सं. 20)-देव शैया

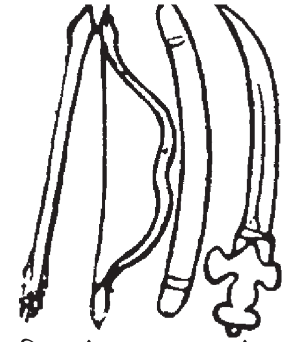
(चित्र सं. 21)-शस्त्र भंडार

यावत् वज्ररत्नमय नागदंता उन पर रजतमय छींके, उन छींकों में वैडूर्य रत्नमय धूपदानियें तथा कृष्णागर, कुंडरुक, लोबान वगैरह हैं।

माणवक चैत्य स्तंभ- सुधर्मा सभा के मध्य एक बड़ी मणिपीठिका है, दो योजन लम्बी चौड़ी एक योजन जाड़ी, उस पर माणवक नामक चैत्य स्तंभ है। यह 7½ योजन ऊंचा आधा गाऊ जमीन में गहरा, आधा गाऊ विष्कंभ (लम्बा चौड़ा) है। इसके 6 हांसिये (खुणे) है, दो संधि, 6 स्थानक से सुशोभित है। उस माणवक स्तंभ पर ऊपर का डेढ़ योजन नीचे का डेढ़ योजन छोड़कर मध्य के 4½ योजन में बहुत से सोना-रुपा के कलात्मक पाटिये हैं, उन पाटियों में बहुत से वज्ररत्न की नागदंता (खीलीयें) है, उन नागदंता पर चांदी के छीके

हैं, उनमें वज्रमय गोलाकार दाभड़े है, उन दाबड़ों में बहुत-सी तीर्थंकरों की दाढ़ाएं हैं, ये दाढ़ाएं विजय देव और बहुत से व्यंतर देव देवियों के लिए अर्चनीय है, (वंदनीय है, चंदनादि से पूजनीय है) वस्त्रादि से सत्कार, सम्मान, बहुमान योग्य है, कल्याणकारी, मंगलकारी, देवस्वरूप, चैत्य जैसे सेवा योग्य है।

माणवक चैत्य स्तंभ के पूर्व दिशा में एक बड़ी मणिपीठिका है, यह दो योजन लम्बी चौड़ी एक योजन जाड़ी है उस पर एक बड़ा सिंहासन है। माणवक चैत्य स्तंभ की पश्चिम दिशा में एक बड़ी मणिपीठिका है, एक योजन लंबी चौड़ी आधा योजन जाड़ी है, उस पर एक देव शैया है। उस देव शैया के ईशानकोण में एक बड़ी मणिपीठिका है, एक योजन लंबी चौड़ी आधा योजन जाड़ी है। उस पर पहले बताए महेन्द्र ध्वज से छोटा महेन्द्र ध्वज है, यह साढ़े सात योजन ऊंचा है, आधा गाऊ चौड़ा है। इस छोटे महेन्द्र ध्वज के पश्चिम दिशा में विजय देव का चौपाल नामक शस्त्र भंडार है।

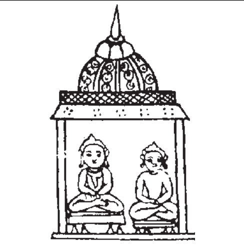

(चित्र सं. 22)-सिद्धायतन

सिद्धायतन- सुधर्मा सभा के ईशान कोण में (कोने) एक बड़ा सिद्धायतन है। (शाश्वत देवालय) यह 12½ योजन लम्बा है, सवा 6 योजन चौड़ा नौ योजन ऊंचा है। मध्य में एक मणिपीठिका है जो दो योजन लम्बी चौड़ी एक योजन जाड़ी है उस मणिपीठिका पर एक बड़ा देवछन्दा है जो दो योजन लंबा चौड़ा एक योजन ऊंचा है।

देव प्रतिमा- इस देवछन्दा में जिन (कामदेव) (सामान्य केवली-अर्हन्नपि जिन श्चेवे, जिनः सामान्य केवली। कन्दर्पोऽपि जिन श्चेवे, जिनो नारायणो हरिः) की 108 प्रतिमाएं है, ये प्रतिमाएं ऊंचाई में जघन्य सात हाथ उत्कृष्ट 500 धनुष है। इन प्रतिमाओं के पीछे छत्र धारक प्रतिमाएं है। ये सभी प्रतिमाएं लीलाओं सहित छत्र धारण किये है, जिन कामदेव के दोनों तरफ दो चामर धारण किये एक-एक प्रतिमा है, जो आनंद से चामर ढ़ोल रही है। प्रत्येक प्रतिमा के आगे दो दो नागदेव की, दो-दो यक्ष देव की, दो-दो भूत देव की, दो-दो कूंडधार देव की, ऐसी आठ प्रतिमाएं विनयपूर्वक नमती वंदन करती हाथ जोड़ती हुई है, सभी प्रतिमाएं रत्नमय है।

इन देव प्रतिमाओं के आगे 108 घंटे है, 108 चंदन कलश, 108 भृंगारक (झारियें), 108 अरीसा (कांच) 108 थाल, 108 पात्र, 108 सुप्रतिष्ठक (सरावला) 108 मनोगुलिका (पीठिका-बेठक) 108 वात करंडक (खाली घड़े) 108 मनोहर रत्न करंडक 108 हय कंठक, बर्तन यावत् 108 वृषभ कंठक भाजन, 108 फूलों की चंगेड़ियां, (छाबड़ियां) यावत् 108 पूंजणी (मसूी पिंछी) की चंगेड़ियां, 108 यावत् फूलों के गुच्छे, 108 सुगंधित तेल के दाबड़े, 108 धूप के कड़छे वगैरह पूजा के उपकरण है। सिद्धायतन पर आठ-आठ मांगलिक हैं, छत्रातिछत्र हैं, सिद्धायतन के शिखर 16 प्रकार के रत्नों से शुभित हैं। सिद्धायतन के ईशान कोने में एक बड़ी उपपात सभा (देव उत्पन्न होने की सभा) जो विजय देव

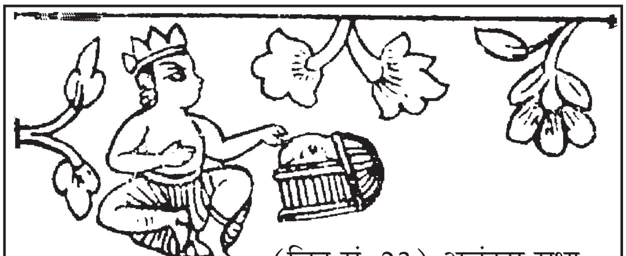

(चित्र सं. 23)-अलंकार सभा

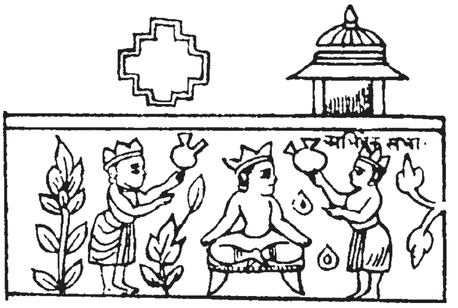

(चित्र सं. 24)-अभिषेक सभा

के उत्पन्न होने की सभा है। सुधर्मा सभा जैसा वर्णन समझना।

उपपात सभा के ईशान कोने में एक बड़ा द्रह (पानी की झील जैसी) है, यह 12½ योजन लम्बा 6¼ योजन चौड़ा 10 योजन गहरा है यह पद्मवर वेदिका तथा वन खंड से युक्त है (नंदा पुष्करिणी जैसा वर्णन है)। इस द्रह के ईशान कोने में एक बड़ी अभिषेक सभा है (सुधर्मा सभा जैसी)। मध्य में बड़ी मणिपीठिका एक योजन लंबी आधा योजन जाड़ी है। मणिपीठिका पर एक बड़ा सिंहासन है, उस पर विजय देव के अभिषेक के बर्तन स्थापित है। अभिषेक सभा के ईशनकोण में एक बड़ी अलंकार सभा है, जिसका अभिषेक सभा जैसा वर्णन है। विजय देव के उत्तम आभूषणों के दाबड़े उत्तम आभूषणों से भरे रहते हैं, विजय देव धारण करते हैं। अलंकार सभा के ईशान कोण में व्यवसाय सभा है (विचार करने की सभा)। जहां विजय देव पुस्तक रत्न पढ़ते हैं, यह अलंकार सभा जैसी है, विजय देव का पुस्तकालय है। पुस्तक रत्न के अरिष्ट रत्नमय पुठे हैं, अंक रत्न के पत्ते हैं (पाने), अरिष्ट रत्न मय अक्षर हैं, लाल सुवर्ण के धागों से पन्ने जोड़े हैं, (धागे में पिरोये है) उनमें अनेक मणि जड़ेल गांठे है, जिससे पन्ने निकले नहीं, वैडूर्य रत्न की स्याही की दवात है उसके लाल सोना की सांकल, अरिष्ट रत्नमय ढक्कन है। खड़िया (दवात) में अरिष्ट रत्नमय स्याही है, वज्र रत्न की लेखनी (कलम) है। पुस्तक में केवल धर्मशास्त्र (देवों के आचार रुप धर्मशास्त्र) है।

व्यवसाय सभा के ईशानकोण में एक बलिपीठ (पूजा गृह) है, दो योजन लंबा चौड़ा एक योजन मोटा चांदी का बना है, इसके ईशानकोण में बड़ी नंदा पुष्करणी है (द्रह जैसा वर्णन)। विजय देव जब उत्पन्न होते हैं, तब श्री देव (कामदेव) प्रतिमा की पूजा अर्चना (जीवाभिगम सूत्रानुसार) आदि शुभ क्रियाएं करते है।

वैजयंत नामक दूसरा द्वार– मेरु पर्वत की दक्षिण दिशा में 45 हजार योजन जाने पर जंबूद्वीप के दक्षिण किनारे वैजयंत द्वार है, इसका संपूर्ण वर्णन विजय द्वार समान जानना, वहां वैजयंत देव है, उसकी वैजयंत राजधानी दक्षिण दिशा में है (वर्णन विजयवत्)।

जयंत द्वार– मेरु पर्वत की पश्चिम दिशा में 45 हजार योजन जाने पर जंबूद्वीप के अन्तिम किनारे पश्चिम में शीतोदा महानदी पर जयंत नामक तीसरा द्वार है, इसका अधिकार भी विजय द्वारवत् जानना। यहां जयंत देव है, जयंती राजधानी पश्चिम दिशा में है। संपूर्ण वर्णन विजय द्वार समान समझें।

अपराजित द्वार– मेरु पर्वत की उत्तर दिशा में 45 हजार योजन जाने पर जंबूद्वीप की उत्तर दिशा में अपराजित द्वार है, यह विजय द्वार जैसा है, यहां अपराजित देव है। अपराजिता राजधानी उत्तर दिशा में है।

जंबूद्वीप के चारों द्वारों के देवताओं की राजधानियां चारों दिशा में जाननी। चारों द्वारों के स्वामी तथा सामानिक देवों का एक पल्योपम आयुष्य है।

भरत क्षेत्र– जम्बूद्वीप में चुल्ल हिमवंत वर्षधर पर्वत से दक्षिण दिशा में लवण समुद्र है, इस लवण समुद्र की उत्तर दिशा में तथा पूर्व में और पश्चिम में लवण समुद्र है, इस अवकाश के मध्य में जो क्षेत्र है वह भरत क्षेत्र है।

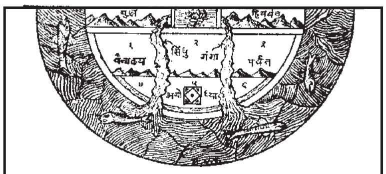

(चित्र सं. 25)-द. भरत क्षेत्र

यहां सूखे वृक्ष के ठूंठ, बोर, बंबूल, वगैरह कांटों के वृक्ष, ऊंची नीची विषम भूमि, दुर्गम स्थान, पर्वत, पानी के झरने, खानें, खड्डे, गुफा, नदी, द्रह वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, नवमालिका आदि लताएं, पद्मलतादि बेले, कोहली, अटवी, श्वापद हिंसक पशु, चोर, तस्कर, स्वचक्र-परचक्र उपद्रव, दुर्भिक्ष, भिक्षुक को भिक्षा दुर्लभ मिले, दुष्काल, पाखंडी, जिनमार्ग के उत्थापक, कृपण, लोभी, छह विपत्तियां (अतिवृष्टि, अनावृष्टि, चूहे, तीड़ (सलभ), पक्षी, राजा), राजा भी प्रजा को दुःख देने वाले, बहुत रोग, झगड़े, गरबड़, घबराहट, दंड, कर (टेक्स) होते हैं।

भरत क्षेत्र पूर्व-पश्चिम लम्बा, उत्तर दक्षिण चौड़ा है। उत्तर में पल्यंकासन (पालथी मारकर बैठना) संस्थान से स्थित है, दक्षिण में धनुष की कमान संस्थान वत् है। तीन दिशा पूर्व पश्चिम दक्षिण में लवण समुद्र को स्पर्शा है। गंगा सिंधु दो बड़ी नदियों तथा वैताढ्य पर्वत से 6 भाग में बंटा होने से 6 खंड कहते हैं।

जम्बू द्वीप का विष्कंभ एक लाख योजन है (चौड़ाई) उसमें से 190वां भाग यानि 526 योजन 6/19 योजन साधिक विष्कंभ भरत क्षेत्र का है। मध्य में वैताढ्य पर्वत है, इससे यह उत्तरार्द्ध और दक्षिणार्द्ध भागों में बंट जाता है।

वैताढ्य पर्वत की दक्षिण दिशा में जो लवण समुद्र है उसके उत्तर में तथा पूर्व दिशा के लवण समुद्र से पश्चिम में तथा पश्चिम के लवण समुद्र के पूर्व में दक्षिणार्द्ध भरत क्षेत्र है। यह पूर्व पश्चिम लम्बा, उत्तर दक्षिण चौड़ा है, अर्द्ध चन्द्राकार है। पूर्व, पश्चिम, दक्षिण यों तीन दिशा में लवण समुद्र स्पर्शा है। गंगा सिंधु दो महानदियों से तीन भाग में विभाजित है। यह दक्षिणार्द्ध भरत $238\frac{3}{19}$ योजन चौड़ा है। दक्षिणार्द्ध भरत के अन्त में उत्तर दिशा में धनुष की पणछ जैसी जीवा है, यह पूर्व पश्चिम लम्बी, दो तरफ समुद्र को स्पर्शती है। पूर्व पश्चिम $9748\frac{12}{19}$ योजन लंबी है। इस जीवा का धनुःपृष्ठ दक्षिण दिशा में $9766\frac{1}{19}$ योजन परिधि है।

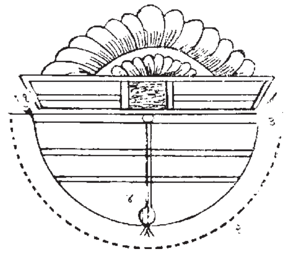

(चित्र सं. 26)-1. बाहा, 2. धनुःपृष्ठ, 3. जीवा, 4. ईषु

अयोध्या नगरी- दक्षिणार्द्ध भरत के मध्य में 12 योजन लम्बी 9 योजन चौड़ी अयोध्या (विनीता) नगरी है। यह लवण समुद्र से और वैताढ्य पर्वत से $114\frac{11}{19}$ योजन दूरी पर है। दक्षिणार्द्ध भरत के $238\frac{3}{19}$ में से 9 योजन कम करके आधा कर दें तो यह माप आता है। इतनी दूर समुद्र और पर्वत से जानना।

मागधादि तीर्थ- चक्रवर्ती के वशवर्ती भरत, एरवत, महाविदेह की 32 विजय ये 34 क्षेत्र हैं। गंगा, सिंधु, रक्ता, रक्तवती, ये चार भरत एरवत की नदियां है। जो समुद्र में प्रवेश करती है, तथा विजय की सीता, शीतोदा नदी जहां प्रवेश करती है, उस नदी-सागर संगम के उत्तम स्थान को तीर्थ कहते हैं। दक्षिणार्द्ध भरत में पूर्व दिशा में मागध, पश्चिम दिशा में प्रभास तीर्थ तथा दोनों के मध्य एक वरदाम तीर्थ है यों भरत क्षेत्र में तीन तीर्थ है, यों एरवत में तीन तथा विजयों में भी तीन-तीन तीर्थ गिनने से जंबूद्वीप में 102 तीर्थ है।

वैताढ्य पर्वत- भरत क्षेत्र में पूर्व पश्चिम लम्बा, उत्तर दक्षिण चौड़ा वैताढ्य पर्वत है। पच्चीस योजन ऊंचा, चौथा भाग 6¼ योजन भूमि में है (अढाई द्वीप में मेरु सिवाय सभी पर्वत अपनी ऊंचाई का चौथा भाग धरती में है) और 50 योजन चौड़ा है। इसकी बाहा पूर्व पश्चिम दिशा में $488\frac{16}{19}$ योजन लम्बी है। उसकी जीवा उत्तर में

पूर्व पश्चिम लम्बी और दोनों तरफ लवण समुद्र को स्पर्शी है। यह $10720\frac{12}{19}$ योजन लम्बी है, इसका धनु:पृष्ठ $10743\frac{15}{19}$ योजन परिधि है। रुचक ग्रीवा आभरण संस्थान से है। यह पर्वत रूपामय, स्फटिक जैसा चिकना (सुकोमल) है, प्रतिबिम्ब दिखता हो ऐसा है, प्रतिरूप (अन्य नहीं) है।

इसके उत्तर-दक्षिण दोनों तरफ दो पद्मवर वेदिका है जो दो वनखंडों से चारों दिशा में लिपटी (घिरी) है, पद्मवर वेदिका आधे योजन ऊंची, पांच सौ धनुष चौड़ी है, पर्वत जितनी लम्बी है। वनखंड दो योजन से कुछ कम चौड़ा, वेदिका जितना लम्बा है। काले वर्ण जैसी काली कांति शोभा युक्त है।

वैताढ्य के पूर्व और पश्चिम दिशा में दो गुफाएं है- ये उत्तर दक्षिण 50 योजन लम्बी, पूर्व पश्चिम में किनारे 12 योजन चौड़ी 8 योजन ऊंची है। इसके 8 योजन ऊंचा, चार योजन चौड़ा, चार योजन प्रवेश वाला यों उत्तर दक्षिण वज्र रत्न मय मजबूत दो बारणा है (दरवाजा)। ये कपाट से ढ़ंकी है। इनमें अंधकार व्याप्त है, चंद्र-सूर्यादि की ज्योति बिना का मार्ग है। पश्चिम में तमस (तमिस्त्र) गुफा और पूर्व में खण्डप्रपात गुफा है। कृतमाल, नृत्यमाल दो देव एक पल्य के आयुष्य वाले वहां रहते हैं। इन गुफाओं में उम्मग्गजला, निमग्ग जला ये दो नदियां है। तीन-तीन योजन का विस्तार है। ये नदियां पर्वत में जो बड़े पत्थर है, उसमें से निकल कर गंगा सिंधु में मिलती है। इन दो नदियों के बीच वैताढ्य के 50 योजन में से 25वां और 26वां योजन यों दो योजन का अंतर है।

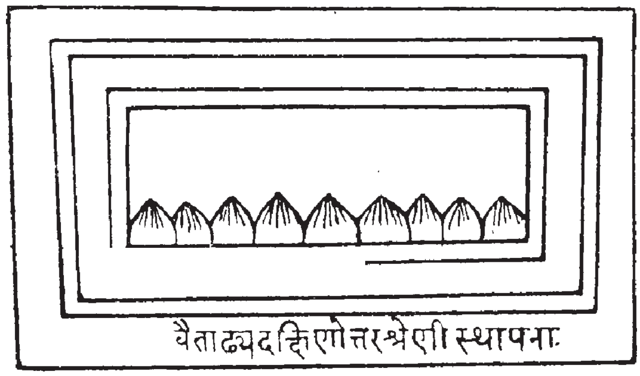

(चित्र सं. 27)-वैताढ्य दक्षिणोत्तर श्रेणी स्थापना

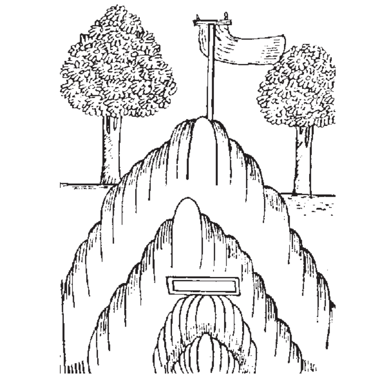
(चित्र सं. 28)-ऋषभ कूट पर्वत

गुफा के दोनों तरफ की दीवालों पर (जो चक्रवर्त्ती होते है वे) दो-दो आमने-सामने सूर्य मंडल जैसी कांकणी रत्न से 49 मांडला प्रकाश करने हेतु बनाते हैं। ये प्रत्येक मंडल उत्सेधांगुल से 500 धनुष है, यह गुफा प्रमाणांगुल से 12 योजन चौड़ी है तथा एक-एक मांडले के बीच एक-एक योजन की दूरी है, मांडले के ऊपर और नीचे कुल 8 योजन ऊंची है, चौड़ाई में 12 योजन प्रकाश करती है, मंडल में एक-एक योजन प्रकाश करती है, ऊँचाई में 8 योजन प्रकाश करती है। ये मांडले दोनों तरफ एक-एक योजन अंतर से गोमूत्रिका आकार से एक भींत में 24 मंडल होते हैं, दूसरी पर 25 मंडल होते हैं। सिंधु नदी के पास तमस गुफा है, उस गुफा में से चक्रवर्त्ती दक्षिण मध्य खंड में से उत्तर मध्य खंड में प्रवेश करते हैं, और उत्तर खंड को साध (जीत) कर वहां से वापस आते हुए ऋषभकूट पर स्वयं का नाम लिखकर गंगा नदी के पास जो दूसरी खंड प्रपात गुफा है, उसमें से होकर दक्षिण भरत में वापस आते हैं, जब तक चक्रवर्त्ती जीवित रहते है, तब तक गुफाओं के किंवाड़ खुल्ले रहते हैं।

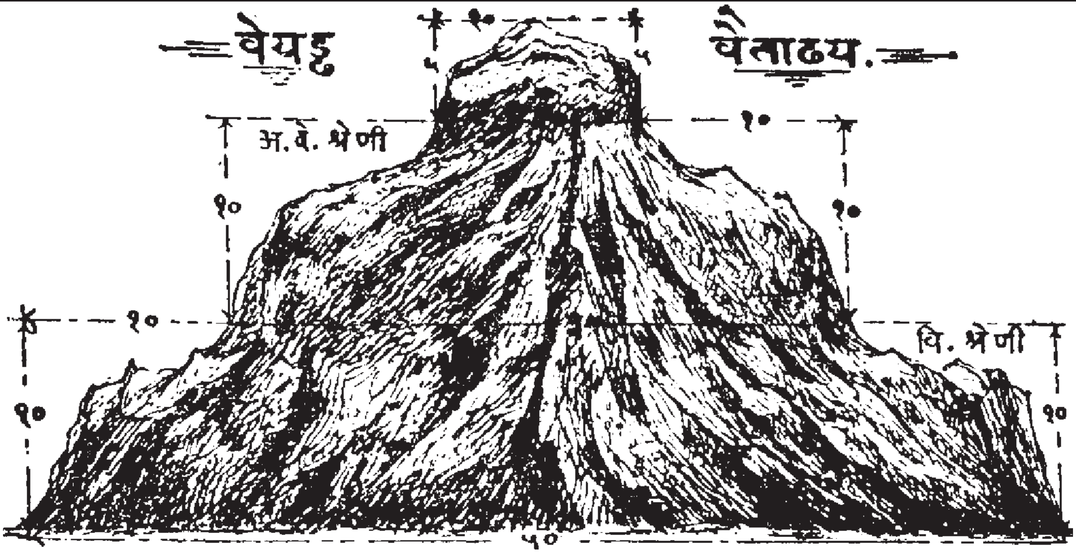

(चित्र सं. 29)

पूर्वोक्त वनखंड के दोनों तरफ 10-10 योजन ऊपर जाने पर दो विद्याधर श्रेणियां आती है। ये 10-10 योजन चौड़ी और पर्वत जितनी लम्बी है। दोनों तरफ दो पद्मवर वेदिका और दो वनखंड है जो चारों तरफ लिपटे हैं, लम्बाई चौड़ाई पूर्ववत्।

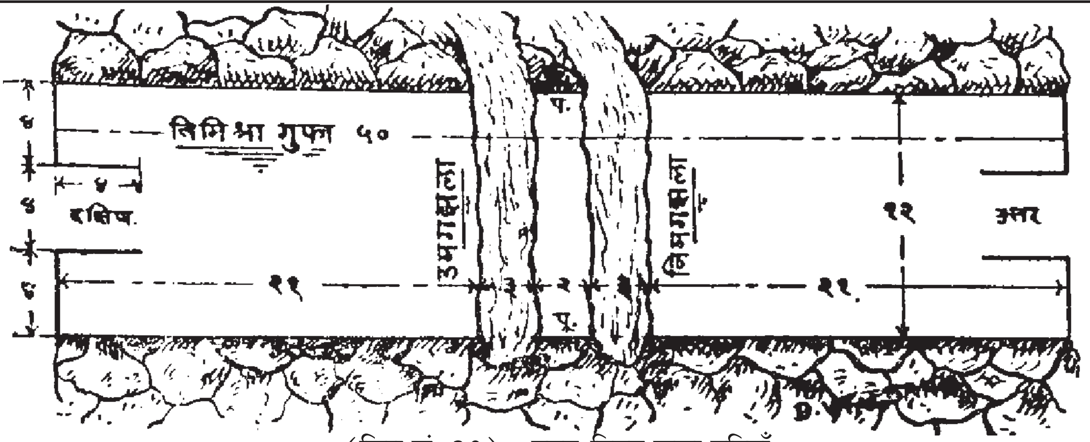

(चित्र सं. 30) - उमग-निमग जला नदियाँ

दक्षिण दिशा में विद्याधर श्रेणी है, उसमें विद्याधरों के रथनुपुर चक्रवाल वगैरह 50 बड़े नगर राजधानी रूप है। उत्तर तरफ की विद्याधर श्रेणियों में गगन वल्लभ वगैरह 60 बड़े नगरावास राजधानी रुप हैं। यों 110 नगर राजधानी रुप हैं, उनमें इन विद्याधरों के बड़े बलवान राजा रहते हैं। **दक्षिण दिशा के 50 नगर–** रथनुपुर, आनंद, चक्रवाल, अरिंजय, मंडित, बहुकेतु, शकटामुख, गंधसमृद्ध, शिवमंदिर, वैजयन्त, रथपुर, श्रीपुर, रत्नसंचय, आषाढ़, मानस, सूर्यनगर, स्वर्णनाभ, शतह्द, अंगावर्त्त, जलावर्त्त, आवर्तपुर, वृहदगृह, शंखव्रज, नाभांत, मेघकूट, मणिप्रभ, कुंज्रावर्त्त, असितपर्वत, सिंधुकक्ष, महाकक्ष, सकक्ष, श्रीकूट, गौरीकूट, लक्ष्मीकूट, धराधर, कालकेशपुर, रम्यपुर,

हिमपुर, किन्नरोद्‌गीत, नभस्तिलक, मगधसार, पांसुमूल, दिव्यौषध, अर्कमूल, उदयपर्वत, अमृतधारा, मातंगपुर, भूमिमण्डल, जम्बूशंकूपुर। **उत्तर दिशा के 60 नगर**-गगनवल्लभ, आदित्यनगर, चमरचम्पा, गगनमण्डल, विजय, वैजयंत, शत्रुंजय, अरिंजय, पद्‌माल, केतुभाल, रूद्राश्व, धनंजय, बस्वौक, सारनिवह, जयंत, अपराजित, वराह, हास्तिन, सिंह, सौकर, हस्तिनायक, पाण्डुक, कौशिक, वीर, गौरिक, मानव, मनु, चम्पा, काँचन, ऐशान, मणिव्रज, जयावह, नैमिष, हस्तिविजय, खंडिका, मणिकांचन, अशोक, वेणु, आनंद, नंदन, श्रीनिकेतन, अग्निज्वाल, महाज्वाल, माल्य, पुरू, नंदिनी, विद्युत्प्रभ, महेन्द्र, विमल, गंधमादन, महापुर, पुष्पमाल, मेघमाल, शशिप्रभ, चुड़ामणि, पुष्पचूड़, हंसगर्भ, बलाहक, वंशालय, सौमनस। विद्याधरों की श्रेणि के भूमिभाग से वैताढ्य पर्वत के दोनों तरफ 10-10 योजन ऊपर जाने पर आभियोगिक देवों की दो श्रेणियां आती है, ये भी 10-10 योजन चौड़ी और पर्वत जितनी लम्बी है। ये भी पद्मवर वेदिका तथा वनखंडों से घिरी हुई है। (वर्णन पूर्ववत समझें)।

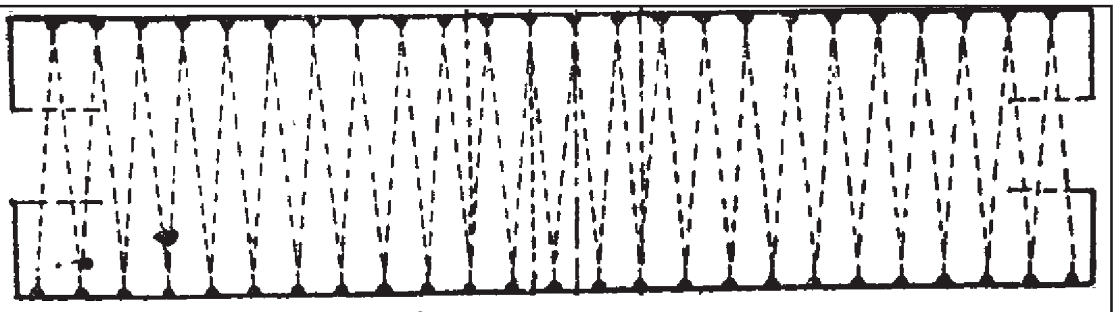

(चित्र सं. 31) - 49 मांडला

उस भूमि में व्यंतर देव, देवांगना विचरते है। इस श्रेणि में सौधमेन्द्र के चार लोकपाल तथा उनके आभियोगिक (आज्ञाकारी) देवों (किंकर देव) के बहुत भवन हैं, सभी भवन बाहर से गोलाकार, अन्दर समचोरस है। यावत् अप्सराओं के समूहों से व्याप्त हैं। इन सभी देवों का आयुष्य एक पल्योपम है। आभियोगिक देवों की श्रेणी से 5-5 योजन ऊपर जाने पर वैताढ्य पर्वत का शिखर है। 10 योजन चौड़ा पर्वत जितना लम्बा है। यह एक पद्मवर वेदिका और एक वन खंड से घिरा है (चारों तरफ से)। शिखर तल पर बहुत से व्यंतर देव देवी भोग भोगते विचरते हैं।

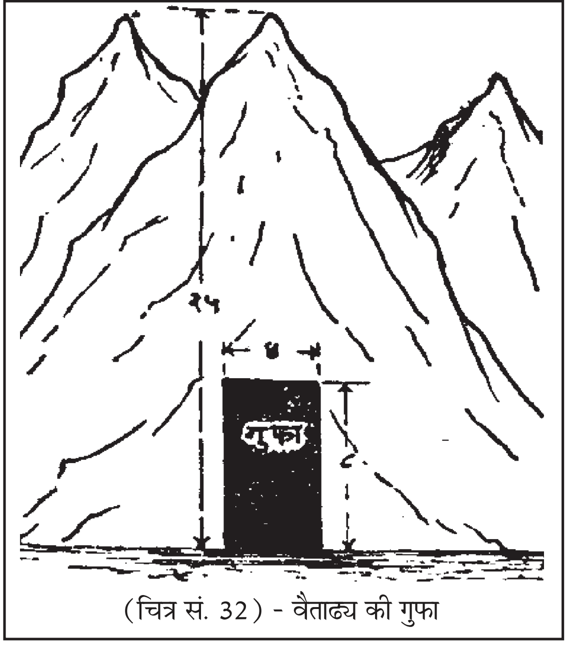

(चित्र सं. 32) - वैताढ्य की गुफा

वैताढ्य पर्वत के ऊपर 9 कूट (शिखर) है-1. सिद्धायतन 2. दक्षिणार्द्ध भरत कूट 3. खंड-प्रपात गुफा कूट 4. मणिभद्र कूट 5. वैताढ्य कूट 6. पूर्णभद्र कूट 7. तमस गुफा कूट 8. उत्तरार्द्ध भरत कूट 9. वैश्रमण कूट। इनमें से प्रथम सिद्धायतन कूट 6¼ योजन चौड़ा, बीच में 5 योजन (कुछ कम) ऊपर में तीन योजन झाझेरा

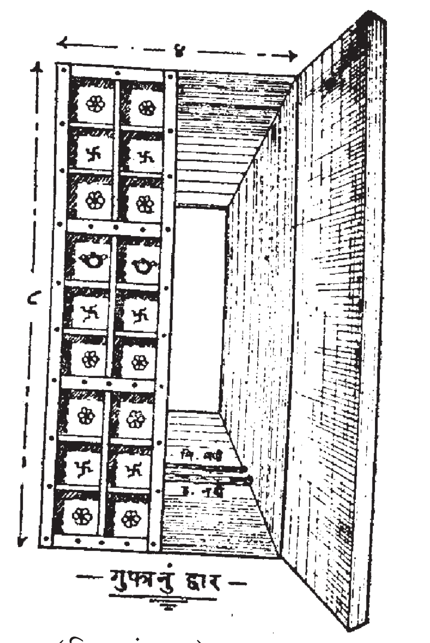

(चित्र सं. 33) - गुफा का द्वार

चौड़ा है, मूल में चौड़ा बीच में संकड़ा ऊपर पतला (गोपुच्छ आकार) है। सर्व रत्नमय है, यह कूट पद्मवर वेदिका और वनखंड से चारों तरफ से घिरा है। यहां एक सिद्धायतन है, मध्य में अनेक देव छंद है। (विशेष विवरण के लिए जीवाभिगम देखें)। इस सिद्धायतन कूट के पश्चिम दिशा में दूसरा दक्षिणार्द्ध भरत कूट है। सिद्धायतन जितना ऊंचा और चौड़ा है। ऐसे रमणीय भूमि भाग के मध्य भाग में एक प्रासादावतंसक है। एक गाऊ ऊंचा आधा गाऊ चौड़ा है। मध्य भाग में एक चबूतरा है (पीठिका)। पांच सौ धनुष लम्बा चौड़ा 250 धनुष जाड़ा है। उस पर बैठने का सिंहासन है, जो हजारों की संख्या में भद्रासनों से घिरा है।

इस कूट में दक्षिणार्द्ध भरत नामक देव महात्रऋद्धिवंत एक पल्योपम स्थिति वाला है। जिसके 4 हजार सामानिक देव, चार अग्रमहिषियां परिवार सहित, तीन परिषद, सात सेना, सात सेना के सेनापति, चारों दिशा में चार-चार हजार यों 16 हजार आत्म रक्षक देव है। यह देव दक्षिणार्द्ध भरत क्षेत्र की दक्षिणार्द्ध राजधानी का तथा अन्य बहुत देव देवांगनाओं का अधिपत्य भोगता हुआ विचरता है। ये नौ कूट 6¼ योजन ऊंचा समझना।

(चित्र सं. 34)-वैताढ्य के 9 कूट

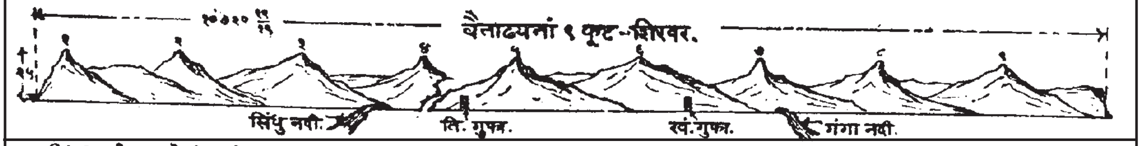

(चित्र सं. 35)-वैताढ्य पर्वत के अलग-अलग विभाग

चौथा मणिभद्र कूट, पांचवा वैताढ्य कूट, छठा पूर्णभद्र कूट, ये तीनों स्वर्णमय है। शेष 6 कूट रत्नमय है। तमस गुफा कूट में कृतमाल देव रहता है, खंड प्रपात गुफा कूट में नृत्यमाल देवता रहता है। ये दो कूट देवों के नाम से नहीं है। शेष 6 कूट के देवता इन कूटों के नाम से है। सभी देवों का आयुष्य एक पल्योपम का है।

मेरु पर्वत के दक्षिण दिशा में तिरछा असंख्याता द्वीप समुद्र आगे जाने पर दूसरा जंबूद्वीप आता है, उसमें 12 हजार योजन जाने पर उपरोक्त सभी देवों की राजधानियां है, (विजय देव की तरह समझना) और वैताढ्य गिरि कुमार नामक देव महर्द्धिक देव, एक पल्योपम आयुष्य वाला रहता है, इसलिए इस पर्वत का नाम वैताढ्य है, जो शाश्वत है।

उत्तरार्द्ध भरत नामक क्षेत्र पूर्व पश्चिम लम्बा, उत्तर दक्षिण चौड़ा पल्यंकासन आकार का है, यह गंगा, सिधु दो बड़ी नदियों से तीन भाग में बंटा है, 238 $\frac{3}{19}$ योजन चौड़ा है। इसकी बाहा पूर्व पश्चिम दिशा में 1892 योजन और एक योजन के 19 भाग का 7½ भाग योजन जितनी लम्बी है। इसकी जीवा पणछ की तरह उत्तर दिशा में 14471 $\frac{6}{19}$ योजन से कुछ न्यून लम्बी है, इस जीवा का धनुःपृष्ठ दक्षिण दिशा में 14528 $\frac{11}{19}$ योजन जितनी परिधि है।

इस उत्तराद्ध भरत में **ऋषभकूट पर्वत** है- गंगा प्रपात कुंड के पश्चिम और सिंधु प्रपात कुंड के पूर्व दिशा में, चुल्ल हिमवंत पर्वत की दक्षिण तरफ नितंब (ऊंचा और उतरता ढलान या नीचा भाग) के पास में ऋषभकूट है। यह 8 योजन ऊँचा तथा मूल में 8 योजन चौड़ा मध्य में 6 योजन ऊपर में 4 योजन चौड़ा है (पाठांतर से चौड़ाई 12-8-4 योजन) गोपुच्छ आकार है। जंबूनद रत्नमय श्याम वर्णा है। (भवनादि पूर्ववत् सूत्रों से जानना) यहां ऋषभ नामक महर्द्धिक देव निवास करता है। उनका परिवार आदि अन्य जंबूद्वीप में राजधानी आदि वर्णन पूर्ववत् समझना।

भरत क्षेत्र में भरत नामक महाऋद्धिवंत सामानिक आदि देवों सहित एक पल्योपम आयुष्य वाला देव रहता है, इसी से इसका नाम भरत वर्ष यह शाश्वत नाम है।

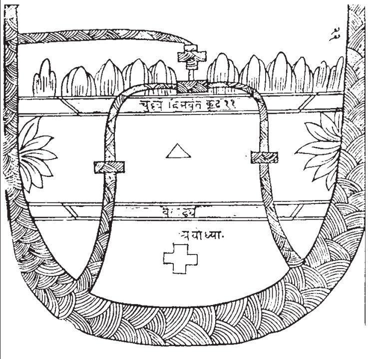
(चित्र सं. 36)-चुल्ल हिमवंत पर्वत 11 कूट सहित

चुल्ल हिमवंत वर्षधर पर्वत- भरत क्षेत्र के उत्तर दिशा में भरत क्षेत्र की सीमा रूप चुल्ल हिमवंत पर्वत है। एक सौ योजन ऊंचा 25 योजन धरती में गहरा और 1052 $\frac{12}{19}$ (1052 योजन 12 कला) योजन चौड़ा है। इसकी बाह्य पूर्व पश्चिम प्रत्येक में 5350 योजन साढ़े पन्द्रह कला (19 में से 15½भाग) है। इसकी जीवा पणछ उत्तर तरफ पूर्व-पश्चिम लंबी 24932 योजन ½ कला से कम लम्बी है। उसका धनुःपृष्ठ दक्षिण में 25230 $\frac{4}{19}$ योजन परिधि है। रुचक स्वर्ण आभूषण संस्थान का है, संपूर्ण स्वर्णमय है। दोनों तरफ दो-दो पद्मवर वेदिका और वनखंड के घेरे में हैं। पर्वत पर बहुत से व्यंतर देव-देवी विचरते हैं।

पर्वत के मध्य भाग में **पद्मद्रह** है, पूर्व पश्चिम एक हजार योजन लंबा, उत्तर-दक्षिण 500 योजन चौड़ा, दस योजन गहरा है। इसके रूपामय तट है। एक पद्मवर वेदिका और एक वनखंड से यह द्रह चारों ओर से घिरा है।

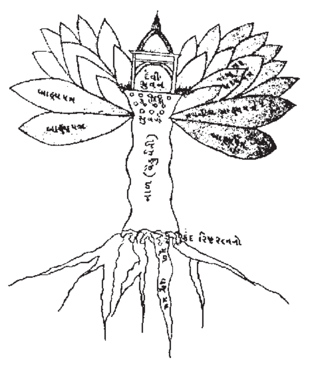
(चित्र सं. 37)-लक्ष्मी देवी का कमल

द्रह के मध्य भाग में एक बड़ा कमल है, एक योजन लम्बा चौड़ा, आधा योजन जाड़ा है। दो गाऊ पानी से ऊपर है, दस योजन पानी में है यो 10½ योजन कुल ऊंचा है। यह कमल चारों तरफ जगती से घिरा है। जगती पानी के ऊपर जंबूद्वीप की जगती प्रमाण की है। गवाक्ष भी उसी प्रमाण के है। कमल का मूल वज्ररत्नमय है, कंद मूल नाल के बीच की गांठ अरिष्ट रत्न की है। वैडूर्य रत्न की नाल है, वैडूर्य रत्नमय बाहर के पत्ते है, कुछ लाल स्वर्ण की अंदर की पंखुड़ियां है, लाल स्वर्ण की केसर है, विविध मणिमय पुष्करास्थि भाग कमल भाग है, कनकमय कर्णिका डोडा है, कर्णिका आधा योजन लम्बी चौड़ी एक

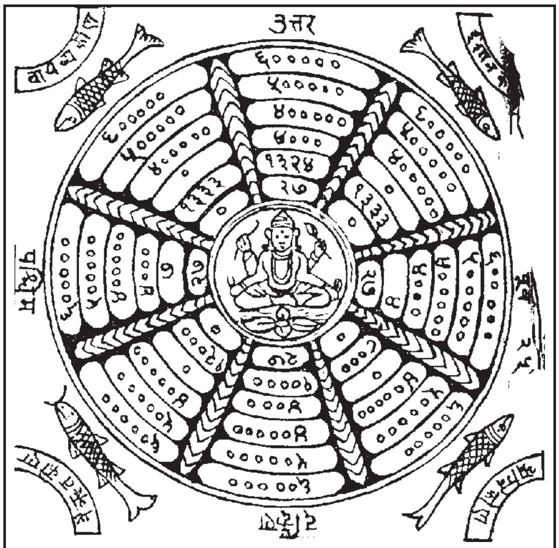

(चित्र सं. 38)-प्रत्येक वलय में देव-देवी का वर्णन

गाऊ ऊंची है। उस कर्णिका पर रमणीय भूमि के मध्य भाग में एक बड़ा भवन है, यह एक गाऊ लम्बा आधा गाऊ चौड़ा 1440 धनुष ऊंचा सैकड़ों खंभों युक्त है। भवन की तीन दिशा में तीन दरवाजे हैं। प्रत्येक दरवाजा 500 योजन ऊंचा है, 250 योजन चौड़ा है। श्वेत कनकमय भूमि के चबूतरे से युक्त है, यावत वनमाला तक जानना। भवन के मध्य भाग में एक मणि पीठिका है, 500 धनुष लम्बी चौड़ी 250 धनुष जाड़ी है, उस पर श्री देवी की शैया है।

उस कमल की प्रथम परिधि में 108 कमल हैं। ऊंचाई लम्बाई आदि मूल कमल से आधी है पानी से एक गाऊ बाहर है 10 योजन पानी में यों 10¼ योजन ऊंचा और आधा योजन लंबा चौड़ा है, उनकी कर्णिका, भवनादि मूल कमल से आधा समझना। इन 108 कमलों में श्री देवी के आभूषणादि हैं।

दूसरी परिधि में मुख्य कमल के वायव्य कोण में, उत्तर में, ईशानकोण में यों तीन दिशा में श्री देवी की चार हजार देवी के चार हजार कमल हैं। पूर्व दिशा में श्री देवी की चार महत्तरिका गुरुस्थानीय देवी के चार कमल है, तथा आग्नेय कोण में आंतरिक परिषद के 8000 देवता के 8 हजार कमल हैं, दक्षिण दिशा में मध्यम परिषद के 10 हजार देवों के 10 हजार कमल हैं, तथा बाह्य परिषद के 12 हजार देवों के 12 हजार कमल हैं और पश्चिम दिशा में सात कटक (सेना) के सेनापतियों के 7 कमल हैं, यों कुल दूसरी वलय में 34011 कमल है।

तीसरी परिधि में प्रत्येक दिशा में 4-4 हजार कमल यों आत्मरक्षक देवों के 16 हजार कमल हैं। मूल कमल की चारों तरफ तीन अन्य परिधि है, अन्दर-मध्य और बाहर यो तीन परिधि अर्थात् चौथी-पांचवी-छठी इन तीन परिधियों के कमलों में श्रीदेवी के आभियोगिक किंकर देव रहते हैं। चौथी परिधि (अन्दर की) में 32 लाख कमल हैं। मध्य की पांचवी परिधि में 40 लाख कमल हैं, बाहर की छठी परिधि में 48 लाख कमल हैं यों तीन परिधि में एक करोड़ बीस लाख कमल हुए। उनके पहले की तीन परिधि के 50,120 कमल मिलाने से 1,20,50,120 कमल हुए। सभी कमल जंबूवृक्ष जैसे शाश्वत पृथ्वीकाय रुप है, परन्तु कमल आकार के हैं। इसीलिए कमल कहा है। पहली परिधि के कमल से दूसरी परिधि के कमल आधे प्रमाण वाले इसी प्रकार आगे आगे सभी परिधि में आधे आधे प्रमाण से कहना। जिस प्रकार पद्मद्रह के कमलों के परिवार बताये इसी प्रकार दूसरे पर्वतों के द्रह संबंधी परिवार जानना। पद्मद्रह के कमल पद्मद्रह के जैसे प्रभायुक्त तथा वर्ण जैसे है, इसलिए इसका नाम पद्मद्रह शाश्वत रखा है। यहां श्री देवी महा ऋद्धि वंत यावत् एक पल्योपय आयुष्य वाली रहती है।

दूसरे पर्वतों के द्रह संबंधी वक्तव्यता-

हिमवंत और शिखरी इन दो पर्वतों पर पद्म और पुंडरीक ये दो द्रह है, इनके पूर्व में एक, पश्चिम में एक और एक मेरु पर्वत के सामने यों तीन द्वार है, इनके बारणे भी अपनी अपनी दिशा में द्रह के 80वें भाग के हैं। द्रहों का

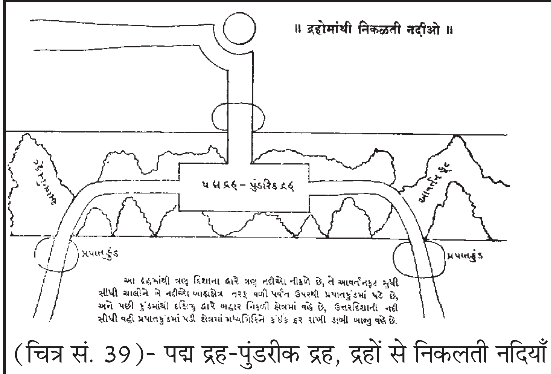

(चित्र सं. 39)- पद्म द्रह-पुंडरीक द्रह, द्रहों से निकलती नदियाँ

विस्तार 500 योजन पूर्व-पश्चिम दिशा में है, उसका 80वां भाग 6¼ योजन का बारणा चौड़ा है। मेरु के सम्मुख एक हजार योजन का द्रह है, उसका 12½ योजन का बारणा जानना। ये बारणे तोरण सहित तथा नदियां निकलती है, उनके सहित है। शेष 4 द्रह के दक्षिण और उत्तर दिशा में दो-दो बारणा है, उसके मध्य मेरु के सामने जो बारणा है वह अपनी दिशा में द्रह का 80वां भाग है, जैसे महापद्म और महापुंडरीक ये मेरु सम्मुख दो हजार योजन है अतः इनका बारणा 25 योजन का है, तथा बाहर के दक्षिण उत्तर के सामने वाले मेरु से आधे 12½ योजन के प्रमाण से है। इसी प्रकार तिगिच्छ और केसरी द्रह मेरु दिशा तरफ लम्बाई 4 हजार योजन में 80 का भाग देने से 50 योजन प्रमाण मेरु सम्मुख बारणा तथा उत्तर दक्षिण के बाहर के बारणे अन्दर से आधा प्रमाण 25 योजन प्रमाण हुआ, ये द्रह के बारणे तोरण और नदी सहित जानना।

पद्मद्रह के पूर्व दिशा में तोरण (द्वार) से गंगा नदी निकली जो पूर्व दिशा के सामने 500 योजन पर्वत पर जाकर गंगावर्त्तन कूट फिरकर $523\frac{3}{19}$ योजन जितना दक्षिण दिशा में पर्वत पर होकर जैसे मोटे घड़े से पानी खल

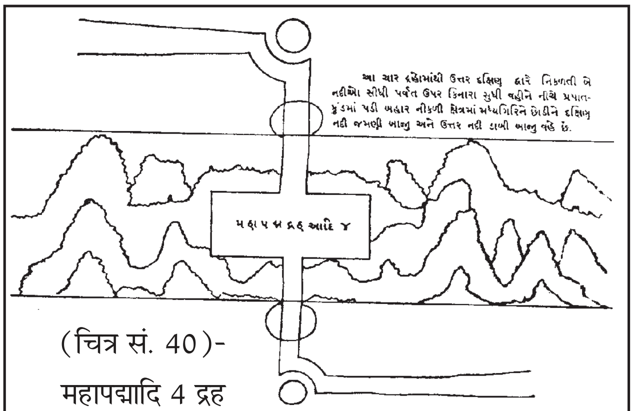

(चित्र सं. 40)-
महापद्मादि 4 द्रह

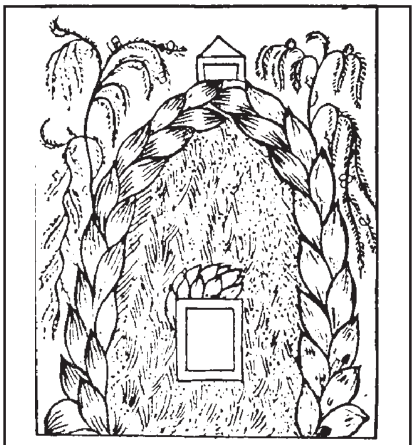

(चित्र सं. 41)-गंगावर्त्तन कूट

खल करके निकले वैसे **मुक्तावली हार** संस्थान से 100 योजन साधिक प्रवाह से पानी का प्रवाह (झरणा) नीचे पड़ता है। यह गंगानदी जहां गिरती है, वहां एक बड़ी जीभ (परनाली) है, यह जीभ आधा योजन लम्बी 6¼ योजन चौड़ी है आधा गाऊ जाड़ी है। मगरमच्छ मुंह फाड़कर हो, ऐसे संस्थान से है। संपूर्ण वज्रमय है। जहां गंगा नदी गिरती है वहां गंगा प्रपात नामक कुंड है जो 60 योजन लंबा चौड़ा 180 योजन साधिक परिधि है, 10 योजन गहरा है, गोलाकार है। वहां अनेक प्रकार के कमल है, यह कुंड एक पद्मवर वेदिका एवं अनेक वनखंडों से घिरा है। कुंड के चारों दिशा में पगथिये हैं।

इस कुंड के मध्य में एक बड़ा गंगा द्वीप है, 8 योजन लम्बा चौड़ा गोलाकार है, 25 योजन साधिक परिधि है। दो गाऊ पानी के ऊपर सर्व वज्ररत्न मय है। यह द्वीप एक पद्मवर वेदिका और वनखंड से चारों ओर से घिरा है।

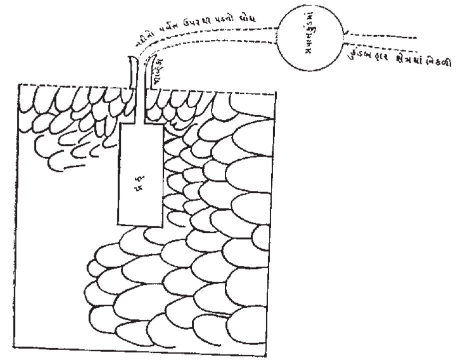

(चित्र सं. 42)-जीभ या परनाली

(चित्र सं. 43)

उस पर गंगा देवी के रहने का भवन (विषम लम्बाई चौड़ाई=भवन, सम लम्बाई चौड़ाई=प्रासाद) है, यह एक गाऊ लम्बा आधा गाऊ चौड़ा और 1440 धनुष ऊंचा है, उसमें गंगा देवी की शैया है, इसीलिए इसका नाम गंगा प्रपात रखा है।

गंगा प्रपात कुंड के दक्षिण दिशा के तोरण (द्वार) से गंगा महानदी निकली है जो उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र में आते आते 7 हजार नदियों को समाती है। खंड प्रपात गुफा के नीचे वैताढ्य पर्वत को भेदकर दक्षिणार्द्ध भरत में आकर मध्य भाग में बहती हुई 14 हजार नदियों को समाती हुई जंबूद्वीप की जगती को भेदकर पूर्व दिशा में मागध तीर्थ के स्थान पर लवण समुद्र में मिल जाती है।

गंगा नदी जहां से निकलती है, मूल में 6¼ योजन चौड़ी है आधा गाऊ गहरी है, फिर बढ़ते बढ़ते जब समुद्र में मिलती है तब 62½ योजन चौड़ी और 1¼ (सवा) योजन गहरी है। सभी नदियों का मूल से मुख स्थान (समुद्र में मिले तब) 10 गुणा चौड़ा प्रवाह होता है और चौड़ाई से 50वां भाग गहराई होती है। गंगा नदी अपने दोनों तट पर दो पद्मवर वेदिका दो वनखंड से घिरी है।

गंगा नदी की ही तरह सिंधु नदी का स्वरूप समझना। पद्मद्रह के पश्चिम दिशा के तोरण से निकली सिंधु आवर्त्तन कूट घूमकर दक्षिण दिशा तरफ बहती सिंधु प्रपात में (कुंड में) गिरती है। वहां सिंधु देवी का सिंधु द्वीप जानना, यावत् तमस गुफा नीचे वैताढ्य पर्वत भेदकर पश्चिम दिशा तरफ घूमकर 14 हजार नदियों को समाती हुई प्रभास तीर्थ के स्थान पर लवण समुद्र में गिरती है, शेष अधिकार गंगा नदी जैसा जानना।

पद्मद्रह के उत्तर दिशा के तोरण से रोहितांशा महानदी निकली जो $276\frac{6}{19}$ भाग अधिक उत्तर तरफ जाकर पर्वत पर 100 योजन साधिक के प्रवाह से रोहितांशा प्रपात कुंड में गिरती है, यह कुंड 120 योजन लंबा चौड़ा है। कुछ न्यून 380 योजन परिधि है। 10 योजन गहरा है। मध्य में रोहितांशा नामक द्वीप है, यह द्वीप 16 योजन लम्बा चौड़ा और दो गाऊ पानी से ऊपर है। यहां रोहितांशा देवी के भवन आदि शेष अधिकार पूर्ववत् समझना।

रोहितांशा प्रपात कुंड के उत्तर दिशा के तोरण से निकली रोहितांशा नदी हेमवंत युगलिया क्षेत्र में बहती, 14 हजार नदियों को समाती हुई शब्दापाती वृत्त-वैताढ्य पर्वत को आधा योजन बिना स्पर्शती (दूर रहकर) पश्चिम में घूम जाती है हेमवंत क्षेत्र को दो भागों में बांटती, 28 हजार नदियों का समावेश कर जगती भेदकर लवण समुद्र में मिल जाती है। नदी का मूल प्रवाह 12½ योजन चौड़ा एक गाऊ गहरा होकर आगे बढ़ते बढ़ते समुद्र प्रवेश करे तब 125 योजन चौड़ा प्रवाह और 2½ योजन गहरा प्रवाह है। दोनों तरफ दो पद्मवर वेदिका दो वनखंडो से घिरी है।

चुल्ल हिमवंत पर्वत पर ग्यारह कूट हैं 1. सिद्धायतन कूट 2. चुल्ल हिमवंत गिरि देव कूट (इस पर इस देव के नाम से देवता का भवन है) 3. भरत देवकूट (भरत क्षेत्र के भरत देव का भवन है) 4. ईलादेवी कूट 5. गंगा

देवी कूट 6. श्री देवीकूट 7. रोहितांशा देवी कूट 8. सिंधु देवी कूट 9. सुरा देवी कूट 10. हेमवंत कूट 11. वैश्रमण लोकपाल देव कूट।

पूर्व दिशा के लवण समुद्र की पश्चिम दिशा में और चुल्ल हिमवंत नामक कूट के पूर्व में सिद्धायतन कूट है, यह 500 योजन ऊंचा, मूल में 500 योजन चौड़ा, मध्य में 375 योजन ऊपर में 250 योजन चौड़ा है, गोपुच्छ संस्थान से है। यह कूट पद्म वर वेदिका वनखंड से चारों तरफ से घिरा है (जीवाभिगम से विशेष जानना)। अन्य 10 कूट भी इतने ही लम्बे चौड़े ऊंचे जानना।

इसी प्रकार चुल्ल हिमवंत कूट पर चुल्ल हिमवंत गिरिकुमार देव का प्रासादावतंसक वगैरह एवं उसकी राजधानी चुल्ल हिमवंत आदि असंख्याता द्वीप आगे के जंबूद्वीप में जाननी। शेष सभी कूटों की वक्तव्यता में भी देवता के प्रासाद, सिंहासन परिवार वगैरह सभी वर्णन कहना।

चुल्ल हेमवंत कूट, भरत कूट, हेमवंत कूट, और वैश्रमण कूट ये चार कूट पर देवता जानना। शेष 6 कूट पर देवांगनाएं जानना। यह पर्वत महा हेमवंत पर्वत की अपेक्षा से लम्बाई में कुछ छोटा है। चुल्ल हिमवंत नामक देवता एक पल्योपम का आयुष्य वाला वहां रहता है। चुल्ल यानि लघु हेमवंत पर्वत यह शाश्वत नाम है।

हेमवंत युगलिया का क्षेत्र- चुल्ल हेमवंत (वर्षधर) के उत्तर दिशा में और महा हेमवंत पर्वत के दक्षिण दिशा में हेमवंत क्षेत्र है यह 2105 $\frac{5}{19}$ योजन चौड़ा है। इसकी बाहा 6755 $\frac{3}{19}$ योजन अधिक है। इसकी जीवा पणछ 37674 $\frac{16}{19}$ योजन इसका धनुपृष्ठ 38740 $\frac{10}{19}$ योजन परिधि है। इसमें तीसरे सुखम दुखम आरे जैसा स्वरूप वर्तता है।

(चित्र सं. 44)-हेमवंत युगलिया का क्षेत्र

रोहिता नदी के पश्चिम दिशा में और रोहितांशा नदी के पूर्व दिशा में हेमवंत क्षेत्र के मध्य भाग में शब्दापाती नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत है जो एक हजार योजन ऊंचा, 250 योजन धरती में गहरा तथा नीचे मध्य ऊपर एक सरीखा धान भरने का पाला हो इस प्रकार का संस्थान है। एक हजार योजन लम्बा चौड़ा 3162 योजन साधिक परिधि है, यह पर्वत पद्मवर वेदिका और वनखंड से घिरा है, ऊपर सिंहासन यावत् सभी जानना।

इस पर्वत की छोटी बड़ी बावड़ियों में तथा बिलों में शब्दापाती जैसे वर्ण के अनेक जाति के कमल है। यहां शब्दापाती नामक देव एक पल्योपम आयुष्य वाला, चार हजार सामानिक देव सहित (विजय देव जैसे राजधानी युक्त) रहता है। इसी से इस पर्वत का नाम शब्दापाती वृत्त वैताढ्य शाश्वत नाम है। मेरु से दक्षिण में अन्य जंबूद्वीप में इसकी राजधानी है।

चुल्ल हिमवंत और महाहिमवंत इन दो वर्षधर के पास दक्षिण उत्तर दिशा में जो क्षेत्र मर्यादा बताई है जहां सदैव स्वर्णमय प्रकाश रहता है। हेमवंत देव एक पल्योपम आयुष्य वाला रहता है, इससे इसका हेमवंत क्षेत्र शाश्वत नाम है।

महाहिमवंत वर्षधर पर्वत- हरिवर्ष क्षेत्र के दक्षिण दिशा और हेमवंत क्षेत्र के उत्तर दिशा में महा हेमवंत वर्षधर पर्वत है। यह 200 योजन ऊंचा 50 योजन धरती में गहरा 4210 $\frac{10}{19}$ योजन साधिक चौड़ा है। इसकी बाहा पूर्व पश्चिम 9276 योजन 9½ भाग (19 में से) अधिक योजन है। जीवा पणछ उत्तर दिशा में पूर्व पश्चिम लम्बी है जीवा पूर्व दिशा के अन्त में लवण समुद्र और पश्चिम किनारे लवण समुद्र को स्पर्शती है, यह 53931 $\frac{6}{19}$ योजन से कुछ अधिक है। इसकी धनुःपृष्ठ दक्षिण दिशा तरफ 57293 $\frac{10}{19}$ योजन साधिक परिधि है। रुचक आकार से है। रत्नमय है। दोनों तरफ पद्म वर वेदिका और वनखंडो से चारों तरफ घिरा है। बहुत ही रमणीय क्षेत्र है, वहां देव निवास करते है आदि जानना।

महा हेमवंत पर्वत के मध्य भाग में बीचों बीच महापद्मद्रह है। 2000 योजन लम्बा, 1000 योजन चौड़ा 10 योजन गहरा है। इसका तट रूपामय है। पूर्व में पद्मद्रह का वर्णन आया उसी प्रकार से अन्य (लम्बाई चौड़ाई छोड़कर) वर्णन वैसा समझना, यहां कमल का प्रमाण दो योजन का है, यावत् कमल महा पद्मद्रह जैसा है जानना। यहां ह्रीं देवी एक पल्योपम आयुष्य वाली बसती है, इससे इसका महापद्म द्रह शाश्वत नाम है।

इस द्रह के दक्षिण तोरण से रोहिता महानदी निकली 1605 $\frac{5}{19}$ योजन जितनी दक्षिण में पर्वत पर जाकर बड़े घड़े के मुख जैसे मुक्तावली हार संस्थान से 200 योजन साधिक प्रवाह से कुंड में गिरती है। वहां एक जीभ परनाली है, यह जीभ एक योजन लम्बी, 12½ योजन चौड़ी एक गाऊ जाड़ी है। बड़े मगरमच्छ ने मुंह खोला हो ऐसा संस्थान है। वज्ररत्न मय है। उस स्थान को रोहित प्रपात कुंड कहते है यह 120 योजन लम्बा चौड़ा, 380 कुछ न्यून योजन परिधि वाला है, 10 योजन गहरा है। वर्णन गंगा प्रपात कुंड जैसा जानना। इसके मध्य में रोहित प्रपात द्वीप है जो 16 योजन लम्बा चौड़ा साधिक 50 योजन परिधि है। पानी से दो गाऊ ऊंचा हैं, वज्ररत्न मय है, यह द्वीप पद्मवर वेदिका वनखंड से घिरा है। द्वीप के बीच भवन है एक गाऊ लम्बा है, वर्णन गंगा देवी भवन जैसा समझना।

रोहित प्रपात कुंड के दक्षिण दिशा के तोरण से निकली रोहिता नदी हेमवंत क्षेत्र में बहती हुई शब्दापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत के आधे योजन बिना पहुंचे, पूर्व दिशा में मुड़कर हेमवंत क्षेत्र को दो भाग में बांटती 28 हजार नदियों को समाती नीचे जगती को भेदकर पूर्व दिशा में लवण समुद्र में मिलती है। मूल तथा मुख की लम्बाई चौड़ाई रोहितांशा नदीवत् सभी वर्णन समझना।

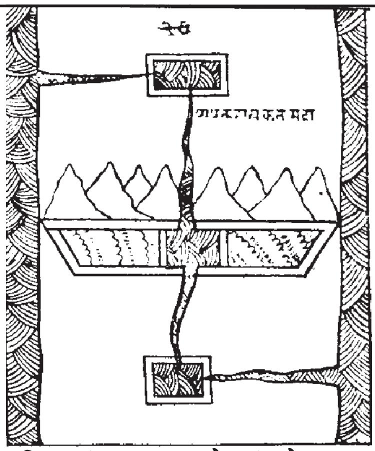
(चित्र सं. 45)-महाहेमवंत के 8 कूट

द्रह के उत्तर दिशा के तोरण से हरिकांता महानदी निकलकर 1605 $\frac{5}{19}$ योजन उत्तर दिशा सामने पर्वत पर जाकर साधिक 200 योजन के प्रवाह से नीचे गिरती है वहां जीभ दो योजन लम्बी, 25 योजन चौड़ी आधा योजन जाड़ी है। हरिकांत प्रपात कुंड में गिरती है यह कुंड 240 योजन लम्बा चौड़ा 769 योजन परिधि वाला है। अन्य सभी वर्णन पूर्ववत् जानना। इसके मध्य भाग में हरिकांता द्वीप है जो 32 योजन लम्बा चौड़ा 101 योजन परिधि युक्त है। पानी से

दो गाऊ ऊंचा पद्मवर वेदिका वनखंड से घिरा है। मध्य में भवन है पूर्वानुसार वर्णन है। हरिकांता प्रपात कुंड के उत्तर दिशा के तोरण से हरिकांता नदी निकली, वह हरिवर्ष क्षेत्र में बहती विकटापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत के आधे योजन नहीं पहुंच कर पश्चिम दिशा में मुडकर हरिवर्ष क्षेत्र को दो भाग में बांटती, 56 हजार नदियों का समावेश करती नीचे जगती को भेदकर पश्चिम दिशा में लवण समुद्र में मिलती है। हरिकांता महानदी द्रह से निकलते प्रवाह 25 योजन चौड़ा, आधा योजन गहरा है। धीरे धीरे 20-20 धनुष एक एक तरफ बढ़ती बढ़ती दोनो तरफ 40 धनुष का विस्तार बढ़ाती हुई समुद्र प्रवेश करे तब 250 योजन चौड़ी 5 योजन गहरी होती है। दोनों तरफ पद्मवर वेदिका वनखंड से घिरी हुई है।

महा हेमवंत पर्वत पर 8 कूट है 1. सिद्धायतन कूट 2. महा हेमवंत कूट 3. हेमवंत कूट 4. रोहिता कूट 5. ह्री देवी कूट 6. हरिकांता कूट 7. हरिवर्ष कूट 8. वैडूर्य कूट।

पूर्व में चुल्ल हिमवंत पर्वत के कूटों की वक्तव्यता कही उसी प्रकार यहां भी देव-देवी के निवास आदि जानना। यह महा हिमवंत पर्वत चुल्ल हिमवंत की अपेक्षा से लम्बाई चौड़ाई ऊंचाई गहराई, परिधि में बड़ा है। महा हिमवंत नामक देव एक पल्योपम की आयुष्य वाला रहता है, इसी से इसका महाहिमवंत पर्वत शाश्वत् नाम है।

(चित्र सं. 46)-
हरिवर्ष युगलिया क्षेत्र

हरिवर्ष युगलिया क्षेत्र- निषध पर्वत के दक्षिण और महा हिमवंत पर्वत के उत्तर दिशा में हरिवर्ष युगल क्षेत्र है। यह $8421\frac{1}{19}$ योजन चौड़ा तथा 13361 योजन तथा (19 का) 6½ भाग योजन बाहा पूर्व पश्चिम दिशा में है जीवा पणछ उत्तर दिशा से पूर्व पश्चिम 73971 योजन तथा एक योजन के 19 में से 7½ भाग लम्बी है। धनु:पृष्ठ दक्षिण दिशा में $84016\frac{4}{19}$ योजन परिधि रुप है। इसका भूमि भाग बहुत सम और रमणीक है, यावत् मणि तृणादि शोभायमान है आदि सभी जानना, यहां दूसरा आरा जैसा अनुभव वर्तता है।

हरिसलिला महानदी के पश्चिम और हरिकांता महानदी के पूर्व दिशा में हरिवर्ष क्षेत्र के मध्य भाग में विकटा पाती वृत्त वैताढ्य पर्वत है। चौड़ाई, गहराई परिधि का वर्णन पूर्व में आये शब्दापाती वृत्त वैताढ्य की तरह समझना। यहां का अधिपति अरुण देव है यह अन्तर समझें। यहां विकटापाती जैसे वर्ण वाले कमल हैं, इसलिए इसका विकटापाती ऐसा शाश्वत नाम है।

हरि वर्ष क्षेत्र में (हरि यानि सूर्य और चन्द्र) कईं मनुष्य उगते सूर्य के समान लाल वर्ण-प्रकाश वाले तथा कईं मनुष्य चन्द्रमा तथा शंख जैसे सफेद वर्ण वाले है। यहां हरिवर्ष नामक महर्द्धिक देव एक पल्योपम आयुष्य वाला रहता है। इससे इसका हरिवर्ष शाश्वत नाम है।

निषध वर्षधर पर्वत- महाविदेह क्षेत्र के दक्षिण और हरिवर्ष क्षेत्र के उत्तर दिशा में निषध पर्वत है। 400 योजन ऊंचा, 100 योजन धरती में गहरा तथा $16842\frac{2}{19}$ योजन चौड़ा है। इसकी बाहा पूर्व पश्चिम दिशा में 20165 योजन उपरांत योजन का 19वां 2½ भाग है, तथा लम्बाई में इसकी जीवा पणछ उत्तर दिशा में $94156\frac{2}{19}$ योजन है। इसका धनु:पृष्ठ दक्षिण दिशा में $124346\frac{9}{19}$ योजन की परिधि है। रुचक संस्थान है, तपे हुए लाल स्वर्णमय है, दोनों तरफ पद्म वर वेदिका वनखंड है।

मध्य भाग में तिगिच्छ नामक द्रह है तिगिच्छ यानि कमल का पराग बहुत हो उसे तिगिच्छ कहते है। यह 4000 योजन लम्बा 2000 योजन चौड़ा, तथा 10 योजन गहरा है, रूपामय तट है। चारों दिशा में चार दिशा पान पगथिया है। पद्मद्रह के समान (लम्बाई, चौड़ाई छोड़कर) कथन है। कमल प्रमाण भी उसी प्रकार जानना यहां तिगिच्छ वर्णमय बहुत कमल है। यहां धृति देवी एक पल्योपम आयुष्य वाली रहती है, इसलिए इसका तिगिच्छ द्रह नाम है।

तिगिच्छ द्रह के दक्षिण तोरण से हरि सलिला महानदी निकलकर 7421 $\frac{1}{19}$ योजन दक्षिण दिशा में सामने पर्वत पर जाकर कुछ अधिक 400 योजन के प्रवाह से नीचे हरिसलिला कुंड में गिरती है। इस कुंड तथा द्वीप के भवन वगैरह वर्णन हरिकांता नदी जैसा समझना, यावत् हरिवर्ष क्षेत्र को दो भाग में बांटकर 56 हजार नदियों का समावेश करती नीचे जगती भेदकर पूर्व दिशा के लवण समुद्र में मिलती है। इसका प्रवाह, मूल, मुख चौड़ाई गहराई सभी हरिकांता नदी प्रमाणवत् जानना यावत् पद्मवर वेदिका, वनखंड से युक्त है।

तिगिच्छ द्रह के उत्तर दिशा के तोरण से शीतोदा महानदी निकली है। 7421$\frac{1}{19}$ योजन उत्तर सामने पर्वत पर जाकर नीचे कुछ अधिक 400 योजन के प्रवाह से गिरती है। शीतोदा नीचे गिरती है वहां एक जीभ परनाली है जो चार योजन लम्बी 50 योजन चौड़ी एक योजन जाड़ी है, मगरमच्छ के फटे मुख की आकार जैसी, वज्र रत्नमय है। जहां गिरती है वहां बड़ा शीतोदा प्रपात कुंड है। 480 योजन लम्बा चौड़ा 1518 योजन कुछ न्यून परिधि युक्त है। यावत् तोरण तक की सभी वक्तव्यता समझनी। शीतोदा प्रपात कुंड के मध्य भाग में शीतोदा द्वीप 64 योजन लम्बा चौड़ा 202 योजन परिधि युक्त 2 गाऊ पानी के ऊपर है। वज्र रत्नमय है। वेदिका, वनखंड, भूमि भाग, भवन शैय्या सारा वर्णन पूर्ववत् समझना।

कुंड के उत्तर दिशा के तोरण से शीतोदा महानदी निकलकर देवकुरु तरफ आती चित्र,विचित्र कूट नामक दोनों पर्वत तथा 1. निषध 2. देवकुरु 3. सुर 4. सुलस 5. विद्युत्प्रभ इन पांच द्रहों को दो-दो भागों में बांटती यानि इन द्रहों के बीचों बीच बहती देवकुरु की 84 हजार नदियों का समावेश करके भद्रशाल वन में आती हुए मेरु पर्वत से 2 योजन दूर नहीं पहुंचकर, वहां से पश्चिम दिशा में मुड़कर नीचे विद्युत्प्रभ नामक वक्षस्कार गजदंता पर्वत को भेद कर मेरु पर्वत के पश्चिम दिशा में, पश्चिम महाविदेह क्षेत्र को दो भागों में बांटती एक-एक चक्रवर्त्ती विजय (विजय में चक्रवर्त्ती पैदा होते है इसलिए चक्रवर्त्ती विजय कहते है, वहां साधारणतया चक्रवर्त्ती होते ही हैं, कभी कभी वासुदेव भी होते हैं, परन्तु ज्यादातर चक्रवर्त्ती होते रहने से चक्रवर्त्ती विजय कहते हैं) से 28-28 हजार नदियों के साथ (शीतोदा के दक्षिण तट में 8 विजय जहां एक विजय में गंगा सिंधु इन दो-दो नदियों के 14-14 हजार नदी परिवार होने से 28 हजार हुआ, इसी प्रकार उत्तर तट पर 8 विजयों में रक्ता रक्तवती के भी 28-28 हजार नदी परिवार इस प्रकार 16 विजय में 32 नदी और प्रत्येक के 14 हजार का परिवार गिनने से 4,48,000 नदियां हुई इनमें 84000 नदियां देवकुरु की मिलाने से) कुल 5,32,000 नदियों को साथ लेती हुई जयंत नामक पश्चिम दिशा के जंबूद्वीप के द्वार के नीचे जगती भेदकर लवण समुद्र में मिलती है। यह नदी द्रह में से निकले तब मूल प्रवाह 50 योजन चौड़ाई एक योजन गहराई फिर अनुक्रम से 40-40 धनुष एक-एक तरफ (दोनों तरफ 80 धनुष) बढ़ते हुए समुद्र प्रवेश के समय 500 योजन चौड़ाई, 10 योजन गहराई होती है, दोनों तरफ दो पद्मवर वेदिकाएं और दो-दो वनखंड हैं।

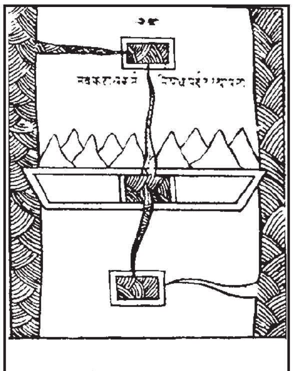

(चित्र सं. 47)-
नौ कूट का निषध

निषध पर्वत पर नौकूट है 1. सिद्धायतन कूट 2. निषध कूट 3. हरिवर्ष कूट 4. पूर्व विदेह कूट 5. हरिकूट 6. धृतिकूट 7. शीतोदा कूट 8. अपर विदेह कूट 9. रुचक कूट। जिस प्रकार चुल्ल हेमवंत कूट की ऊंचाई, चौड़ाई, परिधि राजधानी सहित पूर्व वर्णन किया वैसा यहां भी समझना। निषध पर्वत पर बहुत से कूट निषध (बैठे हुए बेल (बलद)) संस्थान से है। निषध यानि सहज करे, अतिभार सहे, निषध यानि वृषभ, इस संस्थान से स्थित है। यहां निषध देव यावत् पल्योपम आयुष्य वाला बसता है इसलिए इसका निषध पर्वत शाश्वत नाम है।

नदी, द्रह, कुंड आदि का विशेष वर्णन- भरत क्षेत्र में गंगा सिंधु नदी, ऐरवत क्षेत्र में रक्ता, रक्तवती नदी है। दोनों अन्तिम छोर पर दो-दो ये चार नदियां है। पद्मद्रह और पुंडरीक द्रह है, इनके पूर्व पश्चिम द्वार का विस्तार प्रमाण 6¼ योजन चौड़ा हिमवंत (पद्म द्रह) तथा शिखरी पर्वत (पुंडरीक द्रह) के शिखर से उतर कर निकलती (बहती) है।

पूर्वोक्त चार नदियां द्रह के बारणे से 500 योजन तक पर्वत के शिखर पर बारणा के सामने पूर्व-पश्चिम बहती हुई अपने अपने वर्त्तन कूट से बाहर भरत और एरवत क्षेत्र के सामने घूम जाती है। गंगा नदी द्रह के बारणे से 500 योजन तक पर्वत पर बारणा सामने जाकर गंगा वर्त्तन नामक पर्वत का कूट है उसके बाहर जो भरत क्षेत्र है, उधर घूमती है। इसी प्रकार सिंधु नदी भी सिंधु आवर्त्तन कूट से भरत दिशा में घूमती है। रक्ता नदी 500 योजन बारणे के सम्मुख जाकर फिर रक्तावर्त्तन कूट से एरवत दिशा में घूमती है तथा रक्तावती नदी रक्तवत्यावर्त्तन कूट से एरवत दिशा में घूमती है। जब ये नदियां भरत-एरवत की तरफ घूमती है, तब पर्वत के मध्य भाग से बाहर आते समय 6¼ योजन नदी का मुख है, उस पर्वत का विस्तार 1052 योजन 12 कला है, उसमें से बाद करके 1046 योजन 7¼ कला रहता है। उसका आधा 523 योजन 3½ कला से कुछ अधिक तक नदी पर्वत पर बहती है।

शिखर के छोर से मगरमच्छ के मुख के आकार तथा वज्ररत्न मय जीभ जैसा आकार है, जीभ यानी परनाल। इसके बीच जाकर वज्रमय तल वाली ये नदियां अपने अपने नाम के निपात कुंड में टूटी मोती की माला जैसे प्रवाह से अविच्छिन्न धारा से गिरती है। नदी के नाम से कुंड का भी नाम है।

द्रह के बारणा का विस्तार 6¼ योजन है, और नदी के प्रवाह में जीभ का भी 6¼ योजन विस्तार है। द्रह के बारणों की चौड़ाई के विस्तार से 50वां भाग जीभ जाड़ी है। और जाड़ाई से चार गुनी लम्बी है। इस प्रकार सभी द्रहों की जीभ का प्रमाण जान लेना। यानि बाहर के दो पर्वतों की जीभ 6¼ योजन चौड़ी है, मध्य के दो पर्वतों की 25 योजन चौड़ी है। बाहर की दिशा की जीभ 12½ योजन प्रमाण है, महाविदेह क्षेत्र के अन्दर की 50 योजन प्रमाण है। बाहर की जो जीभ है वह 25 योजन प्रमाण चौड़ी है, यह सभी जीभों की जानना, अपने-अपने विस्तार से 50वां भाग है, जाड़ाई से चौगुणी लंबाई है।

कुंड के मध्य में द्वीप है- यह आठ योजन चौड़ा पानी में है पानी से दो गाऊ ऊपर है वेदिका सहित है। नदी की देवी के बसने का द्वीप है। उसमें श्री, लक्ष्मी आदि देवी है, यह कुंड 60 योजन लंबा, 6¼ योजन चौड़ा, 10 योजन गहरा है। वेदिका के तीन बारणे हैं। इस प्रकार दूसरे भी कुंड है।

कुंड की चौड़ाई, द्वीप की चौड़ाई, वेदिका की चौड़ाई है। महाविदेह क्षेत्र में 32 विजय की 32 नदियां इनके 64 कुंड है, इनका तथा इनके अन्दर जो द्वीप है उनका तथा वेदिका के बारणा का विस्तार भरत-एरवत के कुंड के समान है। यानि विदेह के 64 कुंड भी 60 योजन (प्रत्येक) चौड़े हैं, 8 योजन के द्वीप है, वेदिका विस्तार 6¼ योजन जानना। हिमवंत क्षेत्र की दो नदी, हेरण्यवंत क्षेत्र की 2 नदी और 32 विजय की 12 अन्तर नदी इन 16 नदियों के 16 कुंड है, उनका तथा उनके द्वीप का तथा वेदिका विस्तार पहले से दुगुना जानना यानि 16 कुंडों का 120 योजन उनके द्वीप 16 योजन वेदिका के बारणे 12½ योजन है। हरिवर्ष की दो नदी रम्यक वर्ष की 2 नदी इन 4 नदियों के 4 कुंड के विस्तार 240 योजन, द्वीपों का 32 योजन वेदिका द्वार का 25 योजन विस्तार जानना। महाविदेह की 2 नदी के 2 कुंड, उनके तीन तीन विस्तार यानि कुंड 480 योजन, द्वीप का 64 योजन विस्तार, वेदिका के बारणे 50 योजन चौड़े है। यों सभी कुल मिलाकर जंबूद्वीप में 90 कुंड है।

बाहर की 4 नदियां (गंगा, सिंधु, रक्ता, रक्तवती) अपने अपने निपात कुंड से बाहर के भरत, एरवत के सम्मुख के द्वार से निकलती है। गंगा और सिंधु दक्षिण के बारणे से भरत के सामने तथा रक्ता, रक्तवती उत्तर के बारणे से एरवत की दिशा में निकलती है। परन्तु वैताढ्य पर्वत तक आये तब तक प्रत्येक नदी को 7000 नदियां अन्य मिलती है। उस नदी परिवार की साथ में बहकर वैताढ्य के बीच में बहती हुई उसे भेदकर निकलने के बाद भरत तथा एरवत के अर्द्ध भाग के बीच में से पूर्व और पश्चिम में समुद्र सम्मुख घूम जाती है। भरत के पूर्व में गंगा नदी घूमती है, सिंधु पश्चिम में घूमती है। ये चारों नदियां वैताढ्य भेदकर निकलने के बाद अन्य 7000 नदियों को साथ में लेकर यानि कुल 14000 नदियों के परिवार के साथ जुड़कर जैसे वैताढ्य भेदा, वैसे ही जगती को भी भेदकर लवण समुद्र में मिलती है।

नदी का विस्तार और गहराई– सभी नदियों का विस्तार निकलते समय कुंड के द्वार के समान होता है और अन्त में उस विस्तार का दस गुणा हो जाता है। इस प्रमाण से भरत-एरवत की चार नदियां प्रथम 6¼ योजन विस्तार है, समुद्र में मिलते समय 62½ योजन होता है। 32 विजय की 64 नदियां है, उनका भी इसी प्रमाण से आदि व अंत का विस्तार है। उनके जो 64 कुंड है उनका विस्तार सरीखा है। तथा हेमवंत, हेरण्यवंत की चार तथा विजय की 12 अंतरनदियां, इन 16 नदियों का आदि विस्तार 12½ योजन अंत में 125 योजन विस्तार जानना। हरिवर्ष रम्यक वर्ष की चार नदियां 25 योजन प्रारंभ विस्तार अंत में 250 योजन समुद्र मिलन विस्तार। विदेह की सीता, शीतोदा का प्रथम 50 योजन विस्तार अन्त में 500 योजन विस्तार है। सबसे बड़ी नदी है वह विस्तार से 50वां भाग गहरी है। जैसे गंगा 6¼ योजन चौड़ी है उसका पचासवां भाग योजन का आठवां भाग गहरी हुई, अंत में 62½ योजन विस्तार है उसका भी पचासवां भाग यानि 1¼ योजन गहरी हुई। इसी प्रकार सभी नदियों में जानना।

पांच क्षेत्र की नदी की गति– पांच क्षेत्र की महानदियां है उनके अपने अपने बारणे की दिशा तरफ द्रह का जो विस्तार है उसे बाकी निकालकर, पर्वत का आधा भाग हो, उतना योजन नदी पर्वत शिखर पर बहती है इस प्रकार- हेमवंत और शिखरी का विस्तार $1052\frac{12}{19}$ योजन है, उसमें से द्रह का विस्तार 500 योजन निकालना, $552\frac{12}{19}$ योजन रहा, उसका आधा $276\frac{6}{19}$ (6 कला) योजन रहा। इस प्रकार अपने अपने द्रह द्वार अनुसार पर्वत के शिखर पर 276 योजन 6 कला बहती है। महाहिमवंत तथा रूक्मी पर्वत पर चार नदियां $1605\frac{5}{19}$ योजन

पर्वत के शिखर पर बहती है, निषध और नीलवंत संबंधित चार नदियां $7421\frac{1}{19}$ योजन शिखर पर चलती है। इस प्रकार द्रह के विस्तार पर्वत के विस्तार में से कम करके शेष में से आधा करने से उपरोक्त माप आता है। उसके बाद पर्वत विस्तार के अन्त में जाकर अपनी जीभ ऊपर होकर अपने अपने निपात कुंड में गिरती है, तथा अपनी जीभ की चौड़ाई के 25वें भाग प्रमाण से वृत्त वैताढ्य तथा मेरु पर्वत को छोड़ जिस नदी का मुख दक्षिण तरह है, वह नदी पूर्व में समुद्र दिशा तरफ और जिसका मुख उत्तर तरफ है, वह पश्चिम में समुद्र तरफ घूम जाती है। यानि हेमवंत और हेरण्यवंत की दो नदियां वृत्त वैताढ्य को दो गाऊ दूर रखकर पूर्व तथा पश्चिम दिशा में घूमती है और हरिवर्ष तथा रम्यक वर्ष की दो नदी चार गाऊ वृत्त वैताढ्य को दूर रखकर पूर्व-पश्चिम घूम जाती है। महाविदेह की दो नदी आठ गाऊ मेरु को दूर रखकर पूर्व-पश्चिम में घूम जाती है।

हेमवंत क्षेत्र में रोहितांशा और रोहिता दो नदियां है, इनका परिवार गंगा नदी से दुगुना है 28 हजार नदी परिवार है। हेरण्यवंत क्षेत्र में सुवर्ण कूला, रुप्य कूला भी 28 हजार नदी परिवार से घिरी है। हरिवर्ष में हरिकंता और हरिसलिला दो नदियां है ये गंगा से चार गुणा परिवार वाली हैं, यानि 56 हजार नदियां है। रम्यक क्षेत्र में नरकांता नारीकांता नदी भी 56-56 हजार नदी परिवार युक्त है। शीतोदा और सीता नदी महाविदेह क्षेत्र में है, उनमें प्रत्येक में 532038 नदियों का पानी पड़ता है। कुरुक्षेत्र में 84 हजार नदियां है, 6 अन्तर नदियां है, प्रत्येक विजय में गंगा सिंधु दो महानदियां है इससे 16 विजय में 32 बड़ी नदियां हुई प्रत्येक के 14 हजार का परिवार गिनने से 438000 नदियां हुई उनके साथ पीछे की कुरुक्षेत्रादिक की 84038 नदियां जोड़ने से 532038 नदियां हुई ये शीतोदा में मिलती है, इतनी ही नदियां सीतानदी में भी मिलती है यो दुगुना करने से 1064076 नदियां महाविदेह क्षेत्र में हुई।

जंबूद्वीप की सभी नदियां- 32 विजय की 64 नदी, शीतोदा और सीता ये दो नदियां, भरतादिक की गंगा प्रमुख 12 नदियां जोड़ने से कुल 78 बड़ी नदियां हुई। 32 विजय की 12 अंतरनदियां ये मूल 90 बड़ी नदियां है। शेष अन्य परिवार की नदियां 14 लाख 56 हजार है।

महाविदेह क्षेत्र-

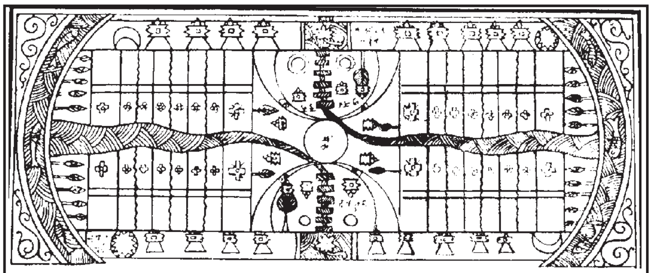

(चित्र सं. 48) - उत्तर-दक्षिण

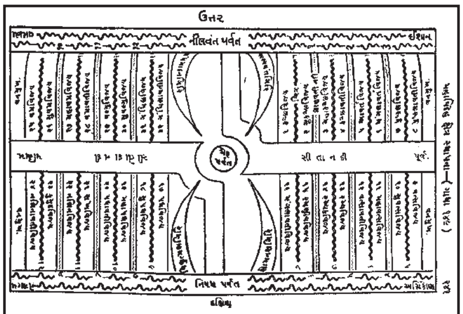

(चित्र सं. 49) - उत्तर-दक्षिण

नीलवंत वर्षधर पर्वत के दक्षिण दिशा में एवं निषध वर्षधर पर्वत के उत्तर दिशा में महाविदेह क्षेत्र है। पल्यंक संस्थान से है। यह 33684 योजन तथा $\frac{4}{19}$ (एक योजन का) जितनी चौड़ाई से है। इसकी बाहा पूर्व पश्चिम $33767\frac{7}{19}$ योजन लंबी है। इसकी जीवा पणछ महाविदेह के मध्य भाग पूर्व पश्चिम में एक लाख योजन लंबी है। धनुःपृष्ठ 158113 योजन तथा एक योजन का 16 भाग साधिक जितनी परिधि प्रत्येक दिशा में है। यानि जंबूद्वीप की

316227 योजन साधिक परिधि प्रमाण से जो पहले बताई है उसका आधा करें तो महाविदेह की एक दिशा का धनु:पृष्ठ होता है। दो दिशा का धनु:पृष्ठ जोड़ने पर जंबूद्वीप की पूर्ण परिधि होती है।

महाविदेह क्षेत्र 4 भागों में है 1. मेरु से पूर्व में पूर्व महाविदेह 2. मेरु से पश्चिम में अपर महाविदेह 3. मेरु से दक्षिण में देवकुरु क्षेत्र 4. मेरु से उत्तर में उत्तर कुरूक्षेत्र है। भरत, एरवत, हेमवंत, हेरण्यवंत, हरिवर्ष, रम्यक वर्ष इन 6 क्षेत्रों से लम्बाई चौड़ाई में परिधि में बहुत विस्तीर्ण है। बहुत बड़ा है। 32 विजय में 500 धनुष की काया के बड़े शरीर वाले मनुष्य हैं। देवकुरु और उत्तर कुरु में 3 गाऊ शरीर वाले मनुष्य रहते हैं। इस प्रमाण से प्रत्येक शरीर आसरी मनुष्य भी बड़े है। तथा महाविदेह नामक देव महाऋद्धिवंत यावत् एक पल्योपम आयुष्य वाला वहां रहता है, इससे इसका महाविदेह यह शाश्वत नाम है।

महाविदेह के चार गजदंत गिरि- 1. नीलवंत पर्वत की दक्षिण दिशा में तथा मेरु से वायव्य कोण में तथा गंधिलावती विजय के पूर्व दिशा में, उत्तर कुरु के पश्चिम दिशा में **गंधमादन नाम का गजदंत पर्वत पीले वर्ण** का है। इसकी लम्बाई 30209 $\frac{6}{19}$ योजन है, और नीलवंत पर्वत के पास 400 योजन ऊंचा है, सौ योजन धरती में गहरा है, 500 योजन चौड़ा है, फिर अनुक्रम से ऊंचाई और गहराई बढ़ते बढ़ते मेरु पर्वत के समीप 500 योजन ऊंचा और 125 योजन गहरा है, चौड़ाई में घटता घटता अंगुल के असंख्यातवें भाग चौड़ा है। हाथी दांत के संस्थान से है। सर्व रत्नमय है, दोनों तरफ दो पद्म वर वेदिका, दो वनखंडों से युक्त है, यावत् इस पर बहुत देव ठहरते हैं आदि पूर्ववत् कहना। इस गंधमादन पर्वत पर 7 कूट है 1. मेरु के वायव्य कोण में और गंधमादन कूट से आग्नेय कोण में सिद्धायतन कूट 2. नीलवंत के सामने गंधमादन कूट 3. गंधिलावती कूट 4. उत्तर कुरु कूट 5. स्फटिक कूट 6. लोहिताक्ष कूट 7. आनंद कूट। सिद्धायतन कूट में मंदिर है, स्फटिक कूट, लोहिताक्ष कूट में भोगंकरा और भोगवती इन दो दिक्कुमारी देवियों का निवास है। शेष चार कूटों में कूट के नाम वाले देव रहते हैं। ये सभी कूट 500 योजन ऊंचे हैं। दूसरा, तीसरा, चौथा वायव्य कोण में, पांचवा दक्षिण और छठा सातवां कूट उत्तर और दक्षिण में है।

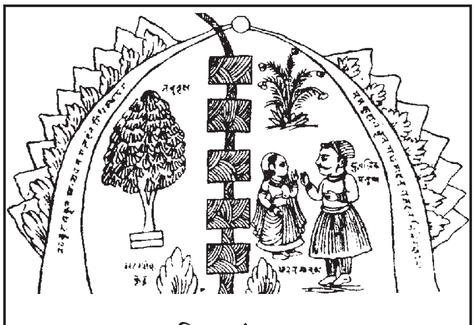

(चित्र सं. 50)

इस पर्वत की सुगंध ऐसी है जैसे कोष्ट सुगंध की पुड़िया को पीसते, चूर्ण करते, खोलते, बिखेरते, भोगते गंध लेते जैसे उत्तम मनोहर गंध निकलती है, उससे भी ईष्टतर उत्तम गंध है, यह सुगंधित है तथा यहां गंध मादन नामक महाऋद्धिवंत देव रहता है, इससे इसका नाम गंधमादन यह शाश्वत नाम है

2. मेरु पर्वत के ईशनकोण में, नीलवंत पर्वत के दक्ष्णि दिशा में, उत्तर कुरु के पूर्व मे, कच्छ नामक विजय के पश्चिम दिशा में **माल्यवंत गजदंत पर्वत** वैडूर्य रत्नमय वर्णी है **(नील वर्ण)** यह गंधमादन गजदंता प्रमाण लंबा चौड़ा है शेष अधिकार पूर्ववत् समझना। माल्यवंत गजदंता पर 9 कूट है 1. मेरु से ईशान में माल्यवंत कूट से आग्नेय कोण में सिद्धायतन कूट, उसके बाद अनुक्रम से नीलवंत के सम्मुख 2. माल्यवंत कूट 3. उत्तरकुरु कूट 4. कच्छ कूट 5. सागर कूट 6. रजत कूट 7. सीता कूट 8. पूर्णभद्र कूट 9. हरिस्सह कूट। दूसरा तीसरा चौथा

पांचवा कूट ये चारों एक-एक से ईशान कोण में है, छठा कूट दक्षिण में, सातवां आठवां कूट वायव्य कोण में, नवमां कूट पूर्णभद्र से उत्तर में तथा नीलवंत के दक्षिण में है। ये सभी 500 योजन ऊंचे है। सागर कूट तथा रजत कूट में सुभोगा और भोगमालिनी अनुक्रम से देवीयां बसती हैं, बाकी के कूटों पर उनके नाम से देवता जानना। उसमें हरिस्सह कूट पर हरिस्सह राजधानी का हरिस्सह देव बसता है। यह कूट 1000 योजन चौड़ा और ऊंचा है, यमक पर्वत जैसा है और माल्यवंत गजदंत 500 योजन चौड़ा है तथा दोनों तरफ पर्वत से 250-250 योजन बाहर अद्धर रहा है, हरिस्सह देव की राजधानी अन्य जंबूद्वीप में 84 हजार योजन लम्बी चौड़ी है।

माल्यवंत गजदंत पर बहुत सी सरिता नामक वनस्पति के गुल्म, नव-मालती के गुल्म, यावत् मगदंतिका वनस्पति के गुल्म है। ये गुल्म हमेशा पंच वर्ण के फूलों से भरे रहते है, और वायु से कंपित अग्रशाला में फूलों के पुंजों से सुशोभित है। यहां माल्यवंत नामक एक पल्योपय आयुष्य वाला देव रहता है, जिससे इसका माल्यवंत नाम है।

3. निषध पर्वत के उत्तर, मेरु से आग्नेय कोण में, मंगलावती विजय के पश्चिम और देवकुरु के पूर्व दिशा में **सोमनस** गजदंत पर्वत **श्वेत वर्ण** का है। इसकी लम्बाई चौड़ाई माल्यवंत के समान है। रूपामय है। बहुत से देव-देवी यहां कुचेष्टा रहित, सौम्यपणे, सुमन यानि शोक रहित विचरते हैं, तथा सोमनस नामक महर्द्धिक देव यहां बसता है, इससे इसका सोमनस नाम है। इस पर 7 कूट है- 1. मेरु दिशा से सिद्धायतन कूट, उसके बाद अनुक्रम से निषध पर्वत के सम्मुख 2. सोमनस कूट 3. मंगलावती कूट 4. देवकुरु कूट 5. विमलकूट 6. कंचन कूट 7. वशिष्ठ कूट। ये सभी कूट 500-500 योजन ऊंचे और चौड़े हैं। कूटों का वर्णन गंधमादन गजदंत जैसा समझना। विमल और कांचन दो कूट पर सुवत्सा और वत्समित्रा दो दिक् कुमारियों का वास है, शेष कूटों पर कूट के नाम के देव निवास जानना।

4. निषध पर्वत के उत्तर और मेरु से नैऋत्य कोण में, देवकुरु से पश्चिम तथा पद्म विजय के पूर्व दिशा में **विद्युत्प्रभ** गजदंत पर्वत **तपे हुए लाल स्वर्णमय** है। यावत् उस पर देवता निवास करते हैं। सारा अधिकार पूर्ववत् समझना। इसका वर्णन माल्यवंत जैसा है। इस पर 9 कूट है- 1. मेरु की दिशा में सिद्धायतन, उसके बाद अनुक्रम से निषध पर्वत के सम्मुख 2. विद्युत्प्रभ 3. देवकुरू 4. पद्म 5. कनक 6. स्वस्तिक 7. शीतोदा 8. शतज्वल 9. हरिकूट। इसमें हरिकूट हरिस्सह कूट में कहा जैसा हजार योजन चौड़ा और ऊंचा है, शेष 8 कूट 500 योजन ऊंचे हैं। कनक कूट और स्वस्तिक कूट पर वारिषेणा और बलाहिका ये इनके दूसरे नाम पुष्पमाला और अनिदिता हैं, ये दिक्कुमारियां देवियां बसती है। शेष कूटों में उनके ही नाम के देव जानना। ये पर्वत बिजली जैसे रक्त स्वर्णमय आभास करते हैं। उद्योत करते है, कांति करते हैं। यहां विद्युत्प्रभ नामक देव एक पल्योपम आयुष्य वाला रहता है। इसी से विद्युत्प्रभ यह शाश्वत नाम है। यों चार गजदंत ऊपर प्रत्येक दिक्कुमारी देवी के दो-दो कूट कहे है, ये अधोलोक में बसने वाली दिक्कुमारियां समझना। इनके रहने के भवन गजदंतगिरि के नीचे हैं।

कुरुक्षेत्र की शीतोदा और सीता नदी के गिरने एवं निकलने की जीभ है, वहां से 26475 योजन दोनों तरफ मेरु पर्वत के सामने ये चार गजदंत गिरि है, ये निषध और नीलवंत पर्वत में से निकले हैं। हाथी दांत के आकार से हैं, इसलिए इन्हें गजदंत गिरि कहते हैं। आग्नेय कोण में सोमनस गजदंत गिरि है, वहां से शुरूआत करके प्रदक्षिणावर्त्त गिनते चार दिशा में अनुक्रम से चार गजदंत गिरि हैं।

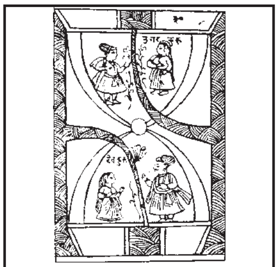

(चित्र सं. 51)
उत्तरकुरु-दक्षिणकुरु क्षेत्र

महाविदेह में उत्तर कुरु युगलिया क्षेत्र- मेरू पर्वत के उत्तर और नीलवंत पर्वत के दक्षिण दिशा में तथा गंधमादन पर्वत के पूर्व और माल्यवंत के पश्चिम दिशा तरफ उत्तर कुरु क्षेत्र है। पूर्व पश्चिम लम्बा और उत्तर दक्षिण चौड़ा अर्द्ध चन्द्र संस्थान से संस्थित है। 11842 योजन और 2 भाग (कला) जितना चौड़ा है। इसकी जीवा पणछ उत्तर दिशा में पूर्व पश्चिम लम्बी दोनों तरफ गजदंता पर्वतों को स्पर्शती है। 53 हजार योजन लम्बी है। धनुःपृष्ठ 60418 $\frac{12}{19}$ योजन परिधि रूप है। वह इस प्रकार-30209 $\frac{6}{19}$ योजन जितना गजदंत गिरि लम्बा है, इस प्रकार दो गजदंत गिरि के बीच अर्द्ध चन्द्राकार होने से दो गजदंत गिरि की लंबाई 60418 $\frac{12}{19}$ योजन हुई, इतना उत्तर कुरु का धनुःपृष्ठ हुआ। इसमें युगलिया मनुष्य बसते हैं। वहां पर हमेशा पहला आरा जैसा वातावरण रहता है। इसमें उत्तर कुरु नामक एक पल्योपम की आयुष्य वाला महा ऋद्धिवंत देव रहता है, इससे इसका नाम **उत्तर कुरु** शाश्वत है।

उत्तर कुरु में नीलवंत पर्वत के दक्षिण के चरमांत से 834 योजन साधिक सातिया चार भाग जितनी दूरी पर सीता महानदी के पूर्व और पश्चिम दोनों तटों पर दो यमक पर्वत हैं। एक हजार योजन ऊंचा 250 योजन धरती में गहरा, मूल में हजार योजन लम्बा चौड़ा, मध्य में 750 योजन ऊपर में 500 योजन लम्बा चौड़ा है, मूल में 3162 से कुछ अधिक परिधि, मध्य में 2372 से कुछ अधिक तथा ऊपर में 1581 योजन से कुछ अधिक परिधि है। इस प्रकार मूल में विस्तीर्ण मध्य में संकड़ा ऊपर पतला है। गाय पूंछ के आकार का है, यमक यानि जोड़िया (जुड़वें भाई की तरह), एक ही प्रकार के संस्थान युक्त है। पूरे स्वर्णमय हैं, पद्मवर वेदिका तथा वनखंडों से घिरे है। इनका वर्णन पूर्ववत् समझना। इनके ऊपर बीच में दो प्रासादावतंसक है, जो 62½ योजन ऊंचे, 31¼ योजन लम्बे चौड़े है। वर्णन विजय देव जैसा समझें, पर्वत पर छोटी मोटी बावड़िया यावत् बिल पंक्तियों में बहुत से कमल है, जो पर्वत वर्णी है। यहां दो यमक नामक महा ऋद्धिवान देव भोग भोगते विचरते है, इसी से इनका यमक नाम शाश्वत है। इन देवों की दूसरे जंबूद्वीप में अलग अलग यमका राजधानी है, विजय देव जैसे वर्णन समझना।

उत्तर कुरु क्षेत्र के नीलवंत आदि पांच द्रह- नीलवंत पर्वत से 834 योजन और सातिया चार भाग से कुछ अधिक अन्तर पर शीता महानदी के बीच में नीलवंत द्रह है पद्मद्रह जैसा वर्णन समझना, पद्मवर वेदिका और वनखंडों से घिरा है। नीलवंत नामक नागकुमार देव बसते हैं। नीलवंत द्रह के पूर्व पश्चिम दिशाओं में दोनो तरफ 10-10 योजन के अन्तर से 20 कांचन पर्वत है, ये प्रत्येक 100 योजन ऊंचा, मूल में 100 योजन लम्बा चौड़ा, मध्य में 75 योजन ऊपर 50 योजन लम्बा चौड़ा तथा मूल में 316 योजन मध्य में 237 योजन ऊपर में 158 योजन कुछ अधिक परिधि है।

प्रथम नीलवंत द्रह से पूर्वोक्त 834 योजन के अन्तर पर दूसरा उत्तर कुरु द्रह है। इसी प्रकार इतने हीं अन्तर तीसरा चन्द्र द्रह है इसी अन्तर से चौथा एरवत नामक द्रह है। इसी अन्तर प्रमाण पांचवां माल्यवंत द्रह है। इन पांचों द्रहों का एक जैसा ही वर्णन है। पांचों द्रहों के 100 कंचनगिरि उत्तर कुरु में है, इन द्रहों के देवों की एक पल्योपम की स्थिति जानना।

उत्तर कुरु में जम्बूवृक्ष- नीलवंत पर्वत के दक्षिण और मेरु पर्वत के उत्तर दिशा में ईशान कोण में और माल्यवंत गजदंत गिरि के पश्चिम और सीता महानदी के पूर्वी तट पर उत्तर कुरु क्षेत्र में जम्बू पीठ नामक पीठ है, यह 500 योजन लम्बी चौड़ी है, 1581 योजन साधिक परिधि युक्त है, मध्य में 12 योजन ऊंची (जाड़ी) और फिर घटते-घटते चारों तरफ अन्तिम छोर पर दो-दो गाऊ ऊंची है। पूरी पीठ जंबूनंद रत्नमय है, उल्टा सरावला (सकोरा) आकार की है। यह पीठिका एक पद्मवर वेदिका, एक वनखंड से चारों तरफ घिरी है। वेदिका दो गाऊ ऊंची एक गाऊ चौड़ी ऐसी मनोहर चार बारणा युक्त है, इस पीठ के चार दिशा में तीन सीढ़ी रूप चार पगथिया है, वर्णन तोरण छत्रातिछत्र पर्यंत पूर्ववत् जानना।

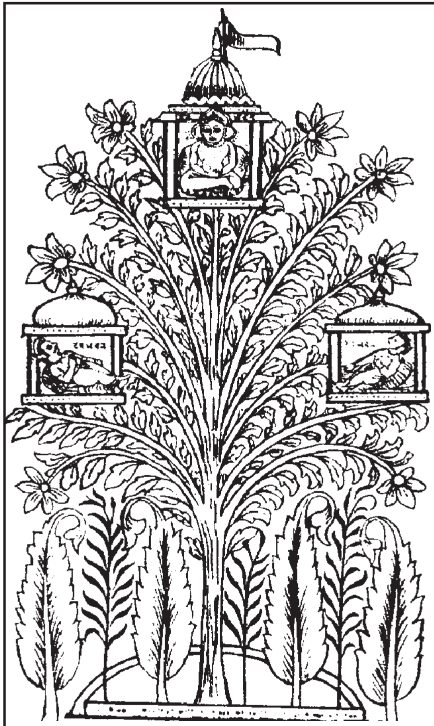

(चित्र सं. 52)-जम्बू वृक्ष

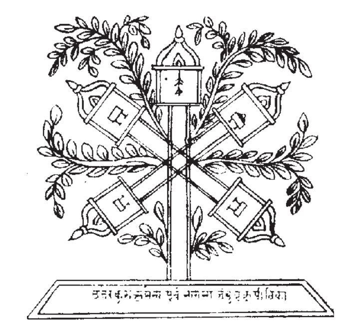

(चित्र सं. 53)-
उत्तरकुरु क्षेत्र में पूर्व भाग में जंबू पीठिका

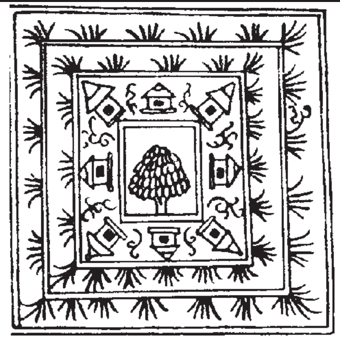

(चित्र सं. 54)-जंबू वृक्ष पीठिका
पद्मवर वेदिका एवं वनखंड

इस पीठ के मध्य भाग में एक मणि पीठिका है, 8 योजन लंबी चौड़ी 4 योजन जाड़ी है (ऊंची), मणिमय है। इसके ऊपर **जम्बू** सुदर्शन वृक्ष नामक वृक्ष है। यह 8 योजन ऊंचा, आधा योजन जमीन में गहरा, दो योजन का स्कंध है, 6 योजन की शाखा है, मध्य में 8 योजन लम्बा चौड़ा है, साढ़े आठ योजन संपूर्ण ऊंचा कहा है। जंबू सुदर्शन वृक्ष का मूल वज्ररत्न का है, ऊपर निकली शाखाएं चांदी की है, अरिष्ट रत्नमय विस्तीर्ण कंद है, वैडूर्य रत्न के तेजयुक्त स्कंध है। मुख्य शाखाएं उत्तम रूपामय मूल से ही विस्तीर्ण है। अलग अलग मणि और रत्नमय उसकी विविध शाखा, प्रशाखाएं है। वैडूर्य रत्न के पत्ते है, बीटके (डीटे) लाल स्वर्णमय है, जंबूनंद रत्न की लाल, टीसी कोमल पत्र अंकुर सुकोमल है। विचित्र मनोहर मणिरत्न के फल और सुगंधित फूल है। फल और फूलों के भार से वृक्ष की शाखाएं नमी हुई है, छाया, कांतियुक्त, मन को अति प्रसन्न लगने वाली है।

जम्बू वृक्ष के मूल में जटा है वह वज्ररत्नमय है, मूल से ऊपर का कंद श्याम वर्ण रत्न का है, डाल वैडूर्य रत्न यानि नील वर्ण रत्न की है, मोटी शाखा पीले सोने की, छोटी शाखा सफेद सोना की, पत्ते वैडूर्य रत्न के, पत्तों के डींट (बीट के) लाल तपे सोना समान महान् तेजवंत है। पल्लव यानि नवीन आते पत्ते लाल स्वर्ण के हैं। नये पत्ते रूपामय है। मध्य भाग की मोटी डाल रूपामय, फल फूल रत्नमय है। दो गाऊ भूमि में गहराई में जाड़ा है। थड़, मोटी

शाखा और मध्य भाग में जो मूलशाखा है वहां दो गाऊ की चौड़ाई है तथा 8 गाऊ थड़ की लम्बी डाल है। थड़ की शाखा से चारों दिशा में चार मोटी डालियां जहां से निकलती है, वहां से 15 गाऊ लम्बी है, तथा मध्य भाग की मूल डाल लम्बी ऊंची है, जो 24 गाऊ लम्बी है। चारों दिशा की 4 डालों पर चारों शाखाओं पर श्री देवी के भवन जैसा सिद्धायतन है (वर्णन पूर्ववत्)। पूर्व दिशा की शाखा के भवन में जंबूद्वीप के अनादृत नामक अधिष्ठायक देव के सोने की शैया है। और शेष तीन दिशा में तीन भवन हैं। इनमें अनादृत देव के बेठने योग्य सिंहासन है

जंबू सुदर्शन वृक्ष की पीठिका मूल में अनुक्रम से 12 वेदिकाओं से घिरी है। वेदिका का वर्णन पूर्ववत् समझना। मूल जंबूवृक्ष से अर्द्ध प्रमाण ऊंचाई वाले अन्य 108 जंबू वृक्ष चारों दिशा में है इनमें अनादृत देव के आभूषणादि वस्तुएं रहती है। दूसरी परिधि से वायव्य कोण, उत्तर दिशा और ईशान कोण में अनादृत देव के चार हजार सामानिक देवों के 4 हजार जंबू वृक्ष हैं, पूर्व दिशा में अनादृत देव की 4 अग्रमहिषियों के चार जंबूवृक्ष है। इस प्रकार से कुल मिलाकर 12050120 जंबूवृक्षों का परिवार, पद्मद्रह की श्री देवी के कमल के प्रमाणानुसार है।

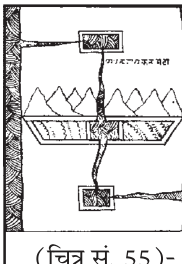

(चित्र सं. 55)- आठ कूट

जंबूवृक्ष एक आभ्यंतर मध्य और बाह्य यों तीन वनखंडों से 100-100 योजन सभी दिशाओं में चारों ओर से घिरा है। प्रथम वनखंड की चारों दिशा में 50-50 योजन जाने पर एक-एक जिन भवन आता है, यों चारों दिशा में चार भवन है, पूर्व दिशा की शाखा जैसा भवन समझना। इस वन की ईशानादि चार विदिशा में 50-50 योजन जाने पर अलग-अलग नाम वाली चार-चार नंदा पुष्करणियां है। ये प्रत्येक एक गाऊ लम्बी, आधा गाऊ चौड़ी 500 धनुष गहरी है। इन पुष्करणियों के मध्य में एक-एक प्रासादावतंसक है, अन्य तीन दिशाओं में भवन समान जानना।

इस देव भवन तथा प्रासाद के आठ आंतरों में देव भवन सहित 8 कूट है, प्रत्येक कूट मूल में 12 योजन विस्तृत, मध्य में 8 योजन और शिखर पर 4 योजन विस्तृत है और 8 योजन ऊंचे ऐसे 8 तरु कूट कहे हैं।

जम्बू सुदर्शन वृक्ष अन्य तिलक वृक्ष, बकुल वृक्ष यावत् राजवृक्ष वगैरह वृक्षों से चोतरफ से घिरा है, वृक्षों पर बहुत से आठ-आठ मंगल, कृष्ण चामर, ध्वज छत्रादि है।

जम्बू सुदर्शन वृक्ष के 12 नाम है 1. शुभदर्शन होने से सुदर्शन 2. अनिष्फल होने से अमोघ 3. मणिरत्नों से बद्ध पीठ होने से सुप्रतिबद्ध 4. यशस्वी होने से यशोधर 5. जम्बूद्वीप का नाम विस्तार करने वाला होने से विदेह जम्बू 6. सौमनस यानि उत्तम वृक्ष उसे देखकर मन दुष्ट नहीं होता प्रीति वाला रहता है 7. शाश्वत होने से नियत 8. अनादिकाल से मंडित होने से नित्य मंडित 9. कल्याणकारी उपद्रव रहित होने से सुभद्र 10. विस्तीर्ण वृक्ष होने से विशाल 11. सुनिष्पन्न रूप से सुजात 12. दर्शन से शुभ मन होने से सुमन। इस वृक्ष पर जम्बूद्वीप का मालिक अनादृत देव एक पल्योपम आयुष्य वाला रहता है, अतः इसका जम्बू वृक्ष शाश्वत नाम है।

महाविदेह में देवकुरु युगलिया क्षेत्र का वर्णन- मेरु पर्वत के दक्षिण दिशा में और निषध पर्वत के उत्तर दिशा में देवकुरु युगलिया क्षेत्र है। यह $11842\frac{2}{19}$ योजन चौड़ा है, इस प्रकार गजदंतगिरि के मध्य में मेरु से दक्षिण दिशा में देव कुरु और उत्तर में उत्तर कुरुक्षेत्र है, ये दोनों युगलिया क्षेत्र हैं। अर्द्धचंद्राकार रहे हुए हैं। इसमें महाविदेह का विस्तार $33684\frac{4}{19}$ योजन है, उसमें से मेरु का विस्तार 10 हजार योजन बाकी निकालने से

23684 $\frac{4}{19}$ योजन रहता है, उसका आधा 11842 $\frac{2}{19}$ योजन हुआ, इतना मेरु क्षेत्र के मध्य भाग का विष्कंभ जानना।

इसमें चित्र, विचित्र कूट ये दो पर्वत है, ये निषध पर्वत के उत्तर दिशा से 834 योजन तथा सातिया चार भाग जाने पर शीतोदा नदी के पूर्व-पश्चिम दो तट पर दो पर्वत है (वर्णन उत्तर कुरु के यमक समान है)। इन दो चित्रकूट के उत्तर दिशा से 834 योजन और सातिया चार भाग जाने पर पहला निषध द्रह है, इतनी ही दूरी से अन्य दूसरा देवकुरु द्रह, तीसरा सूर्य द्रह, चौथा सुलस द्रह, पाँचवाँ विद्युत्प्रभ द्रह है। ये पाँचों द्रह देवकुरु क्षेत्र में शीतोदा नदी के हैं। सभी द्रह पद्मद्रह जैसे हजार योजन लम्बे, 500 योजन चौड़े, दस योजन गहरे है, प्रत्येक द्रह के एक दक्षिण एक उत्तर यों दो-दो बारणा है, इन द्रहो के नाम से देव है जो इनके अधिष्ठायक हैं। द्रहों से पूर्व और पश्चिम में दस योजन जाने पर एक-एक द्रह के एक-एक तरफ 10-10 कांचन गिरि है, ये कंचन गिरि वैताढ्य के कूट 6¼ योजन है, उनसे 16 गुणा बड़ा है ऐसे सभी 200 कंचन गिरि जानना। इस प्रमाण से देवकुरु-उत्तर कुरु के 10 द्रह हैं, एक-एक द्रह के दोनों तरफ 10-10 गिनने से 200 कंचन गिरि 10×2×10=200 होते हैं।

कुलगिरि, यमक पर्वत, पांच द्रह और मेरु के 7 आंतरों का वर्णन- 834 योजन और एक कला के सात भाग करने पर उसमें से एक भाग सहित ग्यारह कला जितना अंतर कुलगिरि, यमक पर्वत, पांच द्रह तथा मेरु का जानना। देवकुरु का विस्तार 11842 $\frac{2}{19}$ योजन है, उसमें से यमक पर्वत और पांच द्रह के 6 हजार योजन है, वह बाद करने पर 5842 $\frac{2}{19}$ बचता है, इसे 7 भाग में बांटने से 834 योजन आता है, शेष 4 बढ़े इसे 19 से गुणा करने से 76 कला हुई इसमें मूल की 2 कला जोड़ने पर 78 कला हुई सात का भाग देने से 11 कला हुई, फिर एक बढ़ी इसमें 7 का भाग देने से एक भाग (सातिया एक) आवे इतना कुलगिरि, यमक पर्वत, पांच द्रह तथा मेरु का अंतर जानना।

देवकुरु के पश्चिमार्द्ध के मध्य भाग में रूपा की पीठ पर कूट शाल्मली वृक्ष है, उस पर गरुड़ देव का निवास है वर्णन जम्बू वृक्ष जैसा समझें परन्तु 12 नाम नहीं कहना। यहां देवकुरु देव बसते है, इससे इसका **देवकुरु** शाश्वत् नाम है।

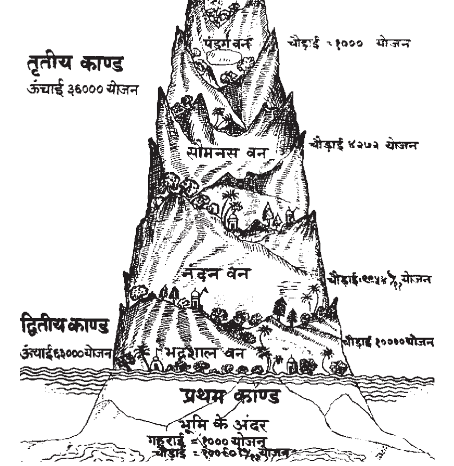

(चित्र सं. 56)-सुदर्शन मेरु पर्वत तीन कांड सहित

मेरु पर्वत- उत्तर कुरु क्षेत्र से दक्षिण, दक्षिण कुरु क्षेत्र से उत्तर, पूर्व विदेह के पश्चिम और पश्चिम विदेह के पूर्व में जम्बूद्वीप के मध्य में मेरु नामक पर्वत है। यह कनकमय वर्त्तुल-गोलाकार है। निन्यानवे हजार योजन ऊंचा, एक हजार योजन धरती में गहरा है, कुल एक लाख योजन ऊंचा है। मूल धरती में 10090 योजन और एक योजन के 11 में से 10 भाग जितना चौड़ा है, धरती तल पर दस हजार योजन चौड़ा है, फिर ऊपर जाते जाते एक योजन का ग्यारहवां भाग, 11 योजन पर एक योजन, 100 योजन ऊंचाई पर 9 योजन तथा 11 में से एक

भाग, 1000 योजन पर 90 योजन 11 मे से 10 भाग इस प्रकार चौड़ाई में घटते घटते शिखर तल पर एक हजार योजन चौड़ा रहता है। इसकी परिधि मूल में 31910 योजन पर 11 में से 3 भाग तथा धरती तल पर 31623 योजन और शिखर तल पर 3162 योजन कुछ अधिक है। यह पर्वत उल्टा करे हुए गोपुच्छ की तरह है, रत्नमय है। एक पद्मवर वेदिका और एक वनखंड से चारों ओर से लिपटा हुआ है (घिरा हुआ है)। इसमें तीन काण्ड है, धरती में हजार योजन का प्रथम कांड मिट्टी, पत्थर, वज्ररत्न तथा कंकर इन चार पदार्थ का है। पृथ्वी से सोमनस वन तक दूसरा काण्ड 63 हजार योजन प्रमाण है, यह स्फटिक रत्न, अंकरत्न, रूपा तथा कांचन का है, उससे आगे ऊपर 36 हजार योजन का तीसरा कांड रक्तवर्णा कनक का है, यों मेरु पर्वत के तीन भाग (कांड) कहे हैं।

मेरु पर्वत पर चार वन है 1. भद्रशाल वन 2. नन्दन वन 3. सौमनस वन 4. पंडक वन। प्रथम भद्रशाल वन सम पृथ्वी पर है, इसके चार गजदंत गिरि, शीता, शीतोदा महानदी से आठ भागों में विभक्त होने से 8 खंड हो गये हैं। यह भद्रशाल वन मेरु पर्वत की पूर्व पश्चिम दिशा में 22-22 हजार योजन लम्बा तथा उत्तर-दक्षिण में 250-250 योजन चौड़ा है। देवकुरु-उत्तर कुरु तक गया (विस्तृत) है, यह वन पद्मवर वेदिका और वनखंड से घिरा हुआ है।

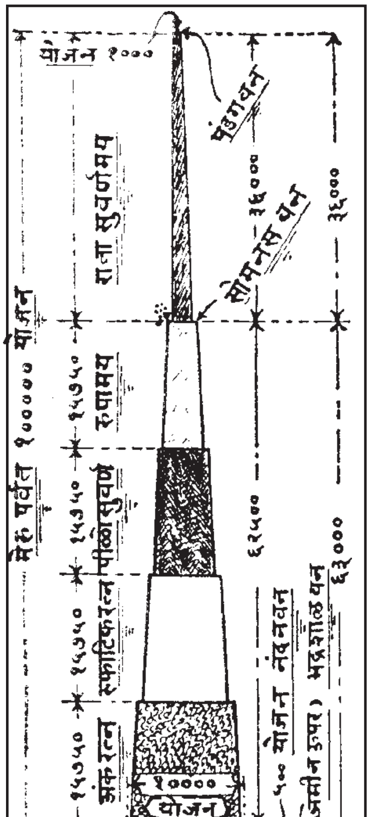

(चित्र सं. 57)-
अलग-अलग रत्न मय मेरु पर्वत

मेरु पर्वत के पूर्वादि चारों दिशा में भद्रशाल वन में 50-50 योजन जाने पर प्रत्येक दिशा में सिद्धायतन है जो 50 योजन लम्बा 25 योजन चौड़ा और 36 योजन ऊंचा है, यों 4 दिशा में 4 सिद्धायतन है। चार विदिशाओं में 50 योजन जाने पर प्रत्येक विदिशा में चार-चार नंदा पुष्करणी (बावड़ियां) हैं। ईशान कोण की चार बावड़ियां 1. पद्मा 2. पद्मप्रभा 3. कुमुदा 4. कुमुदप्रभा ये पुष्करणियां 50 योजन लम्बी 25 योजन चौड़ी 10 योजन गहरी है। वेदिका और वनखंड सहित है। इन चारों के बीच में ईशानेन्द्र का एक प्रासादावतंसक है जो 500 योजन ऊंचा 250 योजन चौड़ा है। आग्नेय कोण में उत्पलगुल्मा, नलिना, उत्पला और उत्पलोज्वला ये चार पूर्व प्रमाण वाली बावड़ियां है, इनके मध्य में शक्रेन्द्र का परिवार सहित प्रासादावतंसक जानना। नैऋत्य कोण में भृंगा, भृंगनिभा, अंजना और अंजनप्रभा ये चार बावड़ियां है, इनके मध्य भी शक्रेन्द्र का परिवार सहित प्रासादावतंसक जानना। वायव्य कोण में श्रीकांता, श्रीचंदा, श्री महिता, श्री निलया, ये चार पुष्करणियां है। इनके मध्य में ईशानेन्द्र का प्रासादावतंसक जानना।

भद्रशाल वन में जो पूर्वोक्त भवन और प्रासाद कहे उनमें 8 अन्तरों में 8 हस्ती कूट (हाथी आकार के) हैं, प्रत्येक कूट 500 योजन ऊंचे और 125 योजन धरती में है। आठ कूटों के नाम उनके देवता तथा उनकी राजधानियां आदि पूर्वोक्त वर्णनानुसार कहें। 8 कूट इस प्रकार- 1. पद्मोत्तर हस्तीकूट 2. नीलवंत हस्तीकूट 3. सुहस्ती कूट 4. अंजनगिरि हस्तीकूट 5. कुमुद हस्तीकूट 6. पलास हस्तीकूट 7. अवतंस हस्तीकूट 8. रोचन गिरि

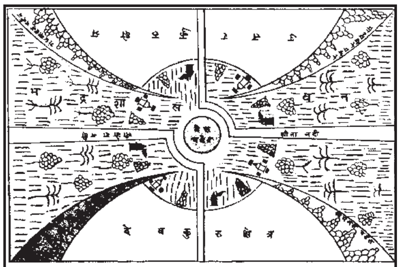
(चित्र सं. 58)-भद्रशाल वन (4 गजदंत गिरि, सीता, सीतोदा नदी)

हस्तीकूट। ये 8 दिग्गज कूट है, कूटों ने भद्रशाल वन में मेरु की चारों दिशा में सीता और शीतोदा के प्रवाह को रोका है, पूर्वोक्त भवन नदी के तट पर हैं, और प्रासाद गजदंत गिरि के पास है, भवन तथा प्रासाद के मध्य में ये 8 हस्ती कूट हैं।

भद्रशाल वन से 500 योजन ऊपर जाने पर दूसरा नंदन वन आता है यह 500 योजन चक्रवाल जैसा चारों तरफ चौड़ाई में है, यानि वलयाकार चारों तरफ से मेरु को घेर रखा है। 9954 योजन और ग्यारह के 6 भाग जितना नंदनवन से बाहर मेरु की चौड़ाई है। तथा 31479 योजन से कुछ ज्यादा परिधि है, नंदनवन में मेरु की चौड़ाई 8954 योजन 11/6 भाग जितनी है, नंदनवन के अन्दर मेरु की परिधि 28316 योजन 8 भाग जितनी है। यह नन्दन वन पद्मवर वेदिका और वनखंड से घिरा है। इसके चारों तरफ भद्रशाल वन की तरह चार सिद्धायतन और चार विदिशाओं में 16 पुष्करणियां जानना। ईशान कोण में-नंदा, नंदोतरा, सुनन्दा, सुदर्शना। नैऋत्य कोण में- भद्रा, विशाला, कुमुदा, पुंडरिकिणी। वायव्य कोण में विजया, वैजयंती, जयंती, अपराजिता। आग्नेय कोण में उत्पला, उत्पलोज्वला, उत्पल गुल्मा और नलिना। यहां चार-चार बावड़ियों के मध्य में भद्रशाल वन की तरह शक्रेन्द्र और ईशानेन्द्र के प्रासादावतंसक जानना।

नंदन वन में भवन और प्रासाद के 8 अन्तरों में दिक्कुमारियों के 8 कूट हैं। 1. नन्दन वन कूट 2. मेरु कूट 3. निषध कूट 4. हिमवंत कूट 5. रजत कूट 6. रुचक कूट 7. सागर चित्रकूट 8. वज्रकूट। इनमें दिक्कुमारियां रहती हैं। ये कूट समतल भूमि से एक हजार योजन ऊंचे हैं, क्योंकि 500 योजन नन्दन वन और 500 योजन ये कूट, इस प्रकार 1000 योजन ऊपर भवन में ये दिक्क कुमारियां बसती है। इनके नाम है मेघंकरी, मेघावती, सुमेघा, हेममालिनी, सुवत्सा, वत्समित्रा, वज्रसेना और बलाहिका ये आठ कुमारियां जानना। नवमां बलकूट है, यह हजार योजन ऊंचा है। इसलिए इसे सहस्त्रांक कूट में गिना है। यह कूट ईशान दिशा के प्रासाद से भी ईशान कोण में नंदनवन के छोर (किनारे) पर है। यह माल्यवंत गजदंत के हरिस्सह कूट के प्रमाण से है। यहां 500 योजन चौड़ा नन्दन वन और 500 योजन का कूट मेरु से 50 योजन दूर है। इससे 450 योजन नन्दन वन पर तथा 50 योजन अद्धर है। नवमां बलकूट तो नंदनवन पर थोड़ा रहा है, आकाश में अद्धर (झूलता) ज्यादा रहा है, इस बलकूट पर बल नामक देवता की राजधानी कही है।

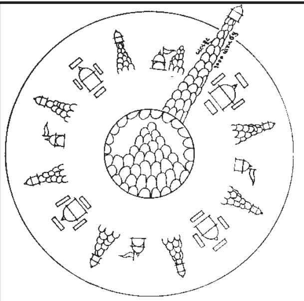
(चित्र सं. 59)-नंदन वन

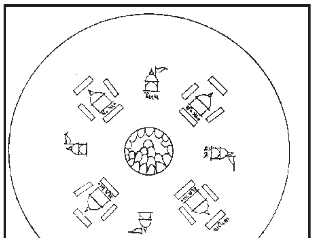
(चित्र सं. 60)-सोमनस वन

नन्दन वन से 62 हजार 500 योजन ऊपर जाने पर तीसरा सोमनस वन है। यह 500 योजन चक्रवाल रुप चौड़ा मेरु को चारों तरफ से घेरे है। 4272 योजन 8/11 भाग जितना मेरु पर्वत बाहर चौड़ा तथा 13511 योजन 6/11 (ग्यारह का 6) भाग जितना परिधि युक्त है, 3272 योजन ऊपर 8/11 भाग जितना सोमनस वन के अन्दर की तरफ मेरु चौड़ा है। 10349 योजन ऊपर 3/11 भाग जितना अन्दर परिधि से है। यह सोमनस वन एक पद्मवर वेदिका

और वनखंड से घिरा है। यहां कूट नहीं है। कूट के सिवाय सिद्धायतन, पुष्करणियां, प्रासादावतंसक इन सभी की वक्तव्यता नंदन वन की तरह कहनी। 16 पुष्करणियों के नाम- ईशान कोण में- सुमन, सोमनसा, सौमनस्या, मनोरमा। आग्नेय कोण में- उत्तरकुरा, देवकुरा, वारिषेणा, सरस्वती। नैऋत्य कोण में विशाला, माघ भद्रा, अभय सेना, रोहिणी। वायव्य कोण में भद्रोत्तरा, भद्रा, सुभद्रा, भद्रावती है। सोमनस वन से 36000 योजन ऊपर जाने पर मेरु पर्वत के शिखर तल पर पंडक वन है। यह 494 योजन चक्रवाल रुप से मेरु की चूलिका के चारों ओर रहा है। 3162 योजन कुछ अधिक मेरु की बाहर की परिधि है।

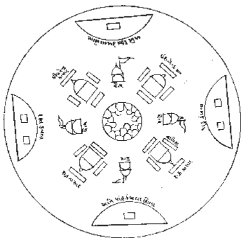
(चित्र सं. 61)-पंडक वन

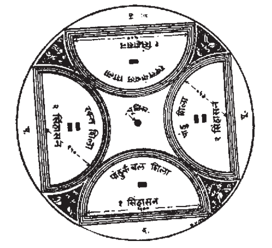
(चित्र सं. 62)-अभिषेक शिला

पंडक वन के बीच में मेरु पर्वत की चूलिका चोटी रूप से है यह 40 योजन ऊंची है। मूल में 12 योजन चौड़ी मध्य में 8 योजन चौड़ी है, ऊपर 4 योजन चौड़ी है। मूल में 37 योजन से अधिक परिधि, ऊपर 12 योजन से कुछ अधिक परिधि है। एक योजन मूल से ऊपर जाने पर योजन का पांचवा भाग घटता है, यानि 5 योजन में एक योजन घटती है इस प्रकार गाय की पूंछ की तरह है। वैडूर्य वर्ण (बादली रंग) की है। यह चूलिका एक पद्मवर वेदिका वनखंड से घिरि है। इसके ऊपर मध्य भाग में एक सिद्धायतन है यह एक गाऊ लम्बा आधा गाऊ चौड़ा और 1440 धनुष ऊंचा है।

पंडक वन के पूर्वादिक चारों दिशा में चार सिद्धायतन तथा 4 विदिशाओ में 16 पुष्करणियां तथा 4 प्रासादावतंसक का वर्णन पूर्व के वन की तरह और वहां शक्रेन्द्र तथा ईशानेन्द्र के प्रासादावतंसक तक पूर्ववत् जानना।

16 पुष्करणियों के नाम- ईशानकोण में- पुंड्रा, पुंड्रप्रभा, सुरक्ता, रक्तावती। आग्नेयकोण में-क्षीररसा, इक्षुरसा, अमृतरसा, वारुणीरसा। नैऋत्य कोण में- शंखोत्तरा, शंखा, शंखावर्त्ता, बलाहका। वायव्य कोण में-पुष्पोत्तरा, पुष्पवती, सुपुष्पा, पुष्पमालिनी है।

अभिषेक शिला- पंडक वन में तीर्थंकर जन्माभिषेक की शिलाएं- पूर्व दिशा के छोर पर पांडूशिला है यह उत्तर दक्षिण 500 योजन लंबी, पूर्व पश्चिम 250 योजन चौड़ी है, 4 योजन जाड़ी है। अर्जुन स्वर्णमय है, अर्द्ध चन्द्राकार है, शिला की वक्रता चूलिका तरफ है वेदिका और वनखंड से घिरि है, इसके चारों दिशा में चार सोपान पगथिया है, यावत् तोरण पर्यंत तथा देवता बेठते हैं, यह सभी वर्णन जानना। इसके मध्य भाग एक उत्तर दिशा में तथा दूसरा दक्षिण दिशा में यों दो अभिषेक सिंहासन है। ये शिला की लम्बाई चौड़ाई ऊंचाई से 8000वां भाग से है। यानि 500 धनुष लम्बाई 250 धनुष चौड़ाई चार धनुष ऊंचाई है। वहां उत्तर दिशा के सिंहासन पर उस दिशा तरफ के कच्छादिक 8 विजयों के तीर्थंकरों का जन्माभिषेक होता है। दक्षिण दिशा के सिंहासन पर उस दिशा के वच्छादि 8 विजयों के तीर्थंकरों का अभिषेक होता है।

दक्षिण दिशा के छोर पर पांडुकबल शिला है, यह भी अर्जुन सुवर्णमय है। यह शिला भी पांडूशिला प्रमाण से लम्बी चौड़ी है, यहां एक ही सिंहासन है, यहां दक्षिण दिशा तरफ के भरत क्षेत्र में उत्पन्न हुए तीर्थंकरों का जन्माभिषेक होता है। भरत क्षेत्र में एक समय एक ही तीर्थंकर का जन्म होता है। इसलिए एक ही सिंहासन है।

पश्चिम दिशा के अन्तिम छोर पर रक्तशिला है यह अर्जुन सुवर्णमय है। लम्बाई चौड़ाई पूर्ववत् समझनी। यहां दो सिंहासन है। पश्चिम महाविदेह में उत्पन्न हुए तीर्थंकरों का जन्माभिषेक होता है। दक्षिण दिशा के सिंहासन पर पद्मादिक 8 विजयों के तीर्थंकरों का जन्माभिषेक तथा उत्तर दिशा के सिंहासन पर वप्रादिक आठ विजयों के तीर्थंकरों का जन्माभिषेक होता है।

चूलिका के उत्तर दिशा में पंडक वन के उत्तर दिशा के किनारे रक्तकंबल शिला है। यह भी अर्जुन सुवर्णमय है, वर्णन पूर्वानुसार समझना। इसके मध्य भाग में एक सिंहासन है। उस दिशा में आये एरवत क्षेत्र के तीर्थंकर का जन्माभिषेक होता है। एरवत में भी एक समय एक ही तीर्थंकर का जन्म होता है अतः एक सिंहासन उत्तर शिला तरफ है। महाविदेह के पूर्व-पश्चिम तरफ प्रत्येक में एक समय एक-एक तरफ दो-दो तीर्थंकरों का जन्म होता है, कुल चार तीर्थंकर एक समय जन्मते हैं, इसलिए पूर्व पश्चिम शिलाओं पर जन्माभिषेक के दो-दो सिंहासन है। कुल मिलाकर मेरु पर चार शिलाओं पर 6 सिंहासन है। मेरु पर्वत पर जितने सिद्धायतनादि है ये इस प्रकार-

वनः- भद्रशाल आदि 4 वन हैं, इनमें चार-चार सिद्धायतन, चार-चार प्रासादावतंसक और 16-16 पुष्करणियां है। भद्रशाल वन में 8 दिशा हस्तीकूट है। नन्दन वन में 9 कूट है, सोमनस वन में कूट नहीं है। चौथे पंडक वन में चार अभिषेक शिला है, चूलिका है। चूलिका पर एक सिद्धायतन है।

मेरु पर्वत के 16 नाम है- 1. मंदर नामक अधिपति होने से मंदर कहते है। 2. मेरु 3. मन को रमण कराता है, मनोहर लगने से मनोरम कहते है 4. इस पर्वत का दर्शन सुन्दर है इससे सुदर्शन 5. स्वयं से प्रकाशित होने से स्वयंप्रभ 6. सभी पर्वतों में सबसे ऊंचा होने से गिरिराज 7. बहुत उत्कृष्ट जाति के रत्नादि होने से रत्नोच्चय 8. पांडुशिला वगैरह होने से शीलोच्चय 9. चारों दिशाओं के मध्य भाग में होने से लोक मध्य 10. शरीर के मध्य भाग में नाभि होती है, ऐसे ही लोक मध्य में होने से लोकनाभि 11. पर्वत अत्यंत निर्मल होने से अच्छ 12. सूर्य चन्द्र आदि इस पर्वत के आवर्त्त (प्रदक्षिणा) करने से सूर्यावर्त्त 13. सूर्यचन्द्र इसके आसपास घूमते है अतः सूर्यावरण 14. सभी पर्वतों में उत्तम होने से उत्तम 15. मेरु पर रहे 8 रूचक प्रदेशों में से दिशा-विदिशा निकली होने से दिशादि नाम है 16. जिस प्रकार मुकुट श्रेष्ठ गिना जाता है, इसी प्रकार पर्वतों में ऊंचे होने से मुकुट समान है अतः अवतंसक कहते है। मंदर नामक एक पल्योपम आयुष्य वाला देव यहां बसता है अतः मंदर यह शाश्वत नाम है।

मेरु पर्वत के पूर्व-पश्चिम दिशा में रहा क्षेत्र महाविदेह क्षेत्र कहलाता है। इस महाविदेह के 4 विभाग होते हैं।

1. मेरु पर्वत के पूर्व दिशा के तरफ के भाग को पूर्व महाविदेह क्षेत्र कहते हैं।
2. मेरु पर्वत के दक्षिण दिशा क्षेत्र को देवकुरु युगलिया क्षेत्र कहते है, यह क्षेत्र विद्युत्प्रभ और सौमनस नामक दो गजदंत पर्वतों के मध्य आया है।
3. मेरु पर्वत के पश्चिम दिशा के भाग को पश्चिम महाविदेह क्षेत्र कहते हैं।
4. मेरु पर्वत के उत्तर दिशा के क्षेत्र को उत्तर कुरु युगलिया क्षेत्र कहते हैं, यह क्षेत्र गंधमादन और माल्यवंत नामक दो गजदंत पर्वतों के मध्य आया है।

महाविदेह क्षेत्र

पूर्व महाविदेह के बराबर मध्य भाग में से सीता नदी बहती है, इससे इस क्षेत्र के दो विभाग हो जाते हैं। इसी तरह पश्चिम में भी सीतोदा नदी मध्य भाग से बहती है, वहां भी दो भाग हो जाते हैं। पूर्व महाविदेह क्षेत्र में

सीता नदी के उत्तर किनारे चक्रवर्त्ती जीते, ऐसे 6 खंड वाले विभाग हैं, इनको विजय कहते हैं, ये 8 विजय हैं, प्रत्येक विजय की सीमा पर तीन अन्तर नदियों और चार वक्षस्कार पर्वतों के होने से कुल आठ विजय बनती है, दक्षिण किनारे भी इसी प्रकार आठ-आठ विजय हैं। इसी प्रकार सीता नदी के उत्तर किनारे, दक्षिण किनारे 8-8 कुल 16 विजय पूर्व महाविदेह क्षेत्र में है। पूर्व महाविदेह क्षेत्र की जमीन हथेली जैसी सपाट है, इससे वहां की नदियां, पर्वत विजय ये सभी समश्रेणि में हैं।

पश्चिम महाविदेह क्षेत्र की जमीन वियोगिनी स्त्री की तरह क्षीण होती जाती है, सपाट भूमि से शुरूआत होकर पश्चिम तरफ जाते-जाते ढ़लान होने से नीचाण तरफ होती जाती है, यानि सलिलावती और वप्रा विजयों के अन्तिम छोर के गांव तो एक हजार योजन जितने नीचे हैं। इसी से इन गांवों को अधोलोक के गांव कहते हैं। अन्तिम छोर पर जैसे समुद्र को रोकने के लिए दीवार हो, ऐसी जमीन है। इस जगह पर जयंत नामक दरवाजा से सुशोभित जगती का कोट है, मानो यह अधोलोक के गांवों को देखने खड़ा है। सीतोदा नदी भी अधोगमन करती हुई एक हजार योजन नीचे भाग में जगती भेदकर समुद्र में मिलती है। पश्चिम महाविदेह क्षेत्र की जमीन नीची नीची होती जाती है। जैसे कुंए में से चड़स द्वारा पानी निकालते हुए बैलों का फेरा बनता है, वैसे ढ़लान होती जाती है। इसी से वहां की विजय, नदियां, पर्वत सभी सपाट (समतल) से क्रम-क्रम से ढ़लान में हैं।

पूर्व महाविदेह की सोलह विजय- माल्यवंत गजदंत पर्वत के पूर्व दिशा में कच्छ नामक पहली विजय है, उसकी क्षेमा राजधानी है, इस विजय के पूर्व में चित्रकूट वक्षस्कार पर्वत है, जो सीमा रूप है। इसके बाद सुकच्छ विजय इसकी क्षेमपुरा राजधानी, इसकी सीमा रूप गाहावई महानदी है। तीसरी महाकच्छ विजय, अरिष्टा राजधानी सीमा पर ब्रह्मकूट वक्षस्कार पर्वत है। चौथी कच्छावती विजय, उसकी अरिष्टपुरा राजधानी, उसकी मर्यादा हेतु द्रहावती महानदी है। पांचवी आवर्त्त विजय, खड्गी राजधानी, नलिनकूट वक्षस्कार पर्वत सीमा पर है।

छठी विजय मंगलावर्त्त, जो मंजूषा राजधानी से शोभित है, सीमा पर वेगवती महानदी है। आगे सातवीं पुष्करावर्त्त विजय, औषधि राजधानी, सीमा रूप एक शैल पर्वत है। आठवीं पुष्कलावती विजय है, पुंडरिकणी राजधानी है, उसके बाद वनमुख आता है, (इस विजय में अभी विचरने वाले बीस तीर्थंकरों में से पहले श्री सीमंधर स्वामी विराजमान है)। सीतानदी के उत्तरी किनारे इन आठ विजयों का यह वर्णन है, अन्त में सुहावना वन है ये आठों विजय उत्तर-दक्षिण लम्बी, पूर्व पश्चिम चौड़ी है।

इसके सामने सीता नदी के दक्षिण किनारे पर वनमुख है, इसके पश्चिम में वच्छ नामक नवमीं विजय है, (इस विजय में विरहमान बीस तीर्थंकरों में से तीसरे श्री बाहुस्वामी विराजमान हैं इस विजय की सुसीमा राजधानी है, सीमा रूप त्रिकूट पर्वत है। दसमीं सुवच्छ विजय, कुंडला राजधानी है, इसकी मर्यादा तप्तजला अन्तर नदी से है। इसके पश्चिम में ग्यारहवीं महाकच्छ विजय, अपराजिता राजधानी मर्यादा रूप वैश्रमण पर्वत है। बाद में बारहवीं विजय वच्छावती है, राजधानी प्रभंकरा है, मत्ती नामक नदी सीमा रूप है। इसके बाद तेरहवीं विजय रम्य नाम से है, राजधानी अंकावती है, सीमा पर अंजन वक्षस्कार पर्वत है। चौदहवीं रम्यक विजय, पद्मावती राजधानी और मर्यादा रूप उन्मत्तजला (उन्मग्गजला) महानदी है, इसके बाद पन्द्रहवीं रमणीक विजय, शुभा राजधानी और सीमा पर मातंजन वक्षस्कार पर्वत है, और अन्त में सोलहवीं विजय मंगलावती, रत्न संचया राजधानीयुक्त है, सीमारुप सौमनस गजदंत गिरि वक्षस्कार पर्वत है।

पश्चिम महाविदेह की सोलह विजय- सौमनस गजदंत पर्वत के पश्चिम में देवकुरु नामक युगलिया क्षेत्र है। इसके बाद विद्युत्प्रभ नामक वक्षस्कार गजदंत गिरि पर्वत आता है। इसके पश्चिम में पद्म नामक 17वीं विजय है, अश्वपुरा राजधानी नगर है, सीमारुप अंकापाती वक्षस्कार पर्वत है। उसके बाद 18वीं सुपद्म विजय सिंहपुरा राजधानी अंत में क्षीरोदा महानदी है। उसके बाद 19वीं महापद्‌म विजय है, महापुरा राजधानी है, मर्यादा रूप से पद्मापाती वक्षस्कार पर्वत है। 20वीं पद्मावती विजय, विजयापुरा राजधानी, शीत स्त्रोता महानदी सीमा पर है। 21वीं शंख विजय, अपराजिता राजधानी सीमा पर आशीविष नामक वक्षस्कार पर्वत है। 22वीं कुमुद विजय है अरजा राजधानी, सीमा, पर अंतोवाहिनी नदी है, तेवीसवीं नलिन विजय है, अशोका नगरी राजधानी, सुखावह वक्षस्कार पर्वत है, इससे 23वीं 24वीं विजय अलग होती है। बाद में इस विभाग की अन्तिम सलिलावती नामक 24वीं विजय है, वीतशोका राजधानी है, अधोलोक विजय में इसकी गिनती होती है (यहां वर्त्तमान में 20 विरहमानों में से चौथे श्री सुबाहु स्वामी विचर रहे हैं)।

इसके बाद शीतोदा नदी के दक्षिण किनारे पर वनमुख आता है, इसके सामने उत्तर किनारे पर भी वनमुख है। इस वनमुख से पूर्व दिशा में वप्रा विजय है, विजया राजधानी है।

इसके पूर्व में सीमा मर्यादा रूप चन्द्र नामक वक्षस्कार पर्वत है। इस विजय में वर्त्तमान में 20 विरहमानों में से दूसरे श्री युगमंधर स्वामी भव्य जीवों को प्रतिबोध देते विचर रहे हैं)। इसके बाद 26वीं विजय सुवप्रा, राजधानी वैजयंती, सीमा पर उर्मिमालिनी नदी है। सत्ताइसवीं विजय महावप्रा, राजधानी जयंती नगरी, सीमा पर सूर्य नामक वक्षस्कार पर्वत है। 28वीं वप्रावती विजय, अपराजिता राजधानी, सीमा पर फेन मालिनी नदी है। 29वीं वल्गु विजय, चक्रपुरा राजधानी, नाग नामक वक्षस्कार पर्वत है। 30वीं सुवल्गु विजय, खड्‌गपुरा राजधानी है, गंभीर मालिनी नदी सीमा पर है। 31वीं गंधिला विजय, अवध्या अथवा अविब्भा राजधानी है, सीमा पर देव नामक वक्षस्कार पर्वत है। अन्त में 32वीं विजय गंधिलावती है, राजधानी अयोध्या है और सीमा पर अन्त में गंधमादन गजदंत पर्वत है। उसके बाद उत्तर कुरु नामक युगलिया क्षेत्र आता है। महाविदेह की 32 विजय, राजधानी, पर्वत, नदी इस प्रकार-

पूर्व महाविदेह 16 विजयादि

	विजय	राजधानी	पर्वत / नदी		विजय	राजधानी	पर्वत / नदी
1.	कच्छ	क्षेमा	चित्रकूट पर्वत	9.	वच्छ	सुसीमा	वनमुख
2.	सुकच्छ	क्षेमपुरी	गाहावई नदी	10.	सुवच्छ	कुंडला	त्रिकूट पर्वत
3.	महाकच्छ	अरिष्ठा	ब्रह्मकूट पर्वत	11.	महावच्छ	अपराजिता	तप्तजला नदी
4.	कच्छावती	अरिष्टपुरा	द्रहावती नदी	12.	वच्छावती	प्रभंकरा	वैश्रमण पर्वत
5.	आवर्त्त	खड्‌गी	नलिन कूट पर्वत	13.	रम्य	अंकावती	मत्ता नदी
6.	मंगलावर्त्त	मंजूषा	वेगवती नदी	14.	रम्यक	पद्मावती	अंजन पर्वत
7.	पुष्करावर्त्त	ऋषभपुरी	एक शैल पर्वत	15.	रमणीक	शुभा	उन्मत्त जला
8.	पुष्कलावती	पुंडरीकिणी	वनमुख	16.	मंगलावती	रत्न संचया	मातंजय पर्वत

पश्चिम महाविदेह 16 विजयादि							
	विजय	राजधानी	पर्वत / नदी		विजय	राजधानी	पर्वत / नदी
17.	पद्म	अश्वपुरा	अंकापाती पर्वत	25.	वप्रा	विजया	वनमुख
18.	सुपद्म	सिंहपुरा	क्षीरोदा नदी	26.	सुवप्रा	वैजयंती	चन्द्र पर्वत
19.	महापद्म	महापुरा	पद्मापाती पर्वत	27.	महावप्रा	जयंती	उर्मिमालिनी
20.	पद्मावती	विजयापुरी	शीत स्त्रोदा नदी	28.	वप्रावती	अपराजिता	सूर्य पर्वत
21.	शंख	अपराजिता	आशिविष पर्वत	29.	वल्गु	चक्रपुरी	फेनमालिनी नदी
22.	नलिन	अरजा	अंतोवाहिनी नदी	30.	सुवल्गु	खड्गपुरी	नाग पर्वत
23.	कुमुद	अशोका	सुखावह पर्वत	31.	गंधिला	अवध्या	गंभीर मालिनी
24.	सलिलावती	वीतशोका	वनमुख	32.	गंधिलावती	अयोध्या	देव वक्षस्कार पर्वत

आठवी में सीमंधर स्वामी, नवमी में बाहुस्वामी, चौवीसवी में सुबाहु स्वामी, पच्चीसवी में युग मंधर स्वामी ये चार वर्त्तमान तीर्थंकर विराज रहे हैं।

महाविदेह की 32 विजय है, इनका 2213 योजन में कुछ कम विष्कंभ है। यानि 2212 योजन और एक योजन का 8 में से 7 भाग अधिक 2212 $\frac{7}{8}$ योजन जितनी चौड़ाई प्रत्येक की है। 16 वक्षस्कार पर्वत है प्रत्येक 500 योजन चौड़ा है। ये गजदंत गिरि जैसे है, कुल गिरी के पास ये पर्वत 400 योजन ऊंचा है, सीतोदा-सीता नदी के पास 500 योजन ऊंचा है।

16 वक्षस्कारों की तरह 32 विजयों में 12 अंतर नदियां है। निषध और नीलवंत पर्वत के नीचे 6-6 कुंड हैं, उनमें से ये नदियां निकलती हैं, जिस कुंड से निकलती हैं, उस कुंड से नदी का नाम है। ये सभी अन्तर नदियां वेदिका और वनखंड से घिरी है। नदी की देवी के द्वीप आदि का संपूर्ण वर्णन रोहितांशा नदी के प्रमाण रूप है। प्रत्येक अन्तर नदी 125 योजन चौड़ी है।

54000 योजन भूमि में मेरु पर्वत और भद्रशाल वन है, चार हजार योजन भूमि वक्षस्कार पर्वतों ने रोकी है, अन्तर नदियों ने 750 योजन भूमि रोकी है, दो वनमुख जगती सहित 5844 योजन भूमि पर है, ये सभी 64594 योजन हुए। एक लाख योजन का जंबूद्वीप है, इसमें से 64594 योजन जाने के बाद 35406 योजन 32 विजयों ने रोकी है। विजय 16-16 होने से 16 संख्या से भाग देने पर 2212 योजन तथा ऊपर 14 योजन बाकी बचते हैं, प्रत्येक योजन के 8 भाग करने से 14×8=112 भाग होते हैं इसमें 16 का भाग दें तो 7 भाग होते हैं। इससे एक विजय की चौड़ाई 2212 $\frac{7}{8}$ योजन होती है।

इन विजयों की लम्बाई 16592 योजन 2 कला है, सभी अन्तर नदियों और वक्षस्कार पर्वतों की लम्बाई भी विजय जितनी है।

सभी विजयों के वैताढ्य पर्वत पूर्व-पश्चिम दो विभाग में बंटे है, इनका वर्णन भरत क्षेत्र के वैताढ्य पर्वत जैसा है, इनकी लम्बाई विजयों की चौड़ाई जितनी है। ये विजय सपाट जमीन पर होने से इनके शरड या बाहा नहीं होती।

सीता नदी के दक्षिण किनारे 8 विजय है, इनमें निषध पर्वत के उत्तर तरफ एक-एक वृषभाचल पर्वत है। दोनों तरफ दो-दो कुंड है। पश्चिम तरफ रक्तवती कुंड और पूर्व तरफ रक्ता कुंड है। इन दोनों कुंडों में से उत्तर तरफ रक्ता और रक्तवती नदी है। ये नदियां वैताढ्य पर्वत को भेदकर सीता नदी में मिलती है। इसी प्रकार सीतोदा नदी के

दक्षिण किनारे 8 विजय है, इसमें आये निषध पर्वत की उत्तर मेखला पर भी वृषभाचल पर्वत है, उसमें से निकलते गंगा सिंधु कुंड और नदियां है, ये उत्तर तरफ बहती हुई वैताढ्य भेदकर सीता नदी में मिलती है, इसी प्रकार सीतोदा के उत्तर किनारे नीलवंत पर्वत की दक्षिण मेखला पर भी वृषभाचल पर्वत है, इसके पूर्व में पहले जैसे रक्ता और रक्तवती कुंड इन नाम की दो नदियां हैं, ये निकलकर दक्षिण तरफ बहती हुई वैताढ्य भेदकर सीतोदा में मिलती है। इनका वर्णन गंगा सिंधु जैसा है। सीता नदी के उत्तर किनारे नीलवंत पर्वत की दक्षिण मेखला के वृषभाचल से इसी तरह गंगा सिंधु कुंड से इन नाम की दो नदियों का वर्णन समझें।

सीता नदी के उत्तर में सीतोदा के दक्षिण में विजय हैं, उनमें गंगा सिंधु नदियां है और सीता के दक्षिण और सीतोदा के उत्तर की विजयों में रक्ता और रक्तावती नदियां है।

प्रत्येक विजय में उस विजय के नाम के चक्रवर्त्ती होते हैं, विजय के नाम का देव भी होता है, जिसकी एक पल्योपम आयु होती है।

विजय की नदी का वर्णन- निषध और नीलवंत के पास के कुंड से गंगा और सिंधु नदियां निकलती हैं, ये कच्छादिक आठ और पद्मादिक 8 यों 16 विजय में दो दो जानना। तथा वच्छादिक 8 और वप्रादिक 8 ये 16 विजय में रक्ता और रक्तवती दो-दो नदियां है, ये सभी वैताढ्य पर्वत को भेदकर सीतोदा और सीता में मिलती है। ये कच्छादिक विजय से दक्षिणावर्त्त जानना।

महाविदेह क्षेत्र में पूर्व तथा पश्चिम में क्रमशः सीता और सीतोदा नदी जगती को भेदकर समुद्र में मिलती है, वहां जगती तरफ सीतोदा और सीता के दोनों तरफ (दोनों तट पर) चार वनमुख है। चौड़ाई जगती सहित 2922 योजन (2910 योजन वन 12 योजन जगती) की सीतोदा और सीता नदी के समीप जानना। फिर संकड़ाते संकड़ाते निषध और नीलवंत के पास वनमुख का विस्तार एक कला जितना जानना। कुल गिरि से नदी तरफ जाते वनमुख का विस्तार इच्छित स्थानक में इस विधि प्रकार जानना-

निषध और नीलवंत के समीप वनमुख का विस्तार एक कला है, तो नदी के पास निषध तथा नीलवंत से 16592 योजन 2 कला जाने पर कितना होगा? यह इस प्रकार पूर्वोक्त 16592 योजन की कला बनावें तो कुल 315250 कला हुई, अब नदी के समीप वनमुख का विस्तार 2922 योजन है इससे गुणा करें तो 921160500 हुआ। इसे इस क्षेत्र के विस्तार 315250 से भाग देने पर 2922 वनमुख का विस्तार हुआ। इस प्रमाण से जहां भी चाहो वनमुख का विस्तार जान सकते हैं। यह प्रत्येक वनमुख पद्मवर वेदिका और वनखंड से घिरा है और देव वगैरह सभी वर्णन कहना।

विजयादि विस्तार एक लाख योजन विस्तार वर्णन-

सभी 32 विजयों का विष्कंभ	35,406 योजन
दो वनमुख का विष्कंभ	5,844 योजन
अन्तर नदियों की चौड़ाई	750 योजन
मेरु पर्वत का मध्य विस्तार	10,000 योजन
भद्रशाल वन (22-22 हजार योजन दोनों तरफ मेरु से)	44,000 योजन
वक्षस्कार पर्वत का विस्तार	4,000 योजन
	1,00,000 योजन हुआ

अधोलोक गांव का वर्णन- मेरु से पश्चिम दिशा में भूमि समतल भूमि से थोड़ी-थोड़ी नीची (ढ़लान) होती जाती है। पश्चिम दिशा में मेरु से 42000 योजन जाने पर एक हजार योजन भूमि समतल से गहरी है। वहां अधोलोक के गावों में मनुष्य बसते हैं। समभूमि से 900 योजन ऊपर और 900 योजन नीचे तक का तिरछा लोक कहलाता है। 900 योजन से ऊपर ऊर्ध्वलोक और 900 योजन नीचे के बाद अधोलोक कहलाता है। इस प्रकार महाविदेह का वर्णन हुआ।

जम्बूद्वीप के महाविदेह संबंधी पूर्व-पश्चिम लाख योजन का यंत्र-

पूर्व दिशा			पश्चिम दिशा		
क्रम	स्थानक का नाम	योजन संख्या	क्रम	स्थानक का नाम	योजन संख्या
1.	सीता मुख वन जगती सहित	2922	19.	भद्रशाल वन पश्चिम दिशा में	22000
2.	आठवी नवमी विजय	$2212\frac{7}{8}$	20.	बत्तीसवीं, सतरहवी विजय	$2212\frac{7}{8}$
3.	वक्षस्कार पर्वत	500	21.	वक्षस्कार पर्वत	500
4.	सातवी दसवी विजय	$2212\frac{7}{8}$	22.	इकतीसवीं अठारहवी विजय	$2212\frac{7}{8}$
5.	अन्तर नदी	125	23.	अन्तर नदी	125
6.	छठी, ग्यारहवी विजय	$2212\frac{7}{8}$	24.	तीसवी उन्नीसवीं विजय	$2212\frac{7}{8}$
7.	वक्षस्कार पर्वत	500	25.	वक्षस्कार पर्वत	500
8.	पांचवी, बारहवी विजय	$2212\frac{7}{8}$	26.	उन्तीसवी बीसवीं विजय	$2212\frac{7}{8}$
9.	अन्तर नदी	125	27.	अन्तर नदी	125
10.	चौथी, तेरहवी विजय	$2212\frac{7}{8}$	28.	अठाइसवीं इक्कीसवी विजय	$2212\frac{7}{8}$
11.	वक्षस्कार पर्वत	500	29.	वक्षस्कार पर्वत	500
12.	तीसरी, चौदहवी विजय	$2212\frac{7}{8}$	30.	सत्ताइसवी बाइसवी विजय	$2212\frac{7}{8}$
13.	अन्तर नदी	125	31.	अन्तर नदी	125
14.	दूसरी पन्द्रहवी विजय	$2212\frac{7}{8}$	32.	छब्बीसवीं तेवीसवी विजय	$2212\frac{7}{8}$
15.	वक्षस्कार पर्वत	500	33.	वक्षस्कार पर्वत	500
16.	पहली सोलहवीं विजय	$2212\frac{7}{8}$	34.	पच्चीसवी चोबीसवी विजय	$2212\frac{7}{8}$
17.	भद्रशाल वन पूर्व दिशा में	22000	35.	सीतोदा मुखवन जगती सहित	2922
18.	मेरु पर्वत का विष्कंभ	10000		**कुल योग**	**1,00,000**

जम्बूद्वीप की दक्षिण की 7 महानदियों का कोठा-

नदी का नाम	गंगा	सिंधु	रोहितांशा	रोहिता	हरिकांता	हरिसलिला	शीतोदा
निर्गम पर्वत	चुल्ल हेमवंत	चुल्ल हेमवंत	चुल्ल हेमवंत	महा हेमवंत	महा हेमवंत	निषध	निषध
निर्गम द्रह	पद्म	पद्म	पद्म	महापद्म	महापद्म	तिगिच्छ	तिगिच्छ
मूल प्रवाह योजन	6¼	6¼	12½	12½	25	25	50
मूल गहराई कोस	½	½	1	1	2	2	4
निर्गम क्षेत्र	भरत	भरत	हेमवय	हेमवय	हरिवर्ष	हरिवर्ष	महाविदेह
समुद्र प्रवेश दिशा	दक्षिण	दक्षिण	पश्चिम	पूर्व	पश्चिम	पूर्व	पश्चिम
मुख प्रवाह योजन	62½	62½	125	125	250	250	500
मुख गहराई योजन	1¼	1¼	2½	2½	5	5	10
परिवार	14000	14000	28000	28000	56000	56000	532000
						कुल योग	**728000**

जम्बूद्वीप की उत्तर की 7 महानदियों का प्रवेश-

नदी का नाम	सीता	नारीकांता	नरकांता	रुप्यकूला	सुवर्णकूला	रक्तवती	रक्ता
निर्गम पर्वत	नीलवंत	नीलवंत	रुक्मी	रुक्मी	शिखरी	शिखरी	शिखरी
निर्गम द्रह	केसरी	केसरी	महा पुंडरीक	महा पुंडरीक	पुंडरीक	पुंडरीक	पुंडरीक
मूल प्रवाह योजन	50	25	25	12½	12½	6¼	6¼
मूल गहराई कोस	4	2	2	1	1	½	½
निर्गम क्षेत्र	महाविदेह	रम्यक	रम्यक	हेरण्यवंत	हेरण्यवंत	एरवत	एरवत
समुद्र प्रवेश दिशा	पूर्व	पश्चिम	पूर्व	पश्चिम	पूर्व	उत्तर	उत्तर
मुख प्रवाह योजन	500	250	250	125	125	62½	62½
मुख गहराई योजन	10	5	5	2½	2½	1¼	1¼
परिवार	532000	56000	56000	28000	28000	14000	14000
					कुल योग		**728000**

तीर्थंकर तथा चक्रवर्त्ती आदि की उत्पत्ति स्थान के वर्णन- इस जंबूद्वीप में जघन्य चार तीर्थंकर समकाल में होते है, उत्कृष्ट संख्या 32 विजयों में 32 तथा भरत एरवत के दो मिलाकर 34 समकाल में होते हैं। वासुदेव, चक्रवर्त्ती और बलदेव ये तीन पुरुष जघन्य चार-चार और उत्कृष्ट संख्या 30 होते हैं। जब चक्रवर्त्ती होते है, तब वासुदेव नहीं होते, और जब वासुदेव होते हैं, तब चक्रवर्त्ती नहीं होते। इसलिए समकाल में तीस होते हैं लेकिन 34 नहीं होते। 32 विजय और भरत एरवत ये कुल 34 क्षेत्र उत्पन्न होने के जानना।

नीलवंत पर्वत- महाविदेह क्षेत्र के उत्तर दिशा और रम्यक वर्ष युगलिया क्षेत्र के दक्षिण दिशा में नीलवंत नामक वर्षधर पर्वत है। निषध पर्वत जितनी लम्बाई चौड़ाई जानना। इस पर्वत के ऊपर केसरी द्रह है, जिसकी दक्षिण दिशा से सीता नदी निकली जो उत्तर कुरु में आकर दो यमक पर्वत तथा (नीलवंत, उत्तर कुरु, चन्द्र, एरावत और माल्यवंत ये) पांच द्रहों को दो भागों में विभक्त कर 84 हजार नदियों के परिवार के साथ भद्रशाल में होकर मेरु पर्वत से दो योजन दूर रहकर, पूर्व दिशा में सामने मुड़कर माल्यवंत गजदंत पर्वत के नीचे उसको भेदकर, मेरु पर्वत के पूर्व दिशा में पूर्व महाविदेह क्षेत्र को दो भागों में विभक्त कर एक-एक चक्रवर्त्ती विजय से 28-28 हजार नदियों के परिवार को मिलाती हुई 532000 नदियों के साथ विजय नामक जंबूद्वीप के द्वार के नीचे से जगती को भेदकर पूर्व दिशा में लवण समुद्र में मिलती है। अन्य सारा अधिकार सीतोदा के समान जानना।

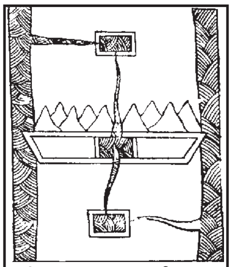

(चित्र सं. 63)-नीलवंत पर्वत के 9 कूट

नारीकांता नदी केसरी द्रह के उत्तर दिशा से निकली है, उसका वर्णन हरिकांता (हरिसलिला) जैसा समझना। इसमें विशेष यह है कि गंधापाती वृत्त वैताढ्य पर्वत से एक योजन दूर रहकर पश्चिम दिशा में मुड़कर समुद्र में मिलती है (वर्णन पूर्ववत्)। नीलवंत पर्वत पर 9 कूट है 1. सिद्धायतन कूट 2. नील कूट 3. पूर्व विदेह कूट 4. सीता कूट 5. कीर्त्ति कूट 6. नारीकांता कूट 7. अपर विदेह कूट 8. रम्यक कूट 9. उपदर्शन कूट। ये सभी 500 योजन के (प्रत्येक कूट) है। इस पर्वत का रंग बादली कांति वाले वैडूर्य रत्नमय है। नीलवंत नामक महर्द्धिक देव एक पल्योपम आयुष्य वाला वहां रहता है, इसलिए नीलवंत यह शाश्वत नाम है।

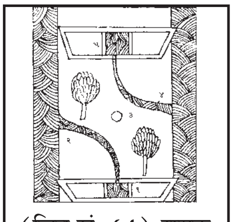

(चित्र सं. 64)-रम्यक् युगलिया का क्षेत्र

रम्यक वर्ष युगलिया क्षेत्र- नीलवंत पर्वत के उत्तर दिशा में और रूपी (रुक्मी) पर्वत की दक्षिण दिशा में रम्यक वर्ष क्षेत्र है। यहां युगलिया बसते हैं (वर्णन हरिवर्ष युगल क्षेत्र जैसा समझें) नरकांता नदी के पश्चिम और नारीकांता नदी के पूर्व दिशा में इस क्षेत्र में गंधापाती नामक वृत्त वैताढ्य पर्वत है। इसमें बहुत से कमल गंधापाती वर्ण जैसे रक्त वर्ण के हैं, इस पर पद्म नामक एक पल्योपम आयुष्य वाला देव बसता है। यह रम्यक क्षेत्र बहुत रमणीय, मनोहर है, वहां रम्यक नामक देव बसता है, इससे इसका शाश्वत नाम है।

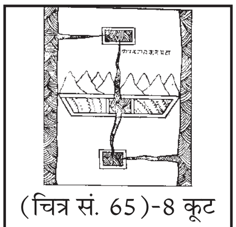

(चित्र सं. 65)-8 कूट का रुक्मी पर्वत

रुक्मी (रूपी) पर्वत- रम्यक् वर्ष क्षेत्र के उत्तर दिशा में और हेरण्यवत् क्षेत्र के दक्षिण दिशा में रुक्मी नामक पर्वत है (महाहिमवंत जैसा वर्णन है)। इसकी जीवा उत्तर में और धनुपीठिका दक्षिण में गिनना। यह महा हिमवंत से विशेष फर्क है। यहां महापुंडरीक नामक द्रह है, इसमें से नरकांता नदी दक्षिण में से पूर्वोक्त रोहितांशा की तरह पूर्व दिशा में जाती है, तथा रूप्यकूला नदी उत्तर दिशा से निकलकर (हरिकांता जैसे) पश्चिम दिशा में जाती है।

रुक्मी पर्वत पर 8 कूट है 1. सिद्धायतन कूट 2. रुक्मी कूट 3. रम्यक कूट 4. नरकांता कूट 5. बुद्धि कूट 6.रूप्यकूला कूट 7. हेरण्यवत कूट 8. मणिकांचन कूट। ये सभी कूट 500-500 योजन के हैं। रूपा मय पर्वत है, रूपा जैसी कांति वाला है। यहां रुक्मी नाम का महर्द्धिक देव पल्योपम आयुष्य वाला है, इससे रुक्मी शाश्वत नाम है।

हेरण्यवत युगल क्षेत्र- रुक्मी पर्वत के उत्तर और शिखरी पर्वत के दक्षिण दिशा में हेरण्यवत नामक युगल क्षेत्र है। यहां जीवा दक्षिण में तथा धनुष्य पीठिका उत्तर में जानना यह हिमवंत क्षेत्र से फरक है। यहां सुवर्णकूला महानदी के

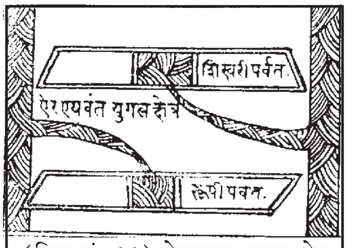

(चित्र सं. 66)-हेरण्यवत युगल क्षेत्र

पश्चिम में और रूप्यकूला महानदी के पूर्व में हेरण्यवत क्षेत्र के मध्य भाग में माल्यवंत वृत्त वैताढ्य पर्वत है (वर्णन शब्दापाती वृत्त वैताढ्य जैसा समझना) इसके कमल माल्यवंत जैसी प्रभा, कांति के है, माल्यवंत वर्णी है, माल्यवंत देव एक पल्योपम आयुष्य वाला रहता है, तथा हेरण्यवत क्षेत्र यह रुक्मी और शिखरी पर्वत की मर्यादा करने वाला है, नित्य हिरण्य यानि स्वर्ण जैसा प्रकाश है, यहां हेरण्यवत देवता रहता है, इससे शाश्वत नाम हेरण्यवत है।

शिखरी पर्वत- हेरण्यवत क्षेत्र के उत्तर में और एरवत क्षेत्र के दक्षिण दिशा में शिखरी नामक वर्षधर पर्वत है (लम्बाई आदि वर्णन चुल्ल हिमवंत पर्वत समान) दक्षिण में जीवा और उत्तर में धनुःपीठिका है। यहां पुंडरीक नामक द्रह है। इसमें से सुवर्णकूला महानदी दक्षिण दिशा से निकलकर रोहितांशा के जैसे पूर्व में समुद्र में मिलती है। जैसे गंगा सिंधु ये दो नदियां भरत क्षेत्र में जाती है, इसी तरह रक्ता और रक्तवती ये दो नदियां एरवत क्षेत्र में जाती हैं, इसमें से पूर्व दिशा में रक्तानदी और पश्चिम दिशा में रक्तवती नदी है। इस प्रकार सुवर्ण कूला का भी वर्णन जानना, बाकी वर्णन चुल्ल हिमवंत जैसा समझना। शिखरी पर्वत पर 11 कूट है- 1. सिद्धायतन कूट 2. शिखरी कूट 3. हेरण्यवत कूट 4. सुवर्ण कूला कूट 5. सुरादेवी कूट 6. रक्ता कूट 7. लक्ष्मी कूट 8. रक्तावती कूट 9. ईलादेवी कूट 10. एरवत कूट 11. तिगिच्छ कूट। ये सभी कूट 500-500 योजन के हैं। बहुत से कूट शिखरी पर्वत के संस्थान युक्त हैं, सभी संपूर्ण रत्नमय हैं, यहां एक पल्योपम आयुष्य वाला शिखरी देव बसता है, अतः इसका शिखरी नाम शाश्वत है।

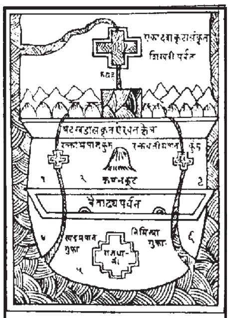

(चित्र सं. 67)-शिखरी पर्वत 11 कूट वाला

एरवत क्षेत्र- शिखरी पर्वत के उत्तर तथा उत्तर दिशा के लवण समुद्र की दक्षिण दिशा में एरवत (एरावत) नामक क्षेत्र है। यहां ठूंठ, वृक्ष, कांटे वगैरह भरत क्षेत्र जैसे बहुत है। सारा वर्णन भरत क्षेत्र जैसा समझना। यहां एरवत (एरावत) नामक चक्रवर्त्ती होता है, भरत क्षेत्र में भरत नामक चक्रवर्त्ती होते हैं। यह फर्क है। यहां एरवत नामक देवता रहता है, इससे इसका शाश्वत नाम एरवत है।

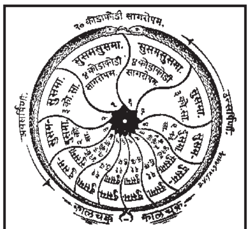

(चित्र सं. 68)-कालचक्र

कालचक्र

इस जंबूद्वीप के भरत, एरवत, हेमवय, हेरण्यवय, हरिवर्ष, रम्यक वर्ष, देवकुरु, उत्तर कुरु और महाविदेह क्षेत्र इन सभी क्षेत्रों का वर्णन अब तक किया है। परन्तु इन क्षेत्रों में काल कैसा और किस प्रकार प्रवर्त्तता है? यह प्रश्न है, उत्तर में शास्त्रकारों ने बताया है कि इनमें से कुछ क्षेत्रों में काल परिवर्त्तन शील (बदलता रहता) है, कुछ क्षेत्रों में एक सरीखा रहता है। इसको समझने के लिए **कालचक्र** जानना जरूरी है-

कालचक्र यह कोई वास्तविक चक्र नहीं है, परन्तु जिस प्रकार चक्र चलते चलते या घूमते घूमते अमुक स्थान पर पहले था वैसा भाग आ जाता है, जैसा काल अभी है, वैसा अमुक समय पश्चात फिर आयेगा, इस प्रकार होने से इस काल को चक्र के रूप में गिना है, माना है। काल चक्र समझने के लिए हमें हमारे समक्ष गाड़ी के पहिए को रखना चाहिए, जैसे गाड़ी का पहिया चलता है, वैसा काल चक्र चलता है। जिस प्रकार गाड़ी चलती है, तब

पहिया घूमता है, उसके आरे ऊपर नीचे होते हैं, उसी प्रकार कालचक्र में भी अनुक्रम से ऊपर नीचे आरे आते हैं। और सर्पिणी (सर्प जाति की स्त्री) का शरीर शुरूआत में जाडा और पूंछड़ी पतली होती है, दो सर्पिणी से संपूर्ण चक्राकार बनता है, ऐसे ही अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी दोनो मिलकर कालचक्र कहलाता है।

कालचक्र में नीचे जाते आधे भाग को अवसर्पिणी काल और ऊपर जाते भाग को उत्सर्पिणी काल कहते हैं। भरत और एरवत क्षेत्र में इस प्रकार काल परिवर्त्तन होता है। बाकी क्षेत्रों में अवस्थित काल है। इसीलिए मुख्यतः भरत-एरवत क्षेत्र को लक्ष्य करके ही कालचक्र का वर्णन किया है। गाड़ी के पहिए में धुरी से लोहे के चक्र (धो) या वाट तक का एक-एक आडा लकड़ा जिसे आरा कहते हैं, यहां इन आरों की संख्या बारह है। यानि कालचक्र के अवसर्पिणी काल के आधे भाग में 6 आरे, और उत्सर्पिणी काल के आधे भाग में 6 आरे यों कुल 12 आरे होते हैं। इनको लोकभाषा में पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा, पांचवां और छठा आरा कहते हैं। शास्त्रीय भाषा में इनके अलग नाम दिये है, जिस प्रकार अवसर्पिणी काल में ''सुखम-सुखम''- जिस काल में बहुत बहुत सुख हो वह पहला आरा। सुखम- जिस काल में बहुत सुख हो, परन्तु बहुत बहुत नहीं उसे दूसरा सुखम आरा। सुखम दुःखम- जिस काल में सुख बहुत हो और दुःख थोड़ा हो वह तीसरा सुखम दुःखमा आरा। दुःखम सुखमा- जिस काल में दुःख बहुत हो, सुख कम हो वह चौथा आरा। दुःखमा- जिस काल में दुःख बहुत हो परन्तु अत्यधिक (बहुत-बहुत) न हो वह पांचवा आरा। दुःखम दुःखमा- जिस काल में दुःख बहुत-बहुत (अत्यधिक) हो वह छठा आरा कहलाता है। अवसर्पिणी काल में धीरे-धीरे आगे चलते, काल बीतते अनक्रम से- आयुष्य, बल, पृथ्वी के रस कस वगैरह घटते जाते हैं। उत्सर्पिणी में अनुक्रम से बढ़ते जाते हैं।

इन आराओं में से देवकुरु, उत्तर कुरु क्षेत्र में हमेशा प्रथम आरे सुखम सुखमा जैसा भाव प्रवर्त्तता है। हरिवर्ष- रम्यक वर्ष में सदाकाल दूसरा सुखमा आरा जैसा काल प्रवर्त्तता है। हेमवय-हेरण्यवय में हमेशा तीसरा सुखम दुःखमा आरा जैसा वातावरण रहता है। महाविदेह क्षेत्र में नियमित चौथा दुःखम सुखमा आरा जैसा भाव रहता है। भरत और एरवत क्षेत्र में नियमित काल चक्र के 6-6 आरे रूप परिवर्तन होते रहते हैं। यानि इन दोनों क्षेत्रों में एक से 6 और 6 से 1 आरे की स्थिति क्रमशः बनती रहती है। कालचक्र 20 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम वर्ष का होता है। यानि 10 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम का अपसर्पिणी काल और उतना ही उत्सर्पिणी काल होता है। यों अनंत कालचक्र आज तक हुए हैं और अनंत काल तक होते रहेंगे।

सुखम सुखमा नामक पहला आरा 4 क्रोड़ा क्रोड़ी सागरोपम वर्ष का है, इस आरे में अवगाहना (ऊंचाई देहमान) जघन्य तीन गाऊ कुछ न्यून उत्कृष्ट तीन गाऊ होती है। जघन्य आयुष्य तीन पल्योपम कुछ न्यून उत्कृष्ट तीन पल्योपम होता है। उस समय के मनुष्यों के 256 पसलियां होती है, वज्रऋषभ नाराच संहनन, सम चौरस संस्थान (आकार) होता है। उस समय के मनुष्यों को तीन दिन के बाद खाने की इच्छा होती है, तब अत्यल्प प्रमाण से आहार करते हैं।

इस आरे में उतरते आरे दो गाऊ देहमान, दो पल्योपय आयुष्य, 128 पसलियां होती है। इस आरे में धरती की मीठास मिश्री समान होती है, उतरते आरे शक्कर जैसी होती है। इस आरे में सभी मनुष्य और तिर्यंच (गर्भज) युगलिया धर्म पालते हैं। इस समय मनुष्य 10 कल्पवृक्षों से जीवन यापन करते है कल्पवृक्षों से इच्छित वस्तु प्राप्त कर आनंद मानते है, ये 10 प्रकार के कल्पवृक्ष इस प्रकार है-

मत्तंगाय, भिंगा, तुडियंगा, दीव, जोई, चित्तगाय।
चित्तरसा, मणवेगा, गिहगारा, अणियगणाओ।।

1. **मत्तंगा**- मद उत्पन्न हो, ऐसा रसवाला वृक्ष।

2. **भिंगा**- कुंभ, थाल वगैरह भोजन देने वाला वृक्ष।

3. **तुडियंगा**- मीठा, मधुर, राग-रागनियां सुनाने वाला वृक्ष।

4. **दीव**- दीपक जैसा प्रकाश करने वाला वृक्ष।

5. **जोई**- सूर्य जैसा तेज देने वाला कल्पवृक्ष।

6. **चित्तंगा**- बहुत तरह के मनोज्ञ फूल देने वाला वृक्ष।

7. **चित्तरसा**- बहुत प्रकार के सरस आहार देने वाला कल्पवृक्ष।

8. **मणवगा**- अनेक प्रकार के मणिरत्न जड़े तरह तरह के गहने देने वाले कल्पवृक्ष।

9. **गिहगारा**- तरह तरह के गृह-मकान के आकार के कल्पवृक्ष, 42 मंजिल रूप के मकानादि रूप भी कल्पवृक्ष होते हैं।

10. **अनियगणा**- नाक की वायु से उड़ सके, ऐसे बारीक वस्त्र देने वाले कल्पवृक्ष।

इन 10 प्रकार के कल्पवृक्षों से उस समय के युगलियों की आवश्यकता की पूर्ति होती है। उनको असि मसि कृषि ये तीन प्रकार के व्यापार करने की आवश्यकता नहीं होती। ये कल्पवृक्ष वनस्पति रूप होते हैं, पृथ्वी रूप नही, इन वृक्षों की मीठास चक्रवर्त्ती की खीर से भी स्वादिष्ट होती है। इन 10 कल्पवृक्षों के अतिरिक्त भी कईं तरह के अन्य वृक्ष भी होते हैं।

युगलियों की स्वयं की आयु के 6 माह बाकी रहे, तब एक युगल को जन्म देकर पालन पोषण करते हैं। बालकों का उठना गिरना, पेट घसीटकर चलना, घुटनों के बल चलना, खड़ा होना ये सभी अवस्थाएं 49 दिन में हो जाती है, उसके बाद ये बालक भोग समर्थ और स्वतंत्र विहारी होते हैं। माता पिता भी बच्चों का ध्यान छोड़ देते है, उन्हे बालकों के प्रति ममत्व नहीं रहता है। पालन पोषण पूरा होने के बाद धीरे धीरे 6 माह पूर्ण होने पर माता पिता खांसी, छींक, उबासी आने पर मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं। देवता उनके शरीर का निहरण करते हैं। समुद्र में फेंक देते हैं (अनुभवी कहते हैं)। माता पिता मरकर देवगति प्राप्त करते हैं। आजकल जिस प्रकार अमुक उम्र होने पर भोग भोगने में समर्थ होते है, ऐसा युगलियों के लिए उम्र वृद्धि होना आवश्यक नहीं होता, ये युगलिया स्वतंत्र विहारी होते ही 49 दिन में युवावस्था प्राप्त करते हैं। सभी गर्भज तिर्यंच भी इस आरे में युगलिया ही होते हैं। उस समय तिर्यंच भी अहिंसक वृत्ति वाले होने से शिकार नहीं करते हैं। परन्तु कल्पवृक्ष के फल-फूल खाते हैं, इस वृत्ति के कारण वे पशु भी दूसरे देवलोक तक जा सकते हैं।

ये सभी युगलिये अल्प राग द्वेष अल्प ममत्व वाले होते हैं, इस आरे में ईर्ष्या, झगड़े, दुश्मनी, वृद्धावस्था, रोग नहीं होते। पूर्व के दान पुण्य के प्रताप से सुख भोगते हैं। कुरुपता आदि नहीं होती।

इस आरे के मनुष्यों में पद्मकमल जैसी सुगंध और सुगंधी श्वासोच्छवास होती है। निमित्त शास्त्रों में बताये अनुसार उत्तम लक्षण युक्त अंगोपांग होते है। अल्पकषायी होते हैं। शालि, गेहूं आदि अनाज पैदा होता है, परन्तु मनुष्य उनका आहार नहीं करते, कल्पवृक्षों के फल फूलों का आहार करते हैं, सारी जरूरते कल्पवृक्षों से पूर्ण हो

जाती है। हाथी, घोड़ा आदि पशु होते है, परन्तु वे सवारी के काम में नहीं आते। सभी अहमिन्द्र जैसे होते है। डांस, मच्छर, मांकड़ आदि उपद्रव करने वाले क्षुद्र जंतु नहीं होते। सूर्य ग्रहण चन्द्र ग्रहण भी नहीं होते। तिर्यंच पंचेन्द्रिय का आयुष्य सभी आरों में अलग अलग होता है। हाथी आदि का मनुष्य जितना, घोड़े आदि का चौथा भाग का, बकरे आदि आठवां भाग, गाय पाडा ऊंट आदि पांचवा भाग, कुत्ते आदि दसवां भाग आयुष्य वाले होते हैं।

पहला आरा पूर्ण होने पर सुखमा नामक **दूसरा आरा** लगते हीं वर्ण, गंध, रस, स्पर्श के पर्यव अनंत-अनंत गुणा कम हो जाते हैं। यह आरा तीन क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम का होता है। इस समय मनुष्य का देहमान दो गाऊ हो जाता है, उतरते आरे एक गाऊ रह जाता है। यह आरा शुरू होते समय मनुष्यों के 128 पसलियां होती है, पूर्ण होते समय कम होते-होते 64 पसलियां रह जाती है। आयुष्य शुरू में दो पल्योपम होता है, पूर्ण होते समय एक पल्योपम रह जाता है। वज्रऋषभ नाराच संहनन् तथा समचतुरस्र संस्थान होता है। मनुष्यों को दो दिन के अन्तर से आहार की इच्छा होती है। **अत्यल्प प्रमाण** आहार करते हैं। धरती की मीठास प्रारंभ में शक्कर जैसी परन्तु उतरते आरे गुड़ जैसी होती है। इस आरे में भी 10 कल्पवृक्ष होते हैं, जो मन वांछित सुख देते हैं। एक युगल के एक युगल संतान होती है, जिसका 64 दिन तक पालन पोषण करते हैं, ये युगल माता पिता यहां से मरकर देवगति में जाते हैं। इस आरे में भी लड़ाई, झगड़ा, दुश्मनी आदि नहीं होती, सुन्दर अंगोपांग होते हैं। पूर्व के दान-पुण्य के प्रभाव से सभी युगलिया सुख भोगते हैं।

दूसरा आरा पूर्ण होने पर सुखम दुःखमा **तीसरा आरा** शुरू होता है, वर्ण गंध, रस, स्पर्श के पर्यव अनंत-अनंत गुणा कम होते जाते हैं। यह दो क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम का होता है। इस आरे में देहमान एक गाऊ, एक पल्योपय आयुष्य होता है, उतरते आरे 500 धनुष देहमान तथा एक क्रोड़ पूर्व वर्ष आयुष्य मात्र रह जाता है। वज्र ऋषभ नाराच संहनन्, समचतुस्त्र संस्थान होता है। 64 पसलियां होती है, उतरते आरे 32 पसलियां होती है। एक दिवस के अन्तर से आहारेच्छा होती है। **इच्छा प्रमाण** अत्यल्प आहार करते हैं। दस कल्पवृक्ष युगलियों की जरूरतें पूरी करते हैं। युगलिया तरीके से जीवन जीते है, युगलिया संतान का 79 दिवस तक पालन पोषण करते हैं। इर्ष्या, वेर, झगड़े, नहीं होते। देवगति में जाते है। पूर्व जन्म के दान पुण्य से जीव फल प्राप्त करते हैं।

इस प्रकार तीसरे आरे में युगल धर्म का पालन करते करते तीसरे भाग में पल्योपम का आठवां भाग बाकी रहता है तब, सुमति आदि से ऋषभ तक 15 कुल कर (कुल, लोक मर्यादा, करने, कराने वाले) होते हैं। $66666666666666\frac{2}{3}$ यानि 66 लाख क्रोड़, 66 हजार क्रोड़, 666 क्रोड़, 66 लाख, 66 हजार, 666 सागर और एक सागर का तीन में से दो भाग इतने वर्षों का एक भाग होता है। कालक्रम से युगलों में ममत्व, रागद्वेष वगैरह दुर्गुण बढ़ने से अपराधादि रोकने की आवश्यकता पड़ती है। उस समय ज्यादा बुद्धिशाली को उच्च पदासीन करते हैं, इसलिए वे बुद्धिवान युगलिये कुलकर कहलाते हैं। प्रथम पांच कुलकर अपने शासन में ''ह'' कार नीति से दंड दिया करते है। द्वितीय पांच कुलकर शासन में ''म'' कार नीति प्रयोग करते है, अन्तिम पांच कुलकर अपने समय में ''धिक्कार'' नीति-शिक्षा रूप उपयोग में लेते हैं।

उसके बाद भरत चक्रवर्त्ती के शासन काल में चौथी परिभाषण (बुलाकर कहना, चेतावनी देना, धमकाना आदि) पांचवी मंडलबंध (अमुक समय तक रोक कर रखना) छठीं चारक (जेल में डालना) सातवी 6 विच्छेद (शरीर के अवयव छेदन) इन चार प्रकार की दण्ड नीति युक्त राज्य शासन व्यवस्था की जाती है।

तीसरे आरे के 84 लाख पूर्व और तीन वर्ष साढ़े आठ माह बाकी बचते है, तब पंद्रहवें कुलकर श्री वृषभ का जन्म हुआ। उनका 84 लाख पूर्व वर्ष का आयुष्य था। 20 लाख पूर्व तक कुमारावस्था में रहे, 63 लाख पूर्व वर्ष तक राज्य किया एक लाख पूर्व वर्ष तक साधु अवस्था में रहे। तीसरे आरे के 3 वर्ष साढ़े आठ माह शेष रहे, तब श्री आदिनाथ मोक्ष पधारे, सिद्ध हुए। पांचवी गति की शुरूआत इस काल में ऋषभदेव प्रभु के समय हुई।

जीव जब एक से दूसरी गति में जाता है, तब अविग्रह या विग्रह गति से जाता है। विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः (तत्वार्थ सूत्र 2-29) एक समयोऽविग्रहः (तत्वार्थ सूत्र 2-30) इस तत्वार्थ सूत्र और शास्त्रानुसार जीव जब अविग्रह गति करता है, तब एक समय लगता है, और विग्रह गति में अधिकतम चार समय लगते हैं। मोक्ष जाने वाली आत्मा के एक समय की अविग्रह गति होती है। जबकि संसारी जीवों के अविग्रह या विग्रह दोनों में से एक गति होती है। आदिनाथ प्रभु अविग्रह गति से एक समय में सिद्ध हुए।

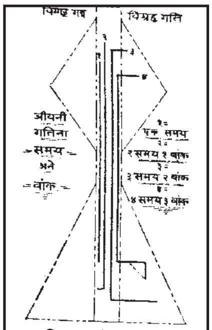

(चित्र सं. 69)-
सूत्रानुसार विग्रहगति

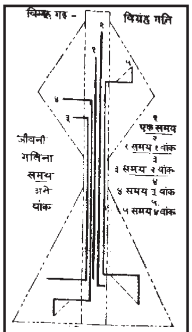

(चित्र सं. 70)-
ग्रंथानुसार विग्रहगति

ऋषभदेव की राज्य व्यवस्था के समय बादर अग्नि उत्पन्न हुई, पुरुष की 72 और स्त्री की 64 कला लोगों को अलग अलग सिखाई। इस प्रकार इस अवसर्पिणी काल में उनके समय से सही रूप से कर्म भूमि की शुरूआत हुई। सर्व विरति पणे की शुरूआत प्रभु की दीक्षा से हुई। प्रथम देशना के समय चतुर्विध संघ की स्थापना हुई। श्री ऋषभदेव इस भूमि पर कर्म और धर्म की आदि करने वाले होने से उन्हे आदिनाथ भी कहा जाता है। तीसरे आरे के अंत के तीसरे भाग में 6 संहनन 6 संस्थान होते है। जीव पांचों गति में जा सकता है, यों तीसरे आरे के अंतिम चरण में मोक्ष जाने, सिद्ध बनने योग्य भूमि बनती है।

तीसरा आरा पूर्ण होने के बाद दुःखम सुखमा नामक **चौथा आरा** प्रारंभ होता है, उस समय वर्ण, गंध, रस और स्पर्श के पर्यव अनंत-अनंत गुणा कम होते जाते हैं। यह आरा एक क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम वर्ष में 42 हजार वर्ष कम का होता है। इस आरे में मनुष्य का आयुष्य जघन्य अन्तर्मुहुर्त उत्कृष्ट क्रोड़ पूर्व वर्ष का होता है। देहमान जघन्य अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 500 धनुष का होता है। इस आरे में 6 संहनन 6 संस्थान होते है। मनुष्यों के 32 पसलियां उतरते आरे 16 पसलियां होती है। इस आरे में प्रतिदिन आहार की इच्छा होती है। पुरुष के 32 कवल स्त्री के 28 ग्रास का आहार होता है।

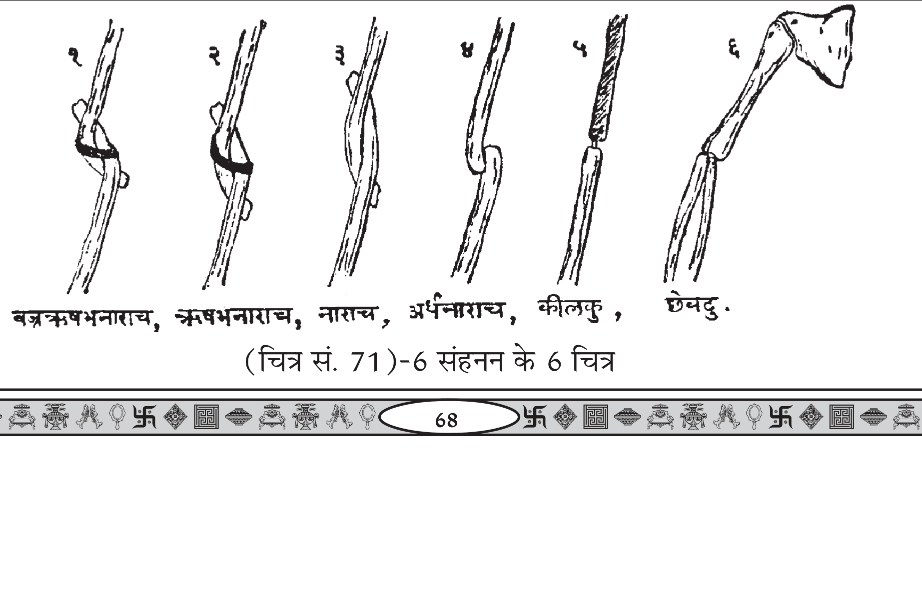

(चित्र सं. 71)-6 संहनन के 6 चित्र

इस आरे में अरिहंत वंश, चक्रवर्त्ती वंश, दशार वंश ये तीन वंश उत्पन्न होते हैं। इस आरे में दूसरे से चौबीसवें तीर्थंकर, दूसरे से बारहवें यों 11 चक्रवर्त्ती तथा नौ बलदेव, नौ वासुदेव, नौ प्रति वासुदेव ये 61 श्लाघनीय उत्तम पुरुष उत्पन्न होते हैं। जब जब वासुदेव उत्पन्न होते है, तब कुतुहुल पैदा करने, क्लेश कराने वाले ब्रह्मचारी नारद भी उत्पन्न होते है, ये नारद राजाओं के अन्तःपुर में जा सकते हैं, गगन गामिनी विद्या लब्धि वाले होते हैं, राजा उनका सम्मान करते हैं, प्रश्न पूछते है, जवाब में नारद एक दूसरे में क्लेश, कुतुहुल पैदा हो ऐसा कहते है (श्री ज्ञातासूत्र में नारद का यह वर्तन अवरकंका 'अमरकंका' नामक पहले श्रुत स्कंध के अध्ययन में देखने मिलता है)। तीसरे आरे में पहले तीर्थंकर और पहले चक्रवर्त्ती यों दो उत्तम पुरुष तथा चौथे आरे में 61 श्लाघनीय यों 63 श्लाघनीय उत्तम पुरुष उत्पन्न होते हैं। इस आरे में अन्तिम तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी हुए है। चौथे आरे के 3 वर्ष साढ़े आठ मास बाकी रहते भगवान श्री महावीर स्वामी ने सिद्ध गति प्राप्त की। उनका शासन अभी भी जयवंत वर्त्तता है।

चौथा आरा पूर्ण होने के बाद **21 हजार वर्ष का दुःखमा नामक पांचवां आरा** प्रारंभ होता है। यह आरा शुरू होते वर्ण, गंध, रस और स्पर्श के पर्यव अनंत अनंत गुणा कम हो जाते है। इस आरे के शुरूआत में बहुत हाथ की (सामान्यतया 7 हाथ) ऊंचाई होती है, उतरते आरे एक हाथ देहमान रह जाता है। इस आरे के प्रारंभ में 100 वर्ष की आयु से अधिक और उतरते आरे बीस वर्ष आयुष्य रह जाता है। इस आरे के प्रारंभ में 6 संहनन 6 संस्थान परन्तु उतरते आरे सेवार्त (छेवट) संहनन और हुण्डक संस्थान मात्र रहता है। शुरू में 16 पसलियां उतरते आरे में 8 पसलियां होती है। इस आरे में मनुष्यों को दिन-प्रतिदिन आहारेच्छा होती हैं। शरीर प्रमाण आहार करते हैं। शुरूआत में धरती की मिठास ठीक ठीक परन्तु उतरते आरे कुम्हार के भाड़ की छार जैसी (भट्टे के छारे) होती है। इस आरे में 4 गति होती है। परन्तु चौथे आरे में जन्मा हुआ पांचवे आरे में मोक्ष जा सकता है, परन्तु पांचवे में जन्मा मोक्ष नहीं जाता। इसलिए चार गति कही है।

पाँचवे आरे में तीस बातों में अशुभता होती है-1. नगर गांव सरीखे 2. गांव श्मसान सरीखे 3.सुकुलोत्पन्न दास दासी वत् 4. राजा यमदूत की तरह क्रूर 5. कुलीन स्त्रियां दुराचारिणी 6. पुत्र अनाज्ञाकारी 7. शिष्य गुरु के निन्दक 8. शीलवान मनुष्यों को दुःख 9. कुशील सुखी 10. सांप, बिच्छु, डांस, मच्छर की अधिक उत्पत्ति 11. दुष्काल बहुत 12. ब्राह्मण लोभी 13. हिंसा को धर्म बताने वाले बहुत 14. एकमत के अनेक मतान्तर 15. मिथ्यात्व की वृद्धि 16. देवदर्शन दुर्लभ 17. वैताढ्य पर्वत के विद्याधरों का मन्द प्रभाव 18. दूध बादाम आदि में स्निग्धता की कमी 19. पशु अल्पायु 20. पाखंडी पूजा 21. साधुओं के चौमासे के योग्य क्षेत्रों की कमी 22. साधु की 12 श्रावक की 11 पड़िमाधारी नहीं 23. गुरु शिष्यों को नहीं पढ़ायेंगे 24. अविनीत शिष्य 25. अधर्मी, कदाग्रही, धूर्त्त, दगाबाज, क्लेशकारी लोग ज्यादा होंगे 26. धर्मात्मा, सुशील, सरल स्वभावी कम होंगे 27. उत्सूत्र प्ररूपणा करने वाले, लोगों को भ्रम में डाल फंसाने वाले, नाम मात्र के लिये धर्म करने वाले धर्मात्मा ज्यादा होंगे 28. आचार्य अपनी-अपनी सम्प्रदाय पर आत्मस्थायी (अपनी जमाने वाले) और पर उत्थापी (अन्य को उखाड़ने वाले) होंगे 29. म्लेच्छ राजा अधिक होंगे 30. लोगों की धर्म पर प्रीति कम हो जाएगी।

इस आरे के अन्त में जैन धर्म, अन्य धर्म, राजनीति और बादर अग्नि का विच्छेद होगा। (यहां कोई अन्तिम दिन कोई अन्तिम वर्षों में ऐसा होना मानते हैं) इस अन्तिम समय में भरत-एरावत में मनुष्य, पशु, पक्षी कई जगह अत्यन्त करूण आक्रंद करते होते है। हाहाकार (अत्यन्त दुःखमय स्थिति) उत्पन्न होता है। डरावना, कोलाहल युक्त काल होता है। बहुत तीव्र कठोर स्पर्श वाली हवाएं चलती है। जो मनुष्यों को असह्य लगती है। अशुभ वृष्टियों,

हवाओं से, नदी, द्रह, कुंड, जलाशय वगैरह सूख जाते है, खड्डे टेकरे, कांटे, कीचड़, धूल मिट्टी वाली जमीन हो जाती है। असह्य गरमी भी पड़ती है, संवर्त्तक हवाओं से विनाश होता है।

इस आरे के अन्त भाग में भरत-एरवत में अत्यंत ठंडी अत्यंत गर्मी से बहुत से मनुष्य मृत्यु को प्राप्त करते हैं। बाकी रहे जीव वैताढ्य पर्वत की दक्षिण तरफ की गंगा सिंधु के किनारे आये 9-9 बिलों में रहते हैं। दक्षिण भरतार्द्ध में 36 तथा उत्तर भरतार्द्ध में भी 36 यों 72 बिलों में रहते हैं। इसी प्रकार एरवत में भी मनुष्य रक्ता रक्तवती के किनारे पर आये 36-36 बिलों में रहते हैं। पक्षी वैताढ्य पर्वत वगैरह स्थलों में रहते है, ये बाकी बचे मनुष्य-तिर्यंच बीज रूप कहलाते हैं। इन बीज रूप जीवों से उत्सर्पिणी काल में मनुष्य तिर्यंच उत्पन्न होते है। उस समय चारों नदियों (गंगा, सिंधु, रक्ता, रक्तवती) का प्रवाह पट गाड़ी के चीले जितना छोटा हो जाता है। हालांकि कुंड से निकलता पानी नदी का प्रवाह 6¼ योजन होता है, परन्तु उस समय के ताप, गरमी वगैरह प्रभाव से सूख जाने से नदियों का प्रवाह कम (छोटा) हो जाता है। नदियों का प्रवाह का यह पानी भी छीछरा होता है, माछले मछलियां बहुत होते है, मानो नदिया माछलों से छलकाती हो। भरत, एरवत के कुल 144 बिल जंबूद्वीप में होते हैं।

इस पांचवेंआरे में आसाढ़ सुद पूनम के दिन शक्रेन्द्र का आसन चलायमान होगा। अवधि ज्ञान उपयोग से शक्रेन्द्र को ज्ञात होगा कि आज पांचवा आरा पूर्ण होगा, कल से छठा आरा लगेगा। यह कारण जानकर इंद्र आकर यहां पर द्युपसह नामक साधु, फाल्गुणी नामक साध्वी, जिनदास नामक श्रावक, नागश्री नामक श्राविका को कहेगा, कि कल से छठा आरा शुरू होने वाला है, अतः धर्म आराधना कर लो। यह सुनकर चारों जीव आलोयणा करके, प्रतिक्रमण करके, निंदके निःशल्य होकर के सर्व जीव राशि को खमाके संथारा करके एक भवावतारी होंगे।

पांचवा आरा पूर्ण होने पर दुःखम दुःखमा नामक **छठा आरा** लगता है। वर्ण, गंध, रस और स्पर्श के पर्यव अनंत-अनंत गुणा हीन होते हैं। यह आरा 21 हजार वर्ष का होता है। भयंकर दुःखकारक है। पांचवे आरे के अंत में जो बाते बताई, लगभग वे बाते इस काल में रहती है। मनुष्यों का देहमान लगते आरे एक हाथ उतरते मुंड हाथ होता है। 20 वर्ष आयु शुरू में होती है, अंत में 16 वर्ष का आयुष्य होता है। एक छेवट संहनन् हुंडक संस्थान होता है। इस आरे के शुरू में 8 पसलियां होती है, उतरते आरे 4 पसलियां होती है।

इस आरे में मनुष्य गंगा सिंधु वगैरह बड़ी नदियों के किनारे के बिलों में रहते हैं। ये सूर्योदय के बाद बिलों में से जल्दी जल्दी बाहर आकर दौड़कर नदी में से माछले पकड़ कर किनारे पर लाकर गाड़ देते हैं, एक मुहुर्त्त पूर्ण होते-होते जल्दी से वापस बिलों में घुस जाते हैं, सुबह से सूर्य बहुत तपता है, भयंकर गर्मी पड़ती है, रात्रि में भयंकर ठंड पड़ती है, जिससे बाहर रहा नहीं जाता। नदी किनारे की रेती में रखे, रेती में घुसाये हुए (रेती में गाड़ देने से) दिन की गर्मी और रात की ठंडी से सूख जाते है, वे कलेवर बिना रस के बन जाते हैं, ऐसे सूखे माछले वे मनुष्य खाते हैं, जीवित और बिना सूखे माछले पचते नहीं, जठराग्नि शांत नहीं होती। इस प्रकार उनका जीवन चलता है।

वे मनुष्य काले, कुरुप, कुदर्शनी होते हैं, आचार-विचार का ज्ञान-मान नहीं होता। मां, बहन, बेटी, स्त्री ऐसा भान नहीं होता, छोटे बड़ों की मर्यादा नहीं होती, तिर्यंच जैसी व्यभिचारी वृत्ति वाले होते हैं। स्त्रियां छोटी उम्र में ही युवान हो जाती है, अत्यंत विषय वाली होती है, थोड़े आयुष्य में बहुत संतानें होती है, ग्राम सुअर (गडूरा, डुकर) जैसे बहुत संतानों को लिए फिरती है। संतान जन्मने के समय अपार कष्ट होता है। ये मनुष्य किसी भी प्रकार के

व्रत नियम पच्चक्खाण बिना के ही होते हैं। साधारणतया धर्म बिना के ही होते हैं। इस आरे में धर्म तो नहीं होता, परन्तु बीज रूप मनुष्यों में कोई समकित दृष्टि वाला होते हुए भी (समकित के कारण धर्म संज्ञा संभव है) देशविरति या सर्व विरति धर्म का अस्तित्व नहीं होता। ऐसा अतिक्रूर चित्त वाले मनुष्य मरकर साधारणतया दुर्गति में जाते हैं। बीज रूप बिल वासी मनुष्य कोई तुच्छ धान्य वगैरह हलका आहार करता है, ऐसा जीव अक्लिष्ट अध्यवसाय वाला होकर, देवगति में जा सकता है, कोई मनुष्य गति में भी जा सकता है। नदी किनारे तुच्छ धान्य वगैरह की संभावना है। इस प्रकार छठे आरे के भाव संक्षिप्त में वर्णित किये हैं।

इस अवसर्पिणी काल के विपरीत स्वरुप युक्त उत्सर्पिणी काल का पहला आरा दुःषम दुःषमा नाम का है। यह अवसर्पिणी काल के छठा आरा जैसा स्वभाव वाला 21 हजार वर्ष का है। शुरुआत से ही अंत तक वर्ण, गंध, रस, स्पर्श में तथा संहनन, संस्थान, आयुष्य वगैरह भावों में शुभ पणा की वृद्धि होती जाती है। प्रावृष ऋतु वगैरह वृद्धि वाला यह काल शुरू होता है।

21 हजार का यह पहला आरा पूर्ण होने के बाद दूसरा दुःषम नामक 21 हजार वर्ष का, अवसर्पिणी काल के पांचवे आरे जैसा यह (दूसरा) आरा प्रारंभ होता है। इस आरे के प्रारंभ होते ही **पुष्कलावर्त्त** नामक महा मेघ गाज बीज के साथ 7 दिन रात अखंड मूसलाधार बरसता है। इसके कारण आज दिन तक गर्म हुई यह उष्णभूमि शीतल बन जाती है। उसके बाद 7 दिन रात **क्षीर** नामक महामेघ बरसता है। उसके परिणाम स्वरुप शुभ वर्ण, गंध, रस, स्पर्श उत्पन्न होते हैं। इसके पश्चात् 7 दिन रात उघाड़ा (सूखा) रहता है बरसात रुक जाती है। उसके बाद तीसरा **घृत** नामक महामेघ 7 दिन रात बरसता है, जिसके कारण धरती में स्निग्धता (मीठास) उत्पन्न होती है। उसके पश्चात् **अमृत** नामक चौथा महामेघ सात दिन रात बरसता है। उससे गुल्म, लता, वृक्ष, गुच्छ आदि कई तरह की वनस्पतियां तथा 24 जाति के धान्यादि के अंकुर उत्पन्न होते हैं। इस बरसात के पश्चात् फिर सात दिन रात वर्षा रुक जाती है। उसके बाद पांचवा **रस** नामक महामेघ बरसता है यह भी सात दिन रात बरसता है। इस पांचवे बरसात के कारण वनस्पति पांच रस वाली बनती है। जगह जगह वनस्पति ऊगी हुई देखने मिलती है। बिलवासी मनुष्य बाहर निकलकर आनंद मनाते हैं। घूमने फिरने जैसी भूमि लगती है। ऐसी मनमोहक और सुन्दर धरती को देखकर, सभी एक दूसरे को बुलाते हैं, इकट्ठा होते हैं। सभी जगह हरियाली वनस्पति देखकर आनंदित होकर आज से ही मांसाहार नहीं करना, परन्तु वनस्पति आदि का आहार करना यह निश्चय कर लेते है और जो मांसाहार करेगा उसे समुदाय से बाहर कर उसके साथ नहीं रहने का संकल्प (नियम) कर लेते हैं। इस प्रकार बिल वासी मनुष्य अब मांसाहार छोड़कर वनस्पति का आहार करते हैं। काल क्रम से 6 संहनन 6 संस्थान युक्त उत्पन्न होते है, धीरे-धीरे आयुष्य भी बढ़ता जाता है, देहमान भी सात हाथ तक का होता जाता है।

दूसरा आरा पूरा होने पर दुःषम सुषमा नामक तीसरा आरा शुरु होता है। इस आरे में बढ़ते-बढ़ते देहमान 500 धनुष का होता है, आयुष्य बढ़ते-बढ़ते करोड़ पूर्व वर्ष का होता है। इस आरे में पांचवीं गति चालू होती है, यानि जीव सिद्ध गति में जाते हैं, इस प्रकार यह आरा इसके भाव अवसर्पिणी काल के चौथा आरा जैसा होता है।

इस तीसरे आरे के पहले लोक व्यवहार बराबर नहीं था तो फिर अचानक यह किस प्रकार शुरु हुआ? यह विचार उत्पन्न होता है। इस बारे में पूर्वाचार्यों का परम्परा से यह मत है कि जो पहले तीर्थंकर होते है, वे कर्म भूमि की व्यवस्था का व्यवहार नहीं चलाते परन्तु उस क्षेत्र के अधिष्ठायक देव के निमित्त से व्यवहार शुरु होता है।

अथवा उस समय के मनुष्यों में से जिनकी उत्पातिया बुद्धि होती है, ऐसे पुरुष व्यवहार चालू करते है। अथवा जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हो ऐसे पुरुष भी व्यवहार शुरु करते हैं। ग्राम, नगर, राज्य वगैरह की प्रवृत्ति भी इस प्रकार उपरोक्त तरीके से शुरु होती दिखती है। इसलिए कुलकरों की उत्पत्ति का प्रश्न नहीं होता। इस आरे में 23 तीर्थंकर 11 चक्रवर्ती होते हैं एवं 9 वासुदेव 9 बलदेव 9 प्रतिवासुदेव यों कुल 61 श्लाघनीय पुरुष होते हैं।

तीसरा आरा पूरा होने पर सुषम दुःषम नामक चौथा आरा प्रारंभ होता है। यह अवसर्पिणी काल के तीसरे जैसा होता है। दो क्रोड़ा क्रोड़ सागरोपम वर्ष का है। इसके तीन भाग करने से 66666666666666 $\frac{2}{3}$ सागरोपम प्रमाण के पहले त्रिभाग के अंत में राज्य, धर्म, चारित्र धर्म, अन्य धर्म और बादर अग्नि इस भरत-एरवत क्षेत्र की भूमि से विच्छेद हो जाता है। इस आरे के तीन वर्ष और साढ़े आठ मास पूरे होने पर चौवीसवें तीर्थंकर की उत्पत्ति होती है। और एक चक्रवर्त्ती भी जन्मते हैं। उसके बाद दूसरे और तीसरे भाग में युगल धर्म होता है।

चौथा आरा पूर्ण होते पांचवा सुषम और छठा सुषम-सुषम नामक आरा प्रारंभ होता है। इनके सभी भाव अवसर्पिणी के दूसरे और पहले आरे जैसे होते हैं। इस प्रकार 12 आरा रूप ऐसा कालचक्र चलता है। आज तक अनंत कालचक्र इन क्षेत्रों में बीत चुके हैं। भविष्य में भी अनंत बीतेंगे। इसलिए कालचक्र का ऐसा स्वरुप समझकर जो आत्मा धर्म आराधन करेगा, वह सुखी होगा। विशेष भाव जानने के जिज्ञासु कृपया जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र एवं क्षेत्र का वर्णन करते ग्रंथों, एवं सुज्ञ आत्माओं से जानने चाहिए।

छप्पन अन्तर द्वीप- जंबूद्वीप के वर्णन में मनुष्यों की जानकारी मिली। कर्मभूमि, अकर्म भूमि मनुष्यों के अतिरिक्त अन्तरद्वीप के भी मनुष्य हैं। 56 अन्तर द्वीपों में ये मनुष्य रहते हैं। इसलिए इन्हें अन्तरद्वीपा कहते हैं। अन्तः=जल के अन्दर रहे होने से इन द्वीपों को अन्तरद्वीप कहते हैं। अथवा एक-दूसरे से अमुक-अमुक अन्तर में (दूर-दूर) रहे होने के कारण इन द्वीपों को अन्तर द्वीप कहते हैं।

चुल्ल हिमवंत पर्वत से गजदंत के आकार की चार दाढ़ा निकली है, इन चारों दाढ़ाओं के पूर्व और पश्चिम के किनारे (छोर) लवण समुद्र के पानी से स्पर्शित हैं। इन दाढ़ाओं का एक विभाग दक्षिण तरफ बढ़ता-बढ़ता जगती जिस प्रमाण से गोल होती गई है, उसी प्रकार से बढ़ता गया है, उसी तरह दूसरा विभाग उत्तर तरफ बढ़ता-बढ़ता जगती तरफ उसी प्रमाण से गया है। पूर्व समुद्र में जिस प्रकार ये विभाग हुए उसी तरह पश्चिम समुद्र तरफ भी दाढ़ा के उत्तर-दक्षिण विभाग हुए हैं। लवण समुद्र का जहां स्पर्श होता है, वहां से ईशान वगैरह चारों विदिशा (खुणों)ओं में दाढ़ाए गई हैं। ये चार दाढ़ाएं हैं। इनमें से पूर्व छोर की उत्तर तरफ गई ईशान कोण की दाढ़ा यह पहली दाढ़ा कहलाती है। दक्षिण तरफ गई आग्नेय कोण की दाढ़ा दूसरी दाढ़ा कहलाती है। पश्चिम तरफ के छोर की दक्षिण तरफ मुड़ी हुई नेत्रृत्य कोण की दाढ़ा तीसरी और उसी प्रकार उत्तर तरफ मुड़ने वाली वायव्य कोण की दाढ़ा चौथी दाढ़ा कहलाती है।

इन चार दाढ़ाओं में से ईशान कोण तरफ की दाढ़ा पर जगती के छोर से लवण समुद्र में तीन सौ योजन जाने पर तीन सौ योजन लम्बा चौड़ा पहला एकोरुक द्वीप आता है। इस द्वीप का घेराव परिधि (circumferance) 949 योजन से कुछ कम है, इस द्वीप के चारों और एक पद्मवर वेदिका है, उसे घेर कर एक वनखंड भी है।

जंबूद्वीप की जगती जैसी पद्मवर वेदिका और वनखंड है (विशेष वर्णन जीवाभिगम सूत्र और रायप्पसेणिय सूत्र देखें)। यह द्वीप जंबूद्वीप तरफ अढ़ाई योजन उपरांत 20/95 भाग जितना जल ऊपर है। और लवण समुद्र तरफ से दो कोस जितना ऊपर है। यहां के मनुष्य 10 प्रकार के कल्पवृक्षों से जीवन यापन करते हैं। कल्पवृक्षों का

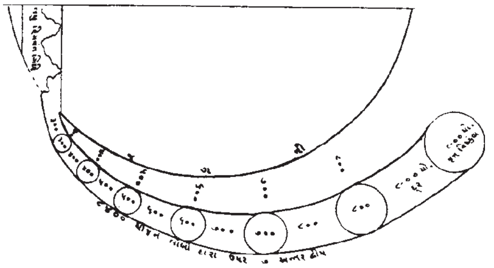

(चित्र सं. 72)-दाढ़ाएं

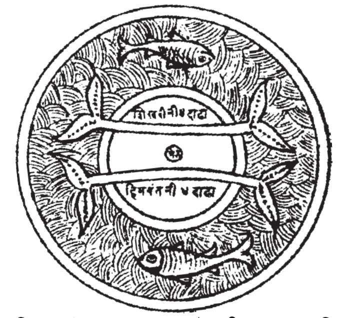

(चित्र सं. 73)-56 अंतरद्वीप दाढ़ा सहित

वर्णन शास्त्रों में अन्तरद्वीपों के वर्णन समय अत्यधिक किया है। सभी पुरुषों के लक्षण भी बताये हैं। यहां तीसरा आरा जैसा भाव वर्त्तता है। इन द्वीपों के मनुष्य और तिर्यंच भी पल्योपम के असंख्यातवे भाग के आयुष्य वाले होते हैं। यहां युगलिया बसते हैं। इन मनुष्यों के 64 पसलिया हेती है, एक दिन के अन्तर से आहार की इच्छा होती है। संतान युगल का 79 दिन पालन पोषण करते हैं। क्षुधा वेदनीय का उदय एकान्तर दिवस से होता है। इसलिए एक दिन छोड़कर ही आहार करते है। परन्तु इच्छापूर्वक समझकर आहार का त्याग नहीं करते, इसलिए तप से होने वाली निर्जरा उन्हें नहीं होती, इच्छापूर्वक आहार छोड़ नहीं सकते। युगल पति की ऊंचाई युगल स्त्री से कुछ ऊंची होती है। युगल संतान का पालन पोषण कर माता पिता आयुष्य पूर्ण कर वे भवनपति या वाण व्यंतर देव में उत्पन्न होते हैं। संक्षेप में भूमि-कल्पवृक्ष वगैरह स्वरूप हेमवंत युगलिया क्षेत्र जैसा है।

इस दाढ़ा में इस द्वीप से 400 योजन आगे जाने पर 400 योजन लम्बा चौड़ा ''हयकर्ण'' नामक दूसरा द्वीप है इसका घेराव 1265 योजन से कुछ कम है। यह भी जंबूद्वीप तरफ 2½ योजन और 20/95 भाग ऊंचा तथा लवण समुद्र तरफ दो कोस जितना जल से ऊपर है। इसी दाढ़ा पर इस द्वीप से 500 योजन जाने पर 500 योजन लम्बा चौड़ा ''आदर्शमुख'' नामक तीसरा द्वीप आता है, घेरावा 1581 योजन है। जंबूद्वीप तरफ जल ऊपर की इसकी ऊंचाई साढ़े तीन योजन 65/95 योजन तथा लवण समुद्र तरफ 2 कोस की है। इसी दाढ़ा पर 600 योजन जाने पर 600 योजन लम्बा चौड़ा चौथा द्वीप ''अश्वमुख'' है, इसका घेरावा 1897 योजन है, जंबूद्वीप तरफ जल से ऊंचाई साढ़े चार योजन और 40/95 भाग तथा लवण समुद्र तरफ दो कोस है। वहां से 700 योजन जाने पर 700 योजन लंबा चौड़ा पांचवा ''अश्वकर्ण'' द्वीप है, जिसका घेरावा 2213 योजन है। जंबूद्वीप तरफ जल से ऊंचाई साढ़े पांच योजन और 15/95 भाग है, लवण समुद्र तरफ दो कोस है। इसी दाढ़ा पर इससे आगे 800 योजन पर 800 योजन लंबा चौड़ा छठा द्वीप ''उल्कामुख'' है जिसका घेरावा 2529 योजन तथा जंबूद्वीप तरफ जल से ऊंचाई साढ़े पांच योजन 85/95 भाग है, लवण समुद्र तरफ से दो कोस ऊंचा है। वहां से 900 योजन आगे जाने पर 900 योजन लम्बा चौड़ा सातवां द्वीप ''धनदंत'' है, जिसका घेरावा 2845 योजन है। जंबूद्वीप तरफ 6½ योजन और 60/95 भाग ऊंचा और लवण समुद्र तरफ दो कोस ऊंचा है।

ये सात द्वीप है, इसी प्रकार की लम्बाई चौड़ाई, अंतर तथा जगती से दूरी और पानी से ऊंचाई वाले सात-सात द्वीप आग्नेय कोण आदि तीनों कोणों की दाढ़ाओं पर है, इस प्रकार-

आग्नेय कोण में जगती से 300 योजन जाने पर 300 योजन लम्बा चौड़ा आभाषिक द्वीप है। वहां से 400 योजन जाने पर 400 योजन लंबा चौड़ा दूसरा गजकर्ण द्वीप है। वहां से 500 योजन जाने पर 500 योजन लम्बा चौड़ा मेंढ़मुख नामक तीसरा द्वीप है। वहां से 600 योजन जाने पर 600 योजन लम्बा चौड़ा ''हस्तीमुख'' चौथा

द्वीप है। वहां से इसी दाढ़ा पर 700 योजन जाने पर 700 योजन लंबा चौड़ा पांचवा सिंहकर्ण द्वीप है। वहां से ८00 योजन आगे ८00 योजन लंबा चौड़ा छठा मेघमुख द्वीप है। वहां से ९00 योजन जाने पर ९00 योजन लंबा चौड़ा सातवां लष्टदंत द्वीप है। प्रमाण सभी वहीं है, सिर्फ नाम फर्क है।

इसी प्रमाण से नेत्रृत्य कोण में पहला वैषाणिक, दूसरा गोकर्ण, तीसरा अयोमुख, चौथा सिंहमुख, पांचवा अकर्ण, छठा विद्युन्मुख, सातवां गूढ़दंत नामक द्वीप है। वायव्य कोण में- नांगोलिक, शुष्कली कर्ण, गोमुख, व्याघ्रमुख, कर्ण प्रावरण, विद्युद्दन्त, शुद्धद्दन्त नामक सात द्वीप है। इस प्रकार चारों विदिशाओं में 28 अन्तर द्वीप हुए।

चारों दाढ़ाओं पर 300-300 योजन दूर जाने पर प्रथम चार द्वीप यह पहला चतुष्क कहलाता है, इसी प्रमाण से 400-400 योजन आगे जाने पर दूसरे चार द्वीप आते है, इन्हे दूसरा चतुष्क कहते है, इसी प्रकार तीसरा, चौथा, पांचवा, छठा, सातवां चतुष्क है। ये 7 चतुष्क के 28 द्वीप हुए। कुल अन्तर द्वीप 56 है, जिनमें से उपरोक्त 28 कहे हैं। जिस प्रकार चुल्ल हिमवंत पर्वत के पूर्व-पश्चिम समुद्र में दाढ़ाए है, उनके 28 द्वीप हुए। ऐसे ही शिखरी पर्वत की चार दाढ़ाए है, उस पर भी अन्य 28 द्वीप है ये सभी मिलाकर 56 अन्तर द्वीप हुए।

नोट : वास्तव में ये कोई दाढ़ाएं आदि नहीं है, परन्तु यहां द्वीपों का भू-भाग ही ऐसी विशेषता युक्त है, जो समुद्र में इतनी-इतनी दूरी पर द्वीप होने से मानों दाढ़ाएं निकली हो ऐसा आभास स्वतः होता है। जगती से दूरी और द्वीपों की लंबाई-चौड़ाई आदि निम्न प्रकार से है।

छप्पन अन्तरद्वीप का कोष्ठक-

1.	अन्तर द्वीप	प्रथम 4 द्वीप	दूसरे 4 द्वीप	तीसरे 4 द्वीप	चौथे 4 द्वीप	पांचवे 4 द्वीप	छठे 4 द्वीप	सातवें 4 द्वीप
2.	जगती से दूर	300 योजन	400 योजन	500 योजन	600 योजन	700 योजन	800 योजन	900 योजन
3.	पहले के द्वीप से दूर	300 योजन जगती से	400 योजन पूर्व के द्वीप से	500 योजन पूर्व द्वीप से	600 योजन पूर्व द्वीप से	700 योजन पूर्व द्वीप से	800 योजन पूर्व द्वीप से	900 योजन पूर्व के द्वीप से
4.	वृत्त विस्तार	300 योजन	400 योजन	500 योजन	600 योजन	700 योजन	800 योजन	900 योजन
5.	जंबू तरफ जल से ऊंचाई	2½ यो. $\frac{20}{95}$ भा.	2½ यो. $\frac{90}{95}$ भा.	3½ यो. $\frac{65}{95}$ भा.	4½ यो. $\frac{40}{95}$ भा.	5½ यो. $\frac{15}{95}$ भा.	5½ यो. $\frac{85}{95}$ भा.	6½ यो. $\frac{60}{95}$ भा.
6.	शिखा तरफ ऊंचाई जल से	2 कोस	2 कोस	2 कोस	2 कोस	2 कोस	2 कोस	2 कोस
7.	काल	तीसरे आरे का अंत जैसा	पूर्वोक्त	पूर्वोक्त	पूर्वोक्त	पूर्वोक्त	पूर्वोक्त	पूर्वोक्त
8-9.	मनुष्य तिर्यंच	युगलिया	युगलिया	युगलिया	युगलिया	युगलिया	युगलिया	युगलिया
10.	पसलियां	64	64	64	64	64	64	64
11.	आहारांतर	एकान्तर	एकान्तर	एकान्तर	एकान्तर	एकान्तर	एकान्तर	एकान्तर
12.	अपत्य पालन	79 दिन	79 दिन	79 दिन	79 दिन	79 दिन	79 दिन	79 दिन
13.	शरीर मान ऊंचाई	800 धनुष	800 धनुष	800 धनुष	800 धनुष	800 धनुष	800 धनुष	800 धनुष
14.	आयुष्य	सभी का पल्योपम का असंख्यातवां भाग		है।				
15.	द्वीप की परिधि	949 योजन	1265 योजन	1581 योजन	1897 योजन	2213 योजन	2529 योजन	2845 योजन

मेरु पर्वत से दक्षिण दिशा में चुल्ल हेमवंत पर्वत से नीचे बताये दिशा के चरमांत में लवण समुद्र में आये अन्तर द्वीप 28 और उनकी दूरी तथा परिधि-

क्र.सं.	दिशा	प्रथम 4 द्वीप	दूसरे 4 द्वीप	तीसरे 4 द्वीप	चौथे 4 द्वीप	पांचवे 4 द्वीप	छठे 4 द्वीप	सातवें 4 द्वीप
1	ईशान	एकोरुक	हयकर्ण	आदर्श मुख	अश्वमुख	अश्वकर्ण	उल्कामुख	धनदंत
2	आग्नेय	आभाषिक	गजकर्ण	मेंढ़मुख	हस्तिमुख	सिंहकर्ण	मेघ मुख	लष्टदंत
3	नैऋत्य	वैषाणिक	गोकर्ण	अयोमुख	सिंहमुख	अकर्ण	विद्युन्मुख	गूढ़दंत
4	वायव्य	नांगोलिक	शुष्कली कर्ण	गोमुख	व्याघ्रमुख	कर्ण प्रावरण	विद्युद्दन्त	शुद्धद्दन्त
5	अवगाहना	300 योजन	400 योजन	500 योजन	600 योजन	700 योजन	800 योजन	900 योजन
6	लम्बाई चौड़ाई	300 योजन	400 योजन	500 योजन	600 योजन	700 योजन	800 योजन	900 योजन
7	परिधि	949 योजन	1265 योजन	1581 योजन	1897 योजन	2213 योजन	2529 योजन	2845 योजन

इसी प्रकार मेरु पर्वत के उत्तर दिशा में शिखरी पर्वत की दाढ़ाओं में यहां ऊपर बताये दिशाओं में इन्हीं नाम और ऋद्धि वाले 28 द्वीप हैं। इस प्रकार दोनों मिलाकर 56 अन्तर द्वीप होते हैं। एकोरुक आदि द्वीपों में रहने वाले मनुष्यों ''तात्स्थ्यात् तद् व्यपदेशः'' को उस प्रदेश के नाम अनुसार उसी नाम से जैसे एकोरुक वालों को एकोरुक मनुष्य कहते हैं। जिस प्रकार भारत में रहने वालों को भारतीय कहते हैं। ऐसा ही समझना।

द्वीपों की लम्बाई चौड़ाई को समझाने के लिए संग्रह गाथाएं-

जस्स य जो विक्खंभो, ओगाहो तस्स तत्तिओ चेव।
पढ़माईण परिरओ, सेसाणं जाण अहिओ।। (जीवाभि. प्र. 3 उ. 3)

संग्रह गाथाएं इस प्रकार-

पढ़मंमि तिन्नि उ सया, सेसाण स उत्तरा नव उ जाव।
ओगाहं विकखंभं, दीवाणं परिरयं वोच्छं ।।1।।

प्रथम चार द्वीप की लम्बाई चौड़ाई 300 योजन की है, दूसरे 4 द्वीप की 400 योजन की है। इस प्रमाण से अनुक्रम से 900 योजन तक लम्बाई चौड़ाई अनुक्रम से सातवें 4 द्वीप की है। अब द्वीपों का घेराव-परिधि-आगे की गाथाओं में-

पढम चउक्क परिरया, बीय चउक्कस्स परिरओ अहिओ।
सोलेहिं तिहि उ जोयण सएहिं, एवमेव सेसाणं ।।2।।

प्रथम (4 द्वीपों) चतुष्क की जितनी परिधि है, उससे दूसरे चतुष्क की परिधि 316 योजन ज्यादा होती है, इस प्रमाण से सातों चतुष्कों की परिधि है।

एगोरुय परिक्खेवो, णव चेव सयाईं अउण पन्नाईं।
बारस पन्नट्ठाईं, हयकण्णाणं हरिक्खेवो ।।3।।

एकोरुक आदि 4 द्वीप की 949 योजन की परिधि है, हयकर्णादि 4 द्वीप की 1265 योजन परिधि है।

पन्नरस एक्कासिया आयंस मुहाण परिरओ होई।
अट्ठारस सत्त नउया, आसमुहाणं परिक्खेवो ।।4।।

1581 योजन का घेरावा आदर्शमुखादि 4 द्वीपों का है, और 1897 योजन परिधि अश्वमुखादि 4 द्वीपों की है।

बावींस तेराई परिक्खेवो, होई आसकण्णाणं।
पणवीस अउणतीसा, अक्कामुह परिरओ होई।।5।।

2213 योजन घेरावा अश्वमुखादि 4 द्वीपों का है, और 2529 योजन का घेराव उल्कामुखादि 4 द्वीपों का है।

दो चेव सहस्साइं, अट्ठेय सया हवंति पणयाला।

धणदंत दीवाणं, विसेस महिओ परिक्खेवो।।6।।

2845 योजन परिधि धनदंतादि 4 द्वीपों की है।

56 अन्तर द्वीप के वर्णन रूप संग्रह गाथाएं-

चुल्ल हिमवंत पुव्वारेण विदिसासु सागरं तिसअे।

गंतूणंतरदीवा, तिन्निसअे होंति वित्थिन्ना ।।1।।

चुल्ल हेमवंत पर्वत के पूर्व और पश्चिम में विदिशाओं में (कोणों में) 300 योजन जाने पर 300 योजन विस्तार वाला पहला अन्तरद्वीप का चतुष्क आता है।

अउणावन्न नवसअे, किंचूणे परिहि तेसिमे नामा।

एगरुग आभासिय-वेसाणी चेव नंगूली ।।2।।

उसकी 949 योजन (कुछ कम) परिधि है, उसका नाम एकोरुक, आभाषिक, वैषाणिक, और नांगोलिक है।

अेअेसिं दीवाणं परओ, चत्तारि जोयणसयाई।

ओगाहूणं लवणं, सपडिदिसिं, चउसयपमाणा ।।3।।

इस द्वीप के बाद 400 योजन लवण समुद्र में जाने पर विदिशाओं में 400 योजन के-

चत्तारंतरदीवा, हयगय गोकन्न संकुलीकण्णा।

एवं पंचसयाइं, छसत्त अट्ठेव नव चेव ।।4।।

चार अन्तर द्वीप (दूसरा चतुष्क) है। उनके नाम हयकर्ण, गजकर्ण, गोकर्ण, शुष्कली कर्ण हैं। इसी प्रकार (आगे-आगे) जाने पर 500, 600, 700, 800, 900 योजन जाने पर आगे आगे के चतुष्क आते हैं यानि तीसरा, चौथा, पांचवा, छठा, सातवां चतुष्क है।

ओगाहिउणं लवणं, विक्खं भोगाह सरिसया भणिया।

चउरो चउरो दीवा णामेहिं णेयव्वा ।।5।।

आगे लवण समुद्र में उल्लंघन करते जितनी अवगाहना का विस्तार कहा है, वह जानना तथा, चार चार द्वीप हैं, नाम इस प्रकार है-

आयं सग मेंढ़मुहा, अओमुहा य चउरेते।

अस्समुहा हत्थिमुहा, हत्थिकन्ना अ कन्नपाउरणा ।।6।।

(तीसरे चतुष्क के) आदर्श मुख, मेंढ़मुख, अयोमुख और गोमुख तथा (चौथे चतुष्क के) अश्वमुख, हस्तिमुख, सिंहमुख, और व्याघ्रमुख नाम है।

तओऽ अस्सकन्ना, सिहकन्ना। अकन्ना पाउरणा।

उक्कामुह मेहमुहा, विज्जुमुहा विज्जुदंताय ।।7।।

उसके बाद (पांचवे चतुष्क के) अश्वकर्ण, सिंहकर्ण, अकर्ण, कर्णप्रावरण तथा (छठे चतुष्क के) उल्कामुख, मेघमुख, विद्युन्मुख, विद्युद्न्त नामक चार अन्तर्द्वीप हैं।

धणदंत लट्ठदंता, निगुढदंताय सुद्धदंताय।

वासहरे सिहरिमिवि, एवं चेव अट्ठावीसापि ।।8।।

उसके बाद (सातवें चतुष्क) धनदंत, लष्टदंत, गूढदंत और शुद्धदंत ये चार द्वीप हैं, ये 28 अंतर्द्वीप हैं, इसी प्रकार शिखरी वर्षधर पर्वत के भी इसी प्रकार 28 अन्तर्द्वीप ये कुल 56 अन्तर्द्वीप हुए।

अन्तरदीवेसु नरा, धणुसय अट्ठुसिया मुइया।

पालिंति मिहुण धम्मं, पल्लस्स असंखभागाऊ ।।9।।

अन्तद्वीपों में मनुष्यों का 800 धनुष देहमान कहा है, वे पल्योपय के असंख्य भाग जितने समय के आयुष्य वाले होते हैं।

चउसट्ठि पिट्ठिकरंडयाणि, मणुयाणऽवच्च पालया।

अउणा सीइंतु दिणा, चउत्थभत्तेण आहारो ।।10।।

उनके 64 पसलियां होती है, 79 दिन तक संतान प्रति पालना करते हैं, और चउत्थ भक्त आहार करते हैं।

इन अन्तर द्वीपों में रहते मनुष्यों को द्वीपों के नाम से जाना जाता है। द्वीपों की बनावट के आकार से द्वीपों का नाम तथा देवों के नाम से द्वीपों के नाम शाश्वत है।

1.	**एकोरुक**	8.	**शुष्कली कर्ण**	15.	**सिंहमुख**	22.	**मेघमुख**
2.	**आभाषिक**	9.	**आदर्श मुख**	16.	**व्याघ्र मुख**	23.	**विद्युन्मुख**
3.	**वैषाणिक**	10.	**मेंढ़मुख**	17.	**अश्वकर्ण**	24.	**विद्युत्दंत**
4.	**लांगुलिक**	11.	**अयोमुख**	18.	**हस्तिकर्ण**	25.	**धनदंत**
5.	**हयकर्ण**	12.	**गोमुख**	19.	**अकर्ण**	26.	**लष्टदंत**
6.	**गजकर्ण**	13.	**अश्वमुख**	20.	**कर्ण प्रावरण**	27.	**गूढदंत**
7.	**गोकर्ण**	14.	**हस्तिमुख**	21.	**उल्कामुख**	28.	**शुद्धदंत**

इस प्रकार इन अन्तर्द्वीपों में रहते मनुष्यों की परिस्थिति वर्णित की है। (ठाणांग सूत्र ठा.4, उ.2, जैन विश्व भारती लाडनू प्रकाशित पृष्ठ 372-74)

लवण समुद्र

लवण समुद्र हमारे क्षेत्र से एकदम नजदीक आया हुआ है। यह लवण-समुद्र जम्बूद्वीप को घेरे हुए होने से वलयाकार गोल है (जो वस्तु चूड़ी जैसी गोल रेखा वाली हो, बीच में पोलार हो ऐसे आकार को परिमंडल या वलयाकार कहते हैं)। जंबूद्वीप सभी द्वीप और समुद्रों के मध्य हैं, इसी प्रकार लवण समुद्र भी सभी समुद्रों के मध्य है। यह सम चक्रवाल संस्थान वाला है (वलयाकार वस्तु की एक तरफ की चौड़ाई, यह चक्रवाल विष्कंभ कहलाती है, और सभी दिशाओं से समान चक्रवाल विष्कंभ हो वह समचक्रवाल संस्थान है)। यहां एक चित्र दिया है, मध्य में जंबूद्वीप है 1 से 3 और 2 से 4 एक लाख योजन का है।

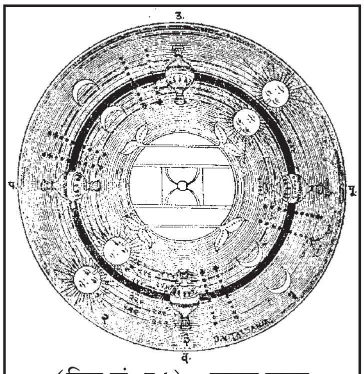
(चित्र सं. 74) - लवण समुद्र
(1) चन्द्र (2) सूर्य (3) पाताल कलश

यह वृत्त विष्कंभ है, और लवण समुद्र 3 से 7 या 6 से 2 तक दो लाख योजन का है, परन्तु 5 से 7 तक पांच लाख योजन है। यह दो लाख योजन का विष्कंभ यह वलय या चक्रवाल विष्कंभ कहलाता है। लवण समुद्र चक्रवाल की अपेक्षा दो लाख योजन चौड़ा विष्कंभ वाला है। पन्द्रह लाख 81 हजार 139 योजन से कुछ ज्यादा परिधि वाला है। यह सागर आधे योजन ऊंची, 500 धनुष चौड़ी एक पद्मवर वेदिका तथा वनखंड से चौतरफ घिरा हुआ है, पद्मवरवेदिका की परिधि लवण समुद्र जितनी है। वनखंड दो योजन से कुछ कम चौड़ा है, इस वनखंड का विशेष वर्णन जंबूद्वीप की पद्मवर वेदिका के वनखंड जैसा है।

इस लवण समुद्र के 4 द्वार है चारों दिशा में है। लवण समुद्र की पूर्व दिशा के किनारे और धातकी खंड द्वीप के पूर्वार्ध से पश्चिम दिशा में और सीतोदा नदी के ऊपर इस लवण समुद्र का विजय नामक द्वार है, यानि पूर्व दिशा में विजय द्वार है। जंबूद्वीप में आये विजय द्वार जैसा वर्णन है। इस विजय द्वार के पूर्व दिशा के तिरछा असंख्यात द्वीप समुद्रों का उल्लंघन करने पर दूसरा लवण समुद्र आता है, वहां विजय द्वार के अधिपति विजय देव की राजधानी है। यह दूसरे लवण समुद्र में 12 हजार योजन आगे जाने पर आती है, यह राजधानी जंबूद्वीप के विजय देव की विजया राजधानी की तरह है। लम्बाई चौड़ाई 12-12 हजार योजन की है, परिधि 37948 योजन से अधिक है। लवण समुद्र की दक्षिण दिशा के अन्त और धातकी खंड के दक्षिणार्द्ध की उत्तर दिशा में लवण समुद्र का वैजयंत नाम का दूसरा द्वार है, वर्णन विजय द्वार के समान है। लवण समुद्र के पश्चिम दिशा के अंत में धातकी खंड के पश्चिमार्द्ध की पूर्व दिशा के भाग में सीता महानदी के ऊपर यह तीसरा जयंत द्वार लवण समुद्र का है, वर्णन विजय द्वार जैसा है। इसी प्रकार लवण समुद्र की उत्तर दिशा के अंत और धातकी खण्ड के उत्तरार्द्ध की दक्षिण दिशा में इस लवण समुद्र का चौथा अपराजित नामक द्वार है। वर्णन विजय द्वार जैसा है। इन चारों द्वार की राजधानी इनकी जो-जो दिशा है, उस उस दिशा में असंख्यात द्वीप समुद्रों के बाद अन्य लवण समुद्र में है, ऐसा समझना। तीन लाख 95 हजार 280

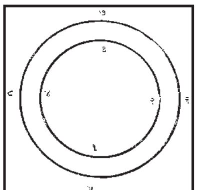
(चित्र सं. 75)
समचक्रवाल संस्थान

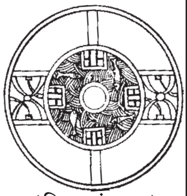
(चित्र सं. 76)
लवण समुद्र के 4 द्वार

योजन और एक कोश का एक द्वार से दूसरे द्वार तक का अन्तर है। प्रत्येक द्वार की 4-4 योजन चौड़ाई है। प्रत्येक द्वार में एक-एक बारसाख (बारसोद) है, जो एक-एक कोस जाड़ी है, इस प्रकार एक-एक द्वार की संपूर्ण चौड़ाई साढ़े चार योजन होती है। चारों द्वारों की पृथुता (चौड़ाई) 18 योजन की होती है। लवण समुद्र की परिधि 15 लाख 81 हजार 139 योजन की है। उसमें से 18 योजन कम करने से जो संख्या बचे, उसमें चार का भाग करने से जो शेष बचे वह द्वार का अन्तर आता है।

प्रत्येक द्वार का अंतर 395280 योजन एक कोश होता है कहा है-

असिया दोन्नि सया, पणनस्सई सहस्स तिन्नि लक्खाय।

कोसेय अंतरं, सागरस्स दाराणं विन्नेयं।।

लवण समुद्र के जिन प्रदेशों को धातकी खंड ने स्पर्शित किया है, वे लवण समुद्र के कहलाते हैं, धातकी खंड के नहीं। लवण समुद्र का पानी खारा है, कीचड़ वाला होने से स्वच्छ नहीं, पाणी में रेती के कण मिश्रित हैं। पानी में हानि वृद्धि होने से भूमि बहुत कीचड़ वाली है, यह पानी खारा, कड़वा, शेवाल युक्त है। जिससे मनुष्यों और पशुओं के पानी पीने योग्य नहीं, समुद्र में उत्पन्न होने वाले जीव पी सकते हैं।

विषाज्जतो विषस्थो, यो जन्तुर्जीवति तिष्ठति।

भ्रियते नैव भुग्जानः, तदन्येभ्योऽहितं विषम्।।

इस समुद्र में उत्पन्न हुए जीव मरकर पुनः वहां जन्म सकते हैं, अन्यत्र भी उत्पन्न हो सकते हैं, इसलिए इसका लवण समुद्र नाम है, शाश्वत नाम है, इसका सुस्थित नामक महर्द्धिक देव है।

जम्बू द्वीप की चारों दिशाओं में बाहर की वेदिका के अंत भाग से लवण समुद्र में 95000 योजन अन्दर जाने पर कुंभ के आकार के चार महा पाताल कलश हैं।

पणनउइसहस्साईं, ओगाहित्ताण चउदिसिं लवणं।

चउरोऽलिंजर संठाण संठिया होंति पायाला।।

पूर्वादि दिशा के अनुक्रम से वलयामुख (वडवामुख), केयूप, यूप, ईश्वर नाम से ये चार पाताल कलश हैं, ये पाताल कलश पानी में एक लाख योजन गहरे हैं, जिससे रत्नप्रभा पृथ्वी के समतल से 101000 योजन नीचे इन कलशों का तलिया है, जिससे प्रत्येक महाकलश पहली नरक के सात पाथड़े तक जाकर छठे भवनपति निकाय तक गहरे उतरे हैं। प्रत्येक कलश का मुंह समुद्र के भूमि तल की सतह पर है, भूमि से ऊपर नहीं। मूल में ये दस हजार योजन चौड़े, वहां से एक-एक प्रदेश बढ़ते-बढ़ते मध्य में एक लाख योजन चौड़े हो गये हैं, तत्पश्चात् वहां से पुनः एक एक प्रदेश घटते घटते ऊपर की तरफ दस हजार योजन चौड़े रह गये हैं।

जोयण सहस्स दसगं, मूले उवरिं च होंति विच्छिन्ना।

मज्जेय सय सहस्सं, तत्तिय मेतं च ओगाढ़ा।।

उन पाताल कलशों की दीवाले (भींतें) सरीखी है, प्रत्येक दीवाल (ठीकरी) दस हजार योजन जाड़ाई की है, वज्रमय है, स्फटिक जैसी स्वच्छ है, इन भीतों में बहुत से पृथ्वीकाय के जीव जन्म मरण करते हैं।

ये भींते द्रव्यायार्थिक नय की अपेक्षा शाश्वत हैं, वर्णादि पर्यायों की अपेक्षा अशाश्वत है। वर्णादि पर्यायें बदलती रहती है, इसलिए अशाश्वत कहा है। इन चार पाताल कलशों के नीचे का त्रिभाग, मध्य का त्रिभाग, ऊपर का त्रिभाग यों तीन भागों में बंटा है। प्रत्येक त्रिभाग (तीसरा भाग) 33333 योजन एक योजन का तीसरा भाग जितना मोटा है। नीचे के त्रिभाग में वायुकाय के, मध्य भाग में वायुकाय और अप्काय के, ऊपर के त्रिभाग में अप्काय के जीव रहते हैं। इन चार पाताल कलशों के अनुक्रम से काल, महाकाल, वेलंब, प्रभंजन ये चार महर्द्धिक देव हैं।

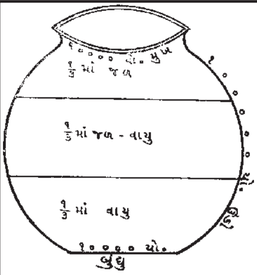

(चित्र सं. 77)-
पाताल कलश

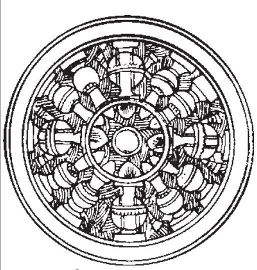

(चित्र सं. 78)-
लघु पाताल कलश

इन चार महापाताल कलशों के अतिरिक्त अन्य भी छोटे पाताल कलश हैं। लवण समुद्र की शिखा (वलयाकार दीवाल जैसा मध्य का भाग जल शिखा कहलाती है) के आभ्यंतर भाग में जंबूद्वीप तरफ का समुद्र घेराव (परिधि) दो लाख नब्बे हजार योजन के व्यास प्रमाण से 917060 योजन है। इस परिधि में रहे चार महाकलशों के चार मुखों का चालीस हजार योजन विस्तार कम करने से 877060 योजन का अन्तर रह जाता है। प्रत्येक अंतर दस हजार योजन का है। वहां आभ्यंतर में इस लघु परिधि में प्रत्येक अंतर में 215 लघु पाताल कलश की चार श्रेणि परिधि जितनी गोलाकार में रही है। उसके बाद दूसरी पंक्ति में 216 तीसरी में 217 चौथी में 218 पांचवी में 219 छठी में 220 सातवी में 221 आठवीं में 222 और नवमीं में 223 लघु पाताल कलश हैं। इस प्रकार अंतरे की नौ पंक्तियों में 1971 लघु पाताल कलश हैं। यों चारों आंतरों में कुल 7884 लघु पाताल कलश होते हैं। अंतिम नवमीं पंक्ति धातकी खंड तरफ शिखा की बाह्य परिधि में रही हुई है। पहली पंक्ति से धातकी खंड तरफ जाते समय बड़ी बड़ी (अधिक-अधिक) परिधि होने से आंतरों में एक-एक कलश ज्यादा-ज्यादा है, पाताल कलश परस्पर थोड़े-थोड़े अंतर पर है, एक दूसरे से सटकर (अड़े) नहीं है। आभ्यंतर घेराव की जगह महापाताल कलश का मुंह दस हजार विस्तार वाला है, परन्तु समुद्र के मध्य में है, फिर भी मध्य में रहे मुख्य विस्तार को सीधी लाइन में रखकर आभ्यंतर घेराव भी 10 हजार योजन गिनना योग्य है। लघु पाताल कलशों की पहली पंक्ति जहां है, उस स्थान का घेराव गिनना होने से आभ्यंतर परिधि गिनकर दस हजार योजन मुख गिना है। मध्य परिधि नहीं गिनी है। आभ्यंतर परिधि लें तो ही 215 की पहली पंक्ति परस्पर अंतर से आ सकती है। छोटे पाताल कलश एक हजार योजन पानी के नीचे भूमि में हैं। मूल में 100 योजन चौड़े हैं, मध्य में एक-एक श्रेणि प्रदेश बढ़ते-बढ़ते एक हजार योजन चौड़े हैं, फिर क्रमशः घटते घटते मुंह पर 100 योजन चौड़े हैं। इन छोटे पाताल कलशों की दीवालें (ठीकरी) एक समान दस योजन जाड़ी है। ये सभी वज्रमय है, आकाश और स्फटिक जैसे स्वच्छ है। वहां अनेक जीव जन्मते मरते हैं। प्रत्येक पाताल कलश आधा पल्योपम की स्थिति वाले देव युक्त है। इन छोटे पाताल कलशों के भी तीन विभाग है। नीचे मध्य ऊपर यों तीन विभाग 333 योजन तथा एक योजन का तीसरा भाग प्रमाण है। नीचे के त्रिभाग में वायु मध्य में वायु अप्काय, ऊपर अप्काय के जीव रहते हैं। यों सभी कुल 7884 पाताल कलश चारों अंतरों में हैं।

अन्ने वि य पायाला, खुड्डालिंजर संठिया लवणे।
अट्ठसया चुलसीया, सत्तसहस्सा य सव्वे वि ।।1।।
पायालाण विभागा सव्वावि, तिन्नितिन्नि विभेया।
हेट्ठिमभागे वाउमज्झे वाउय उदगं च ।।2।।
उवरिं उदगं भणियं, पढ़म बीअेसुवाउ संखुभिओ।
उड्ढं वामइउदगं, परिवड्ढई जल निही खुभिओ ।।3।।

(महापाताल के देवों की राजधानियां शास्त्र में नहीं बताई है, उन देवों का एक पल्योपम का आयुष्य है, तथा वे महर्द्धिक देव हैं, इसलिए उनकी राजधानियां होगी ऐसा कहना अतिशयोक्ति नहीं होगा, हां लघु पाताल कलश के देव आधा पल्योपम आयुष्य वाले होने से, उनकी राजधानियों के विषय में महान् ज्ञानी संत बता सकते हैं, हो सकता है नहीं भी हो ऐसा विचार भी संभव है)।

महापाताल कलशों और छोटे पाताल कलशों में तीन तीन भाग होने तथा नीचे एवं मध्य भाग में ऊर्ध्वगमन स्वभाव वाले वायुकाय होने से, वे सम्मुर्च्छम जन्म से ही आत्मलाभ करते हैं, सामान्य और विशेष कंपते हैं, बहुत जोर से चलते हैं, परस्पर टकराते रहने (रगड़ते रहने) से अद्भुत शक्ति संपन्न बनकर ऊपर और आस पास फैलते हैं। इस प्रकार जब अलग अलग भावों से परिणत होते हैं, तब दूसरे वायु और जल को प्रेरित करते हैं। देशकाल योग्य तीव्र या मध्यम भाव से जब परिणमन करते हैं तब चवदस आठम और पूनम के दिन पानी बढ़ता है और जब महापााल कलश या छोटे पाताल कलशों में नीचे के तथा मध्य के त्रिभागों में उदार वायुकाय के जीव उत्पन्न होने के करीब होते हैं, तब वे सम्मुर्च्छम जन्म से आत्मलाभ आदि नहीं करते जिससे पानी उछलता नहीं। इस प्रकार दिन-रात में दो बार वायु उत्पन्न होती है, तब पानी दो बार ऊंचा उछलता है। चौदस वगैरह तिथियों में पानी ज्यादा उछलता है तब वायुकाय के जीव ज्यादा उत्पन्न होते है। जबकि प्रतिदिन काल विभाग सिवाय अन्य काल में पानी उछलता नहीं, समुद्र में भरती नहीं आती। इससे चवदस वगैरह तिथियों में पानी में बढ़ोतरी होती है।

पणनउइ सहस्साईं ओगाहित्ताण चउदिसिंलवणं।
चउरोऽलिंजर संठाण, संठिया होंति पायाला ।।1।।
वलयामुह केउये, जूयग तह इस्से य बोद्धवे।।
सव्व वइरामयाणं कुड्डा, एएसिं दस सइया ।।2।।
जोयण सहस्स दसगं, मूले उवरिं च होंति वित्थिन्ना।
मज्झे य सय सहस्सं, तत्तिय मेत्तं च ओगाढ़ा ।।3।।
पलिओवमट्ठिइया, एएसिं अहिवइसुरा इणमो।
काले य महाकाले, वेलंब पभंजणे चेव ।।4।।
अन्ने विय पायाला, खुड्डालिंजर संठिया लवणे।
अट्ठसया चुलसिया, सत्तसहस्सा य सव्वे वि ।।5।।
जोयण सय वित्थिन्ना, मूलुवरिं, दस सयाणि मज्जंमि।
ओगाढ़ा य सहस्सं, दस जोयणियाय सिं कुड्डा ।।6।।

पायालाण विभागा, सव्वाण वि तिन्नि तिन्नि बोद्धव्वा।

हेट्ठिम भागे वाउ मज्जे वाउय उदयं च ।।7।।

उवरिं उदगं भणियं, पढ़मग बीएसु वाउ संखुभिओ।

वामे उदगं तेण य, परिवड्ढ़ई जलनिहि खुहिओ ।।8।।

परिसंठियंमि पवणे, पुनरवि उदयं तमेव संठाणं।

वच्चेइ तेण उदही, परिहाय इणुक्कमेणेवं ।।9।।

चक्रवाल विष्कंभ की अपेक्षा से लवण समुद्र की शिखा दस हजार योजन जितनी चौड़ी है, आधा योजन जितनी घटती बढ़ती है। यानि जंबूद्वीप और धातकी खंड से लवण समुद्र में 95 हजार योजन तक गोतीर्थ है। वलयाकार दीवाल जैसा जल है, वह शिखा कहलाती है। अथवा इसे जल का कोट भी कहते हैं। तालाब आदि में जाने के लिए प्रवेश मार्ग रुप नीचे का भूमि भाग होता है, वह गोतीर्थ कहलाता है। गाय का पानी पीते समय मुख झुका होता है, पूंछ की तरफ ऊंचे अंग वाली होती है वैसा जलभूमि का उतार, वह (ढ़लाव) गोतीर्थ कहलाता है। उसके बाद मध्य भाग की अवगाहना 10 हजार योजन विस्तार वाली है। जंबूद्वीप और

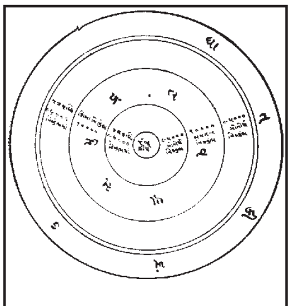

(चित्र सं. 79) - गोतीर्थ

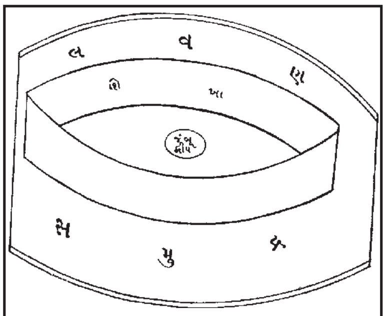

(चित्र सं. 80) - शिखा

धातकी खंड की वेदिकांत के पास गोतीर्थ है, उसकी अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग होती है, फिर समतल भूमि भाग से क्रमशः प्रदेश की हानि होते होते 95 हजार योजन भाग नीचे-नीचे जाता गया है। वहां इसकी (भूमिभाग) ऊंडाई (गहराई) 1000 योजन है। जंबूद्वीप की वेदिका और धातकी खंड की वेदिका से गोतीर्थ तक जो समतल भूमि भाग है, वहां सर्वप्रथम जलवृद्धि होती है, वहां अंगुल के असंख्यातवें भाग जितनी है, क्रमशः बढ़ते-बढ़ते दोनों तरफ से 95 हजार योजन तक बढ़ती जाती है, इस समतल भूमि भाग में एक हजार योजन का अवगाह है, वहां 700 योजन तक जलवृद्धि होती है। उसके बाद समुद्र का 10 हजार योजन विस्तार का मध्य भाग है, वहां एक हजार योजन की गहराई एक सरीखी है, इससे यहां एक हजार योजन की जलवृद्धि होती है। दो लाख योजन के लवण समुद्र के 95000 हजार योजन दोनों तरफ ढ़लाव है, बीच में 10 हजार योजन समभूमि है, वहां एक हजार योजन का ऊंडाण है, उससे किनारों (दोनों तरफ) तरफ क्रमशः ऊंची भूमि होती गई है। दोनों तरफ पचानवे हजार योजन जाने पर वहां समभूमि से 700 योजन जितना ऊंचा जल है। इससे एक हजार योजन की गहराई और 700 योजन की ऊंचाइ यों जमीन से 1700 योजन (समुद्र के मध्य भाग में) ऊंचा जलस्तर है। पाताल कलश क्षुभित होने से वहां पर दिन रात में दो बार दो कोस कुछ कम तक बहुत पानी की वृद्धि होती है। पाताल कलश क्षुभित होने से वहां पर दिन-रात में दो बार दो कोस कुछ कम तक बहुत पानी की वृद्धि होती है। जब पाताल कलश क्षुभित नहीं होते तब जलवृद्धि नहीं होती।

पंचाउणसहस्से गोतित्थं, उभयतो वि लवणस्स।

जोयण सयाणि सत्तउ, उदग परिवुड्डिवि उभयतोवि ।।1।।

देसूण मद्ध जोयण लवण सिहोवरि दुगं दुवे कालो।

अइरेगं अइरेगं, परिवड्ढई हायअे वा वि ।।2।।

लवण समुद्र की आभ्यंतरिक वेला (शिखा, पानी वृद्धि, बढ़ता जल) जंबूद्वीप सामने की वेला को 42 हजार नागकुमार देव धारण करते हैं, अटकाते, दबाते हैं। आगे बढ़ने नहीं देते। 72 हजार नागकुमार देव बाहर की वेला को धारण करते है, तथा 60 हजार नागकुमार अग्रोदक (ऊपर बढ़े 2 कोस जितने भाग रुपी जलवृद्धि) को दबाते हैं। ये सब कुल एक लाख 74 हजार नागकुमार देव होते हैं।

अब्भिंतरियं वेलं, धरेंति लवणोदहिस्स नागाणं।

बायालीस सहस्सा, दुसत्तरि सहस्स बाहिरियं ।।3।।

सट्ठिंनाग सहस्सा, धरेंति अग्गोदगं समुद्दस्स।

वेलंधर आवास, लवणेय चउदिसिं चउरो ।।4।।

पुव्वाई अणुक्कमसो, गोथुभ दगभास संख दगसीमा।

गोथुभ-सिवअे-संखे, मणोसिले नागरायाणो ।।5।।

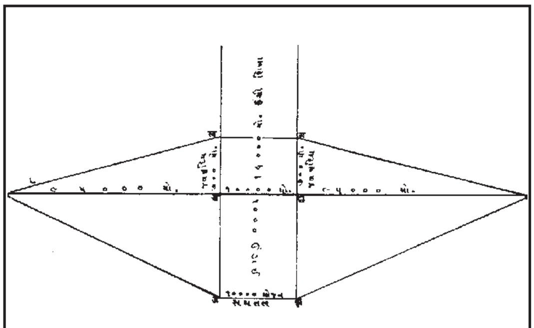

(चित्र सं. 81)-समतल

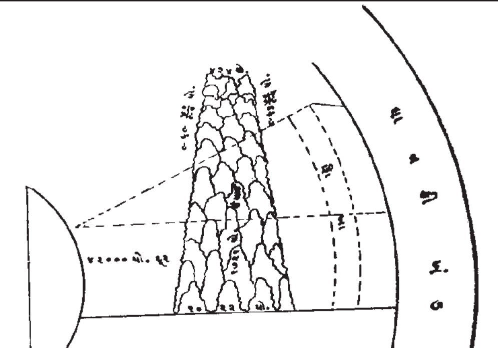

(चित्र सं. 82)-वेलंधर पर्वत

गोस्तूभ, शिवक, शंख और मनःशिल ये चार वेलंधर नागराज है। गोस्तूभ उदकावास, शंख और दकसीम ये चार इनके आवास पर्वत है। जंबूद्वीप के मेरु पर्वत की पूर्व दिशा में लवण से 42000 योजन जाने पर गोस्तूभ वेलंधर नागराज का आवास पर्वत है, यह पर्वत 1721 योजन ऊंचा 430 योजन भूमि में गहराई, (पानी में गहरा), मूल में 1022 योजन लम्बा-चौड़ा मध्य में 723 योजन लम्बा चौड़ा ऊपर में 420 योजन लम्बा चौड़ा है। मूल में परिधि 3230 योजन से कुछ कम, मध्य में 2284 योजन से कुछ कम, ऊपर में 1341 योजन से कुछ कम है। मूल में चौड़ा, बीच में संकड़ा ऊपर पतला यों गोपुच्छाकार से है। संपूर्ण कनकमय है। एक पद्मवर वेदिका और एक वनखंड से चारों ओर से घिरा हुआ है।

दो योजन से कुछ कम इसका चक्रवाल विष्कंभ है। वहां एक प्रासादावतंसक और सिंहासन है, उसका (परिवार सहित) वर्णन विजय देव जैसा है। यहां गोस्तूभ नामक महर्द्धिक देव रहता है, इससे इस पर्वत का नाम गोस्तूभ है। इसके पूर्व दिशा में तिरछा असंख्यात द्वीपो समुद्रों के बाद अन्य लवण समुद्र में गोस्तूभ देव की गोस्तूभा राजधानी है।

जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत से दक्षिण दिशा तरफ लवण समुद्र में 42 हजार योजन जाने पर शिवक वेलंधर नागराज का दगभास नामक पर्वत है। यह अंकरत्न का है, विशेष वर्णन गोस्तूभ पर्वत समान है। अंकरत्न का होने से लवण समुद्र में चारों तरफ अपनी सीमा से 8 योजन क्षेत्र में रहे पानी को तेजस्वी बनाता है। जंबू के मेरु पर्वत से पश्चिम में लवण समुद्र में 42 हजार योजन जाने पर वेलंधर शंख नागराज का शंख पर्वत है, यह रत्नमय है, शेष वर्णन गोस्तूभ जैसा है। मेरु के उत्तर में लवण में 42000 योजन जाने पर मनःशिल वेलंधर नागराज का दकसीम आवास पर्वत है, इस पर्वत पर सीता सीतोदा महानदियों का जल प्रवाह बहता होने से पानी की सीमा तय करता है। इससे इसका दकसीम नाम है। यह स्फटिक रत्न का है, गोस्तूभ समान अन्य वर्णन है।

कण गंकरय यक् लियमयाय, वेलंधराणमावासा।
अणुवेलंधर राइण पव्वयाहोंति, रयणामया ।।6।।

कर्कोटक, कर्दम, कैलास और अरुणप्रभ नामक चार अणु वेलंधर नागराज है, इन देवों के नाम वाले चार आवास पर्वत हैं। जंबूद्वीप के मेरु पर्वत से ईशान, अग्नि, नैऋत्य और वायव्य कोण में लवण समुद्र में 42 हजार योजन जाने पर कर्कोटक आदि चारों के नाम वाले चार पर्वत है, ये चारों गोस्तूभ पर्वत जैसे हैं। सरीखें प्रमाण और रत्नों के हैं-

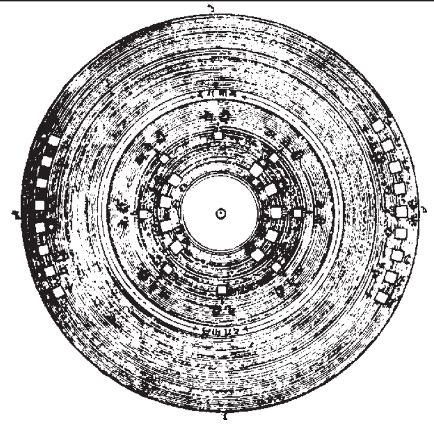

(चित्र सं. 83)-
वेलंधर अणु वेलंधर आवास पर्वत

अणु वेलंधर वासा, लवणे विदिसासु संठिया चउरो।
कक्कोड़े विज्जुपभे, केलासेऽरुणपभे चैव ।।7।।
कक्कोड़ य कद्दमए, केलासेऽरूणपभे य रायाणो।
बायालीस सहस्से, गंतुं उद्दहिंमि सव्वेवि ।।8।।
चत्तारि जोयण सह, तीस कोसेय उग्गया भूमि।
सत्तर सजोयण सए, इगवीसे उसिया सव्वे ।।9।।

ये सभी पर्वत समुद्र में 42 हजार योजन जाने पर है, ये पर्वत चार सौ योजन तीस कोस जितनी जमीन घेरे है। ऊंचाई 1700 योजन, चारों अणु वेलंधर देवों की राजधानी अन्य लवण समुद्र में 12 हजार योजन जाने पर विदिशाओं में इन्ही नाम वाली हैं, संपूर्ण वर्णन विजया राजधानी जैसा है।

लवणाधिपति सुस्थित देव का **गौतम द्वीप-** जंबूद्वीप के मेरु पर्वत से पश्चिम में लवण समुद्र में 12 हजार योजन जाने पर सुस्थित देव का गौतम द्वीप आता है, यह 12 हजार योजन लम्बा चौड़ा है, परिधि 37948 योजन

कुछ कम है। यह द्वीप जंबूद्वीप की दिशा में जंबू द्वीप के अंत में 88½ योजन तथा एक योजन का 40/95 भाग पानी के ऊपर निकला है, तथा लवण समुद्र की तरफ लवण समुद्र के छोर से पानी से दो कोश ऊंचा है। एक पद्मवर वेदिका एक वनखंड से घिरा हुआ है, इस द्वीप की पश्चिम में तिरछे असंख्याता द्वीप समुद्रों के पार अन्य लवण समुद्र में 12 हजार योजन जाने पर सुस्थित देव की सुस्थिता राजधानी है। उसका वर्णन गोस्तूभ पर्वत की गोस्तुभा राजधानी की तरह है।

लवण समुद्र में चन्द्र-सूर्य द्वीप- जंबूद्वीप के मेरु पर्वत से पूर्व दिशा में लवण समुद्र में 12 हजार योजन जाने पर जंबूद्वीप को प्रकाशित करने वाले दोनों चन्द्रमाओं के दो चंद्रद्वीप है। इन द्वीपों का वर्णन गौतम द्वीप के समान हैं। चन्द्रा राजधानी जंबूद्वीप से पूर्व में तिरछे असंख्यात द्वीप समुद्रों के आगे अन्य जंबूद्वीप में हैं। दो राजधानी होने से दो पद्मवर वेदिका और दो वनखंड हैं। इस चंद्रद्वीप की तरह जंबूद्वीप के मेरु से पश्चिम में 12 हजार योजन लवण समुद्र में जाने पर दो सूर्य के दो सूर्यद्वीप है। सभी वर्णन चंद्र द्वीप जैसा है। गौतम द्वीप में भवन है, इन द्वीपों में प्रासाद हैं। जंबूद्वीप के मेरु के पूर्व में लवण समुद्र में 12 हजार योजन जाने पर दो चंद्रद्वीप हैं, इसी प्रकार पश्चिम में 12 हजार योजन जाने पर लवण समुद्र को अवगाहने वाले दो चंद्रद्वीप हैं, इसी प्रकार पश्चिम में 12 हजार योजन लवण समुद्र में जाने पर दो सूर्यद्वीप है। इन द्वीपों की राजधानी अन्य लवण समुद्र में है, बाकी सारा वर्णन जंबूद्वीप के चन्द्र सूर्य द्वीप प्रमाण से है। लवण समुद्र की पूर्व दिशा में आये चरमांत वेदिका से लवण समुद्र के पश्चिम में 12 हजार योजन जाने पर वहां बाह्य लवण समुद्र के दो चंद्र के दो द्वीप है, ये द्वीप धातकी खंड की दिशा में 88½ योजन 40/95 (एक योजन का) भाग जितना पानी के ऊपर है। इस प्रमाण से पश्चिम दिशा की चरमांत वेदिकान्त से लवण समुद्र के पूर्व में 12 हजार योजन जाते बाह्य लवण के दो सूर्यद्वीप हैं अन्य विवरण पूर्वानुसार है। यों लवण समुद्र में जंबूद्वीप के 2-2 चन्द्र सूर्य के 4 द्वीप तथा लवण समुद्र के आभ्यन्तर भाग के दो-दो चंद्र सूर्य के 4 द्वीप और बाह्य लवण समुद्र के दो-दो चंद्र सूर्य के 4 द्वीप तथा लवणाधिपति सुस्थित देव का गौतम द्वीप कुल 13 द्वीप होते हैं। इस प्रमाण का वर्णन जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति में है।

गौतम द्वीप के पास उत्तर दक्षिण तरफ दो-दो सूर्य द्वीप आये हैं (लघु क्षेत्र समास)। लवण समुद्र की शिखा के आभ्यंतर भाग में (जम्बूद्वीप तरफ के घूमने वाले) दो आभ्यंतर सूर्य के दो सूर्यद्वीप हैं। 12 हजार योजन विस्तार वाले और पश्चिम दिशा में पांचों वक्र पंक्ति में परस्पर 12 हजार योजन दूर हैं। एक दूसरे से सटकर नहीं है। इसी प्रकार मेरु के दो लवण समुद्र के आभ्यंतर (शिखा से जम्बू तरफ) फिरने वाले दो चंद्र के हैं। उनकी चंद्रा और सूर्या नामक राजधानियां असंख्यात द्वीप समुद्रों के आगे अन्य जंबूद्वीप तथा लवण समुद्र में है। वहीं ये ज्योतिषी जन्मते हैं, अधिपत्य करते हैं, और कार्य प्रसंग से यहां आते हैं। आकाश में घूमते अपने विमान में सिंहासन पर परिवार सहित बेठते हैं, कभी इस द्वीप पर प्रासाद में अपनी शैया पर सोते हैं, इस द्वीप के सपाट प्रदेशों में हमेशा अन्य ज्योतिषी घूमते फिरते हैं, बैठते हैं, आनंद से विचरते हैं। लवण समुद्र की शिखा के बाहर लवण समुद्र के चन्द्र-सूर्य फिरते हैं। और धातकी खण्ड में 12 चन्द्र सूर्य घूमते हैं, इनमें से 6 चन्द्र सूर्य धातकी खंड के मेरु की आभ्यंतर तरफ लवण समुद्र तरफ घूमते हैं, और 6-6 चन्द्र सूर्य बाहर वाले भाग में कालोदधि समुद्र तरफ धातकी खंड में घूमते हैं, जिससे 6-6 चन्द्र सूर्य धातकी खंड के आभ्यंतर और बाह्य के 6-6 हैं। वहां लवण समुद्र के किनारे लवण समुद्र की जगती धातकी खंड के आभ्यंतर किनारे आयी है, वहां से 12 हजार योजन दूर

पूर्व दिशा में 8 चंद्र द्वीप है, इनमें से दो द्वीप बाह्य लवण के चन्द्र के और 6 द्वीप आभ्यंतर धातकी खंड के हैं। पूर्व कहे चार चन्द्र द्वीपों की तरह वर्णन है। पश्चिम में भी धातकी खंड के आभ्यंतर किनारे से 12 हजार योजन दूर लवण समुद्र में 8 सूर्य द्वीप हैं, इनमें से दो बाह्य लवण समुद्र के सूर्य के और 6 द्वीप आभ्यंतर धातकी खंड के सूर्य के हैं। यों लवण समुद्र में 12-12 चन्द्र सूर्य द्वीप और एक गौतम द्वीप यों 25 द्वीप हैं।

उद्वेध परिवृद्धि (गहराई में बढ़ोतरी, भरती (ज्वार))- जम्बू द्वीप की वेदिकांत से और लवण समुद्र की वेदिकान्त से 95-95 प्रदेश रुप स्थान पर एक प्रदेश रुप स्थान उद्वेध या परिवृद्धि को अपेक्षा से ''त्रस रेणु'' रुप कहा है।

95-95 बालाग्र प्रमाण स्थान जाने पर एक बालाग्र उद्धेध परिवृद्धि यानि गहराई होती है।

95-95 लीख प्रमाण जाने पर एक लीख की उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 जूं प्रमाण जाने पर एक जूं की उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 जवमध्य प्रमाण जाने पर एक जवमध्य उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 अंगुल प्रमाण जाने पर एक अंगुल प्रमाण उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 वेंत प्रमाण जाने पर एक वेंत प्रमाण उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 रत्नि (हाथ) प्रमाण जाने पर एक रत्नि प्रमाण उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 कुक्षि (कूंख) प्रमाण जाने पर एक कुक्षि प्रमाण उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 धनुष प्रमाण जाने पर एक धनुष्य प्रमाण उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 गव्यूत (दो कोस) जाने पर एक गव्यूत प्रमाण उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 योजन प्रमाण जाने पर एक योजन प्रमाण उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 सौ योजन प्रमाण जाने पर एक सौ योजन की उद्धेध परिवृद्धि होती है।

95-95 हजार योजन प्रमाण जाने पर एक हजार योजन की उद्धेध परिवृद्धि होती है।

यहां योजन आदि में इस प्रकार त्रिराशि प्रकार से 95 हजार योजन जाने पर एक हजार योजन गहराई है, तो 95 योजन में कितनी गहराई होगी? यहां पहली राशि और बीच की राशि में से शून्य निकाल देने से 95-1-95 राशि आती है। मध्य राशि रुप एक के साथ अन्तिम राशि 95 गुणा करने से 95 आता है। इस 95 में पहली राशि 95 है उसका भाग देने से एक आता है। तो एक योजन की गहराई होती है। इस प्रकार 95 हजार योजन जाने पर एक हजार योजन गहराई है, 95 योजन में एक योजन।

पंचाणउइ सहस्से, गंतूणं जोयणाणि उभओवि।
जोयण सहस्समेगं, लवणे ओगाहओ होई ।।1।।
पंचाणउइ लवणे गंतूणं, जोयाणाणि उभओवि।
जोयण मेगं लवणे, ओगाहेणं मुणेयव्वा ।।2।।

लवण समुद्र की दोनों तरफ 95-95 प्रदेश जाने पर 16 प्रदेश प्रमाण **उत्सेधनी शिखा** की वृद्धि होती है। शिखा की ऊंचाई बढ़ती है। इसी क्रम से लवण समुद्र में 95-95 हजार योजन जाने पर 16 हजार योजन ऊंची

शिखा होती है। यानि जंबूद्वीप की वेदिकांत से और लवण समुद्र की वेदिकांत से दोनों तरफ की भूमि समतल है, वहां सबसे पहले जलवृद्धि होती है, जो अंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण होती है। एक-एक प्रदेश वृद्धि होते-होते अनुक्रम से 95-95 हजार योजन तक के भाग में 16 प्रदेश प्रमाण से जलवृद्धि होती है। इस प्रकार से मध्य में 10 हजार योजन के विस्तार में 16 हजार योजन प्रदेश प्रमाण जलवृद्धि हुई है। अगर इस 16 हजार योजन प्रमाण वाली शिखा पर और दोनों वेदिकांत के मूल में डोरी रखें तो अपांतराल में जल बिना का आकाश है, यह भी करण गति प्रमाण से त्रिराशि बताने वाले सूत्र प्रमाण से उसी रुप उसी प्रकार से भाज्य होता है। (यानि जल सहित होता है) इससे लवण समुद्र में जंबूद्वीप की वेदिकांत से 95 प्रदेश जाने पर 16 प्रदेश प्रमाण उत्सेध (ऊंचाई) परिवृद्धि कही है। इस प्रकार- 95000-16000-95 इनमें से प्रथम राशि की तीन शून्य और मध्य राशि की तीन शून्य निकाल देने से 95-16-95 हो जाती है। बीच की 16 राशि है उसे अन्तिम 95 से गुणा करें तो 1520 आता है, उसमें प्रथम राशि 95 का भाग देने से 16 आता है। यों 95 योजन तक में 16 योजन उत्सेध वृद्धि हुई। इस प्रकार 95 हजार योजन जाने पर 16 हजार योजन उत्सेध वृद्धि होती है। कहा है-

पंचाणउई सहस्से, गंतूणं योयणाणि उभओवि।

उस्सेहेणं लवणो, सोलस साहस्सिओ भणिओ ।।1।।

पंचाण उई लवणे, गंतूणं जोयणाणि उभओवि।

उस्सेहेणं लवणो, सोलस किल जोयणे होई ।।2।।

95 हजार योजन तक में 16 हजार की ऊंचाई (गहराई) है, इस प्रकार उत्सेधनी वृद्धि का क्रम समझना। लवण समुद्र में पानी की पंक्ति रुप उदकमाला है वह हजार योजन की है (देखें चित्र सं. 79-80 पुस्तक पृष्ठ 79)

लवण समुद्र की शिखा 16000 योजन ऊंची है, और ज्योतिषी विमान 790 योजन ऊंचे आकाश में घूमते हैं और 10 हजार योजन के लवण समुद्र विस्तार में शिखा में पानी है, इससे इस विस्तार में ज्योतिषी विमान है या नहीं? यानि आस पास के विस्तार में लवण समुद्र में है, या शिखा में भी है? शिखा में है तो किस प्रकार पानी में चक्कर लगाते है, या किस प्रकार चलते हैं? लवण समुद्र में घूमते सभी ज्योतिषी विमान जल स्फटिक (दगफाड़) रत्न के होते हैं। ये रत्न पानी में अपनी जगह बनाकर चलने के स्वभाव वाले होते हैं। इसीलिए चलते हैं। जिस प्रकार शिखा के बाहर के विमान खुल्ले आकाश में बिना किसी रोकटोक के चलते हैं, यों पानी में भी विमान बिना किसी अन्तराय, बाधा के घूमते है। लवण समुद्र में जितने विमान घूमते हैं, सभी जल स्फटिक के है। शिखा के बाहर जल भेद नहीं करना होता है, फिर भी स्वाभाविक तोर पर सभी विमान जल स्फटिक के ही होते हैं। मात्र लवण समुद्र में ही ऐसे विमान है, बाकी अन्यत्र सभी जगह स्फटिक के विमान हैं। इस प्रकार सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र की निर्युक्ति में भी कहा है-

जोइसिय विमाणाइ सव्वाइं हवंति फलिय मयाइं।

दगफलिहामया पुण लवणे, जे जोइसिया विमाणा।।

यानि सभी द्वीप समुद्रों में ज्योतिषियों के जो विमान है, वे सभी सामान्यतया स्फटिक के हैं, तथा लवण समुद्र में ज्योतिषियों के विमान है, वे दग स्फटिक यानि पानी फाड़ने वाले स्वभाव वाले स्फटिक के हैं।

लवण समुद्र का संस्थान (आकार) समझाने अलग अलग दृष्टांत दिये है। सर्वप्रथम गोतीर्थ आकार बताया है। यह गोतीर्थ क्या है? कैसा है? यह वर्णन आया है। पूर्व में कह दिया है। नाव समान दूसरा दृष्टांत

कहा है, दोनों तरफ समतल भूमि भाग नौका आकार कहा है, इस भूमि भाग में अनुक्रम से पानी वृद्धि होने से नाव जैसा ऊंचा आकार होता है। तीसरा सीप का दृष्टांत कहा है, सीप का संपुट जैसा आकार है, गहराई और जलवृद्धि के जल को एक स्थल पर रखने के विचार से सीप का आकार बताया है। चौथा अश्वस्कंध-घोड़े के कंधे जैसा दृष्टांत कहा है। शिखा के 10 हजार योजन तक में 16000 योजन प्रदेश ऊंचा भाग रहने से अश्वस्कंध आकार कहा है। 10 हजार योजन प्रमाण विस्तार की शिखा का आकार वलभी गृह जैसा होने से लवण समुद्र को वलभी गृह जैसा बताया है।

लवण समुद्र का पानी जम्बूद्वीप को क्यों नहीं डुबाता?- यह लवण समुद्र जंबूद्वीप को चारों तरफ से घेरे हुए है, गोलाकार, वलयाकार है। लवण समुद्र चक्रवाल विष्कंभ की दृष्टि से दो लाख योजन का है। यह 15,81,148 योजन में कुछ कम **परिधि** अपेक्षा से है। **ऊंचाई** अपेक्षा से 16000 योजन का है। उत्सेध तथा उद्वेध (ऊंचाई और गहराई) की अपेक्षा से लवण समुद्र 17000 योजन का है। इस परिस्थिति में यह लवण समुद्र इस जंबूद्वीप को पानी से डुबो क्यों नहीं देता? कोई तकलीफ, बाधा, मुश्किलें क्यों नहीं देता? इस जंबूद्वीप में भरत, एरवत क्षेत्र हैं, इसमें अरिहंत भगवान, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव, जंघाचारी मुनि, विद्याधर, साधु साध्वी, श्रावक श्राविकाएं, भद्र प्रकृति के मनुष्य, प्रकृति से विनीत पुरुष, प्रकृति से उपशांत पुरुष, कोमलता और सरलता वाले पुरुष होते हैं, वैरागी आत्माएं उत्पन्न होती हैं, उनके प्रभाव से लवण समुद्र कोई मुश्किल खड़ी नहीं करता और डुबाता भी नहीं है। और भरत क्षेत्र, वैताढ्य पर्वत आदि के अधिपति देव तथा चुल्ल हेमवंत पर्वत और शिखरी पर्वत पर महर्द्धिक देव रहते हैं, उनके पुण्य प्रभाव के कारण भी जंबूद्वीप को जलबंबाकार जलजलाकार नहीं करता। हेमवत-हेरण्यवत के मनुष्य प्रकृति भद्र और विनीत होते हैं, इस कारण भी जंबूद्वीप का पानी से बचाव होता है। इसके अलावा गंगा, सिंधु, रक्ता-रक्तवती वगैरह नदियों में उनके महर्द्धिक आदि देव, शब्दापाति, विकटापाति देवों, हरिवर्ष-रम्यकवर्ष क्षेत्र के प्रकृति भद्र और विनीत मनुष्य होते हैं। निषध, नील पर्वत पर पद्म, तिगिच्छ, केसरी वगैरह द्रहों में रहे देव-देवियों के प्रभाव से तथा पूर्व और पश्चिम महाविदेह क्षेत्र में रहे अरिहंत, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव, चारण ऋद्धिधारी मुनियों, विद्याधरों, साधु साध्वी, श्रावक श्राविका, प्रकृति भद्र आदि मनुष्य होते हैं, और इसी प्रकार सीता-सीतोदा वगैरह महानदियों की महर्द्धिक देवियों, देवकुरु, उत्तर कुरु क्षेत्रों के प्रकृति भद्र आदि मनुष्यों, जम्बूवृक्ष ऊपर के अनादृत आदि देव इन सभी पुण्यात्माओं के प्रबल पुण्योदय के कारण लवण समुद्र जंबूद्वीप को पीड़ा, तकलीफ नहीं देता, यानि पानी में डुबाता नही है। अथवा इस लोक की ही ऐसी स्थिति मर्यादा है उसी का ऐसा भाग्य है। बलवान राष्ट्र के पास रहे दुर्जन राष्ट्र की तरह लवण समुद्र मनोहारी राष्ट्र जैसे जम्बूद्वीप को पानी में डुबाता नहीं है।

धातकी खंड द्वीप

लवण समुद्र को धातकी खंड द्वीप ने चारों ओर से घेर रखा है। यह धातकी खंड सम चक्रवाल संस्थान का है, और चक्रवाल विष्कंभ अपेक्षा से यह चार लाख योजन का है। 41,10,961 योजन में कुछ कम इसकी परिधि है-

एयालीसं लक्खा, दस य सहस्साणि जोयणाणं तु।
नव य सया एगट्ठा, किंचूणे परिरओ तस्स।

धातकी खंड चारों ओर से एक-एक पद्मवर वेदिका और वनखंड से घिरा है। इनका वर्णन जंबूद्वीप वत् समझना। इस धातकी खंड द्वीप के 4 दरवाजे हैं। धातकी खंड की पूर्व दिशा के अंत और कालोदधि समुद्र के

पूर्वार्ध की पश्चिम दिशा में सीता महानदी पर धातकी खंड का विजय द्वार है, इसकी विगत जंबूद्वीप के विजय द्वार समान जानना। बाकी के तीन द्वारों का वर्णन भी इसी प्रकार समझना। 10,27,735 योजन तीन कोस एक से दूसरे द्वार का अन्तर है।

पणतीसासत्तसया, सत्तावीसा सहस्स दसलक्खा।
धाइय संडे दारंतरंतु, अवरं च कोसतियं।।

इस द्वीप में कई जगह धातकी (आंवला) के वृक्ष, धातकी के वन और वनखंड हैं, इससे इस द्वीप का नाम धातकी खंड है। इस धातकी खंड के पूर्वार्द्ध के उत्तर कुरु में धातकी वृक्ष है तथा पश्चिमार्द्ध के उत्तर कुरु में नीलगिरि के पास महाधातकी वृक्ष है, इन दोनों का प्रमाण जंबूवृक्ष जितना है, इन दोनों वृक्षों पर अनुक्रम से सुदर्शन और प्रियदर्शन नामक महर्द्धिक देव रहते हैं, इसलिए इसका धातकी खंड द्वीप नाम है, यह इसका शाश्वत नाम है।

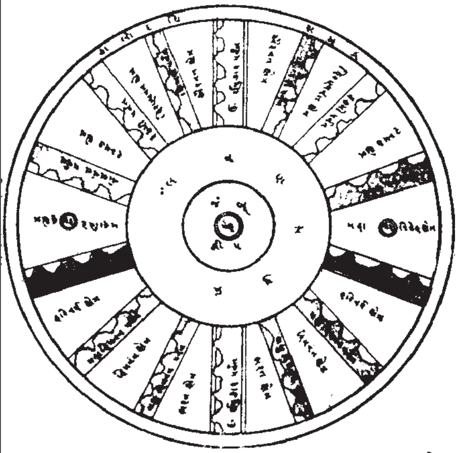

(चित्र सं. 84) - चक्राकार धातकी खंड के 14 आरा 14 पर्वत 14 क्षेत्र

यह द्वीप में शुरु में 1581139 योजन परिधि आकार लम्बा है, तथा अन्त में 41,10,961 योजन परिधि आकार लम्बा है। सीधी लकीर से लम्बा नहीं है। इस द्वीप में उत्तर दक्षिण दिशा में उत्तर दक्षिण लम्बे दो इक्षुकार पर्वत हैं।

इससे लम्बाई में धातकी खंड के दो भाग हो जाते हैं। पूर्व दिशा तरफ का पूर्वी धातकी खंड और पश्चिम तरफ का पश्चिमी धातकी खंड कहलाता है। उत्तर दिशा में इक्षुकार पर्वत शुरु से अंत तक 1000 योजन चौड़ा और 500 योजन समान रूप से ऊंचा है। दक्षिण दिशा में भी इसी प्रकार है। उत्तर दिशा का इक्षुकार पर्वत लवण समुद्र की जगती के अपराजित द्वार से शुरु होकर धातकी खंड के अपराजित द्वार तक पहुंचा है। अथवा लवण समुद्र के उत्तर किनारे से कालोदधि समुद्र के उत्तर दिशा की शुरुआत तक लम्बा है। यानि एक किनारा लवण समुद्र को स्पर्शित होकर दूसरा कालोदधि समुद्र तक है। इसी प्रकार दक्षिण इक्षुकार पर्वत का एक किनारा लवण समुद्र के विजयंत द्वार और दूसरा किनारा धातकी खंड के विजयंत द्वार तक पहुंचा है। इस प्रकार ये दोनों पर्वत भी चार-चार लाख योजन लम्बे हैं। इस प्रकार दो पर्वत द्वीप के बीच में उत्तर दक्षिण होने से धातकी खंड के पूर्व-पश्चिम दो भाग हो गये हैं। इन दोनों धातकी खंड में जंबूद्वीप के जैसे 6-6 वर्षधर पर्वत और 7-7 क्षेत्र हैं।

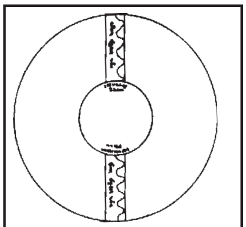

(चित्र सं. 85)
दो इक्षुकार पर्वत

धातकी खंड एक बड़े रथ के पहिए जैसा है, इसमें जंबूद्वीप सहित लवण समुद्र है। यह जम्बूद्वीप चक्र की नाभि जैसा है, और कालोदधि समुद्र चक्र की प्रधि (लोहे की धो) जैसा है। धातकी खंड रुपी महाचक्र में 12 वर्षधर पर्वत 2 इक्षुकार पर्वत ये 14 पर्वत तथा इन आरों के आंतरों में चौदह महाक्षेत्र हैं। ये क्षेत्र आंतरों जैसे हैं। ये सभी आरे जैसे होने से शुरु में (लवण समुद्र के पास) जितने चौड़े हैं, अंत में भी उतने ही (कालोदधि समुद्र के पास) चौड़े हैं। इस प्रकार 14 पर्वत चार-चार लाख योजन लम्बे हैं।

इस धातकी खंड की तीन परिधि है। आभ्यंतर परिधि 15,81,139 योजन, मध्य परिधि 28,46,050 योजन और अंत में 41,10,961 योजन है। शुरु (आदि) तथा अंत की परिधि को जोड़कर आधा करने पर मध्य परिधि आती है। यह तीन परिधि रूप धातकी खंड 12 वर्षधर पर्वत, दो इक्षुकार पर्वत और 14 महाक्षेत्रों वाला है। 14 पर्वत सभी सरीखे विस्तार वाले हैं। अतः इन पर्वत विस्तारों को बाद करने से 14 महाक्षेत्रों का क्षेत्र माप मिल सकता है। 14 पर्वतों का कुल क्षेत्र एक लाख अठहत्तर हजार सात सौ बयालीस योजन है।

एक भरत और एरवत के क्षेत्र का मुख विस्तार 6,614 योजन $\frac{119}{212}$ भाग जितना है, मध्य विस्तार 12,581 योजन $\frac{36}{212}$ भाग जितना है, अन्त्य (बाह्य) का विस्तार 18,547 योजन $\frac{155}{212}$ भाग जितना है।

चार हेमवय हेरण्यवय के क्षेत्रांक का मुख विस्तार 26,458 योजन $\frac{92}{212}$ भाग जितना है। मध्य विस्तार 50,324 योजन $\frac{44}{212}$ भाग जितना और अंत्य विस्तार 74,190 योजन $\frac{196}{212}$ योजन भाग जितना है।

16 हरिवर्ष और रम्यक वर्ष के क्षेत्रांक का मुख विस्तार 105833 योजन $\frac{156}{212}$ भाग, मध्य विस्तार 201298 योजन $\frac{152}{212}$ भाग, योजन बाह्य विस्तार 296763 योजन $\frac{148}{212}$ भाग है।

64 महाविदेह के क्षेत्रांक का मुख विस्तार 423334 योजन $\frac{200}{212}$ भाग है। मध्य विस्तार 805194 योजन $\frac{184}{212}$ भाग बाह्य विस्तार 1187054 योजन $\frac{168}{212}$ भाग है। इस प्रकार 14 महाक्षेत्रों का विस्तार माप है। यहां 64 महाविदेह का अर्थ महाविदेह के 64 खंड समझना।

14 अंतरों में रहे 14 महाक्षेत्र भी धातकी खंड की चौड़ाई अनुरूप वर्षधर पर्वत प्रमाण जितने ही चार-चार लाख योजन लंबे है। और लवण समुद्र के पास क्षेत्रों की चौड़ाई कम है। फिर चक्र के विवर (पोलार) प्रमाण से ज्यादा ज्यादा बढ़ते हुए कालोदधि समुद्र के पास क्षेत्रों की चौड़ाई बहुत ज्यादा है। इससे सभी क्षेत्रों की चौड़ाई एक सरीखी नहीं है, अलग अलग है। उपरोक्त बताये अनुसार है।

धातकी खंड में द्रहों और कुंडों की गहराई जम्बूद्वीप के जितनी ही 10 योजन है। परन्तु विस्तार दुगुना है। मेरु सिवाय के पर्वतों की ऊंचाई जंबूद्वीप के पर्वतों जितनी है। दीर्घ वैताढ्य का विस्तार भी जंबूद्वीप के दीर्घ वैताढ्य जितना ही है। ऊंचाई भी इतनी ही है। परंतु लम्बाई अलग अलग है।

धातकी खंड द्वीप में एक पूर्व दिशा में और एक पश्चिम दिशा में यों दो मेरु पर्वत हैं। प्रत्येक मेरु पर्वत की ऊंचाई 85000 योजन है, मूल में एक हजार योजन है। धातकी खंड में रहे मेरु पर्वत और जंबूद्वीप में रहे मेरु पर्वत का फरक इस प्रकार है-

विवरण मेरू पर्वत	**जंबूद्वीप में**	**धातकी खंड द्वीप में**
मेरु मूल से समभूमि तक ऊंचाई	1000 योजन	1000 योजन
मेरु समभूमि से नंदन वन तक ऊंचाई	500 योजन	500 योजन
मेरु नन्दन वन से सौमनस वन तक ऊंचाई	62500 योजन	55500 योजन
मेरु सौमनस वन से पंडक वन तक ऊंचाई	36000 योजन	28000 योजन
मेरु की कुल ऊंचाई	**100000 योजन**	**85000 योजन**

इसी प्रकार विस्तार भी बताया है-

मेरु का विस्तार विवरण	जंबूद्वीप में	धातकी खंड द्वीप में
मूल में विस्तार	10090 $\frac{10}{11}$ योजन	9500 योजन
समभूमि पर विस्तार	10000 योजन	9400 योजन
नन्दन वन में बाह्य विस्तार	9954 $\frac{5}{11}$ योजन	9350 योजन
नन्दन वन में आभ्यंतर विस्तार	8954 $\frac{5}{11}$ योजन	8350 योजन
सौमनस वन में बाह्य विस्तार	4272 $\frac{8}{11}$ योजन	3800 योजन
सौमनस वन में आभ्यंतर विस्तार	3272 $\frac{8}{11}$ योजन	2800 योजन
शिखर पर मेरु का विस्तार	1000 योजन	1000 योजन

धातकी खंड द्वीप चार लाख योजन चौड़ा है, इसमें जंबूद्वीप से दुगुने दोनों तरफ दो वनमुख हैं, जो 11681 योजन हैं, दुगुने विस्तार वाले 8 वक्षस्कार पर्वत 8000 योजन के तथा दुगुने विस्तार वाली 6 अंतर नदियां 1500 योजन की है। 16 विजयों के 153654 योजन हैं। इनका कुल योग 174842 योजन है। धातकी खंड की चार लाख की चौड़ाई से घटाने से 400000-174842=225158 योजन आये, उसमें से 9400 योजन मेरु की चौड़ाई घटाने से 215758 योजन रहा। उसमें पूर्व और पश्चिम रूप दो दिशा में भाग करने से 107879 योजन आया। इतनी लम्बाई पूर्व और पश्चिम के दोनों तरफ भद्रशाल वन की रही। चौड़ाई 88वां भाग होने से भाग देने पर 1225 योजन और 89 शेष रहता है, यह कुछ ही भाग न्यून रहने से 1226 योजन जितनी चौड़ाई उत्तर तथा दक्षिण में हैं। जंबूद्वीप के मेरु की 22000 योजन तथा चौड़ाई 88वां भाग होने से 250 योजन है।

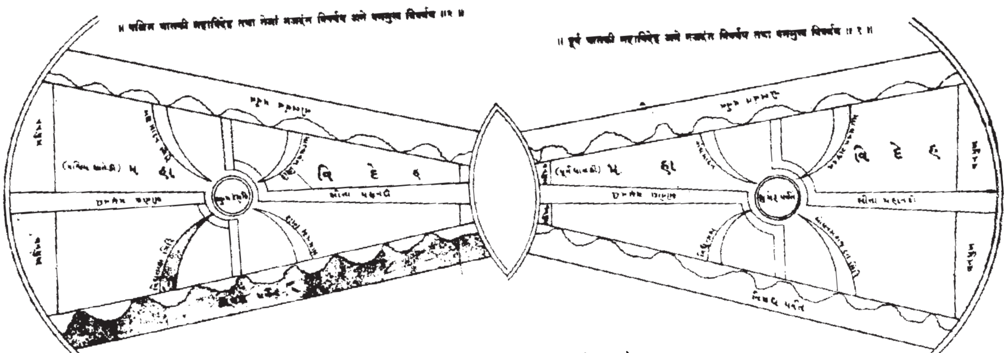

चित्र संख्या - 86-87 पूर्व-पश्चिम धातकी महाविदेह और गजदंत तथा वनमुख

इस द्वीप में नदियों का विस्तार, उनकी जीभ का विस्तार, जाडाई, लम्बाई, कुंड, उनके द्वार, कुंड की वेदिका के तीन द्वार, कुंड का द्वीप, वनमुख का विस्तार, द्रहों का विस्तार, दीर्घ वैताढ्य, ये सभी जंबूद्वीप से दुगुने-दुगुने जानना।

मेरु पर्वत से बाहर के गजदंत गिरि का पूर्व धातकी खंड के मेरु पर्वत से पूर्व तरफ की पहली और 16वीं विजय के पास सौमनस और माल्यवंत पर्वत तथा पश्चिम की तरफ वहां के महाविदेह के 17वें और 32वें विजय के पास विद्युत्प्रभ और गंधमादन ये दो गजदंत यों चारों गजदंत गिरि बाहर तरफ यानि कालोदधि समुद्र तरफ के हैं।

चारों की लम्बाई 569260 योजन है। पूर्व धातकी खंड के मेरु से पूर्व के सौमनस और माल्यवंत ये दो जंबूद्वीप सम्मुख के चार गजदंत गिरि की लम्बाई 356227 योजन है।

इस प्रकार पूर्व धातकी खंड के दो गजदंत बहुत लम्बे हैं, तथा पश्चिम धातकी खंड के दो गजदंत बहुत छोटे हैं। कालोदधि समुद्र तरफ के धातकी खंड के गजदंत स्थान की परिधि बहुत मोटी होने से महाविदेह क्षेत्र का विस्तार बहुत है। वहां के चार पर्वतों ने स्वयं की वक्र लम्बाई से प्रत्येक देश के अर्द्ध विस्तार जितने क्षेत्र को रोका है। इसलिए ज्यादा लम्बे हैं। लवण समुद्र की तरफ के गजदंत के स्थान रहा धातकी खंड परिधि में छोटा होने से ये चार गजदंत कम लम्बे हैं। चारों गजदंतों की लम्बाई में फेरफार है, दोनों छोर जुड़े नहीं हैं, परंतु दूर से जुड़े हों ऐसा दिखता है। इससे अर्द्ध वर्त्तुलाकार बने दो गजदंत गिरि की लम्बाई का योग 925486 योजन है, यह कुरुक्षेत्र का धनुःपृष्ठ भी है (इतना ही क्षेत्रफल) यानि अर्द्ध लम्ब वर्त्तुलाकार कुरुक्षेत्र की यह आभ्यंतर परिधि है। धनुःपृष्ठ के प्रसंग में बाह्य परिधि नहीं होने से धनुःपृष्ठ में सभी जगह आभ्यंतर परिधि ही गिननी है। जंबूद्वीप के गजदंत से इन गजदंत गिरि की दुगुनी चौड़ाई होने से, वर्षधर पर्वत के पास एक हजार योजन चौड़े और छोर पर तलवार की धार जितने पतले हैं तथा ऊंचाई में भी शुरु में 400 योजन और छोर पर 500 योजन होने से अश्वस्कंध आकार के हैं। वक्षस्कार पर्वत की लम्बाई क्षेत्र प्रमाण से है।

क्षेत्रांक दो सो बारह- भरत एरवत एक खंड प्रमाण के है, इस प्रमाण से-

दो भरत दो एरवत	1×2 खंड × 2	खंड (क्षेत्रांक) 4
हेमवंत हेरण्यवंत	4×2×2	खंड 16
हरिवर्ष रम्यक वर्ष	16×2×2	खंड 64
महाविदेह क्षेत्र	64×1×2	खंड 128

यों कुल 212 क्षेत्रांक होते हैं। वर्षधर पर्वतों से घिरे क्षेत्रों का 212 खंडों जितना विस्तार 14 क्षेत्रों में समाहित हैं। इस प्रकार धातकी खंड के 212 क्षेत्रांक होते है।

चुल्ल हिमवंत गिरि दो खंड का है, शिखरी भी दो खंड का है इससे-

चुल्ल हिमवंत शिखरी	2×2×2	8 खंड गिरि अंक
महा हिमवंत रूक्मि पर्वत	8×2×2	32 खंड गिरि अंक
निषध और नीलवंत पर्वत	32×2×2	128 खंड गिरि अंक

यों कुल 168 गिरि अंक हुए। यों कुल 212 क्षेत्र अंक और 168 गिरि अंक मिलाने पर 380 खंड में धातकी खंड विभक्त है। खंड का प्रमाण जंबूद्वीप में कहा वैसा ही समझना। जंबूद्वीप 190 खंड प्रमाण है, इससे धातकी खंड दुगुना खंडों वाला होने से 380 खंड वाला है।

ध्रुवांक- जो अंक गुणाकार आदि में बारंबर उपयोगी हो, वह ध्रुव (निश्चित) अंक कहलाता है। भरतादि सात महाक्षेत्रों का मुख विस्तार (लवण समुद्र के पास का क्षेत्र) जानने के लिए 1402297 अंक बार बार गुणा कार लेना पड़ता है, इसलिए मुख विस्तार जानने का यह ध्रुवांक है, इसी प्रकार सात महाक्षेत्रों का मध्य विस्तार

जानने हेतु 2667208 यह मध्य ध्रुवांक है। इसी तरह सात महाक्षेत्रों के अंतिम किनारों का विस्तार जानने हेतु 3932119 उपयोगी होने से यह अंतिम ध्रुवांक कहलाता है। क्षेत्रांक को ध्रुवांक से गुणा कर उसमें 212 का भाग देने से जो आवे वह आदि मध्य अंत कहलाता है। धातकी खंड द्वीप की आदि मध्य अंत ये तीन परिधियों में से पर्वतों का क्षेत्र घटाकर शेष रही परिधि जितनी जगह में सात महाक्षेत्र हैं, इन बाकी रहे क्षेत्रों को यहां ध्रुवांक कहा है।

मेरु पर्वत के नीचे मेरु सहित भद्रशाल वन	225158 योजन लम्बाई
16 विजयों का विस्तार	153654 योजन लम्बाई
8 वक्षस्कार का विस्तार	8000 योजन लम्बाई
6 अन्तर नदियों का विस्तार	1500 योजन लम्बाई
2 वनमुखों का विस्तार	11688 योजन लम्बाई
महाविदेह की लम्बाई	400000 योजन लम्बाई

इन पांचों पदार्थों (प्रारंभ के 5) में से जिसका विस्तार जानना हो, उस सिवाय के चार पदार्थों के विष्कंभ का योग करके 4 लाख में से बाद (घटा) कर के उस पदार्थ की संख्या से भाग देने पर प्रत्येक का विस्तार आता है।

प्रत्येक विजय का विस्तार 9603 $\frac{6}{16}$ योजन है, अन्तर नदी 250 योजन चौड़ी है, प्रत्येक वक्षस्कार पर्वत एक हजार योजन चौड़ा है, प्रत्येक वनमुख 5844 योजन चौड़ा है। प्रत्येक विजय की नगरियों के नाम तथा महावृक्षों के नाम जंबूद्वीप के अनुसार है, परन्तु पूर्व धातकी खंड के उत्तर कुरुक्षेत्र में धातकी वृक्ष और पश्चिम धातकी खंड के उत्तर कुरुक्षेत्र में महाधातकी वृक्ष होता है। यह फरक जंबूद्वीप से है। इन दोनों वृक्षों पर अनुक्रम से सुवर्ण कुमार जाति के सुदर्शन और प्रियदर्शन देव तथा उनके भवन हैं।

कालोदधि समुद्र

धातकी खंड को चारों तरफ से घेर कर रहा है, कालोदधि समुद्र। यह गोल वलयाकार है और यह सम चक्रवाल संस्थान से स्थित है। इस समुद्र का चक्रवाल विष्कंभ 8 लाख योजन का है, इसकी परिधि 9170605 योजन से कुछ अधिक है। इस समुद्र के चक्रवाल विष्कंभ और परिधि की गाथाएं-

अट्ठेव सयसहस्सा, कालोओ चक्कवालओ रुंदो।
जोयण सहस्समेगं, ओगाहेणं मुणेयव्वो ।।1।।
ईगनउई सयसहस्सा, हवंति तह सत्तरि सहस्सा।
छच्चसया पंचहिया, कालोय परिरओ एसो ।।2।।

यह समुद्र चारों ओर से एक पद्मवर वेदिका और वनखंड से घिरा है। वर्णन पूर्ववत् समझें। इस समुद्र के विजय आदि चार द्वार है। जो पूर्व आदि दिशाओं में क्रम से है। कालोदधि समुद्र के पूर्वांत भाग में पुष्कर द्वीप है। उसके पूर्वार्द्ध से पश्चिम में शीतोदा महानदी के ऊपर कालोद समुद्र का विजय द्वार है, आठ योजन ऊंचा और अन्य वर्णन जंबूद्वीप के विजय द्वार के अनुसार जानना। कालोद समुद्र के दक्षिण दिशा के अंत में पुष्कर द्वीप के दक्षिणार्द्ध के उत्तर में कालोद समुद्र का वैजयंत द्वार है। इस समुद्र के पश्चिमांत में पुष्करार्द्ध द्वीप के पश्चिमार्द्ध के पूर्व भाग में

सीता महानदी के ऊपर जयंत द्वार है। इस समुद्र के उत्तर में पुष्करवर द्वीप के उत्तरार्द्ध के दक्षिण में अपराजित नामक द्वार है, बाकी वर्णन जंबूद्वीप के विजय द्वार, विजया राजधानी अनुसार है। 2292646 योजन और तीन कोस एक द्वार से दूसरे द्वार का अंतर है। चारों द्वारों की जाडाई अठारह योजन होती है, यह 18 योजन कालोद समुद्र की परिधि 9170605 योजन में से घटाने से 9170587 योजन होती है, इसमें चार से भाग देने से एक एक द्वार का अंतर 2292646 योजन तीन गाऊ आता है।

छायाला छच्चसया, बाणउई सहस्स लक्ख बावीसं।

केसाय तिन्नि दारंतरं तु, कालोय हिस्स भवे ।।1।।

इस समुद्र का पानी स्वादिष्ट और पुष्टिकारक है, स्वाद में मन को आनंदित करने वाला होने से पेशल और काला है, इससे इसका नाम कालोदधि है। काल और महाकाल नामक दो महर्द्धिक देव भी वहां रहते है, इससे भी कालोदधि नाम है, यह शाश्वत नाम है। लवण समुद्र में गोतीर्थ है, यहां गोतीर्थ नहीं है, वेल और शिखा भी इस समुद्र में नहीं है, जलवृद्धि और पाताल कलश भी नहीं होते, यहां ज्वार-भाटा (पानी का उतार चढ़ाव) नहीं होता। वेल आदि नहीं होने से यहां वेलंधर देव आदि नहीं होते, उनके आवास पर्वत आदि भी नहीं है। समुद्र का पानी स्थिर है, बादलों के पानी जैसा स्वादिष्ट पानी है। पूर्वार्द्ध का अधिपति देव काल और पश्चिमार्द्ध का महाकाल देव है। धातकी खंड द्वीप से स्वयंभूरमण समुद्र तक प्रत्येक द्वीप और समुद्र में दो-दो अधिपति देव होते हैं। धातकी खंड के अंतिम छोर से पुष्कर द्वीप तक सभी जगह यह समुद्र एक हजार योजन गहरा है। धातकी खंड के पूर्व दिशा में धातकी खंड की जगती से कालोदधि समुद्र में 12 हजार योजन दूर जाने पर धातकी खंड के 12-12 चंद्र सूर्य द्वीप हैं (जीवाभिगम सूत्र में लवणाधिकार में धातकी खंड के चंद्र सूर्य के 6-6 द्वीप लवण समुद्र में नहीं कहे परंतु कालोदधि में कहे हैं) कालोदधि समुद्र की जगती से यानि पूर्व दिशा में पुष्कर द्वीप के आभ्यंतर किनारे से 12000 योजन दूर कालोदधि में आने पर (पूर्व दिशा में) कालोद समुद्र के 42 चंद्र के 42 द्वीप हैं और पश्चिम दिशा में पुष्कर द्वीप के आभ्यंतर किनारे से कालोद समुद्र में 12000 योजन दूर जाने पर कालोद समुद्र के 42 सूर्य के 42 द्वीप हैं। कालोद समुद्र में धातकी खंड के 12 चंद्र 12 सूर्य कालोदधि समुद्र के 42 चंद 42 सूर्य+काल+महाकाल देव के 2 ये सभी कुल मिलाकर 110 द्वीप हैं।

अधिपति देवों के दो द्वीपों पर दो भवन हैं। 108 द्वीप पर 108 प्रासाद हैं। अब आगे आगे के द्वीप और समुद्रों के चंद्र सूर्य के द्वीप अपने अपने नाम वाले आगे के समुद्र में है। इस प्रकार विचार करने से धातकी खंड के चंद्र सूर्य लवण में मानना योग्य नहीं लगता।

पुष्कर द्वीप

कालोदधि समुद्र को चारों तरफ से घेरे हुए पुष्कर द्वीप है, गोल वलयाकार है। सम चक्रवाल संस्थान से स्थित है। 16 लाख योजन के समचक्रवाल विष्कंभ वाला है, इसकी परिधि एक करोड़ बराणु लाख निवासी हजार आठ सौ चौराणवे योजन से कुछ अधिक है। एक पद्मवर वेदिका और वनखंड से चारों ओर से घिरा है। वर्णन जंबूद्वीप वत् समझें। विजय आदि चार द्वार पूर्व दिशा से क्रम से है। पुष्कर वर द्वीप के पूर्वार्द्ध के अंत में पुष्कर वर समुद्र की पश्चिम दिशा में पुष्करवर द्वीप का विजय द्वार है, इसी प्रकार तीनों द्वारों का भी वर्णन समझें (जम्बूद्वीप वत्)। इस द्वीप में सीता

सीतोदा नदियां नहीं कहनी है। इसके प्रत्येक द्वार का अंतर 4822469 योजन का है। चारों द्वारों की जाडाई 18 योजन है, इस द्वीप की 19289894 योजन परिधि से 18 योजन घटाने से 19289876 योजन प्रमाण रहती है इसमें 4 का भाग देने से 4822469 योजन यह चारों द्वारों का परस्पर अन्तर है। इस द्वीप में बहुत से पद्म वृक्ष, पद्म वन हमेशा फल फूल गुच्छों वाले होते हैं, इससे इसका नाम पुष्कर द्वीप यह शाश्वत नाम है, यहां पद्म और महापद्म नाम के दो वृक्षों पर पद्म और पुंडरीक दो देव बसते हैं, इससे भी पुष्कर द्वीप यह शाश्वत नाम है-

पउमेय महापउमे रुक्खा, उत्तर कुरु सु जंबूसमा।

एएसु वसंति सुरा, पउमे तह पुंडरीअे य ।।1।।

पुष्कर द्वीप के मध्य भाग में वलयाकार मानुषोत्तर पर्वत है, इससे पुष्कर द्वीप के आभ्यंतर पुष्करार्द्ध और बाह्य पुष्करार्द्ध यों दो विभाग होते हैं। धातकी खंड के दो ईक्षुकार की समश्रेणी में सीधी लकीर आभ्यंतर पुष्करार्द्ध में भी दो ईक्षुकार पर्वत हैं। धातकी खंड के जैसे है। इन दो ईक्षुकार का एक सिरा (छोर) कालोदधि समुद्र और दूसरा छोर मानुषोत्तर पर्वत को लगा हुआ है, इससे कालोदधि से मानुषोत्तर पर्वत तक आठ लाख योजन लम्बे और पूर्व पश्चिम दो हजार योजन चौड़े दो ईक्षुकार पर्वत हैं। इससे पूर्व तरफ का भाग पूर्व पुष्करार्द्ध और पश्चिम तरफ का पश्चिम पुष्करार्द्ध कहलाता है। ये दोनों पर्वत 500 योजन ऊंचे है। धातकी खंड की तरह यहां भी 12 वर्षधर पर्वत हैं। पुष्करार्द्ध द्वीप भी चक्र के आराओं जैसा है, इसमें पर्वत धातकी खंड के वर्षधर पर्वतों से दुगुने विस्तार और दुगुनी लम्बाई वाले हैं।

दक्षिण ईक्षुकार की पूर्व दिशा में पहला भरत क्षेत्र, उससे उत्तर में चुल्ल हिमवंत पर्वत, आगे हिमवंत क्षेत्र, फिर महाहिमवंत पर्वत, उससे आगे हरिवर्ष क्षेत्र, फिर निषध पर्वत, फिर महाविदेह क्षेत्र, फिर नीलवंत पर्वत, फिर रम्यक क्षेत्र, रूक्मी पर्वत, हेरण्यवत क्षेत्र, शिखरी पर्वत और आगे एरवत क्षेत्र उसके बाद उत्तर का ईक्षुकार पर्वत है। इस प्रकार पुष्करार्द्ध में क्षेत्र और पर्वत अनुक्रम से है। इसी प्रकार पश्चिम पुष्करार्द्ध में भी दक्षिण ईक्षुकार पर्वत की पश्चिम में पहला भरत और अंत में एरवत क्षेत्र है, उसके बाद उत्तर का ईक्षुकार पर्वत है।

धातकी खंड में 12 वर्षधर पर्वतों का आकार चक्र के आरे जैसे है, और 14 महाक्षेत्रों के आकार आंतरा की तरह जैसा पहले कहा है, उसी प्रकार पुष्करार्द्ध में भी चक्र के आरों तथा आंतरों जैसे पर्वत और क्षेत्रों के आकार क्रमशः है। क्षेत्रों और वर्षधर पर्वतों का आकार धातकी खंड जैसा समझना, परन्तु लम्बाई दुगुनी जानना।

धातकी खंड के भद्रशाल वन से पुष्करार्द्ध के मेरू का भद्रशाल वन पूर्व-पश्चिम में दुगुना है, यानि 215751 योजन है, इस वन का उत्तर दक्षिण विस्तार पूर्व पश्चिम विस्तार से 88वां भाग 2451 योजन है, तथा पुष्करार्द्ध के दो मेरू तथा दो ईक्षुकार पर्वत का विस्तार धातकी खंड के मेरू तथा ईक्षुकार जितना जानना।

कालोदधि समुद्र तरफ के पूर्व पुष्करार्द्ध के दो और पश्चिम पुष्करार्द्ध के दो यों चार गजदंत पर्वत आभ्यंतर गजदंत कहलाते हैं। पूर्वार्द्ध के विद्युत्प्रभ और गंधमादन तथा पश्चिमार्द्ध के सौमनस और माल्यवंत यों चार गजदंत आभ्यंतर गजदंत है। उसका स्वरूप धातकी खंड जैसा है। यानि इन चार गजदंत के स्थान पर महाविदेह का विस्तार कम है। और पूर्व कहे चार गजदंतों का निषध नीलवंत पर्वत के पास चौड़ाई दो हजार योजन ऊंचाई 400 योजन फिर अनुक्रम से चौड़ाई बढ़ते-बढ़ते मेरू पर्वत के पास 500 योजन ऊंचे और अंगुल के असंख्यातवें भाग पतले हैं।

नदी, नदी के कुंड, नदी कुंड के द्वीप, वर्षधर पर्वत, पर्वतों पर के द्रह, द्रहों के कमल, वगैरह तथा वक्षस्कार आदि पर्वत जंबूद्वीप के पदार्थों से चार गुणा प्रमाण वाले और सरीखे यानि जंबूद्वीप के पदार्थों से चार गुणी लम्बाई चौड़ाई है।

8814921 इस आभ्यंतर ध्रुवांक के पूर्व में (धातकी खंड) कही विधि से क्षेत्रांक से गुणा करना। यह आदि विस्तार है। 11344743 यह पुष्करार्द्ध द्वीप के मध्य भाग का ध्रुवांक और 13874565 यह अंत्य भाग का ध्रुवांक है। भरत एरवत का एक, हेमवय हैरण्यवय का 4, हरिवर्ष रम्यकवर्ष का 16, महाविदेह का 64 क्षेत्रांक है, इन्हे आदि, मध्य, अंत ध्रुवांक से गुणा करके 212 से भाग देने पर यह आता है-

क्षेत्र	आदि विस्तार	मध्य विस्तार	अन्त्य विस्तार
2 भरत 2 एरवत का	$41579 \frac{113}{212}$	$53512 \frac{199}{212}$	$65446 \frac{13}{212}$
2 हेमवय, 2 हैरण्यवय का	$166319 \frac{56}{212}$	$214051 \frac{160}{212}$	$261784 \frac{52}{212}$
2 हरिवर्ष, 2 रम्यक वर्ष का	$655277 \frac{12}{212}$	$856207 \frac{4}{212}$	$1047136 \frac{208}{212}$
2 महाविदेह क्षेत्र का	$2661108 \frac{48}{212}$	$3424828 \frac{16}{212}$	$4188547 \frac{196}{212}$

यहां पुष्करार्द्ध में महाविदेह की विजयों को छोड़ शेष पाँच विस्तारों का क्षेत्रफल 483292 योजन है-इस प्रकार-

दो वनमुख का विस्तार	11688 × 2	=	23376 योजन
6 अन्तर नदी का विस्तार	500 × 6	=	3000 योजन
8 वक्षस्कार का विस्तार	2000 × 8	=	16000 योजन
2 दिशा में भद्रशाल वन विस्तार	215758 × 2	=	431516 योजन
1 मेरु पर्वत	9400 × 1	=	9400 योजन
			483292 योजन पाँच विस्तारों का क्षेत्रफल

8 लाख योजन पुष्करार्द्ध के विस्तार में से 483292 योजन वनमुख आदि का विस्तार घटाने से 316708 योजन आता है इसमें 16 विजयों का भाग देने से 19794 योजन एक विजय की चौड़ाई आती है। इस प्रकार पांचों में से किसी भी एक का विस्तार जानने हेतु बाकी चार का विस्तार जोड़कर 8 लाख से घटाकर पदार्थ का विस्तार जाना जा सकता है।

पुष्करार्द्ध में 28 महानदियां है, ये आभ्यंतर प्रवाह वाली है, यानि कि कालोद समुद्र तरफ बहने वाली 14 महानदियां कालोद समुद्र में जल में मिल जाती है। परन्तु बाह्य प्रवाह वाली 14 महानदियां यानि मानुषोत्तर तरफ बहने वाली 14 महानदियां मानुषोत्तर पर्वत के नीचे घुसकर वहीं भूमि में विलीन हो जाती है। (इन महानदियों का प्रतिदिन बहता 1022 योजन मात्र अल्प विस्तार की पर्वत भूमि में समा जाना यह (जगत्स्वभाव) जगत स्वभाव है। भूमि का अति शोषण स्वभाव ही समा सकता है।

पुष्करार्द्ध के आदि ध्रुवांक 8814921 में गिरि अंक 355684 जोड़ने से आदि परिधि 9170605 योजन होती है। वहीं मध्य ध्रुवांक 11344743 में गिरि अंक 355684 जोड़ने से मध्य परिधि 11700427 योजन होती है। और अर्द्धद्वीप के अंत्य ध्रुवांक 13874565 में 355684 जोड़ने से 14230249 योजन अंत्य परिधि होती है।

मानुषोत्तर पर्वत

कालोदधि समुद्र से चारों ओर लिपटा हुआ पुष्करवर द्वीप है, यह कालोद समुद्र से दुगुना यानि कि 16 लाख योजन विस्तार का है। इस द्वीप के वलयाकार मध्य भाग में यानि कि 8 लाख योजन के दो विभाग हो, ऐसे पहले विभाग के छोर और दूसरे विभाग के शुरुआत में मानुषोत्तर पर्वत आया है। यह भी द्वीप जैसा ही गोल है वलयाकार है, इससे यह पर्वत पुष्कर द्वीप के पहले अर्द्धभाग से बाहर गिना जाता है, क्योंकि इसका विस्तार दूसरे अर्द्ध भाग में है। कालोद समुद्र को स्पर्श कर रहा यह पहला आभ्यंतर पुष्करार्द्ध संपूर्ण 8 लाख योजन का है। दूसरा भाग देशोन आठ लाख योजन का है। इस प्रकार आभ्यंतर पुष्करार्द्ध से लिपटा यह पर्वत मानो पुष्करार्द्ध द्वीप की अथवा मनुष्य क्षेत्र की जगती हो, ऐसा लगता है।

यह पर्वत 1721 योजन ऊंचा, 430 योजन एक कोस जमीन में गहरा है। मूल में 1022 योजन चौड़ा, मध्य में 723 योजन चौड़ा, ऊपर 424 योजन चौड़ा है। जमीन में इसकी परिधि 14230249 योजन से कुछ अधिक है। बाहर की तरफ 14232932 योजन है। यह पर्वत मूल में विस्तार वाला, मध्य में संक्षिप्त ऊपर में संकोचित है। बाह्य भाग में दर्शनीय है, यह पर्वत सिंह निषादी आकार से यानि जिस प्रकार सिंह आगे के दो पांव लम्बे करके या खड़े रखकर और पीछे के दो पांव संकोच कर बैठा हो ऐसा आकार युक्त है। इस प्रकार बेठते पीछे नीचा और आगे अनुक्रम से मुखस्थान पर बहुत ऊंचा दिखता है, ऐसे आकार से है। इससे आधे यव (जव) की राशि-ढ़गला जैसा संस्थान है। यानि इस द्वीप के अत्यन्त मध्य भाग में वलयाकार चारों तरफ एक पर्वत की कल्पना करें जो मूल में 2044 योजन शिखर पर 848 योजन विस्तार मय हो। ऐसा पर्वत कल्पना करके अति मध्य भाग से दो विभाग करके अन्दर के विभाग को उठा लें, कहीं रख दें, तो बाह्य अर्द्ध भाग जैसा आकार का बाकी रहा है, वैसे आकार का आधा यव का आकार का यह मानुषोत्तर पर्वत है। यह पर्वत संपूर्णतया जंबूनंदमय (हल्का रक्त वर्ण) है। इसके दोनों तरफ दो पद्मवर वेदिका और वनखंड वर्त्तुलाकार से हैं। (वर्णन पूर्ववत् समझें)। इस पर्वत के अन्दर मनुष्य रहते है, ऊपर सुवर्णकुमार रहते हैं, इस पर्वत से आगे बाहर देव रहते हैं। इससे इसका नाम मानुषोत्तर पर्वत है। या इस पर्वत के बाहर मनुष्य अपनी शक्ति से कभी गये नहीं, जाते नहीं, जायेंगे भी नहीं। जंघाचारण, विद्याचारण मुनि जाते है या फिर जिनका देव अपहरण करे, वे ही इससे पार जाते हैं, इससे भी इसका नाम पड़ा है, यह शाश्वत नाम है। मानुष=मनुष्य, उत्तर=छोर, किनारे, सीमा होने से मानुषोत्तर नाम है।

जहां तक यह पर्वत है, वहां तक यह मनुष्य लोक है। जहां तक भरत आदि क्षेत्र और वर्षधर पर्वत हैं, वहां तक मनुष्य लोक है। जहां तक घर है, घरों में आते जाते है, गांव है, जहां तक अरिहंत, चक्रवर्त्ती, बलदेव, वासुदेव, प्रतिवासुदेव, चारण ऋद्धि धारी मनुष्य, विद्याचारण मुनि, साधु, साध्वी श्रावक, श्राविका, भद्रप्रकृति वाले मनुष्य है। वहां तक मनुष्य लोक है। जहां तक समय, आवलिका, श्वासोच्छवास, स्तोक, लव, मुहुर्त्त, दिवस, अहोरात्रि, पक्ष, मास, ऋतु, अयन, संवत्सर, युग, सौवर्ष, हजार वर्ष, लाख वर्ष, पूर्वांग, पूर्व, त्रुटितांग, त्रुटित, अडड, अवव, हुहुक, उत्पल, पद्म, नलिन, अर्थनिकुर, अयुत, नयुत, प्रयुत, चूलिका, शीर्ष प्रहेलिका, पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी है, वहां तक यह मनुष्य लोक है। 84 लाख वर्ष का एक पूर्वांग, 84 लाख पूर्वांगों का एक पूर्व, इस प्रकार से आगे-आगे शीर्ष प्रहेलिका तक समझना, इसके बाद उपमा काल होता हैं। पल्योपम का

माप पाला से गिना जाता है, ऐसे 10 क्रोड़ा क्रोड़ी पल्योपम का एक सागरोपम होता है। दस क्रोड़ा क्रोडी सागरोपम का एक उत्सर्पिणी और इतने ही काल (वर्षों का) अवसर्पिणी काल होता है। जहां तक बादर विद्युत (अग्नि) और बादर मेघ के शब्द है, जहां तक स्वाभाविक (उदार) मेघ उत्पन्न होते हैं (यानि कि अढ़ाई द्वीप के बाहर असुरादि देवों द्वारा विकुर्वित मेघ गर्जना और बिजली बरसात यह सब हो सकता है, परन्तु स्वाभाविक नहीं होते) बादर तेउकाय, आगर है, नदियां है, (यहां नदियां कही है, वे शाश्वती है, परन्तु अशाश्वती भी हो सकती है, क्योंकि नदियां होगी तो ही वहां के पशु पक्षी पानी पी सकते हैं, जलाशय नहीं हो तो विकलेन्द्रिय और समुर्च्छिम पंचेन्द्रिय नहीं हो सकते।) निधि है, जहां तक चंद्रोपराग, सूर्योपराग, चन्द्र परिवेश, सूर्य परिवेश, प्रतिचंद्र, प्रतिसूर्य, इन्द्रधनुष, उदकमत्स्य, कपि हसित है। चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र, ताराओं का गमना गमन होता है, उनकी घट बढ़ होती है, अवस्थितपणा है। उनके संस्थान की स्थिति है, वहां तक यह मनुष्य लोक है। यानि मनुष्य लोक के बाहर ये सभी वस्तुएं नहीं, परन्तु मनुष्य लोक में ही है।

संख्यात-असंख्यात द्वीप समुद्र

उपरोक्त वर्णन अढ़ाई द्वीप का है। इसके अतिरिक्त दूसरे अन्य द्वीप समुद्र हैं। इन द्वीप समुद्रों में मनुष्य बस्ती नहीं होती है। तिर्यंच जीव होते हैं। इन सभी द्वीप समुद्रों में सर्वप्रथम पुष्करवरोद समुद्र है।

पुष्करवर द्वीप को चारों ओर से घेरे हुए पुष्कर वरोद समुद्र है, गोल वलयाकार संथान युक्त है, इसका चक्रवाल विष्कंभ और परिधि संख्यात लाख योजन की है। इसके पूर्वादि में दिशाक्रम से विजयादि द्वार हैं। पुष्करवरोदधि के पूर्वार्द्ध के अंत में वरूण द्वीप की पूर्वार्द्ध की पश्चिम दिशा में पुष्करोद समुद्र का विजय द्वार है, बाकी वर्णन जंबूद्वीप के विजय द्वार के समान है। पुष्करोद समुद्र के दक्षिणांत में अरूणवर द्वीप के दक्षिणार्द्ध के उत्तर में पुष्करोद समुद्र का वैजयंत द्वार हैं, पुष्करोदधि के पश्चिमांत में अरूणवर द्वीप के पश्चिमार्द्ध की पूर्वार्द्ध में पुष्करोद समुद्र का जयंत द्वार है। उत्तर के अंत में अरूणवर द्वीप की दक्षिण दिशा में पुष्करोदधि का अपराजित द्वार है। सभी द्वारों का संख्यात लाख योजन का अंतर है। यह समुद्र स्वच्छ, पथ्य, हलका, स्वभाव से स्फटिक रत्न जैसा निर्मल, और प्रकृति से इसमें मधुर रसवाला पानी है। वहां श्रीधर और श्री प्रभ नामक दो महर्द्धिक देव रहते हैं। वहां संख्यात चंद्र, सूर्य वगैरह हैं।

इस समुद्र के चारों ओर वरूणवर द्वीप है, गोल वलयाकार है, समचक्रवाल विष्कंभ युक्त एवं संख्यात लाख योजन का है, उसी प्रकार परिधि है, चारों ओर पद्मवर वेदिका एवं वनखंड है अन्य वर्णन पूर्ववत् समझें यहां वरूण और वरूण प्रभ देव रहते हैं।

इस द्वीप के चारों तरफ वरूणोदधि समुद्र गोल, वलयाकार संस्थान युक्त है। इसका विष्कंभ (चौड़ाई) परिक्षेप (परिधि) संख्यात लाख योजन है। इसका पानी चंद्र प्रभासुरा, मणिशलाका सुरा, वरवारूणी, पत्रासव, पुष्पासव, कलासव, सोयासव, शहद, गुड़, महुड़ा से बने आसव, जाइना नामक सुगंधी फूलों का मेर नामक शराब होता है, वैसा जाति प्रसन्न सुरा, खजूरसार, द्राक्षासार, गन्ने के रस का स्वाद वाला पानी होता है, इससे भी विशिष्ट इस समुद्र के पानी का स्वाद है। यहां वारूणि और वरणकांत नामक दो देव रहते हैं। यहां संख्याता ज्योतिषी देव हैं।

इसके बाद क्षीरवर द्वीप है, वर्णन ऊपर कहे अनुसार समझें यहां पुंडरीक और पुष्पदंत नामक देव हें। इस द्वीप को क्षीरोद समुद्र ने घेर रखा है इस समुद्र के पानी का स्वाद चक्रवर्त्ती के कल्याण भोजन जैसे स्वाद का है।

यहां विमल और विमलप्रभ देव रहते हैं। इसके चारों ओर घृतवर द्वीप है वहां कनक और कनकप्रभ देव रहते हैं। उसके बाद घृतोदक समुद्र है, इसका पानी पीला रंग का है, कांत और सुकांत देव बसते हैं। इसके बाद इक्षुवर द्वीप (क्षोदोदक द्वीप) यहां सुप्रभ, महाप्रभ देव है। इसके आगे क्षोदोदक समुद्र है, वहां पूर्णभद्र और मणिभद्र देव रहते हैं। इससे आगे आठवां नंदीश्वर द्वीप है।

क्षोदोद समुद्र को घेरकर नंदीश्वर द्वीप है, गोल वलयाकार है, सम चक्रवाल विष्कंभ वाला है। इस द्वीप में छोटी बड़ी कईं बावड़ियां हैं, इन जलाशयों (बावड़ियों) में गन्ने (शेरड़ी) के रस जैसा पानी भरा है, इसमें बहुत से उत्पाद पर्वत हैं, सभी वज्र रत्न के हैं। प्रत्येक पर्वत पर आसन है, मंडप और शिलापट्टक हैं, ये सभी वज्र रत्न के हैं। यहां बहुत से व्यंतर देव देवी उठते, सोते, बेठते हैं। इससे इसे नंदीश्वर द्वीप नाम से जानते हैं। इसके चक्रवाल विष्कंभ के मध्य भाग में चारों दिशाओं में चार अंजन गिरि पर्वत हैं। प्रत्येक पर्वत 84 हजार योजन ऊंचा हैं। प्रत्येक का एक हजार योजन का उद्वेध है। मूल में और जमीन पर दस हजार योजन की लम्बाई चौड़ाई है। मूल में परिधि 31623 योजन से कुछ अधिक है, जमीन पर 31623 से कुछ कम है, मूल में विस्तार वाला, मध्य में संकुचित और ऊपर में पतले हैं। गोपुच्छ संस्थान मय है। सभी अंजन पर्वत अंजन रत्न के हैं। प्रत्येक पर्वत पर पद्मवर वेदिका और वनखंड है, इनका वर्णन पूर्ववत् समझें। प्रत्येक पर्वत के ऊपर का भूमि भाग बहुत रमणीय है, वहां बहुत से वाण व्यंतर देव सुखी होकर घूमते रहते हैं।

प्रत्येक पर्वत के इस भूमि भाग के मध्य में एक एक सिद्धायतन (यक्षगृह) है, 100 योजन लम्बा 50 योजन चौड़ा 72 योजन ऊंचा है, प्रत्येक सिद्धायतन में सैकड़ों स्तंभ हैं (सुधर्मा सभा की तरह वर्णन समझें) प्रत्येक सिद्धायतन में चारों दिशा में देव, असुर, नाग और सुवर्ण द्वार है इन्हीं नाम के पल्योपम स्थिति वाले चार महर्द्धिक देव रहते हैं। प्रत्येक द्वार 16 योजन ऊंचे, 8 योजन चौड़े, 8 योजन प्रवेश वाले हैं। विजय द्वार जैसा वर्णन समझें। इन द्वारों की चारों दिशाओं में चार मुख मंडप हैं वे 100 योजन लंबे, 50 योजन चौड़े, 16 योजन से कुछ अधिक ऊंचे हैं, मंडपों के कई खंभे हैं। अन्य वर्णन विजय द्वार वत् समझें। इसी प्रकार प्रेक्षा गृह मंडप उनके प्रमाण आदि का वर्णन है। मुखमंडप द्वारों जैसा प्रेक्षागृह द्वारों का वर्णन जानना। प्रेक्षगृह के मध्य भाग में वज्रमय अखाड़ा (क्रीडांगण) है, प्रत्येक अखाड़ा के सामने मणिपीठिका है, मणिपीठिका की लम्बाई चौड़ाई आठ योजन, जाड़ाई 4 योजन की है। वहां चैत्यवृक्ष, महेन्द्र ध्वज आदि हैं। विजया राजधानीवत् संपूर्ण वर्णन समझें। महेन्द्र ध्वजों के आगे चार-चार नंदा पुष्करिणियां है। उनमें शेलड़ी (गन्ने) रस जैसा पानी भरा है, प्रत्येक नंदा पुष्करिणी 100 योजन लम्बी 50 योजन चौड़ी दस योजन गहरी है। सभी पुष्करिणियां पद्मवर वेदिका और वनखंडों से घिरी हुई हैं। इन सिद्धायतनों के पूर्व पश्चिम दिशा में 16-16 हजार और उत्तर-दक्षिण में 8-8 हजार मनोगुलिकायें है (पीठिकाएं)। वहां गोमानसिकाएं भी है। अन्य वर्णन विजय द्वार वत् समझें।

पूर्व दिशा के अंजन पर्वत के चारों ओर चारों दिशाओं में नंदोतरा, नंदा, आनंदा, नंदिवर्धना ये चार पुष्करिणियां है। कहीं नाम परिवर्तन नंदिसेना, अमोघा, गोस्तूपा, सुदर्शना नाम भी मिलते हैं। प्रत्येक नंदा पुष्करिणियां एक-एक लाख योजन लंबी, चौड़ी है, उद्वेध 10 योजन का है। 316227 योजन तीन कोस अठाइस धनुष साढ़े तेरह अंगुल से कुछ ज्यादा परिधि है। प्रत्येक पुष्करिणी पद्मवर वेदिका तथा वनखंड से चारों ओर से घिरी हुई है। प्रत्येक नंदा पुष्करिणी में

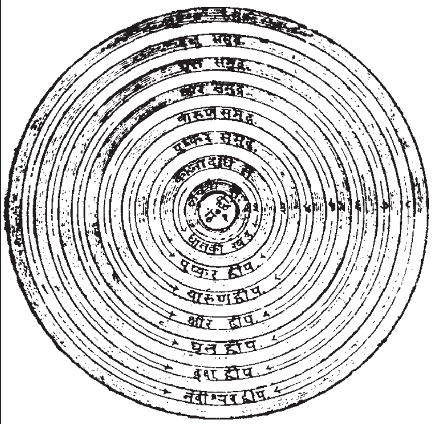

(चित्र सं. 88)-द्वीप समुद्र 1 से 8

तीन सोपान पगथिया हैं। प्रत्येक के मध्य भाग में दधिमुख पर्वत है यह पर्वत 64 हजार योजन ऊंचा है एक हजार योजन जमीन में गहरा है। सभी जगह सरीखा है, यह पलंग आकार का है। दस हजार योजन लम्बाई, चौड़ाई है। 31623 योजन परिधि है। पूरा रत्नमय है, प्रत्येक पर्वत के चारों तरफ पद्मवर वेदिका और वनखंड है, पूर्व वर्णित सिद्धायतन जैसा यह सिद्धायतन है।

दक्षिण दिशा के अंजन पर्वत के चारों दिशा में भद्रा, विशाला, कुमुदा, पुंडरिकिणी (नंदुत्तरा, नंदा, आनंदा, नंदिवर्धना कहीं ये नाम भी है) ये चार नंदा पुष्करिणियां है। पूर्व दिशा में पहले कहे अनुसार दधिमुख पर्वत आदि वर्णन ऊपरवत् समझना। पश्चिम दिशा के अंजन पर्वत के चारों दिशा में नंदिसेना, अमोघा, गोस्तूप, सुदर्शना (भद्रा, विशाला, कुमुदा, पुंडरिकिणी ये नाम भी मिलते हैं) ये चार नंदा पुष्करिणियां है अन्य दधिमुख पर्वत, सिद्धायतन आदि का वर्णन पूर्ववत् समझें। उत्तर दिशा के अंजन पर्वत के चारों और विजया, वैजयंती, जयंती, अपराजिता ये चार नंदा पुष्करिणियां है, इनके दधिमुख पर्वत और सिद्धायतन का वर्णन पूर्ववत् समझना।

भवनपति आदि चारों जाति के देव यहां पर चातुर्मासिक प्रतिपदा (एकम) और पर्व दिवसों में तथा वार्षिक (संवत्सरी) उत्सव और अन्य भी कईं प्रकार के जन्म, दीक्षा, केवल ज्ञान, निर्वाण आदि कल्याण दिवसों में तथा देव कार्यों में, देव समूहों में, देव गोष्ठियों में देव समवाय में, देवों के जीत व्यवहार के कार्यों में देव गोष्ठियों में बहुत से देव आते हैं, यहां आकर क्रीड़ा आनंद करते हैं। महामहिमावंत अष्टान्हिक पर्व की आराधना करते हैं। सुखपूर्वक समय व्यतीत करते हैं इससे इस द्वीप का नाम नंदीश्वर द्वीप है।

कईं ग्रंथों में अन्य पाठ भी मिलते हैं। मूल में नहीं परंतु टीका में कहा कि नंदीश्वर द्वीप के चक्रवाल विष्कंभ वाले मध्य भाग में चारों दिशाओं में चार रतिकर पर्वत है, प्रत्येक 10 हजार योजन ऊंचे, हजार योजन गहराई, 10 हजार योजन लंबे चौड़े है। झालर संस्थान से है। 31622 योजन परिधि है, रत्नमय है। ईशान कोण में आये रतिकर पर्वत के चारों ओर चार दिशाओं में देवराज ईशानेन्द्र की चार अग्रमहिषियों की नंदोतरा, नंदा, उत्तरकुरा, देवकुरा नामक राजधानियां है। कृष्णा नामक अग्रमहिषी की नंदोतरा, दूसरी कृष्णराजी अग्रमहिषी की उत्तरकुरा, रामरक्षिता की देवकुरा उसके बाद आग्नेय कोण में आये रतिकर पर्वत की चारों दिशाओं में देवराज शक्रेन्द्र की चार अग्रमहिषियों की सुमना, सौमनसा, अर्चिमाली, मनोरमा नामक चार राजधानियां है। पूर्व में अमला अग्रमहिषी की भूता राजधानी। दक्षिण में आसरा नामक दूसरी अग्र महिषी की भूतावतंसा, पश्चिम में तीसरी नवमिका अग्रमहिषी की गोस्तूपा, और उत्तर दिशा में चौथी रोहिणी की (अग्रमहिषी) की सुदर्शना राजधानी है। वायव्य कोण के रतिकर पर्वत के चारों दिशा में ईशानेन्द्र की चार अग्रमहिषियों की चार राजधानियां है। पूर्व दिशा में वसुमति अग्रमहिषी की रत्ना राजधानी है। दक्षिण दिशा में वसुप्रभा नामक दूसरी अग्रमहिषी की रत्नोच्चया राजधानी है। पश्चिम दिशा में सुमित्रा नामक तीसरी अग्रमहिषी की सर्वरत्ना और उत्तर दिशा में वसुंधरा नामक चौथी अग्रमहिषी की रत्न संचया राजधानी है।

नंदीश्वर द्वीप में कैलाश और हरिवाहन नाम के एक-एक पल्योपम की स्थिति वाले दो महर्द्धिक देव हैं, नंदीश्वर शाश्वत नाम है। इस द्वीप को नंदीश्वर समुद्र ने चारों ओर से घेर रखा है। अन्य वर्णन पूर्ववत् समझें। वहां सुमनस और सौमनस भद्र दो देव बसते है यह फरक है। इस नन्दीश्वर द्वीप के पश्चात के द्वीप त्रिप्रत्यवतार (तीन उपसर्ग वाले पहला सामान्य नाम, दूसरा ''वर'' तीसरा ''वरावभास'' नाम से) है। नन्दीश्वर समुद्र को चारों तरफ से घेरकर अरूण द्वीप है, गोल वलयाकार, सम चक्रवाल संस्थान, संख्यात लाख योजन परिधि, पद्मवर वेदिका, वनखंड से घिरा हुआ है। यहां अशोक, वीतशोक दो महर्द्धिक देव पल्योपम आयुष्य वाले रहते हैं। इस द्वीप के चारों ओर अरुणोद समुद्र है अन्य वर्णन उपरोक्त प्रकार कथन है वहां सुभद्र सुमनभद्र देव रहते हैं। समुद्र का पानी लाल (अरुण) होने से अरुणोद नाम है। इसको चारों ओर से घेरकर अरुणवर द्वीप है, वहां अरुणवर भद्र, अरुणवर महाभद्र देव है। इसके चारों ओर अरुणवर समुद्र है वहां अरुणवर, अरुण महावर देव है। इस समुद्र के चारों ओर अरुणवरावभास द्वीप है। वहां अरुणवराव भास भद्र और अरुणवराव भास महाभद्र देव हैं। इसके बाद अरुणवराव भास समुद्र है। आगे अरुणोपपात द्वीप एवं आगे समुद्र त्रिप्रत्यावतार है। इसके बाद कुंडल द्वीप है (वर्णन पूर्ववत्) वहां कुंडल भद्र महाकुंडल भद्र देव है। आगे कुंडलोद समुद्र वहां चक्षु शुभ, चक्षुकांत देव है। कुंडलवर द्वीप में कुंडलवर भद्र, कुंडल वर महाभद्र देव है। आगे कुंडलवर समुद्र में कुंडल वर और कुंडलमहावर देव है। इससे आगे कुंडलवरावभास द्वीप है वहां कुंडल वरावभास भद्र और कुंडल वरावभास महाभद्र देव हैं। फिर कुंडलवरावभास समुद्र है। कुंडलवरावभास वर और कुंडल वरावभास महावर देव हैं। फिर आगे रूचक द्वीप आता है। वहां सर्वार्थ और मनोरम देव हैं। रूचक समुद्र में सुमनस, सौमनस महर्द्धिक देव हैं। रूचक वर द्वीप में रूचकवर भद्र, रूचकवर महाभद्र देव हैं। आगे रूचकवर समुद्र में रूचकवर और रूचक महावर देव है। आगे रूचकवराव भास द्वीप में रूचक वरावभास भद्र और रूचक वरावभास महाभद्र देव हैं। आगे रूचकवराव भास समुद्र में रूचक वरावभासवर और रूचक वरावभास महावर देव रहते हैं।

इन सभी द्वीप समुद्रों को संक्षिप्त में समझने हेतु गाथा इस प्रकार है-

जंबूद्दीवे लवणे धायई, कालोय कखखरे लवणे।
खीर घयरवोय नंदी, अरुणवरे कुंडले रुयगे।।

प्रथम जंबूद्वीप, उसके बाद आगे-आगे लवण समुद्र, धातकी खंड द्वीप, कालोदधि समुद्र, पुष्करद्वीप, पुष्कर समुद्र, वरुण द्वीप, वरुण समुद्र, क्षीर द्वीप, क्षीर समुद्र, घृत द्वीप, घृत समुद्र, ईक्षु द्वीप, ईक्षु (क्षोदोद) समुद्र, नंदीश्वर द्वीप नंदीश्वर समुद्र अरुण द्वीप-समुद्र, यहां से त्रिप्रत्यावतार लेना। इन सभी द्वीप समुद्रों के आगे लोक में- शंख, ध्वजा, कलश, श्रीवत्स आदि जितने भी शुभ नाम है, ये सभी शुभ नामों वाले द्वीप और समुद्र हैं, ये सभी त्रिप्रत्यावतार है, इनके अपांतराल में भुजग, कुश, क्रोंचवर द्वीप समुद्र है।

रुचकवरावभास समुद्र के आगे हार द्वीप है, वहां हारभद्र, हार महाभद्र देव हैं। हारोद समुद्र में हारवर, महाहारवर देव हैं। आगे हारवर द्वीप में हारवरभद्र, महाहारवर भद्र देव हैं। हारवर समुद्र में हारवर और हारवर महावर देव हैं। हारवरावभास द्वीप में हारवरावभास भद्र और हारवरावभास महाभद्र देव हैं। हारवरावभास समुद्र है उसमें हारवरावभास वर तथा हारवरावभास महावर देव हैं। आगे अर्द्ध हार द्वीप है वहां अर्द्धहार भद्र, अर्द्ध हार महाभद्र

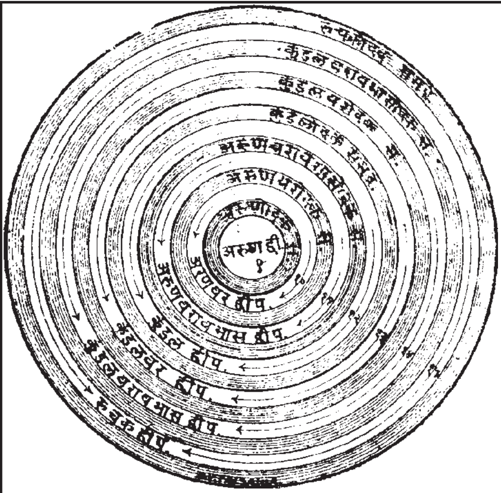

(चित्र सं. 89)-द्वीप समुद्र 9 से 15

देव है। अर्द्धहार समुद्र में- अर्द्ध हारवर, अर्द्ध हार महावर देव है। अर्द्ध हारवर द्वीप में अर्द्ध हारवर भद्र, अर्द्ध हार महाभद्र। अर्द्ध हारवर समुद्र में अर्द्ध हारवर तथा अर्द्ध हारवर महावर देव हैं। अर्द्ध हारवरावभास द्वीप-समुद्र में क्रमशः अर्द्ध हारवरावभास भद्र, अर्द्ध हारावभास महाभद्र तथा अर्द्ध हारावभास वर, अर्द्ध हारावमहाभास वर देव रहते हैं।

कनकावली द्वीप-समुद्र-कनकावली भद्र कनकावली महाभद्र, कनकावली वर, कनकावली महावर, कनकावली वरावभास द्वीप समुद-कनकावली वरावभास भद्र, कनकावली वरावभास महाभद्र तथा कनकावली वरावभास वर तथा कनकावली भास महावर देव हैं।

इसी प्रकार आगे रत्नावली द्वीप समुद्र, मुक्तावली द्वीप-समुद्र, आजीन द्वीप समुद सूर्य द्वीप-समुद्र ये सभी त्रिपत्यावतार आते हैं, इन्ही के नाम से दो-दो देव प्रत्येक द्वीप-समुद्र में है। इसके आगे देव द्वीप है उसका चक्रवाल विष्कंभ असंख्यात योजन का है। परिधि भी उसी प्रकार है। यहां से आगे सभी द्वीप समुद्र असंख्यात योजन के है। इस द्वीप में देव भद्र, देव महाभद्र देव हैं। आगे देव समुद्र है जहां देव वर, देव महावर देव हैं। आगे नाग द्वीप-समुद्र हैं वहां नाग भद्र, नाग महाभद्र तथा नागवर नाग महावर देव हैं। आगे यक्ष द्वीप और समुद्र है, जहां क्रमशः यक्षभद्र, यक्ष महाभद्र तथा यक्षवर, यक्ष महावर देव हैं। फिर भूत-द्वीप-समुद्र है- वहां क्रमशः भूत भद्र, भूत महाभद्र और भूतवर भूत महावर देव हैं। अन्त में स्वयंभू रमण द्वीप है जहां- स्वयंभू रमण भद्र और स्वयंभू रमण महाभद्र देव हैं। और सबसे अन्तिम स्वयंभू रमण समुद्र है- वहां स्वयंभू रमण वर और स्वयंभू रमण महावर ये दो देव हैं। इस प्रकार असंख्याता द्वीप-समुद्रों का वर्णन होता है।

जंबू नाम वाले असंख्यात द्वीप हैं, लवण नाम वाले भी असंख्यात समुद्र हैं। धातकी खंड द्वीप, कालोदधि समुद्र भी असंख्यात है, यों सूर्य वरावभास समुद्र तक इसी प्रकार असंख्यात द्वीप समुद्र कहें। परन्तु देव, नाग, यक्ष, भूत और स्वयंभू रमण द्वीप और समुद्र ये मात्र एक-एक ही हैं।

सभी समुद्रों में से लवण समुद्र का पानी आविल-मल वाला, रज-मिट्टी वाला, बहुत समय से संग्रहित हो ऐसा, खारा और कड़वा है। कालोदधि का स्वाभाविक जल जैसा, यानि अकृत्रिम रस से आस्वाद्य है, पेशल, मनोज्ञ, पुष्टिकारक परिपुष्ठ और काला है। पुष्कर वर समुद्र का पानी अकृत्रिम रस से आस्वाद्य उत्तमोउत्तम है। हल्का, स्फटिक जैसी कांतियुक्त है। वरुणोद समुद्र का पानी अलग अलग शराब से ईष्ट (श्रेष्ठ) रसास्वाद युक्त है। क्षीरोदक का पानी चक्रवर्त्ती की खीर के स्वाद से भी इष्ट स्वादिष्ट है। घृतोदक का घी के स्वाद से उत्तम स्वादिष्ट पीला रंग का है। क्षोदोद (ईक्षुवर) का पानी उत्तम जाति की शेलड़ी के रस से उत्तम है, श्रेष्ठ है। इनके अतिरिक्त सभी समुद्रों का पानी पीने के जल जैसे स्वाभाविक स्वाद वाला है। इस प्रकार स्वयंभू रमण तक जानना यानि सभी का जल शेलड़ी जैसे स्वाद वाला, परन्तु स्वयंभू रमण समुद्र का पानी पुष्करोदधि जैसा जानना। लवण, वरुणोद, क्षीरोद, घृतोद ये चार समुद्र प्रत्येक रस वाला और कालोद, पुष्करोद, स्वयंभू रमण ये तीन समुद्र परस्पर सरीखे है बाकी सभी का पानी शेलड़ी के रस जैसे स्वाद युक्त हैं।

लवण, कालोद और स्वयंभू रमण इन तीन समुद्रों में माछला और काछबा बहुत है। बाकी सभी में माछला, काछबा कम है। लवण समुद्र में माछला की सात लाख कुल कोड़ी की योनि है। उनकी जघन्य अवगाहना अंगुल के असंख्यातवें भाग उत्कृष्ट 500 योजन की है। कालोद में 9 लाख कुल कोड़ी योनी माछला की उनकी अवगाहना जघन्य उपरोक्त उत्कृष्ट 700 योजन है। स्वयंभू रमण में माछला की कुल कोड़ी की योनि साढ़े बारह लाख है, अवगाहना जघन्य उपरोक्त उत्कृष्ट एक हजार योजन है।

लोक में जितने शुभ वर्ण, गंध, रस, स्पर्श हैं, इतने नामों वाले द्वीप समुद्र हैं। अढ़ाई उद्धार सागरोपम के जितने उद्धार समय होते हैं, इतने उद्धार समय प्रमाण के द्वीप समुद्र हैं।

उद्धार सागराणं अड्ढाईज्जण जत्तिया समया।

दुगुणा दुगुण पवित्थर, दिवोदहि रज्जु एवइया।।

इस प्रकार द्वीप सागरों का वर्णन जीवाभिगम सूत्र की तीसरी प्रतिपत्ति के तीसरे उद्देशक में बताया है, तथा जंबूद्वीप का क्षेत्रात्मक वर्णन अधिकांश जंबूद्वीप प्रज्ञपप्ति सूत्र में वर्णित है, इसके अतिरिक्त अन्य आगमों में भी कहीं-कहीं वर्णन है, पर नाम मात्र वर्णन है।

लघु क्षेत्र समास में भी द्वीप समुद्रों का वर्णन मिलता है, परन्तु कुछ भिन्नता है-

1.	जम्बू द्वीप	2.	लवण समुद्र
3.	धातकी खंड	4.	कालोदधि समुद्र
5.	पुष्कर द्वीप	6.	पुष्कर समुद्र
7.	वारुणी वरद्वीप	8.	वारुणवर समुद्र
9.	क्षीरवर द्वीप	10.	क्षीरवर समुद्र
11.	घृतवर द्वीप	12.	घृतवर समुद्र
13.	इक्षुवर द्वीप	14.	इक्षुवर समुद्र
15.	नंदीश्वर द्वीप	16.	नंदीश्वर समुद्र (आगे त्रिपत्यावतार है)
17.	अरुण द्वीप	18.	अरुण समुद्र
19.	अरुणवर द्वीप	20.	अरुणवर समुद्र
21.	अरुणवरावभास द्वीप	22.	अरुणवरावभास समुद्र
23.	अरुणोपपात द्वीप	24.	अरुणोपपपात समुद्र
25.	अरुणोपपातवर द्वीप	26.	अरुणोपपातवर समुद्र
27.	अरुणोपपातवरावभास द्वीप	28.	अरुणोपपातवरावभास समुद्र
29.	कुंडल द्वीप	30.	कुंडल समुद्र
31.	कुंडलवर द्वीप	32.	कुंडलवर समुद्र
33.	कुंडल वरावभास द्वीप	34.	कुंडल वरावभास समुद्र (यहां 10 को 11 या 11 को 10 भी मानते हैं।)

35.	शंख द्वीप	36.	शंख समुद्र
37.	शंख वर द्वीप	38.	शंख वर समुद्र
39.	शंख वरावभास द्वीप	40.	शंख वरावभास समुद्र
41.	रुचक द्वीप	42	रुचक समुद्र
43.	रुचकवर द्वीप	44.	रुचकवर समुद्र
45.	रुचक वरावभास द्वीप	46.	रुचक वरावभास समुद्र
47.	भुजग द्वीप	48.	भुजग समुद्र
49.	भुजगवर द्वीप	50.	भुजगवर समुद्र
51.	भुजग वरावभास द्वीप	52.	भुजग वरावभास समुद्र
53.	कुश द्वीप	54.	कुश समुद्र
55.	कुश वरद्वीप	56.	कुशवर समुद्र
57.	कुशवरावभास द्वीप	58.	कुशवरावभास समुद्र
59.	क्रोंच द्वीप	60.	क्रोंच समुद्र
61.	क्रोंचवर द्वीप	62.	क्रोंच वर समुद्र
63.	क्रोंच वरावभास द्वीप	64.	क्रोंच वरावभास समुद्र

आगे सभी शुभ पदार्थों के नाम वाले त्रिपत्यावतार असंख्यात द्वीप समुद्र हैं। इसके बाद असंख्यातवां सूर्यद्वीप समुद्र, असंख्यातवां सूर्यवर द्वीप समुद्र, असंख्यातवां सूर्य वरावभास द्वीप-समुद्र हैं यहां तक त्रिपत्यावतार है। आगे एक-एक नाम वाले देव द्वीप-समुद्र असंख्यातवां, नाग द्वीप-समुद्र असंख्यातवां, यक्ष द्वीप-समुद्र असंख्यातवां, भूत द्वीप-समुद्र असंख्यातवां है। अन्त में स्वयंभू रमण द्वीप और स्वयंभू रमण समुद्र असंख्यातवां है। ये सभी द्वीप-समुद्र एक-से एक आगे दुगुना-दुगुना (विस्तार मय) है। जिनेश्वरों के जन्माभिषेक के लिए पांचवे क्षीरवर समुद्र का पानी उपयोग में आता है।

उद्धार-सागरोपम- काल के दो विभाग किये गये हैं-गणना काल और उपमा काल। यहां उपमा काल का प्रकरण है, उपमा काल पल्योपम और सागरोपम यों दो प्रकार का है। पल्योपम के उद्धार, अद्धा और क्षेत्र यों तीन विभाग हैं। उद्धार पल्योपम के भी बादर और सूक्ष्म यों दो भेद है। एक योजन लम्बा, चौड़ा और गहरा यों तीन योजन और 6 भाग अधिक की परिधि वाला एक पल्य (धान भरने की कोठी) जैसा गोल कुंआ हो, उसमें एक दिन से सात दिन तक के जन्मे बालक के बालाग्र लेकर भरें। उसमें अग्नि से जले नहीं, वायु से उड़े नहीं (अग्नि, वायु भी प्रवेश न कर सके) ऐसे ठूंस ठूंस कर भरें। यों पूरा भर जाने पर, उस कुंएं में से एक-एक समय एक-एक बालाग्र बाहर निकाले, एक भी बालाग्र नहीं रहा हो, इस प्रकार पूरा कुंआ खाली हो जाय, इसमें जितना समय लगे, उस काल को बादर उद्धार पल्योपम कहते हैं।

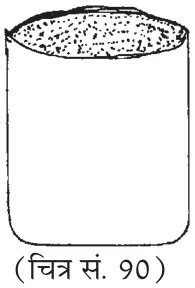

(चित्र सं. 90)
पल्य (पाला)

यहां जो कुंआ (पल्य) बताया है उसमें केवली भगवान ने बुद्धि की कल्पना से बालाग्रों के असंख्यात असंख्यात खंड (टुकड़े) करके, उन खंडों को प्रति समय एक-एक खंड बाहर निकालने से जितने समय में कुंआ खाली हो उसे सूक्ष्म उद्धार पल्योपम कहते है। इन सूक्ष्म या बादर उद्धार पल्योपम को 10 क्रोड़ा क्रोड़ी से गुणा करने से जो राशि आवे उसे सूक्ष्म या बादर सागरोपम कहते हैं। यानि 10 क्रोडा क्रोडी पल्योपम का एक सागरोपम होता है।

एएसिं पल्लाणं कोड़ा कोड़ी हवेज्ज दस गुणिया।

तं वावहरियस्स उद्धार सागरोवमस्स एगस्स भवे परिमाणं।

एएसिं पल्लाणं कोड़ा कोड़ी हवेज्ज दस गुणिया।

तं सुहुमस्स उद्धार सागरोवमस्स एगस्स भवे परिमाणं ।।2।।

सूक्ष्म उद्धार सागरोपम के जितने समय होते हैं, उसके अढ़ाई गुणा जितने द्वीप और समुद्र तिरछा लोक में है, यानि मध्य लोक के द्वीप सागरों की गिनती अढ़ाई उद्धार सागरोपम जितनी है। (यहां अद्धा और क्षेत्र पल्योपम का विषय नहीं होने से वर्णन नहीं किया है।)

सूक्ष्म उद्धार सागरोपम का वर्णन ''लघु क्षेत्र समास'' में किया है। यह तिच्र्छा लोक (चक्की) घट्टी के पट जैसा गोल (चपटा गोल) है, इसकी जाडाई 1800 योजन है, लम्बाई चौड़ाई एक रज्जू है। समुद्रों मे अन्तिम स्वयंभू रमण समुद्र है। इस समुद्र के पूर्व से पश्चिम छोर, उत्तर से दक्षिण छोर (किनारा) का माप एक रज्जू है। इस एक रज्जू क्षेत्र में असंख्यात द्वीप समुद्र हैं। उनकी कुल संख्या अढ़ाई उद्धार सागरोपम के समय जितनी है। या 10 क्रोडा क्रोडी पल्योपम के हिसाब से 25 क्रोडाक्रोड़ी सूक्ष्म उद्धार पल्योपम के समयों जितनी है। उतने द्वीप-समुद्र हैं। पल्योपम और सागरोपम के 6-6 भेद हैं।

1.	बादर उद्धार पल्योपम	बादर उद्धार सागरोपम
2.	सूक्ष्म उद्धार पल्योपम	सूक्ष्म उद्धार सागरोपम
3.	बादर अद्धा पल्योपम	बादर अद्धा सागरोपम
4.	सूक्ष्म अद्धा पल्योपम	सूक्ष्म अद्धा सागरोपम
5.	बादर क्षेत्र पल्योपम	बादर क्षेत्र सागरोपम
6.	सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम	सूक्ष्म क्षेत्र सागरोपम

पल्य पल्योपम को पल्य भी कहते है = कुंआ। कुंएं की उपमा से काल मापने का एक भेद।

उत्सेध अंगुल प्रमाण से एक योजन लम्बा, चौड़ा और गहरा कुंआ हों, उसमें देवकुरु उत्तरकुरु क्षेत्र के युगलिया मनुष्यों के एक से सात दिन नवजात शिशुओं के (यहां एक से सात दिन कहे है, एक दो या सात नहीं कहा है क्योंकि कुरुक्षेत्र के युगलियों के पहले दिन एक सरीखे बाल न उगे हों, सरीखे सूक्ष्म न हों इसलिए कहीं पहले दिन सूक्ष्मता मिले यों सातवें दिन भी मिले, उसके बाद सूक्ष्मता नहीं होती) के ऊगे बाल को अंगुल में भरने के बाद सिर मुंडन करने के बाद उनके बालाग्रों के 8-8 टुकड़े करके उस कुएं में ठसाठस भरें। एक उत्सेध अंगुल में 2097152 रोम खंड समाते हैं। चौबीस अंगुल का एक हाथ होता है, अतः इसे 24 से गुणा करने से एक हाथ में 50331648 रोम खंड समाते है।

चार हाथ का एक धनुष होता है अतः एक धनुष जितनी जगह में 201326592 रोम खंड समाते है। दो हजार धनुष का एक गाऊ होने से एक गाऊ में 402653184000 रोम खंड समाते हैं और 4 गाऊ का एक योजन होता है अतः एक योजन में 1610612736000 रोम खंड समाते हैं। इतने रोम खंड तो कुंए के तलिये में एक योजन लम्बी एक श्रेणी में ही समा जाते हैं। इसी प्रकार अन्य श्रेणियों को भी भरें। पूरे तलिये (पेंदे) में भरना हो तो 1610612736000 को इतनी ही राशि से गुणा करें तो 2594073385365405696000000 रोमखंडों से मात्र पेंदा (तलिया) ढ़ंकता है। यह एक पड़ (प्रतर) हुआ। इसी प्रकार दूसरे प्रतर ऊपर-ऊपर रखें तो कुआं भरता है। यहां गिनती घनवृत्त की करनी थी, इसके बजाय घन चौरस कुंएं की हो रही है, अतः इन रोम खंडों को पुनः इन्ही से गुणा करें तो 4178047632588158427784544256000000000 यह संख्या आती है। इतने रोम खंडों को 19 से पुनः गुणा करने पर 79382905019175010127906340864000000000 यह संख्या आती है। इसमें 24 का भाग देने पर 3307621042465625421996097536000000000 इतने रोमखंड एक कुंए में समाते हैं। ये रोमखंड संख्याता है। इस प्रमाण से ठसाठस भरे बालों को एक-एक समय एक-एक बाल निकालने से कुंआ खाली हो वह समय बादर उद्धार पल्योपम कहलाता है। इस कुंए को खाली होते संख्याता समय लगता है, आंख के एक पलक झपकने में ऐसे असंख्य कुंए खाली हो जाते हैं। इस प्रकार बादर उद्धार पल्योपम तो आंख झपकाने का भी असंख्यातवां भाग है। फिर आगे बताये जाने वाले सूक्ष्म खंडों की अपेक्षा ये रोमखंड असंख्यात गुना मोटा होने से यह पल्योपम बादर कहलाता है। (आगे के कहे दो पल्योपमों में भी यहां कहे संख्या वाले बादर रोमखंड ही गिनने हैं।)।

उपरोक्त बादर उद्धार पल्योपम में जो रोमखंड भरे थे, उनके यहां प्रत्येक के असंख्यात-असंख्यात खंड करके (पूर्वाचार्यों ने खंड को बादर पर्याप्त पृथ्वीकाय के शरीर जितना और सूक्ष्म साधारण वनस्पति के शरीर से असंख्यात गुणा बड़ा कहा है) वैसे असंख्यात खंडों से इस धनवृत्त कुंए को ठसाठस भरे जो अग्नि से जले नहीं, वायु से उड़े नहीं, पानी से भींजे नहीं (अंदर एक बूंद भी न जाये) चक्रवर्ती की सैना ऊपर से निकले तो भी लेशमात्र दबे नहीं, इस प्रकार भरे इन असंख्यात रोमखंडों में से एक-एक रोमखंड एक-एक समय निकालने से खाली होने में जितना काल लगे वह सूक्ष्म उद्धार पल्योपम है। इसमें असंख्यात खंड होने से असंख्यात समय लगते है, यह काल संख्याता क्रोड़ वर्ष जितना है।

इसी सूक्ष्म उद्धार पल्योपम के समयों से द्वीप समुद्रों की संख्या का प्रमाण बताया है। ऐसे पच्चीस क्रोड़ा क्रोड़ी (2500000000000000) पल्योपम के जितने समय होते है, उतने द्वीप समुद्र हैं। यहां द्वीप समुद्रों की संख्या अलग-अलग नहीं शामिल गिननी है।

उद्धार यानि बाहर निकालना, सूक्ष्म रोमखंडों के उद्धार से मापे जाने वाले पल्य की उपमा वाला काल यह सूक्ष्म उद्धार पल्योपम। किसी भी क्रोड की संख्या को क्रोड़ से गुणा करने से क्रोड़ा क्रोड़ बनती है।

पूर्व में कथित बालाग्रों को कुंए में से प्रत्येक 100-100 वर्ष से एक-एक बालाग्र बाहर निकालने से खाली हो वह काल बादर अद्धा पल्योपम है। और पूर्व कहे बालाग्रों के रोम खंडों को प्रत्येक 100-100 वर्ष में एक खंड निकालने से खाली होने में लगे काल को सूक्ष्म अद्धा पल्योपम कहते हैं। पूर्व कथित बालाग्रों के रोमखंडों के असंख्य-असंख्य आकाश प्रदेश अन्दर और बाहर स्पर्शित है, वे थोड़े है, अस्पर्शित ज्यादा हैं। उन स्पर्शित आकाश प्रदेशों में से एक-एक प्रदेश एक-एक समय बाहर निकालें, सभी स्पर्शित आकाश प्रदेश खाली हो जाये, उतने काल

को बादर क्षेत्र पल्योपम कहते हैं। और सूक्ष्म रोम खंड जो भरे हैं, उन सूक्ष्म रोम खंड वाले कुंए में प्रत्येक सूक्ष्म रोमखंड को स्पर्शित या बिन स्पर्शित आकाश प्रदेश हैं, उन प्रत्येक आकाश प्रदेशों को प्रत्येक समय एक-एक बाहर निकालने से जब कुंआ खाली हो जाये उतने काल को सूक्ष्म क्षेत्र पल्योपम कहते हैं। (10 क्रोड़ा क्रोड़ी पल्योपम का एक सागरोपम होता है)।

पूर्व में पल्योपम-सागरोपम के वर्णन में उत्सेधांगुल कहा है, यह उत्सेध अंगुल इस प्रकार है। अंगुल-आत्म, उत्सेध, प्रमाण यों तीन प्रकार का होता है। अनंत व्यवहारिक परमाणु पुद्गल मिलकर एक उष्ण श्रेणि होती है, आठ उष्ण श्रेणि की एक स्निग्ध श्रेणी, 8 स्निग्ध श्रेणी का एक ऊर्ध्व रेणु, 8 ऊर्ध्व रेणु का एक त्रस रेणु, 8 त्रस रेणु एक रथरेणु, 8 रथ रेणु का देवकुरु उत्तर कुरु के युगलिये मनुष्य का एक बालाग्र, इस प्रकार 8-8 से गुणा करते हरिवर्ष-रम्यक वर्ष के युगलियों, हेमवय हेरण्यवय के युगलियों, पूर्व पश्चिम विदेह के मनुष्यों, भरत-एरवत के मनुष्य तक 8-8 से गुणाकार गिनना। इन भरत-एरवत के मनुष्यों के 8-8 बालाग्रों की एक लीख, 8 लीख की एक जूं। 8 जूं का एक यव (जौ) का मध्य भाग, 8 जव मध्य भाग का एक उत्सेध अंगुल। इस उत्सेध अंगुल के प्रमाण से 6 अंगुल का एक पांव, 12 अंगुल का एक वेंत, 24 अंगुल एक हाथ, 48 अंगुल एक कुक्षि, 96 अंगुल एक दंड, धनुष, युग, नलिका, अक्ष या मूसल होता है। इस धनुष के प्रमाण से दो हजार धनुष का एक कोस, चार कोस एक योजन होता है। इस उत्सेध अंगुल से चारों गति के जीवों की अवगाहना मापी जाती है। उत्सेधांगुल और अन्य दोनों अंगुलों का विस्तृत वर्णन जिज्ञासु अनुयोग द्वार सूत्र से जान सकते है।

गणित

भारत वर्ष में क्षेत्र गणित की उत्पत्ति ईस्वी सन् से 3000 वर्ष पहले शुल्व सूत्रों (वेद में वर्णन मिलता है आधार आचार्य श्री आनंद ऋषिजी अभिनंदन ग्रंथ) से हुई है, यह सत्य है। इन सूत्रों में यज्ञ वेदियां बनाने की विधि के साथ वर्ग, चतुर्भुज, समबाहु, समलंब, सम चतुर्भुज, आयत, समकोण, त्रिभुज, समद्धि बाहु, वगैरह आकृतियों के उल्लेख दर्शनीय है। वैदिक परम्परा में क्षेत्र की झलक **वेदांग ज्योतिष** आदि ग्रंथों में देखने को मिलती है। परन्तु जैन ग्रंथों में क्षेत्र गणित के लिए इन सबसे ज्यादा सामग्री मिलती है। इन ग्रंथों में लोक का स्वरूप आदि का वर्णन मिलता है, और इस निमित्त से सूर्य, चंद्र, नक्षत्र, द्वीप, समुद्र आदि का वर्णन तथा अलग-अलग आकृतियों का विशाल तरीके से उपयोग किया है। सूर्य प्रज्ञप्ति, चन्द्र प्रज्ञप्ति, जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति आदि उपांगों और तिलोयपण्णत्ति, षट्खंडागम की धवलटीका, गोम्मटसार, त्रिलोकसार तथा उनकी टीकाओं में गणित का बहुत उपयोग मिलता है, और यह भारतीय प्राचीन गणित के विकास को समझने हेतु बहुत महत्व का है। षट् खंडागम में तो **क्षेत्र गणित** नाम से एक बड़ा भाग है। जैनाचार्यों द्वारा रचित गणित के स्वतंत्र ग्रंथ भी स्वयं का महत्व रखते है। इन ग्रंथों में क्षेत्र गणित पर व्यापक चिंतन मनन किया है, जो दर्शनीय है। उदाहरणार्थ महावीराचार्य द्वारा रचित ई.स. 850 में **गणित सार संग्रह,** उमास्वाति का **क्षेत्र समास आदि**। क्षेत्र गणित को बहुत उपयोगी समझकर ही सूत्रकृतांग में इसे **गणित सरोज** नाम दिया है।

क्षेत्र का प्रकार- सूर्य प्रज्ञप्ति (ई.स. पूर्व 300) में सम चोरस, विषम चोरस, सम चतुष्कोण, विषम चतुष्कोण, सम चक्रवाल, विषम चक्रवाल, चक्रार्द्ध चक्रवाल, और चक्राकार ये 8 प्रकार के चतुर्भुज का उल्लेख

है। प्रो. वेरवरे ने ऊपर के नामों की व्याख्या करके वर्ग, विषम कोण, सम चतुर्भुज, आयत, समांतर चतुर्भुज, वृत्त, दीर्घवृत्त, अर्धदीर्घ वृत्त, और गोला के खंड ये नाम अनुक्रम से दिये है। भगवती सूत्र और अनुयोग द्वार सूत्र आदि में 5-5 तरह की आकृतियां बताई है। त्रिभुज, चतुर्भुज, आयत, वृत्त, दीर्घवृत्त (Ellipse)। इन आकृत्तियों के लिए इन ग्रंथों में स्त्रिस्त्र, चतुरस्त्र, आयत, वृत्त, परिमंडल नाम आये हैं। इन क्षेत्रों के प्रतर और घन दो भेद बताकर अनुयोग द्वार सूत्र में सूक्ष्म चर्चा की है। घन त्रियस्त्र, घन चतुरस्त्र, घनायत, घन वृत्त, घन परिमंडल का हेतु अनुक्रम से, त्रिभुजाकार, सूचि स्तंभ, घन, आयताकार, गोल और दीर्घवृत्ताकार वेलन से है। इसके अतिरिक्त वृत्ताकार, त्रिभुजाकार, चतुर्भुजाकार वलय का भी जैन ग्रंथों में उल्लेख मिलता है। इन आकृतियों में वलय वृत्त, वलय स्त्रिस्त्र, वलय चतुरस्त्र नाम से जैन ग्रंथों में वर्णन है। गणित सार संग्रह ग्रंथ में त्रिभुज, चतुर्भुज, वक्ररेखीय आकृतियों का वर्णन मिलता है। भुजाओं के विचार से बताये ऐसे त्रिभुज के तीन प्रकार की चर्चा की है। कोणों की दृष्टि से त्रिभुजों के भेद नहीं किये, यद्यपि समकोण त्रिभुज का गणित अवश्य मिलता है। इस प्रमाण से त्रिभुज के प्रकार इस प्रकार- समत्रिभुज (सम त्रिबाहु त्रिभुज), द्विसम त्रिभुज, समद्विबाहु त्रिभुज, विषम त्रिभुज (विषम बाहु त्रिभुज)।

गणित सार संग्रह में चतुर्भुज के 5 प्रकार बताये है- समचुरस्त्र (वर्ग) द्विद्वि सम चतुरस्त्र (आयत), द्विसम चतुरस्त्र (समलम्ब चतुर्भुज) (जिसकी दो असमांतर भुजाए समान लम्बाई की हो), त्रिसम चतुरस्त्र (समलम्बा चतुर्भुज जिसकी तीन भुजाएं समान लम्बाई की हो) विषम चतुरस्त्र (साधारण चतुर्भुज)। महावीराचार्य ने वक्र रेखा वाली आठ आकृतियों का वर्णन किया है। 1. समवृत्त 2. अर्द्धवृत्त 3. आयत वृत्त (दीर्घ वृत्त) 4. कंबुकावृत्त (शंखाकार क्षेत्र) 5. निम्नावृत्त (अवतल वृत्तीय क्षेत्र जैसे होम वेदी का अग्निकुंड) 6. उत्तलवृत्तीय क्षेत्र जैसे काछबा की पीठ 7. बहिश्र्चक्रवाल वृत्त 8. अन्तश्र्चक्रवाल वृत्त। इसके अलावा गणित सार संग्रह में हस्तदंत क्षेत्र का भी उल्लेख मिलता है। हिन्दु गणितज्ञों ने जितना वर्णन नहीं किया, ऐसी कई आकृतियों का वर्णन महावीराचार्य ने किया है। जवाकार क्षेत्र, मुरज (मृदंग) आकार क्षेत्र, पणवाकार क्षेत्र, वज्राकार क्षेत्र, उभय निषेध क्षेत्र, एक निषेध क्षेत्र, तथा संस्पर्शी तीन और चार वर्तुलों से मर्यादित क्षेत्र आदि की आकृतियों का समावेश है।

आठ प्रकार का गणित- द्वीप सागर का इससे पूर्व जो वर्णन हुआ। जम्बूद्वीप वगैरह द्वीप वृत्त (गोलाकार) कहे हैं। जिससे प्रमाणांगुल के माप से जंबूद्वीप एक लाख योजन का है। वृत्त निष्कंभ भी है। यानि गोल थाली जैसे चपटे आकार वाला है, इसे प्रत्तर वृत्त कहते है। इस प्रतर वृत्त को समझने के 8 माप हैं।

1. **परिधि (Circumference)-** वृत्त वस्तु का घेराव।

2. **गणित पद (Area of a circle)-** अमुक नाप के समचोरस खंड, अथवा वृत्त क्षेत्र के योजन जितने सम चोरस विभाग।

3. **जीवा (Chard)**- खंड से अंतिम लम्बाई, अथवा धनुष की डोरी जैसी उत्कृष्ट लम्बाई।

4. **ईषु (Height of a segment)-** वृत्त पदार्थ के अंतिम खंड वगैरह के या अन्तिम खंड से मापे जाने वाले विष्कंभ, ईषु अथवा धनुःपृष्ठ के मध्य से जीवा के मध्य भाग तक का विष्कंभ यह ईषु या बाण।

5. **धनुःपृष्ठ- [Arc (of a circle)]-** खंड के अंत तक का घेराव (खंडित घेराव) अथवा धनुष्य आकार वाला खंड का कामठी भाग धनुःपृष्ठ अथवा अर्द्धचन्द्राकार भरत आदि क्षेत्र के पीछे का भाग अथवा धनुष का पीछे का भाग।

6. **बाहा- (Arc(s) of the zone of two parrelal chards)-** खंड के दोनों तरफ के पड़ (प्रतर) (पडखा)।

7. प्रतर- (Area of a segment)- खंड का क्षेत्रफल अथवा चौरस पदार्थ की लम्बाई चौड़ाई का गुणाकार।

8. घन (Cube)- लम्बाई, चौड़ाई और ऊंचाई का गुणाकार।

1. परिधि- विष्कंभ (मध्य विस्तार) के वर्ग को 10 से गुणाकर उसका वर्गमूल निकालने से वस्तु की परिधि (घेराव) आता है। **वर्गमूल-** वर्गमूल निकालने योग्य अंक का (प्रथम अंक धुर संख्या या योग्य अंक तथा अंत में रहा अन्तिम अंक कहलाता है) अन्तिम अंक ऊपर ''।'' ऐसा चिन्ह करना, फिर ''-------'' चिन्ह करना। इन दो चिन्ह की (खड़ी) ऊभी लकीर विषम अंक आडी लकीर सम अंक बताने वाली है। भागाकार में प्रथम भागाकार विषम अंक तक का (''।'' इस चिन्ह वाले प्रथम लकीर के अंत तक) करना होता है। और उतारने वाले अंक भी विषम चिन्ह तक के ही उतारना। फिर पहले विषम चिन्ह तक के अंक बाद हो सके ऐसे वर्ग से भाग देना और जिस वर्ग से बाद हो उस मूल अंक को भाजक स्थान पर तथा भागाकार (जवाब के) स्थान पर रखकर उसका वर्ग भाज्य में से बादकर जवाब की राशि पुनः भाज्य अंक में लिखनी। फिर भाज्य राशि विषम चिन्ह तक की नीचे लिख भाजक राशि में भाजक अंक के आगे जो अंक रहे उसी अंक से भाजक के साथ रहे उसी अंक सहित का गुणाकार भाज्य में से बाद जाय इस प्रकार भागाकार करना और वह गुणक राशि का पुनः जवाब के स्थान रखनी, इस प्रकार पूरी राशि का वर्गमूल निकाल सकते हैं।

इस व्याख्या प्रमाण से विचार करने से जंबूद्वीप की परिधि-

316227 योजन, तीन गाऊ, 128 धनुष, साढ़े तेरह अंगुल, एक जो, एक जूं, एक लीख, 6 बालाग्र, 0 रथरेणु, 7 त्रसरेणु, 5 बादर परमाणु और एक बादर परमाणु के 174 भाग करे ऐसे तीस भाग और 174वें भाग के एक भाग के 361 भाग करें ऐसे तीन भाग की और 54 बचे इतनी है। जंबूद्वीप की परिधि करने की गणित का (तरीके का) यंत्र-

विष्कंभ का योजन	1,00,000
उसका वर्ग तथा योजन राशि	10,00,00,00,000
इसे 10 गुणा करने से हुई राशि	1,00,00,00,00,000
लब्धांश राशि	3,16,227
छेदांक राशि	632454
शेष राशि	4,84,471
गाऊ करने हेतु शेष राशि को चार गुणा करने से हुई राशि	19,37,884
छेदांक का भाग देने से आये गाऊ	3
शेष राशि	40,522
धनुष करने हेतु दो हजार से गुणा करने से आयी राशि	8,10,44,000
छेदांक से भाग देने से आये धनुष	128
शेष राशि	89,888
अंगुल करने हेतु 96 से गुणा करने से हुई राशि	86,29,248
छेदांक से भाग देने पर आये अंगुल	13.5
शेष पूर्ण अंगुल की रही राशि	91,119

अब कमलादि, द्वीपादि, चूलिका, कूट, कंचन गिरि, कुंड आदि, कूट के मूल, कूट के शिखर, मेरु पर्वत के मूल, मेरु के शिखर, नन्दन वन के बाहर, अन्दर आदि स्थानों की परिधि का गणित उपरोक्त तरीके से करना है।

अलग-अलग स्थानों की परिधि-विष्कंभादि का यंत्र-

क्रम	स्थानकों के नाम	विष्कंभ	वर्ग का अंक	दस गुणांक	लब्धांक	शेष राशि	छेद राशि
1.	कमलादिक	1	1	10	3	1	6
2.	कमलादिक	2	4	40	6	4	12
3.	कमलादिक	4	16	160	12	16	24
4.	द्वीपादिक	8	64	640	25	15	20
5.	चूलिका मूल	12	144	1440	37	71	74
6.	क्रोस कूट	25	625	6250	79	9	158
7.	कंचनगिरि शिखर	50	2500	25000	158	36	316
8.	कंचनगिरि मूल	100	10000	100000	316	144	632
9.	कुंडादिक	120	14400	144000	379	359	758
10.	कुंडादिक	240	57600	576000	758	1436	1516
11.	कूट शिखरादिक	250	62500	625000	790	900	1580
12.	कुंडादिक	480	230400	2304000	1517	2711	3034
13.	कूट मूलादिक	500	250000	2500000	1581	439	3162
14.	मेरु शिखर	1000	1000000	10000000	3162	1756	6324
15.	मेरु भूतल विष्कंभ	10000	100000000	1000000000	31622	49116	63244

इस प्रकार यों समझना कि एक योजन विष्कंभ वाला कोई गोलाकार पदार्थ हो उसके तीन योजन जो कि लब्धांक के कोष्ठक में रखा है, और ऊपर शेष राशि में एक योजन रहा है उसके 6 छेद करें यानि एक योजन का छठा भाग जितनी परिधि होती है और दो योजन वाले गोल पदार्थ की 6 योजन उसके ऊपर 4 योजन के 12वें भाग जितना क्षेत्र आता है उतना लेना। यह परिधि जाननी। इस प्रकार सभी स्थानकों के विषय में जानना, लब्धांक को दुगुना करने से छेद राशि आती है।

पूर्वोक्त यंत्र की तरह ही मेरु पर्वत के नीचे के तलिये तथा नंदन वनादिक की भूमि में योजनों की संख्या कही है, उसके ऊपर एक योजन के 11 भाग करें, ऐसा भाग प्रत्येक में आता है, इसी से उन स्थानकों के विष्कंभ का योजन के ग्यारवें भाग करके परिधि का गणित किया है, उसका यंत्र इस प्रकार है-

क्र. सं.	मेरु पर्वत के अलग अलग स्थानकों के नाम	मूल योजन तथा एक योजन के 11वां भाग की कला की संख्या	मात्र 11 वां भाग की कला की संख्या	उस कला का वर्ग करने से जो अंक आवे उसकी सं.	उस वर्ग की कला को 10 गुणा करने से आता अंक सं.	वर्गमूल से जो कला आये वह अंक	शेष राशि जितनी कला रही वह संख्या	छेद राशि की संख्या	परिधि के योजन तथा कला का अंक
1	मेरु के नीचे का तलिया	$10090\frac{10}{11}$	111000	12321000000	123210000000	351012	575856	702024	$31910\frac{2}{11}$
2	नंदन वन के बाहर की परिधि	$9954\frac{6}{11}$	109500	11990250000	119902500000	346269	279639	692538	31479
3	नंदन वन की मध्य परिधि	$8954\frac{6}{11}$	98500	9702250000	97022500000	311484	217744	622968	$28316\frac{8}{11}$
4	सौमनस वन की बाहर की परिधि	$4272\frac{8}{11}$	47000	2209000000	22090000000	148627	14871	297254	$13511\frac{6}{11}$
5	सौमनस वन की मध्य परिधि	$3272\frac{8}{11}$	36000	1296000000	12960000000	113842	198636	227684	$10349\frac{3}{11}$

मनुष्य क्षेत्र में अथवा तिर्च्छा लोक में बहुत से वृत्त पदार्थ है, उनमें से यहां मात्र जंबूद्वीप के वृत्त पदार्थ ही लिये है, इस प्रकार-

वृत्त पदार्थों के नाम	विष्कंभ	परिधि
पद्मद्रह का मुख्य कमल (10 कुरु द्रह कमल)	1 योजन	$3\frac{1}{6}$ योजन
पुंडरीक द्रह का मुख्य कमल	1 योजन	$3\frac{1}{6}$ योजन
महापद्म का मुख्य कमल	2 योजन	$6\frac{1}{3}$ योजन
महा पुंडरीक द्रह का मुख्य कमल	2 योजन	$6\frac{1}{3}$ योजन
तिगिच्छ द्रह का मुख्य कमल	4 योजन	$12\frac{2}{3}$ योजन
केशरी द्रह का मुख्य कमल	4 योजन	$12\frac{2}{3}$ योजन
17 गंगा द्वीप	8 योजन	$25\frac{3}{10}$ योजन
17 सिंधु द्वीप	8 योजन	$25\frac{3}{10}$ योजन
17 रक्ता द्वीप	8 योजन	$25\frac{3}{10}$ योजन
17 रक्तवती द्वीप	8 योजन	$25\frac{3}{10}$ योजन
रोहिता-रोहितांशा द्वीप	16 योजन	$50\frac{3}{5}$ योजन

सुवर्ण कूला-रुप्य कूला द्वीप	16 योजन	$50\frac{3}{5}$ योजन
हरिकांता-हरिसलिला द्वीप	32 योजन	$110\frac{39}{202}$ योजन
नरकांता नारिकांता द्वीप	32 योजन	$110\frac{39}{202}$ योजन
सीता-सीतोदा द्वीप	62 योजन	$199\frac{359}{398}$ योजन
गंगा-सिंधु, रक्ता-रक्तवती कुंड	60 योजन	$189\frac{279}{398}$ योजन
रोहिता-रोहितांशा-सुवर्णकूला रुप्यकूला कुंड	120 योजन	$379\frac{359}{758}$ योजन
हरिकांता-हरिसलिला-नरकांता नारीकांता कुंड	240 योजन	$758\frac{1436}{1516}$ योजन
सीता-सीतोदा कुंड	480 योजन	$1517\frac{2711}{3034}$ योजन
12 अंतर नदियों के कुंड	120 योजन	$379\frac{359}{758}$ योजन
64 महाविदेह नदियों के कुंड	60 योजन	$189\frac{279}{378}$ योजन
मेरुपर्वत का मूल	$10090\frac{10}{11}$ योजन	$31910\frac{2}{11}$ योजन
मेरुपर्वत का कंद (समतल भूभाग)	10000 योजन	$31622\frac{49116}{63244}$ योजन
नंदन वन में बाह्य मेरु	$9954\frac{6}{11}$ योजन	31459 योजन से कुछ अधिक
नंदन वन में आभ्यंतर मेरु	$8954\frac{6}{11}$ योजन	$28316\frac{8}{11}$ योजन से कुछ अधिक
सौमनस वन में बाह्य मेरु	$4272\frac{8}{11}$ योजन	$13511\frac{6}{11}$ योजन से कुछ अधिक
सौमनस वन में आभ्यंतर मेरु	$3272\frac{8}{11}$ योजन	$10349\frac{3}{11}$ योजन से कुछ अधिक
पंडक वन में मेरु	1000 योजन	$3162\frac{1756}{6324}$ योजन
मेरु की चूलिका का मूल	12 योजन	$37\frac{71}{74}$ योजन
166 वर्षधरादि के कूट मूल	500 योजन	$1581\frac{439}{3162}$ योजन
3 सहस्त्रांक कूट मूल	1000 योजन	$3162\frac{1756}{6324}$ योजन
306 वैताढ्य कूट मूल	6¼ योजन	यो. 19.7 - $\frac{9}{158}$ गाऊ
34 ऋषभ कूट मूल	12 योजन	$37\frac{71}{74}$ योजन
16 वक्ष. कूट मूल	12 योजन	$37\frac{71}{74}$ योजन
4 वृत्त वैताढ्य मूल	1000 योजन	$3162\frac{1756}{6324}$ योजन
200 कांचन गिरि मूल	100 योजन	$316\frac{144}{132}$ योजन
4 यमल गिरि मूल	1000 योजन	$3162\frac{1756}{6324}$ योजन

इस परिधि का जो गणित है, यह रीति आधुनिक पद्धति में भी उपयोग में ली जाती है। शास्त्रीय पद्धति का विचार करके आधुनिक रीति इस प्रकार बताई है। परिधि= 2×π×त्रिज्या=π×व्यास [∴ (क्योंकि) 2× त्रिज्या=व्यास]

π का मान- अलग-अलग समय में π की कीमत अलग अलग गिनी है। जैन शास्त्रों और ग्रंथो में भी π का भिन्न-भिन्न मान मिलता है- 1-2. भगवती सूत्र, सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र में तथा ज्योतिष करंडक में π का मान $\sqrt{10}$ माना है। 3. जीवाभिगम में π का मान $\sqrt{10}$ और 3.16 माना है। सूत्र 82 और 109 में तो π=$\sqrt{10}$ माना है, परन्तु सूत्र 112 में π=3.16 बताया है। 4-5. जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति तथा उत्तराध्ययन सूत्र में π=3 से कुछ अधिक (त्रिगुणं सविशेषम्) कहा है। 6. तत्वार्थाधिगम सूत्र में π=$\sqrt{10}$ किया है। 7. तिलोय पण्णत्ति में π=$\sqrt{10}$ है। 8. धवलाकार वीर सेनाचार्य π=355/113 माना है जो बिल्कुल विलक्षण एवं शुद्ध है। 9. दिगंबर ग्रंथ लोक प्रकाश में (लगभग ई.स. 1651) π=19/6 मिलता है। 10. महावीराचार्य ने (ई.स. 850) **गणित संग्रह** में π=मात्र 3 मानकर स्थूल क्रिया की है, परन्तु सूक्ष्म कार्य के लिए $\sqrt{10}$ माना है। 11. **त्रिलोक सार** में भी आचार्य नेमिचंद्र ने स्थूल कार्य के लिए π=3 और सूक्ष्म कार्य हेतु $\sqrt{10}$ माना है। इसी ग्रंथ में π=$(16/9)^2$ भी मिलता है, इसमें लिखा है कि जो कोई वृत्त (गोल) की त्रिज्या R हो और वह वृत्त a भुजा वाला वर्ग बराबर हो तो R= $\frac{9}{16}$ a होता है।

जैन शास्त्रों में π की कीमत $\sqrt{10}$ (वर्गमूल 10) लिया है, जो उपरोक्त आधारों से समझा जा सकता है। लगभग 22/7 π की कीमत पहले मानी जाती थी। अब उसमें सुधार किया है आधुनिक गणित शास्त्र में π असंमेय संख्या (Irrational Number) मानते हैं। $\sqrt{10}$ की कीमत वर्गमूल पद्धति के शोधन से जैन शास्त्र प्रमाण से π की कीमत 3.16227766016837838331595493..... (दशांश के 27 अंक तक) आती है। इससे भी आगे जितनी संख्या तक शोधन करना हो, कर सकते है।

22/7 की कीमत शोधन से आधुनिक पद्धति प्रमाण से π की कीमत 3.142857 (दशांश से 142857 संख्या नियमित आती) है। इस प्रकार π की शास्त्रीय और आधुनिक पद्धति के बीच एक सामान्य (.01942... यानि मात्र 0.614%) फरक है। अन्य मान्यतानुसार π की कीमत 3.145926 भी मानते है।

जंबूद्वीप का व्यास 100000 योजन है, इससे जंबूद्वीप की परिधि 3.14285.7 योजन होती है (शास्त्रीय 316227.7)। इसके अलावा अलग अलग स्थानों की परिधि के लिए ऊपर के सूत्र से शोध किया जा सकता है। त्रिज्या, व्यास आदि की आकृतियां इस प्रकार-

त्रिज्या=Ranius विष्कंभार्द्ध। वर्तुल के मध्य बिंदु से परिधि को जोड़ती सीधी रेखा को त्रिज्या कहते हैं, त्रिज्या व्यास से आधी होती है।

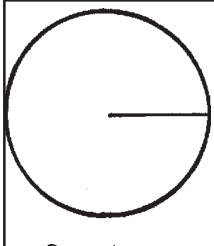

(चित्र सं. 91)- त्रिज्या

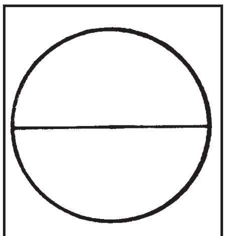

(चित्र सं. 92)- व्यास

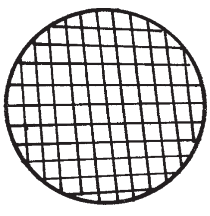

(चित्र सं. 93)- क्षेत्रफल

विष्कंभ=व्यास Diameter वर्तुल के मध्य बिंदु से होकर परिधि के दोनों शिरों को जोड़ती सीधी रेखा को व्यास कहते हैं, यह त्रिज्या से दुगुनी होती है।

जम्बूद्वीप के प्रमुख क्षेत्र व पर्वतों का विष्कंभ, ऊंचाई, बाहा, जीवा, धनु:पृष्ठिका का प्रमाण :-

क्र.सं.	नाम क्षेत्र/पर्वत	विष्कंभ यो. कला	ऊंचाई	बाहा यो. कला	जीवा यो. कला	धनु:पृष्ठ
1	द. भरत क्षेत्र	238-3 कला	×	×	9748-12	9766-1
	उ. भरत क्षेत्र	238-3 कला	×	1892-7½	14471-3	14528-11
	वैताढ्य पर्वत	50 योजन	25 योजन	488-16½	10720-11	10743-15
	कुल योग	526-6 कला	25			
2	चुल्ल हिमवंत पर्वत	1052-12	100	5350-15½	24932-½	25230-4
3	हेमवय क्षेत्र	2105-05	×	6755-3	37674-16	38740-10
4	महाहिमवंत पर्वत	4210-10	200	9276-9½	53931-6	57293-10
5	हरिवास क्षेत्र	8421-01	×	13361-6½	73901-17½	84016-4
6	निषध पर्वत	16842-02	400	20165-2½	94156-2	124346-9
7	महाविदेह क्षेत्र	33684-04	×	33767-7	100000	158113-16½
8	नीलवंत पर्वत	16842-02	400	20165-2½	94156-2	124346-9
9	रम्यक वर्ष क्षेत्र	8421-01	×	13361-6½	73901-17½	84016-4
10	रूक्मी पर्वत	4210-10	200	9276-9½	53931-6	57293-10
11	हैरण्यवय क्षेत्र	2105-05	×	6755-3	37674-16	38740-10
12	शिखरी पर्वत	1052-12	100	5350-15½	24932-½	25230-4
13	द. ऐरावत क्षेत्र	238-03		1892-7½	14471-3	14528-11
	उ. ऐरावत क्षेत्र	238-03		×	9748-12	9766-1
	वैताढ्य पर्वत	50-00				
		एक लाख यो.				

जम्बूद्वीप के 190 खण्ड :-

1-2	भरत क्षेत्र, ऐरवत क्षेत्र	1	1	खण्ड प्रमाण
3-4	चुल्ल हिमवंत, शिखरी पर्वत	2	2	खण्ड प्रमाण
5-6	हेमवय, हैरण्यवय क्षेत्र	4	4	खण्ड प्रमाण
7-8	महाहिमवंत, रूक्मि पर्वत	8	8	खण्ड प्रमाण
9-10	हरिवास, रम्यकवास क्षेत्र	16	16	खण्ड प्रमाण
11-12	निषध, नीलवंत पर्वत	32	32	खण्ड प्रमाण
13	महाविदेह क्षेत्र	64		खण्ड प्रमाण
	कुल जम्बू द्वीप के	**127**	**63**	**190 खण्ड**

एक लाख योजन का जम्बूद्वीप 190 खण्ड प्रमाण होता है।

जम्बूद्वीप के प्रमुख क्षेत्रों एवं पर्वतों का क्षेत्रफल :-

क्र.सं.	नाम क्षेत्र एवं पर्वत	गणित पद या प्रतर (क्षेत्रफल)
1.	सम्पूर्ण भरत क्षेत्र का क्षेत्रफल	53,80,681 योजन 17 कला 17 विकला
2.	दक्षिणार्द्ध भरत क्षेत्र का क्षेत्रफल	18,35,485 योजन 12 कला 6 विकला
3.	उत्तरार्द्ध भरत क्षेत्र का क्षेत्रफल	30,32,888 योजन 12 कला 11 विकला
4.	चुल्ल हिमवंत पर्वत का क्षेत्रफल	2,14,56,971 योजन 8 कला 10 विकला
5.	शिखरी पर्वत का क्षेत्रफल	2,14,56,971 योजन 8 कला 10 विकला
6.	हेमवय क्षेत्र का क्षेत्रफल	6,72,53,145 योजन 5 कला 8 विकला
7.	हैरण्य वय क्षेत्र का क्षेत्रफल	6,72,53,145 योजन 5 कला 8 विकला
8.	महाहिमवंत पर्वत का क्षेत्रफल	19,58,68,186 योजन 10 कला 5 विकला
9.	रूक्मि पर्वत का क्षेत्रफल	19,58,68,186 योजन 10 कला 5 विकला
10.	हरिवास क्षेत्र का क्षेत्रफल	54,47,73,870 योजन 7 कला
11.	रम्यक वास क्षेत्र का क्षेत्रफल	54,47,73,870 योजन 7 कला
12.	निषध पर्वत का क्षेत्रफल	1,42,54,66,569 योजन 18 कला
13.	नीलवंत पर्वत का क्षेत्रफल	1,42,54,66,569 योजन 18 कला
14.	उत्तरार्द्ध महाविदेह का क्षेत्रफल	1,63,57,39,302 योजन 10 कला 15 विकला
15.	दक्षिणार्द्ध महाविदेह का क्षेत्रफल	1,63,57,39,302 योजन 10 कला 15 विकला
16.	उत्तर ऐरावत क्षेत्र का क्षेत्रफल	18,35,785 योजन 12 कला 6 विकला
17.	दक्षिण ऐरावत क्षेत्र का क्षेत्रफल	30,32,888 योजन 12 कला 11 विकला
18.	वैताढ्य पर्वत का क्षेत्रफल	5,12,307 योजन 12 कला 5 विकला

1. परिधि निकालने का तरीका :- समगोल वस्तु की जितनी लम्बाई हो उसका वर्ग करने के लिए उस संख्या को उसी संख्या से गुणा करके प्राप्त संख्या को 10 गुणा करके वर्गमूल निकालने से गोल वस्तु की परिधि का माप आता है-

जम्बूद्वीप का विष्कंभ - 100000
इसी संख्या से गुणा करें × 100000
प्राप्त अंक 10000000000
10 से गुणा करें × 10
100000000000

इसका वर्गमूल निकालें

	316227 योजन लब्धांश
3	10,00,00,00,00,00
+3	9
61	100
+1	61
626	3900
+6	3756
6322	14400
+2	12644
63242	175600
+2	126484
632447	4911600
+7	4427129
छेदांक 632454	484471 शेष राशि

शेष बचे इनके कोस बनाने हेतु 4 से गुणा करें

484471

×4

632454) 1937884 (3 कोस

1897362

40522 शेष रहे इनके धनुष करें

धनुष बनाने हेतु 2000 से गुणा करें

40522 × 2000 = 81044000

632454) 81044000 (128 धनुष

632454

1779860

1264908

5149520

5059632

89888 शेष बचे इनको 4 से गुणा करने से हाथ बनेंगे।

89888

× 4

359552 छेदांक का भाग नहीं जाता अतः 24 से गुणा कर अंगुल बना लें।

× 24

8629248

632454) 8629248 (13 अंगुल

632454

2304708

1897362

407346 आधे से ज्यादा शेषांक होने से ½ अंगुल झाझेरी है।

407346-316227=91119 शेष।

यों जम्बूद्वीप की परिधि 3,16,227 योजन 3 कोस, 128 धनुष 13½ अंगुल झाझेरी है। शेष ½ अंगुल के बाद 91119 शेषांक रहा जिससे यव आदि गणित बनती है।

2. गणित पद- 1. अमुक माप के समचोरस खंड अथवा वृत्त क्षेत्र के योजन प्रमाण समचोरस विभाग 2. गोल क्षेत्र की परिधि की संख्या के अंक को उसकी चौड़ाई (वृत्त क्षेत्र का विष्कंभ) के चौथे भाग के अंक से गुणा करने से जो अंक आवे वह गणित पद है। 3. परिधि को विष्कंभ के चौथे भाग से गुणा करने से गणित पद आता है।

विक्खंभवग्ग दह गुण,-मूलं वट्टस्स परिरओ होई।
विक्खंभ पाय गुणिओ, परिरओ तस्स गणिअ पयं ।।88।।

विष्कंभ के वर्ग को 10 गुणा कर उसका वर्गमूल निकालने से वृत्त वस्तु की परिधि आती है। और इसी परिधि को विष्कंभ के चौथे भाग से गुणा करने से वृत्त वस्तु का गणित पद आता है (लघु क्षेत्र समास)

जम्बू द्वीपस्य गणित पद, वक्ष्येथ तत्वदः।।।। (गा. 35,-3-4)
शतानि सप्तकोटि नां, नवतिः कोट्यः पराः।
लक्षाणि सप्त पंचाशत्, षट् सहस्त्रोनितानि ।।36।।
सार्धं शतं, योजनानां, पादोन क्रोशयामलम्।
धनुंषि पंचदशा च, सार्ध करद्वयं तथा ।।37।। (युग्मम्)

(''लोक प्रकाश'' सर्ग. 15)

सात सौ नब्बे क्रोड़, 56 लाख, 94 हजार, 150 योजन, पोने दो कोस, पन्द्रह धनुष और अढ़ाई हाथ जितना इसका (जम्बूद्वीप का) गणित पद है (36-37)।

जम्बूद्वीप की भूमि को कोई पत्थर की टाइल्स लगाना चाहे तो एक योजन लम्बा, एक योजन चौड़ा ऐसा समचोरस 7905694150 पत्थर चाहिए। और इसके अतिरिक्त एक योजन लम्बा और एक गाऊ चौड़ा पोने दो (1¾) पत्थर चाहिए (यहां योजन के टुकड़ों की तरह गाऊ और अंगुल के समचौरस टुकड़े नहीं गिने, क्योंकि गणित रीति प्रमाण से ऐसा नहीं होता) इसके उपरांत एक योजन लम्बा और एक अंगुल चौड़ा ऐसे 62½ पत्थर चाहिए। इससे जंबूद्वीप पूरा ढ़ंका जाता है।

जिस प्रकार 8 हाथ लम्बे 8 हाथ चौड़े एक समचौरस मकान में एक हाथ लम्बी एक हाथ चौड़ी पत्थर टाइल्स लगानी हो तो 8×8=64 टाइल्सों की जरूरत होती है, इसी प्रकार जंबूद्वीप को लगाने के लिए उपरोक्त प्रमाण टाइल्स की जरूरत पड़ती है। विवरण की रीति इस प्रकार-

क्र. सं.	परिधि के योजनादि	विष्कंभ का चौथा भाग	गुणा करने से प्राप्त राशि	एक योजन में अंगुल आदि	कुल योजन की संख्या	गाऊ	धनुष	अंगुल
1.	316227	25000	7905675000	पूरा योजन	7905675000	-	-	-
2.	गाऊ तीन	25000	75000	चार गाऊ योजन	18750	1¾	-	-
3.	धनुष 128	25000	3200000	आठ हजार धनुष	400	-	15	-
4.	अंगुल 13½	25000	337500	96 अंगुल	0	-	-	60
5.	कुल संख्या	-	-	-	**7905694150**	**1¾**	**15**	**60**

इस गणित को गणित पद अथवा क्षेत्रफल का प्रतर कहते हैं। गणित पद के लिए इस प्रकार शास्त्रीय पद्धति से विचार कर आधुनिक तरीके से लिखा है-

गणित पद=वृत्त का क्षेत्रफल, वर्तुल के विस्तार के समचोरस माप को क्षेत्रफल कहते हैं।

वर्तुल का क्षेत्रफल= π त्रि^{2}=$\pi\times\frac{(\text{व्यास})^2}{2}$=$\pi\times$ व्यास$\times\frac{\text{व्यास}}{4}$= परिधि $\times\frac{\text{व्यास}}{4}$

इस प्रमाण को जंबूद्वीप का गणित पद 7857142857 चोरस योजन होता है।

गणित पदः- परिधि को विष्कंभ के चौथे भाग से गुणा करने पर क्षेत्रफल (गणित पद) आता है।

जम्बूद्वीप की परिधि को जम्बूद्वीप के विष्कंभ (एक लाख योजन) के चौथे भाग (25000) से गुणा करने पर जम्बूद्वीप का गणित पद (क्षेत्रफल) आ जायेगा। परिधि 316227 योजन 3 कोस, 128 धनुष 13½ अंगुल झाझेरी × 25000 =

अंगुल –13½ × 25000 = 337500 ÷ 96 धनुष करने हेतु = 3515 धनुष 60 अंगुल झा. शेष रहा।

धनुष – 128 × 25000 = 3200000 + 3515 ऊपर के धनुष जोड़े = 3203515 धनुष में 2000 का भाग दें कोश बनेंगे =1601 कोस बने + 1515 धनुष बचे।

कोस - 3 × 25000 = 75000 + 1601 कोस ऊपर बने =76601 ÷ 4 योजन बनाने हेतु 19150 योजन + 1 कोश बचा।

योजन– 3,16,227 × 25000 = 7905675000 योजन + 19150 योजन ऊपर बने जोड़ने 7905694150 योजन बनें।

इस प्रकार जम्बूद्वीप का गणित पद (क्षेत्रफल) 7 अरब 90 करोड़ 56 लाख 94 हजार 150 योजन, 1 कोस, 1515 धनुष, 60 अंगुल से कुछ अधिक है। (1¾ कोस (गाऊ) 15 धनुष 60 अंगुल झा.) हुआ।

भरत ऐरवत का क्षेत्र प्रमाण- जम्बूद्वीप के विष्कंभ से भरतादि का क्षेत्रफल निकालने के लिए, भरत आदि क्षेत्रों के खंड प्रमाण से 1,2,4,8,16,32,64 से गुणा करके 190 का भाग देने पर क्रमशः भरत आदि का प्रमाण निकल जाता है।

जम्बूद्वीप का विष्कंभ 100000

गुणांक × 1

190) 100000 (526 योजन

950

500

380

1200

1140

60 शेष। इनकी कला करने के लिए 19 से गुणा 60 × 19 = 1140 ÷ 190 = 6 कला **उत्तर–** भरत-ऐरवत का क्षेत्रफल 526 योजन 6 कला प्रमाण।

नोट : इस प्रकार किसी भी क्षेत्र का क्षेत्रफल निकाला जा सकता है चुल्ल हिमवंत, शिखरी का 2 अंक है। हेमवय हैरण्यवय का 4 अंक। यों 190 खंड जो बताये है, उन्हे अपने अपने अंकों से इसी प्रकार गुणा 1 लाख से करके 190 का भाग देने पर उस क्षेत्र का क्षेत्रफल आ जायेगा।

महाविदेह का क्षेत्रफल : 1,00,000 को 64 से गुणा कर 190 का भाग देवें।

6400000÷190=33684 शेष 40 की कला बनावें × 19 = 760÷190 = 4 कला। उत्तर=33684 योजन 4 कला प्रमाण क्षेत्रफल हुआ।

3. जीवा- अंतिम खंड की लम्बाई अथवा धनुष की डोरी जैसी उत्कृष्ट लम्बाई जीवा कहलाती है। वृत्त पदार्थ के विस्तार में से ईषु बाद करने से ईषु के चार गुणी जो आवे (ईषु बाद करने से आई राशि) उसको गुणा करना। जो राशि आवे उसका वर्गमूल निकालने से जो आवे वह उस क्षेत्र की जीवा कहलाती है (क्षेत्र की धनुष की डोरी जैसी उत्कृष्ट लम्बाई)।

विवक्षितस्य क्षेत्रस्य, पूर्वापरांत गोचरः।
आयामः परमो योऽत्र, सा जीवेत्यभि धीयते।।

(''लोक प्रकाश'' सर्ग 16 गा.7)

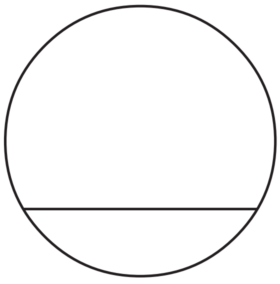

(चित्र सं. 94)-जीवा

किसी भी क्षेत्र की पूर्व से पश्चिम तक की उत्कृष्ट लम्बाई जीवा कहलाती है। दक्षिण भरत की जीवा $9748\frac{12}{49}$ योजन है और एक योजन का $\frac{79}{167324}$ भाग शेष रहा। उसे छेद कला 370448 भाग में करते (बांटते) 191 धनुष और 17¼ अंगुल आती है शेष 50460 अंगुल राशि बढ़ती है। छेद कला अंक ज्यादा होने से उसका भाग नहीं होता, इससे इसके जव करके जिस प्रकार बंटे वैसा बांटकर भागाकर करके गणित करना। नीचे के नवस्थान का क्षेत्र विष्कंभ एक लाख योजन है। इसमें एक-एक योजन की 19 कला होती है। इन नवस्थान के जीवा का कोठा की संख्याएं बड़ी होने से पृष्ठ में नहीं आने से टेबल को दो भागों में विभक्त किया है-

1	2	3	4	5	6
क्र.	**जीवा करने का क्रम नाम पूर्वक**	**योजन प्रमाण ईषु**	**19 भाग करने पर ईषु कला**	**विष्कंभ बाद रहा शेष फल**	**ईषु कला का चार गुणा**
1.	द. भरतार्द्ध, उ. एरवत	$238\frac{3}{19}$	4525	1895475	18100
2.	वैताढ्य	$288\frac{3}{19}$	5475	1894525	21900
3.	पूर्ण भरत, द. एरवत	$526\frac{6}{19}$	10000	1890000	40000
4.	हिमवंत, शिखरी पर्वत	$1578\frac{18}{19}$	30000	1870000	120000
5.	हेमवय, हेरण्यवय युगल क्षेत्र	$3684\frac{4}{19}$	70000	1830000	280000
6.	महाहिमवंत, रूक्मी पर्वत	$7894\frac{14}{19}$	150000	1750000	600000
7.	हरिवर्ष, रम्यक वर्ष क्षेत्र	$16315\frac{15}{19}$	310000	1590000	1240000
8.	निषध, नीलवंत पर्वत	$33157\frac{17}{19}$	630000	1270000	2520000
9.	महाविदेह	50000	950000	9500000	3800000

	7	8	9	10	11
	शेष कला रही उसे चार गुणी ईषु कला से गुणा करने से	मूल शोधने से शेष राशि रही उस अंक का वर्गमूल	छेद राशि का अंक	मूल में आई कला का अंक	प्राप्त कला का योजन तथा 19वां भाग की कला
1.	34308097500	167324	370448	185224	9748 $\frac{12}{19}$
2.	41490097500	74019	407382	203691	10720 $\frac{11}{19}$
3.	75600000000	297884	549908	274954	14471 $\frac{5}{19}$
4.	224400000000	730736	947416	473708	24932 यो.½ कला
5.	512400000000	295959	1431642	715821	37674 $\frac{16}{19}$
6.	1050000000000	156975	2049390	1024695	53931 $\frac{6}{19}$
7.	1971600000000	2093504	2808272	1404136	73901 $\frac{17\frac{1}{2}}{19}$
8.	3200400000000	650844	3577932	1788966	94156 $\frac{2}{19}$
9.	3610000000000	0	0	1900000	100000 0

विशेषः- उपरोक्त चार्ट दो भागों में विभक्त इसलिए किया, क्योंकि पेज की चौड़ाई कम है और संख्याएं बड़ी तथा कालम भी 11 हैं। इस स्थानाभाव से दो भाग बनाए हैं। आगे भी ऐसा ही करना पड़ेगा जहां जहां विशाल संख्याएं तथा अधिक कोठे (कालम) आयेंगे वहां भी इसी प्रकार समझना होगा।

ऐरवत क्षेत्र के लिए भी भरत क्षेत्र की तरह समझना। आधुनिक पद्धति इस प्रकार है- वर्त्तुल की परिधि के दो बिन्दुओं को जोड़ती रेखा जीवा कहलाती है। यों व्यास यानि वर्तुल के मध्यबिंदु में से निकलती रेखा जीवा है। शास्त्रीय तथा आधुनिक दोनों पद्धतियों में जीवा की कीमत (मूल्य) का सूत्र- जीवा=2√ईषु (व्यास-ईषु)

जीवा निकालने का तरीका : गोल पदार्थ की जीवा निकालना इस प्रकार

1. गोल पदार्थ के विस्तार को 19 से गुणा कर कला बनाना। फिर

2. जो गोल पदार्थ हो, उसका जो विस्तार हो, उसकी कला बनाकर उस ईषुकला को उपरोक्त विष्कंभ की कला में से बाकी निकालकर

3. जो शेष रहे उसको ईषुकला से गुणा करना, गुणनफल जो आवे उसे 4 से गुणा करके उसका वर्गमूल निकालना। वर्गमूल निकालने पर अंत में जो शेष बचे उसे गिनती में नहीं लेना।

4. जो वर्गमूल आवे उसके योजन बनाने हेतु 19 का भाग देना, जो आवे वह जीवा समझें।

दक्षिण भरत, उत्तर ऐरावत की जीवा :- 1. जम्बूद्वीप का विस्तार- 100000 योजन × 19 = 1900000 ईषुकला हुई।

2. दक्षिण भरत का विष्कंभ- 238 योजन 3 कला कुल 4525 ईषुकला हुई 19,00,000-4525= 18,95,475 शेष बचे।

3. 1895475 × 4525 (द. भरत की ईषुकला) से गुणा करें 8577024375 × 4 =34308097500 ईषुकला बने।

इनका वर्गमूल

	185224 वर्गमूल
1	34308097500
1	1
28	243
+8	224
365	1908
+5	1825
3702	8309
+2	7404
37042	90575
+2	74084
370444	1649100
+4	1481776
370448 छेद राशि	167324 शेष राशि

4. प्राप्त वर्गमूल के योजन बनाना 19 का भाग दें- 185224÷19=9748 योजन शेष 12 कला हुई। यानि दक्षिण भरत की जीवा 9748 योजन 12 कला कुछ अधिक हुई।

वैताढ्य पर्वत की जीवा- 100000×19 =1900000-5475 वैताढ्य पर्वत की ईषुकला कम करने से =1894525 × 5475 वैताढ्य की ईषुकला से गुणा करने से 10372524375 × 4 गुणा करने से 41490097500 इसका वर्गमूल करें।

	203691
2	41490097500
2	4
403	1490
+3	1209
4066	28109
6	24396
40729	371375
9	366561
40738	481400
1	407381
407382 छेद राशि	74019 बचे शेष राशि

वैताढ्य पर्वत की 203691 ÷ 19=10720 योजन 11 कला से कुछ अधिक जीवा है।

उत्तर भरत की जीवा- 19,00,000-10000 उत्तर भरत की ईषुकला = 18,90,000

1890000 × 10000 = 18900000000 × 4 = 75600000000 का वर्गमूल-

	274954
2	75600000000
2	4
47	356
+7	329
544	2700
+4	2176
5489	52400
+9	49401
54985	299900
5	274925
549904	2497500
4	2199616
549908 छेद राशि	297884 शेष राशि

उत्तर भरत की जीवा 274954÷19=14471 योजन 5 कला से अधिक है।

चुल्ल हिमवंत शिखरी पर्वत की जीवा- 1900000-30000 =1870000 × 30000

56100000000 × 4 = 224400000000 का वर्गमूल

	473808
4	224400000000
4	16
87	644
+7	609
943	3500
3	2829
9467	67100
7	66269
9474	83100
0	00000
947408	8310000
8	7579264
947416 छेद राशि	730736 शेष राशि

इन पर्वतों की जीवा- 473708 ÷ 19 = 24932 योजन हुई। वर्गमूल की शेष 730736 को दुगुनी कर छेद राशि का भाग दें तो 1461472 ÷ 947416=1 शेष 514056 यानि आधी कला आई। यों 24932 योजन ½ कला प्रमाण है।

हेमवय हैरण्यवय की जीवा- 190000-70000=1830000 ×70000= 128100000000×4 =512400000000 का वर्गमूल

	715821
7	512400000000
+7	49
141	224
1	141
1425	8300
5	7125
14308	117500
8	114464
143162	303600
2	286324
1431641	1727600
1	1431641
1431642 छेद राशि	295959 शेष राशि

715821 वर्गमूल
295956 शेष राशि
1431642 छेद राशि

715821÷19=37674 योजन 15 कला शेष राशि की एक कला बना देने से 16 कला हुई (कुछ न्यून)। हेमवय हैरण्यवय की जीवा 37674 योजन 16 कला (कुछ न्यून) क्षेत्र प्रमाण।

महाहिमवंत-रूक्मि पर्वत की जीवा- 1900000-150000 =1750000×150000 = 262500000000×4 =1050000000000 इसका वर्गमूल करना-

	1024695
1	1050000000000
1	1
202	00500
2	404
2044	9600
4	8176
20486	142400
6	122916
204929	1948400
9	1844361
2049385	10403900
5	10246925
2049390 छेद राशि	156975 शेष राशि

वर्गमूल - 1024695
शेष राशि - 156975
छेद राशि - 2049390
1024695 ÷ 19 = 53931 योजन
6 कला कुछ अधिक महाहिमवंत-रूक्मि की जीवा।

हरिवास-रम्यक वास की जीवा- 1900000-310000 =1590000×310000 = 492900000000×4= 1971600000000 का वर्गमूल निकालें-

	1404136
1	1971600000000
+1	1
24	97
4	96
2804	11600
4	11216
28081	38400
1	28081
280823	1031900
3	842469
2808266	18943100
6	16849596
2808272 छेद	2093504 शेष राशि

वर्गमूल 1404136
शेष राशि 2093504
छेद राशि 2808272
1404136÷19=73901 योजन
17 कला तथा शेष राशि को दुगुना कर छेदराशि का भाग देने से ½ कला होती है।
यों 73901 योजन 17½ कला जीवा है।

निषध-नीलवंत पर्वत की जीवा- 1900000-630000= 1270000×630000= 800100000000 × 4 = 3200400000000 का वर्गमूल निकालें-

	1788966
1	3200400000000
1	1
27	220
7	189
348	3104
8	2784
3568	32000
8	28544
35769	345600
9	321921
357786	2367900
6	2146716
3577926	22118400
6	21467556
3577932	650844
छेद राशि	शेष राशि

वर्गमूल 1788966
शेष राशि 650844
छेद राशि 3577932
1788966÷19=94156 योजन
2 कला से कुछ अधिक जीवा।

महाविदेह की जीवा- 1900000-950000 =950000×950000 =902500000000×4 =3610000000000 का वर्गमूल करें-

	1900000
1	3610000000000
1	1
29	261
9	261
38	×

वर्गमूल 1900000 का योजन बनाने हेतु 19 का भाग देवें। एक लाख 1,00,000 योजन आया। महाविदेह की जीवा एक लाख योजन है।

जीवा वर्ग निकालने का तरीका :- गोल पदार्थ के ईषु में से जिस क्षेत्र की जीवा निकालनी हो उसकी ईषु कम करके, उस क्षेत्र के ईषु से गुणाकार करना, फिर उस प्राप्ति राशि को 4 से गुणा करना प्राप्त राशि उस क्षेत्र का जीवा वर्ग है।

1. जम्बूद्वीप के ईषु में से तद् क्षेत्रवर्त्ती ईषु कम करना।
2. शेष राशि को तद् क्षेत्रवर्त्ती ईषु से गुणा करना।
3. फिर 4 से गुणा करना जीवा वर्ग आ जाता है।

दक्षिण भरत का जीवा वर्ग :- जम्बूद्वीप की ईषु कला 1900000-दक्षिण भरत की ईषु कला 4525 =1895475×4525 =8577024375×4 =34308097500 यह दक्षिण भरत का जीवा वर्ग हुआ।

वैताढ्य पर्वत का जीवा वर्ग :- 1900000-5475 =1894525×5475 =10372524375×4 = 41490097500 वैताढ्य का जीवा वर्ग हुआ।

उत्तर भरत, दक्षिण ऐरवत का जीवा वर्ग :- 19,00,000-10,000 =18,90,000×10000 =18900000000×4 =75600000000 जीवा वर्ग हुआ।

चुल्ल हिमवंत, शिखरी पर्वत का जीव वर्ग :- 1900000-30000= 1870000×30000= 56100000000×4= 2,24,40,00,00,000 जीवा वर्ग हुआ।

हेमवय, हैरण्यवय का जीवा वर्ग :- 1900000-70000 =1830000×70000 =128100000000×4 =512400000000 जीवा वर्ग हुआ।

महाहिमवंत, रूक्मि पर्वत का जीवा वर्ग :- 1900000-150000= 1750000×15000= 262500000000×4= 1050000000000 जीवा वर्ग हुआ।

हरिवर्ष, रम्यकवर्ष का जीवा वर्ग :- 1900000-310000 =1590000×310000 =492900000000×4 =1971600000000 जीवा वर्ग हुआ।

निषध, नीलवंत पर्वत का जीवा वर्ग :- 1900000-630000 =1270000×630000 =800100000000×4 =3200400000000 जीवा वर्ग हुआ।

महाविदेह क्षेत्र का जीवा वर्ग :- 1900000-950000 =950000×950000 =902500000000×4 =3610000000000 जीवा वर्ग हुआ। अर्द्ध महाविदेह क्षेत्र का जीवा वर्ग हुआ 950000 ईषु कला महाविदेहार्द्ध

की ईषुकला से गुणा किया था उसी से बाकी निकाला था, अतः उत्तरार्द्ध महाविदेह-दक्षिणार्द्ध महाविदेह का जीवा वर्ग 3610000000000 हुआ।

जम्बूद्वीप के सभी क्षेत्रों पर्वतों का जीवा वर्ग :-

क्षेत्र पर्वत	जीवा वर्ग
दक्षिण भरत-उत्तर ऐरवत क्षेत्र	34308097500
वैताढ्य पर्वत	41490097500
उत्तर भरत-दक्षिण ऐरवत क्षेत्र	75600000000
चुल्ल हिमवंत-शिखरी पर्वत	224400000000
हेमवय-हैरण्यवय क्षेत्र	512400000000
महाहिमवंत-रूक्मि पर्वत	1050000000000
हरिवास-रम्यकवास	1971600000000
निषध-नीलवंत पर्वत	3200400000000
अर्द्ध महाविदेह (उत्तरार्द्ध-दक्षिणार्द्ध)	3610000000000

4. ईषु (बाण या शर):- जंबूद्वीप के भरत और एरवत दोनों क्षेत्र ये दो विभाग हैं। जो तीर चढ़ाये धनुष आकार के हैं। बाण की जगह का जो विष्कंभ है वह ईषु कहलाता है।

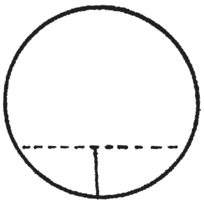

(चित्र सं. 95)-
ईषु

विवक्षि तस्त्र क्षेत्रस्य, जीवायाः मध्य भागतः

विष्कम्भो योऽर्णवं यावत्, स ईषु परिभाषतः।। (''लोक प्रकाश'' सर्ग-16 गा. 6)

किसी भी क्षेत्र की जीवा के मध्य भाग से समुद्र (अन्त) तक का जो विष्कंभ हो वह ईषु या शर या बाण कहलाता है, ईषु में खंड की चौड़ाई का समाविष्ट होता है, और ईषु से धनुःपृष्ठ की चौड़ाई ज्यादा होती है। विष्कंभ में मात्र खंड की चौड़ाई ही गिनते हैं, इससे बहुत क्षेत्रों में विष्कंभ छोटा होता है और किनारे (छोर) के विभागों में ईषु और विष्कंभ दोनों सरीखे होते हैं।

दक्षिण भरतार्द्ध का ईषु 238 योजन 3 कला है, इतना ही उत्तर एरवत क्षेत्र का भी है। आधुनिक पद्धति से-खंड वर्त्तुल की ऊंचाई को ईषु कहते है।

ईषु= $\frac{1}{2}$ [व्यास-$\sqrt{\text{व्यास}^2 - \text{जीवा}^2}$]

विशेष- जीवा और बाहा की कीमत परस्पर अवलम्बित है, जीवा की कीमत जानने के लिए ईषु, और ईषु की कीमत जानने के लिए जीवा की शास्त्रीय कीमत लेनी इस प्रकार करने से ऊपर दिये सूत्रानुसार करने पर आधुनिक या शास्त्रीय में कहीं फरक नहीं आता।

ईषु निकालने का तरीका : धनुःपृष्ठ से प्रारंभ करके उस खंड की उत्कृष्ट जीवा तक की चौड़ाई को ईषु कहते हैं। ईषु और विष्कंभ में अन्तर है। विष्कंभ में केवल उस खंड का विस्तार होता है, जबकि ईषु में अतिमध्य भाग से उस खंड के पर्यंत भाग तक का बाण जैसे सीधे भाग चौड़ाई जितना विस्तार ईषु का होता है। ईषु के जितने योजन आवे उन्हें 19 से गुणा करने को ईषु कला कहते हैं।

दक्षिण भरत की ईषु कला- विष्कंभ 238 योजन×19 = 4522+3 = 4525 दक्षिण भरत की ईषुकला हुई।

वैताढ्य पर्वत की ईषुकला- 50 × 19 =950 ईषुकला हुई।

उत्तर भरत की ईषुकला- 238 × 19 = 4522 + 3 = 4525 ईषुकला हुई।

भरत क्षेत्र की ईषुकला - 4525 + 950 + 4525 = 10000 ईषुकला हुई।

इसी प्रकार 100 का वर्ग करके (100 को 100 से गुणा करना) जो संख्या आवे, उसको क्रमशः 1, 3, 7, 15, 31, 63, 95 से गुणा करने से जो संख्या आवे, वह भरत आदि क्षेत्रों की क्रमशः ईषु कला है। 100×100 =10000 संख्या हुई।

10000 × 1 = 10000	भरत, एरवत क्षेत्र की ईषु
10000 × 3 = 30000	चुल्ल हिमवंत, शिखरी पर्वत की ईषु
10000 × 7 = 70000	हेमवय हैरण्यवय क्षेत्र की ईषु
10000 × 15 = 150000	महाहिमवंत रूक्मि पर्वत की ईषु
10000 × 31 = 310000	हरिवर्ष रम्यक वर्ष क्षेत्र की ईषु
10000 × 63 = 630000	निषध, नीलवंत पर्वत की ईषु
10000 × 95 = 950000	द. महाविदेह, उत्तर महाविदेह की ईषु

अथवा पूर्व में जो तरीका बताया उसी प्रकार करने से भी निकाली जा सकती है, जैसे- चुल्ल हिमवंत का विष्कंभ 1052 योजन 12 कला = 1052×19 =19988+12 =20000 ईषु आये इसमें भरत का जोड़ने से 20000+10000 =30000 ईषु हुई। इसी प्रकार आगे भी अन्य क्षेत्र एवं पर्वत आदि का निकाल सकते हैं।

5. धनुःपृष्ठ- 1. वृत्त पदार्थ का अन्तिम देश भाग धनुषाकार होता है। उतने देश भाग को खंड कहते हैं, और उस खंड स्थान पर अन्तिम धनुष की कामठी जैसी देश परिधि वह धनुःपृष्ठ कहलाती है।

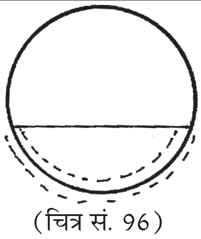

(चित्र सं. 96)
धनुःपृष्ठ

2. ईषु के वर्ग को 6 गुणा करके उसमें जीवा का वर्ग जोड़कर वर्गमूल निकालने से जो आवे वह धनुःपृष्ठ कहलाता है।

3. विवक्षितस्य क्षेत्रस्य, पूर्वापरान्त सीमया।
योऽब्धि स्पर्शी परिक्षेपो, धनुःपृष्ठ तदूचिरे।।8।।

''लोकप्रकाश'' सर्ग-16

जीवा के पूर्व पश्चिम किनारे रूप सीमा से समुद्र तक पहुंचता भाग परिधि होता है, यह धनुःपृष्ठ है, भरत क्षेत्र का 14528 योजन 11 कला धनुःपृष्ठ है।

धनुःपृष्ठ निकालने का तरीकाः- गोलाकार में रहे किसी भी क्षेत्र या पर्वत का धनुःपृष्ठ इस प्रकार निकाला जाता है- ''ईषु वर्गं षड्गुणं जीवा वर्गे प्रक्षिप्य यतस्य वर्गमूलं तद् धनुःपृष्ठम्।''

1. ईषु का वर्ग करना फिर 2. ईषुवर्ग को 6 से गुणा करना 3. उस क्षेत्र की जीवा का वर्ग करके उसमें छः गुणा किया हुआ ईषु जोड़ना 4. फिर उसका वर्गमूल निकालना 5. योजन बनाने हेतु 19 का भाग देना, जो राशि प्राप्त हो, वह धनुःपृष्ठ है।

भरत, ऐरवत का धनुःपृष्ठः- 1. ईषु का वर्ग करना भरत का ईषु 10000×10000= 100000000 यह ईषुवर्ग हुआ 2. 100000000×6= 600000000 हुआ 3. जीवा का वर्ग करना भरत क्षेत्र की जीवा 14471 योजन 5 कला कुल कला हुई- 14471×19=274946+5=274954 इसका वर्ग × 274954=75599702116 + 297884 (उत्तर भरत की जीवा निकालते समय शेष बचे थे) जोड़ने से अथवा वहां की कुल ईषु कला वर्गमूल से पूर्व थी= 75600000000 इसमें छः गुणा किये हुए ईषु कला जोड़ने से 75600000000+600000000 =76200000000 संख्या हुई।

4. इन दोनों सम्मिलित संख्या का वर्गमूल निकालना-

	276043
2	76200000000
2	4
47	362
7	329
546	3300
6	3276
55204	240000
4	220816
552083	1918400
3	1656249
552086 छेद राशि	262151 शेष राशि

वर्गमूल 276043
शेष राशि 262151
छेद राशि 552086

5. वर्गमूल की राशि 276043 में 19 भाग देने से योजन 14528 योजन 11 कला धनुःपृष्ठ हुआ। भरत क्षेत्र का धनुःपृष्ठ प्रमाण 14528 योजन 11 कला प्रमाण।

दक्षिण भरत, उत्तर ऐरावत क्षेत्र का धनुःपृष्ठ- द. भरत की ईषुकला 4525×4525=20475625 वर्ग हुआ × 6 = 122853750 यह छः गुणा हुआ।

द. भरत की जीवा 9748 योजन 12 कला की कला बनी 185224 इसका वर्ग- 185224 × 185224 = 34307930176 + 167324 (द. भरत की जीवा निकालते समय की शेष राशि) या फिर कुल वर्गमूल से पूर्व राशि 34308097500 (यानि द. भरत का जीवा वर्ग)। 6 गुणा इषु वर्ग राशि जोड़ें 34308097500 + 122853750 = 34430951250 इसका वर्गमूल निकालें-

	185555	
1	34430951250	
1	1	
28	244	
8	224	
365	2030	
5	1825	वर्गमूल 185555
3705	20595	शेष राशि 293225
5	18525	छेद राशि 371110
37105	207012	185555÷19=9766
5	185525	दक्षिण भरत उ. ऐरवत का
371105	2148750	धनुःपृष्ठ 9766 योजन
5	1855525	1 कला प्रमाण है।
371110 छेद राशि	293225	

वैताढ्य पर्वत का धनुःपृष्ठ- 5475×5475=29975625×6 =179853750

वैताढ्य का जीवा वर्ग- 41490097500+179853750 =41669951250

	204132	
2	41669951250	
2	4	वर्गमूल 204132
404	01669	शेष राशि 77826
4	16167	छेद राशि 408264
4081	5395	204132 ÷19 = 10743 योजन 15 कला
1	4081	प्रमाण वैताढ्य पर्वत का धनुःपृष्ठ 10743 यो.
40823	13412	15 कला है।
3	122469	
408262	894350	
2	816524	
408264 छेद राशि	77826 शेष राशि	

चुल्ल हिमवंत शिखरी पर्वत का धनुःपृष्ठः- 30000×30000=900000000

900000000×6= 5400000000+224400000000 =229800000000 आया

	479374
4	229800000000
4	16
87	168
7	609
949	8900
9	8541
9583	35900
3	28749
95867	715100
7	671069
95874	4403100
4	3834976
95878	568124
छेद राशि	शेष राशि

वर्गमूल 479374
शेष राशि 568124
छेद राशि 98578
479374÷19=25230 योजन 4 कला

चुल्ल हिमवंत शिखरी पर्वत का धनुःपृष्ठ
25230 योजन 4 कला प्रमाण

हेमवय हैरण्यवय का धनुःपृष्ठ- 70000×70000 =4900000000 × 6 =29400000000+ 512400000000= 541800000000 का वर्गमूल-

	736070
7	541800000000
7	49
143	518
3	429
1466	8900
6	8796
147207	1040000
7	1030449
1472140 छेद राशि	955100 शेष राशि

वर्गमूल 736070
शेष राशि 955100
छेद राशि 1472140
736070÷19=38740 योजन
10 कला प्रमाण धनुःपृष्ठ है।

महाहिमवंत, रूक्मि पर्वत का धनुःपृष्ठ :- 150000 × 150000 = 22500000000 इसे 6 से गुणा करें = 135000000000 + 1050000000000 = 1185000000000

	1088577	
1	1185000000000	
1	1	
208	1850	
8	1664	
2168	18600	
8	17344	
21765	125600	वर्गमूल 1088577
5	108825	शेष राशि 115071
217707	1677500	छेद राशि 2177154
7	1523949	1088577÷19=57293 यो. 10 कला
2177147	15355100	
7	15240029	
2177154 छेद राशि	115071 शेष राशि	

महाहिमवंत रूक्मि पर्वत का धनुःपृष्ठ 57293 योजन 10 कला प्रमाण है।

हरिवर्ष, रम्यक्‌वर्ष क्षेत्र का धनुःपृष्ठ :- 3,10,000×3,10,000=9600000000×6 = 576600000000+1971600000000 =2548200000000 हुआ।

	1596308	
1	2548200000000	वर्गमूल 1596308
1	1	शेष राशि 769136
25	154	छेद राशि 3192616
5	125	1596308÷19=84016 यो. 4 कला
309	2982	हरिवास रम्यक्‌वास का धनुःपृष्ठ 84016
9	2781	योजन 4 कला प्रमाण है
3186	20100	
6	19116	
31923	98400	
3	95769	
3192608	26310000	
8	25540864	
3192616 छेद राशि	769136 शेष राशि	

निषध, नीलवंत पर्वत का धनु:पृष्ठ :- 630000×630000=396900000000 को 6 से गुणा = 2381400000000 + 3200400000000 = 5581800000000 आये।

	2362583
2	5581800000000
2	4
43	158
3	129
466	2918
6	2796
4722	12200
2	9444
47245	275600
5	236225
472508	3937500
8	3780064
4725163	15743600
3	14175489
4725166	1568111 शेष राशि

वर्गमूल 2362583
शेष राशि 1568111
छेद राशि 4725166
2362583÷19=124346 यो. 9 कला
निषध नीलवंत का धनु:पृष्ठ 124346 योजन 9 कला प्रमाण है।

महाविदेह क्षेत्र का धनु:पृष्ठ :- 950000×950000= 902500000000×6= 5415000000000+3610000000000= 9025000000000 आये।

	3004163
3	9025000000000
3	9
6004	0025000
4	24016
60081	98400
1	60081
600826	3831900
6	3604956
6008323	22694400
3	18024969
6008326 छेद राशि	4669431 शेष राशि

वर्गमूल 3004163
शेष राशि 4669431
छेद राशि 6008326

वर्गमूल संख्या 3004163 में 19 का भाग देकर योजन बना लें तो 158113 योजन 16 कला तथा वर्गमूल के समय की शेष राशि 4669431 अर्द्धकला प्रमाण होने से 16½ कला होती है, अतः महाविदेह क्षेत्र का धनु:पृष्ठ 158113 योजन 16½ कला प्रमाण कहा है।

दक्षिण भरतार्द्धादि नौ स्थान का धनु:पृष्ठ यंत्रः- (स्थानाभाव से दो भागों में विभक्त किया है)

1 स्थानों के नाम	2 ईषु की कला	3 ईषु के वर्ग की कला का अंक	4 ईषु वर्ग को 6 गुणा करने से कला	5 जीवा के वर्ग की कला का अंक
भरतार्द्ध	4525	20475625	122853750	34308097500
वैताढ्य	5475	29975625	179853750	41490097500
पूर्ण भरत	10000	100000000	600000000	75600000000
हिमवंत गिरि	30000	900000000	5400000000	224400000000
हिमवंत क्षेत्र	70000	4900000000	29400000000	512400000000
महाहिमवंत	150000	22500000000	135000000000	1050000000000
हरिवर्ष क्षेत्र	310000	96100000000	576600000000	1971600000000
निषध पर्वत	630000	396970000000	2381400000000	3200400000000
महाविदेहार्द्ध	950000	902500000000	5415000000000	3610000000000

6 6 गुणे ईषु की वर्ग की कला एवं जीवा के वर्ग की कला का योग	7 वर्गमूल करने पर शेष राशि का खंड	8 वर्गमूल करने पर छेद राशि का अंक	9 वर्गमूल करने पर लब्धि राशि का अंक	10 प्राप्त कला का योजन तथा कला कला की संख्या योजन - कला
344309581250	293225	371110	185555	9766 - 1
41669951250	77826	408264	204132	10743 - 15
76200000000	262151	552086	276043	14528 - 11
229800000000	568124	958748	479374	25230 - 4
541800000000	955100	1472140	736070	38740 - 10
1185000000000	115071	2177154	1088577	57293 - 10
2548200000000	769136	3192616	1596308	84016 - 4
5581800000000	1568111	4725166	2362583	124346-9
9025000000000	4669431	6008326	3004163	158113-16½

आधुनिक पद्धति- परिधि के एक विभाग को धनुःपृष्ठ कहते हैं। वर्तुल के केन्द्र के पास 360 डिग्री का कोण बनाता धनुष्य यानि परिध। इससे धनुष की लम्बाई, उस धनुष द्वारा वर्तुल के केन्द्र के पास बनते कोण के प्रमाण की होती है।

$$\textbf{धनुःपृष्ठ} = \frac{\text{धनुःपृष्ठ द्वारा केन्द्र के पास बनता खुणा}}{360^0} \times \text{परिध}$$

$$\text{जीवा} = \frac{2+\text{Sin-1 व्यास}}{360^0} \times \text{परिध}$$

($\therefore$ धनुपृष्ठ द्वारा केन्द्र पास बनता खूणा=2× Sin-1 $\frac{\text{जीवा}}{\text{व्यास}}$

शास्त्रीय पद्धति से धनुःपृष्ठ की कीमत निकालने का सूत्र-

धनुःपृष्ठ = $\sqrt{6\ \text{बाण}^2 + \text{जीवा}^2}$

6. बाहा- दो छोटे बड़े धनुःपृष्ठ का विश्लेष (घटाकर) करने से जो बचे उसका आधा करने से बाहा का प्रमाण निकलता है।

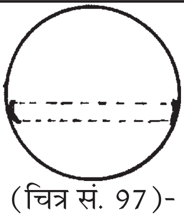

(चित्र सं. 97)-
बाहा

पूर्व क्षेत्र धनुःपृष्टाद्धनुः, पृष्टेऽग्रिमेंऽधिकम्।
खण्ड वक्र बाहु, वद्यत्सा बाहेत्यभिधीयते ।।9।।

''लोक प्रकाश'' सर्ग-16

किसी क्षेत्र के पूर्व के धनुःपृष्ठ से अगले धनुःपृष्ठ में तिरछे हाथ जैसे अधिक खंड हो, उसे बाहा कहते हैं। संपूर्ण भरत क्षेत्र एक मानकर धनुःपृष्ठ भी एक माने इसकी बाहा नहीं होती है। परन्तु बीच में वैताढ्य पर्वत के कारण उत्तर एवं दक्षिण ये दो विभाग (भरत क्षेत्र के) बन जाते हैं। इस प्रकार उत्तर भरत क्षेत्र की दो बाहा बन जाती है। दक्षिण भरत की नहीं बनती। उत्तर भरत की बाहा अंक गणित से इस प्रकार-

14528 योजन 11 कला उत्तर भरत का बड़ा धनुःपृष्ठ है, उसमें से

10743 योजन 15 कला दक्षिण भरत का छोटा धनुःपृष्ठ घटाने से-

3784 योजन 15 कला शेष रहा उसका आधा 1892 योजन 7½ कला यह उत्तर भरत की एक तरफ की बाहा हुई। इतनी ही बाहा दूसरी तरफ की भी समझें। परन्तु यह बाहा भरत क्षेत्र की नहीं, परन्तु **उत्तर भरत** क्षेत्र की ही कहलायेगी।

बाहा निकालने का तरीकाः- बाहा का स्वरूप- जो वस्तु गोलाकार हो, उसमें से अन्तिम सिवाय के कोई भी क्षेत्र, पर्वत आदि के उत्तर-दक्षिण चौड़ाई सिवाय के पूर्व पश्चिम तरफ के अंत भाग के दोनों छोर के दो भाग हैं, उन दोनों भागों की चौड़ाई को बाहा कहते हैं।

किस क्षेत्र के बाहा नहीं हैं? :- जम्बूद्वीप के उत्तरी छोर पर अवस्थित उत्तर ऐरावत क्षेत्र और दक्षिण छोर पर अवस्थित दक्षिण भरत क्षेत्र के बाहा नहीं होती हैं।

इन दोनों के सिवाय इनके (दोनों के) मध्यवर्ती (जम्बूद्वीप में) क्षेत्रों और पर्वतों के बाहा है।

भरत आदि की बाहा निकालने का तरीकाः- जिस स्थान की बाहा निकालनी हो, जाननी हो उस क्षेत्र के बड़े धनुःपृष्ठ में से छोटे धनुःपृष्ठ की संख्या को कम करके जो संख्या बचे उसकी आधी करने से जो संख्या आवे, वह उस उस क्षेत्र की बाहा है।

बड़ा छोटा धनुःपृष्ठ :- उस क्षेत्र का स्वयं का धनुःपृष्ठ बड़ा धनुःपृष्ठ कहलाता है और उस विवक्षित क्षेत्र से पूर्व (पहले) रहे हुए क्षेत्र का धनुःपृष्ठ छोटा धनुःपृष्ठ कहलाता है। जैसे-वैताढ्य पर्वत की बाहा का प्रमाण निकालना हो तो उसके लिए वैताढ्य पर्वत का धनुःपृष्ठ बड़ा धनुःपृष्ठ है, और दक्षिण भरत का धनुःपृष्ठ छोटा धनुःपृष्ठ है। वैताढ्य पर्वत के धनुःपृष्ठ में से दक्षिण भरत के धनुःपृष्ठ को कम करके, शेष का आधा करने पर

वैताढ्य पर्वत की बाहा का प्रमाण आता है। उदाहरणार्थ-

वैताढ्य का धनुःपृष्ठ 10743 योजन 15 कला में से बाकी निकालें-

द. भरत का धनुः पृष्ठ 9766 योजन 1 कला कम जाने से बचा 977 योजन 14 कला। इसका आधा 488 योजन 16½ कला। यानि वैताढ्य पर्वत के दक्षिण से उत्तरी छोर की दूरी 488 योजन 16½ कला प्रमाण है।

उत्तर भरत क्षेत्र, दक्षिण ऐरावत क्षेत्र की बाहा :- उत्तर भरत का धनुःपृष्ठ 14528 योजन 11 कला - 10743 योजन 15 कला छोटा धनुःपृष्ठ = 3784 यो. 15 कला। इसका आधा 1892 योजन 7½ कला उत्तर भरत की ओर इतनी ही दक्षिण ऐरावत की बाहा का प्रमाण है।

चुल्ल हिमवंत शिखरी पर्वत की बाहा :- चुल्ल हिमवंत का धनुःपृष्ठ 25230 यो. 4 कला-उत्तर भरत का 14528 यो. 11 कला = 10701 यो. 12 कला ÷ 2 = 5350 यो. 15½ कला।

हेमवय हैरण्यवय की बाहा :- हेमवय का धनुःपृष्ठ 38740 यो. 10 कला-चुल्ल हिमवंत का 25230 यो. 4 कला = 13510 यो. 6 कला ÷ 2 = 6755 योजन 3 कला है।

महाहिमवंत-रूक्मि पर्वत की बाहा :- महाहिमवंत का धनुःपृष्ठ 57293 यो. 10 कला-हेमवय का 38740 यो. 10 कला = 18553 योजन ÷ 2 = 9276 यो. 9½ कला।

हरिवर्ष-रम्यकवर्ष की बाहा :- हरिवर्ष का धनुःपृष्ठ 84016 यो. 4 कला-महाहिमवंत का 57293 यो. 10 कला = 26722 यो. 13 कला ÷ 2 =13361 यो. 6½ कला है।

निषध-नीलवंत पर्वत की बाहा :- निषध का धनुःपृष्ठ 124346 यो. 9 कला-हरिवर्ष का 84016 योजन 4 कला = 40330 यो. 5 कला ÷ 2 =20165 योजन 2½ कला है।

महाविदेह क्षेत्र की बाहा :- महाविदेह का धनुःपृष्ठ 158113 यो. 16½ कला-निषध का 124346 यो. 9 कला = 33767 यो. 7½ कला ÷ 2 =16883 यो. 13¼ कला है। सम्पूर्ण महाविदेह क्षेत्र की बाहा 33767 यो. 7½ कला है किन्तु उत्तरार्द्ध महाविदेह और दक्षिणार्द्ध महाविदेह की अलग-अलग बाहा का प्रमाण कहें तो 16883 योजन 3¾ कला प्रमाण है, कहीं 16883 यो. 13¼ कला प्रमाण भी बताया है।

-बाहा यंत्र-

क्र.	बाहा करने के स्थान के नाम	वैताढ्यादि का महाधनुः पृष्ठ		भरतार्द्धादि का लघु धनुः पृष्ठ		दोनों के विश्लेषण से बाकी		आधा करने से अंक वह बाहा	
		योजन	कला	योजन	कला	योजन	कला	योजन	कला
1	वैताढ्य पर्वत	10743	15	9766	1	977	14	488	16½
2	भरत क्षेत्र	14528	11	10743	15	3784	15	1892	7½
3	हिमवंत पर्वत	25230	4	14528	11	10701	12	5350	15½
4	हिमवंत क्षेत्र	38740	10	25230	4	13510	6	6755	3
5	महा हिमवंत पर्वत	57293	10	38740	10	18553	0	9276	9½
6	हरिवर्ष क्षेत्र	84016	4	57293	10	26722	13	13361	6½
7	निषध पर्वत	124346	9	84016	4	40330	5	20165	2½
8	विदेहार्द्ध	158113	16½	124346	9	33767	7½	16883	13¼

-ईषु आदि सिद्ध हुए अंकों का यंत्र-

सिद्धांक	ईषु		जीवा		धनुःपृष्ठ		बाहा	
	योजन	कला	योजन	कला	योजन	कला	योजन	कला
दक्षिण भरतार्द्ध में	238	3	9748	12	9766	1	-	-
वैताढ्य में	288	3	10720	11	10743	15	488	16½
संपूर्ण भरत में	526	6	14471	5	14528	11	1892	7½
हिमवंत पर्वत में	1578	18	24932	½	25230	4	5350	15½
हिमवंत क्षेत्र में	3684	4	37674	16	38740	10	6755	3
महाहिमवंत में	7894	14	53931	6	57293	10	9273	9½
हरिवर्ष में	16315	15	73901	17½	84016	4	13361	6½
निषध में	33157	17	94156	2	124346	9	20165	2½
विदेहार्द्ध में	50000	-	100000	-	158113	16½	16883	13¼

आधुनिक पद्धति-दो समानांतर जीवाओं की सीमा रेखा के धनुष्य को बाहा कहते हैं।

$$\text{बाहा} = \frac{\text{गुरू धनुष्य - लघु धनुष्य}}{2}$$

7. प्रतर- अंतिम खंड के ईषु से जीवा को गुणा करके 4 से भाग देने पर आने वाली राशि का वर्ग करके 10 गुणा कर उसका वर्गमूल निकालने से प्रतर आता है।

यह प्रतर गणित मात्र धनुष्याकार वाले किसी भी खंड के लिए ही है। सभी क्षेत्रों या पर्वतों के लिए नहीं है। जंबूद्वीप रूपी वृत्त पदार्थ के भरत और एरवत ऐसे दो धनुष्याकार वाले क्षेत्र हैं, इनमें दो-दो विभाग की विवक्षा करें

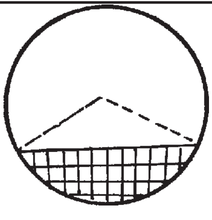

(चित्र सं. 98)-
प्रतर 1

तो वर्षधर पर्वत तरफ का आधा क्षेत्र अधिकांशतः लम्ब चौरस आकार का है, इसलिए मात्र समुद्र के पास के दक्षिण भरत और उत्तर एरवत में ही प्रतर इस तरह से मिलते हैं। बाकी के विभागों का प्रतर अलग-अलग करने के लिए लंब चौरस के क्षेत्रफल की रीति से (तरीके) मिलते हैं।

विवक्षितस्य क्षेत्रस्य, यानि योजन मात्रया।
खण्डानि सर्वक्षेत्रस्य, तत् क्षेत्रफल मुच्यते।

''लोक प्रकाश'' सर्ग 16

यहां दक्षिण भरत को ही धनुष्याकार मान उसका प्रतर (क्षेत्रफल) करने का गणित कहा है। यहां गणित में 4 से भाग देने पर एक प्रतिकला की भी प्रतिकला आती है। उसे कम कर गणित में नहीं लेनी। दक्षिण भरत की जीवा कला साधिक 185224 है यहां 185225 ली है। ईषु कला को जीवाकला से गुणा करने से कला नहीं परंतु प्रतिकला आती है ऐसी गणित की रीति है।

238 योजन 3 कला यह दक्षिण भरत का ईषु है, इसकी कला करने के लिए 19 से गुणा करने से 4522+3=4525 दक्षिण भरत की कला हुई, इसे दक्षिण भरत की जीवाकला 185225 से गुणा करने से 838143125 प्रतिकला हुई। इसमें 4 का भाग देने से 20953578। प्रतिकला आई। इसका वर्ग करने से 43905243519279961 वर्गित कला आई, इसे 10 गुणा करने से 439052435192799610 प्रति कला आई। इसका वर्गमूल करने से शेष राशि 347517849, भाजक राशि 1325220638 और जवाब का अंक (लब्धांक) 662610319 प्रतिकला आई। इसमें 19 का भाग देने पर 34874227 कला और 6 प्रतिकला आई। इसके योजन करने हेतु 19 से भाग देने से 1835485 योजन 12 कला 6 प्रतिकला आई। यह दक्षिण भरत का प्रतर है और यही दक्षिण भरत का गणित पद है।

दक्षिण भरतार्द्ध का प्रतर करने का कोठा- (यंत्र)

1.	ईषुकला	4525
2.	किंचित न्यून जीवा कला	185225
3.	ईषुकला × जीवा कला	838143125
4.	इसको 4 से भाग देने पर कला	209535781
5.	चौथे भाग की कला का वर्ग करने पर	43905243519279961
6.	इसे 10 से गुणा करने पर	439052435192799610
7.	इस वर्ग का मूल प्राप्त करने आता अंक	662610319
8.	शेष राशि	347517849
9.	छेद राशि	1325220638
10.	प्राप्त प्रतिकला को 19 से भाग देने पर	34874227 और 6 प्रतिकला
11.	पुनः कला के योजन करने 19 से भाग देने पर	1835485 योजन 12 कला 6 प्रतिकला जानना

वृत्त पदार्थ में लम्ब चोरस खंड आयें तो उसके प्रतर किस प्रकार निकालें?

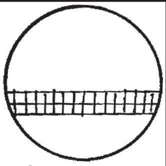

(चित्र सं. 99)- प्रतर 2

यहां वैताढ्यादि लम्ब चोरस पवर्तों और क्षेत्रों के प्रतर निकालने का तरीका बताया है- छोटी बड़ी दो जीवा के वर्ग का योग कर उसे आधा करके उसका जो वर्गमूल आये उसे स्वयं के विस्तार के साथ गुणा करने से वैताढ्यादि पर्वतों और क्षेत्रों का प्रतर होता है। वृत्त क्षेत्र में रहे क्षेत्रादि के अन्तिम छोर वक्र लकीर वाले होते हैं। इससे उपरोक्त तरीके के प्रतर मिलते हैं। और सीधी लकीर वाले लम्ब चोरस या समचोरस पदार्थों के लिए लम्बाई चौड़ाई को गुणा करने से प्रतर मिलते हैं।

प्रतर करने का यंत्र (इसे दो भागों में स्थानाभाव के कारण विभक्त किया है)

क्रम.	प्रतर करण	1 उत्तर भरतार्द्ध का	2 हिमवंत गिरि का	3 हिमवंत क्षेत्र का
1.	लघु जीवा वर्ग कला	41490097500	75600000000	224400000000
2.	गुरू जीवा वर्ग कला	75600000000	224400000000	512400000000
3.	उभय योग कला	117090097500	300000000000	736800000000
4.	तद्ली करणे कला (आधा)	58545048750	150000000000	368400000000
5.	वर्गमूल लब्ध कला	241960	387298	606959
6.	शेष राशि	407150	259196	772319
7.	छेद राशि	483920	774596	1213918
8.	अपवर्त्तन के अंक	10	4	0
9.	अपवर्त्तन से शेष राशि	40715	64799	0
10.	अपवर्त्तन से छेद राशि	48392	193649	0
11.	पृथुत्व कला	4525	20000	40000
12.	तद्गुणोलब्ध कला	1094869000	7745960000	24278360000
13.	पृथुत्वेन शेषांश कला	184235375	1295980000	30892760000
14.	छेद भागेन लब्ध कला	3807 शेष 7031	6692 शेष 80892	25448 शेष 974736
15.	उसकी वृहद् राशि क्षेत्र	1094872807	7745966692	24278385448
16.	एकदा 19 भाग कला	57624884 प्र. 11	407682457 प्र. 9	1277809760 प्र. 8
17.	पुनः 19 भागे योजन	3032888 क. 12 प्र. 11	21456971 क. 8 प्र. 10	67253145 क. 5 प्र. 8

क्र.	महा हिमवंत गिरि का 4	हरिवर्ष क्षेत्र का 5	निषध पर्वत का 6	विदेहार्द्ध का 7
1.	512400000000	1050000000000	1971600000000	3200400000000
2.	1050000000000	1971600000000	3200400000000	3610000000000
3.	1562400000000	3021600000000	5172000000000	6810400000000
4.	781200000000	1510800000000	2586000000000	3405200000000
5.	883855	1229146	1608104	1845318
6.	338975	110684	1525184	1478876
7.	1767710	2458292	3216208	3690636
8.	35	4	16	4
9.	9685	27671	95324	369719
10.	50506	614573	201013	922659
11.	80000	160000	320000	320000
12.	70708400000	196663360000	514593280000	590501760000
13.	774800000	4427360000	30503680000	118310080000
14.	15340 शेष 37960	7203 शेष 590681	151749 शेष 158263	128227 शेष 284407
15.	70708415340	196663367203	514593431749	590501888227
16.	3721495544 प्र. 4 कला	10350703537	27083864828 प्र. 17	31079046748 प्र. 15
17.	195868186 क. 10 प्र. 5	544773870 क.7 प्र.1	1425466569 क. 17 प्र. 17	1635739302 क. 10 प्र. 15

प्रतर निकालने का तरीका :- बड़े जीवा वर्ग और छोटे जीवा वर्ग दोनों को एकत्रित करके आधा करना और फिर उसका वर्गमूल निकालना, जो संख्या आवे वह उस पर्वत आदि की पूर्व पश्चिम लम्बी बाहा जानना और उसको विष्कंभ से गुणा करने पर जो संख्या आवे वह उस क्षेत्र या पर्वत का प्रतर होता है। स्वक्षेत्रादि की जीवा = बड़ी जीवा और उससे पहले के क्षेत्रादि की जीवा-छोटी जीवा कहलाती है।

वैताढ्य पर्वत का प्रतर गणित :- वैताढ्य पर्वत का जीवा वर्ग 41490097500+दक्षिण भरत क्षेत्र का जीवा वर्ग 34308097500 जोड़ने से 75798195000 हुआ। इसका आधा 37899097500 हुआ इसका वर्गमूल निकालें-

शेष बचे 352524 में 12 का भाग देने पर 29377 आये

छेद राशि 389352 में 12 का भाग देने पर 32446 आये

यानि वैताढ्य पर्वत की कला राशि 194676 शेष राशि 29377 छेद राशि 32446 है।

प्रतर करने के लिए वैताढ्य पर्वत जमीन पर 50 योजन विस्तृत है इसलिए वर्गमूल को 50 से गुणा 194676×50=9733800

	194676
1	37899097500
1	1
29	278
9	261
384	1799
4	1536
3886	26309
6	23316
38927	299375
7	272489
389346	2686600
6	2336076
389352 छेद राशि	352524 शेष राशि

वर्गमूल 194676
352524 शेष राशि÷12=29377
389352 छेद राशि÷12=32446

शेष राशि को 50 से गुणा करें 29377 × 50 = 1468850 ÷ छेद राशि 32446=45 शेष 8780 बचे।

9733800+45 (शेष राशि × 50 ÷ छेद राशि से आई संख्या कला) = 9733845 इनको योजन बनाने हेतु 19 का भाग दें = 512307 योजन 12 कला।

8780 शेष बचे शेष राशि के उसकी विकला बनाना × 19 = 166820 उसमें भी छेद राशि 32446 का भाग दें = 5 विकला शेष 4590 बचे। इस प्रकार वैताढ्य का प्रतर गणित भूमि तल पर 512307 योजन 12 कला 5 विकला 4590 शेष बचे।

उत्तर भरत द. ऐरवत क्षेत्र का प्रतर गणित :- उत्तर भरत का जीवा वर्ग 75600000000+वैताढ्य का जीवा वर्ग 41490097500 = 117090097500 कला का आधा करें- 58545048750 का वर्गमूल करें।

	241960
2	58545048750
2	4
44	185
4	176
481	945
1	481
4829	46404
9	43461
48386	294387
6	290316
483920 छेद राशि	407150 शेष राशि

वर्गमूल 241960
शेष राशि 40715
छेद राशि 48392

उत्तर भरत की बाहा कला राशि
$241960 \frac{40715}{48392}$

प्रतर निकालने के लिए बाहा को विष्कंभ से गुणा करें 241960 × 4525 = 1094869000 अब बाहा की शेष कला 40715 को × 4525 = 184235375 ÷ 48392 छेद राशि का भाग दें 3807 आये शेष रही

7031 राशि शेष। अब 3807 को 1094869000 में जोड़े=1094872807 इसमे 361 कला राशि (19×19 एक सम चौरस योजन में 19 कला × 19 कला = 361 समचौरस कला होती है इसलिए 361 का भाग दें) का भाग दें = 3032888 शेष 239 बचे। 239 ÷ 19= 12 कला 11 विकला। उत्तर भरत क्षेत्र दक्षिण ऐरावत क्षेत्र का प्रतर गणित 3032888 योजन 12 कला 11 विकला प्रमाण है।

चुल्ल हिमवंत - शिखरी पर्वत का प्रतर गणित :- चुल्ल हिमवंत पर्वत का जीवा वर्ग 224400000000 + उत्तर भरत का जीवा वर्ग 75600000000 = 30,00,00,00,00,00 हुआ इनका आधा 15,00,00,00,00,00 इनका वर्गमूल निकालें-

	387298	
3	150000000000	
+3	9	
68	600	
8	544	वर्गमूल 387298
767	5600	शेष राशि 259196÷ 4 = 64799
7	5369	छेद राशि 774596
7742	23100	चुल्ल हिमवंत की बाहा
2	15484	$387298\frac{64799}{193649}$
77449	761600	
9	697041	कुल राशि प्रमाण है।
774588	6455900	
8	6196704	
774596	259196	
छेद राशि	शेष राशि	

चुल्ल हिमवंत पर्वत की बाहा कला को चुल्ल हिमवंत के विस्तार से गुणा करें-

387298×20000 चुल्ल हिमवंत का विस्तार =7745960000 आया इसमें शेष राशि 64799×20000 = 1295980000 ÷ 193649 (छेद राशि का भाग)= 6692 तथा शेष 80892 बचे। अब 7745960000 + 6692 =7745966692 आया इसमें 361 का भाग दें = 21456971 योजन बने, तथा शेष 161 बचे उसमें 19 का भाग देने से 8 कला और 9 विकला आई।

80892 शेष बचे थे उसकी एक विकला गिनने से विकला 9+1=10 होती है। इस प्रकार चुल्ल हिमवंत शिखरी पर्वत का प्रतर गणित 21456971 योजन 8 कला 10 विकला प्रमाण है।

हेमवय-हैरण्यवय का प्रतर गणित :- हेमवय का जीवा वर्ग 512400000000 + चुल्ल हिमवंत का जीवा वर्ग 224400000000 = 736800000000 ÷ 2 = 368400000000 हुआ।

हेमवय की बाहा 606959 × विस्तार 40000 = 24278360000 । शेष राशि को भी 772319 × 40000 = 30892760000 ÷ छेद राशि 1213918 = 25448 तथा शेष 974736 बचे। 24278360000 +

25448 = 24278385448 हुआ इसमें योजन बनाने हेतु 361 का भाग देने पर = 67253145 योजन तथा शेष 103 रहा इसमें कला बनाने हेतु 19 का भाग दें तो, 5 कला 8 विकला आई।

हेमवय हैरण्य वय का प्रतर- 67253145 योजन 5 कला 8 विकला प्रमाण है।

	606959	
6	368400000000	
6	36	
1206	8400	
9	7236	वर्गमूल - 606959
12129	116400	छेद राशि 1213918
9	109161	शेष राशि 772319
121385	723900	हेमवय की बाहा
5	606925	606959 $\frac{772319}{1213918}$ हुई।
1213909	11697500	
9	10925181	
1213918 छेद राशि	772319 शेष राशि	

महाहिमवंत-रूक्मि पर्वत का प्रतर गणित- महा हिमवंत का जीवा वर्ग 1050000000000 + हेमवय क्षेत्र का जीवा वर्ग 512400000000 = 1562400000000 इसका आधा करें।

781200000000 आया इसका वर्गमूल करें-

	883855	
8	781200000000	
8	64	
168	1412	
8	1344	वर्गमूल 883855
1763	6800	शेष राशि 338975÷35=9685
3	5289	छेद राशि 1767710÷35=50506
17668	141100	महाहिमवंत की बाहा
8	141344	883855 $\frac{9685}{50506}$ आई
176765	975600	
5	883825	
1767705	9177500	
5	8838525	
1767710 छेद राशि	338975 शेष राशि	

प्रतर बनाने हेतु बाहा की कला राशि 883855 × विस्तार 80000 = 70708400000 शेष राशि को 9685 × 80000 = 774800000 में छेद राशि 50506 का भाग दें- 15340 आया शेष 37960 राशि बची। 70708400000 + 15340 = 70708415340 में 361 (योजन बनाने हेतु) का भाग दें। कुल 195868186 योजन तथा शेष 194 बचे उनकी कला बनाने हेतु 19 का भाग देने पर 10 कला 4 विकला आई और ऊपर शेष बचे 37960 को एक विकला मानने से विकला 5 हो गई। यों महाहिमवंत पर्वत का प्रतर 195868186 योजन 10 कला 5 विकला प्रमाण है।

हरिवास-रम्यकवास क्षेत्र का प्रतर गणित :- हरिवर्ष का जीवा वर्ग 1971600000000 + महाहिमवंत का जीवा वर्ग 1050000000000 = 3021600000000 इसका आधा 1510800000000 राशि आया इसका वर्गमूल करें-

	1229146	
1	1510800000000	
1	1	
22	051	
2	44	
242	708	
2	484	वर्गमूल 1229146
2449	22400	शेष राशि 110684÷4=27671
9	22041	छेद राशि 2458292÷4=614573
24581	35900	हरिवास की बाहा
1	24581	$1229146\frac{27671}{614573}$
245824	1131900	
4	983296	कला राशि
2458286	14860400	
6	14749716	
2458292 छेद राशि	110684 शेष बाकी	

उपरोक्त कला राशि का प्रतर बनाने हेतु - विस्तार से गुणा करे- 1229146 × 160000 = 196663360000 हुआ, अब शेष राशि को भी गुणा करना- 27671 × 160000 = 4427360000 ÷ छेद राशि 614573=7203 शेष 590681 बचे। अब 7203 + 1 + 196663360000 = 196663367204 (शेष 590681 को एक मानकर 7204 जोड़ा) में 361 का (योजन करने हेतु) भाग देने पर 544773870 योजन तथा शेष 134 में 19 का भाग देने से 7 कला 1 विकला आई। हरिवर्ष का प्रतर 544773870 योजन 7 कला 1 विकला प्रमाण है।

निषध और नीलवंत पर्वत का प्रतर गणित- निषध का जीवा वर्ग 3200400000000+ हरिवर्ष का जीवा वर्ग 1971600000000=5172000000000 हुआ इसका आधा करें- 2586000000000 का वर्गमूल करें-

निषध की बाहा राशि का प्रतर बनाने हेतु राशि को विस्तार से गुणा करें 1608104×320000 =514593280000 और शेष राशि को गुणा कर जोड़े 95324 × 320000 = 30503680000 में छेद राशि

का भाग ÷ 201013 =151749 शेष 158263 बचा। यह 151746 + 514593280000 = 514593431749 में ÷ 361 (योजन हेतु) भाग देवें- 1425466569 योजन। शेष 340 की कला बनाने 19 का भाग देने पर 17 कला 17 विकला 1 निषध - नीलवंत पर्वत का प्रतर 1425466569 योजन 17 कला 17 विकला प्रमाण है।

	1608104	
1	2586000000000	
1	1	
26	158	वर्गमूल - 1608104
6	156	शेष राशि - 1525184÷16 = 95324
3208	26000	छेद राशि - 3216208÷16=201013
8	25664	निषध की बाहा $1608104\frac{95324}{201013}$
32161	33600	
1	32161	कला राशि
3216204	14390000	
4	12864816	
3216208 छेद राशि	1525184 शेष राशि	

महाविदेह क्षेत्र का प्रतर प्रमाण गणित :- अर्द्ध महाविदेह का जीवा वर्ग 3610000000000 + निषध पर्वत का जीवा वर्ग 3200400000000 = 6810400000000 का आधा करने से 3405200000000 का वर्गमूल करें-

	1845318	
1	3405200000000	
1	1	वर्गमूल 1845318
28	240	शेष राशि 1478876÷4=369719
8	224	छेद राशि 3690636÷4=922659
364	1652	अर्द्ध महाविदेह की बाहा $1845318\frac{369719}{922659}$
4	1456	
3685	19600	कला है।
5	18425	
36903	117500	
3	110709	
369061	679100	
1	369061	
3690628	31003900	
8	29525024	
3690636 छेद राशि	1478876 शेष राशि	

अर्द्ध महाविदेह की बाहा प्रमाण को विस्तार से गुणा करें- 1845318 × 320000 = 590501760000 तथा शेष राशि को भी गुणा करना 369719 × 320000 = 118310080000 ÷ छेद राशि 922659 = 128227 शेष 284407 बचे। अब 590501760000 + 128227 = 590501888227 में 361 का भाग योजन बनाने हेतु देना- 1635739302 योजन तथा शेष 205 में 19 का भाग देने से 10 कला 15 विकला हुई।

इस प्रकार अर्द्ध महाविदेह क्षेत्र का प्रतर 1635739302 योजन 10 कला 15 विकला प्रमाण है।

दक्षिण भरत-उत्तर ऐरवत क्षेत्र का प्रतर गणित :- यह क्षेत्र धनुषाकार होने से उपरोक्त तरीका उपयुक्त नहीं होने से प्रतर गणित का तरीका निम्न प्रकार है-

1. दक्षिण भरतार्द्ध की जीवा को दक्षिण भरतार्द्ध की ईषु से गुणा करना फिर
2. चार से भाग देना, फिर
3. उसका वर्ग करना, फिर
4. दस से गुणा करना, फिर
5. उसका वर्गमूल निकालना, फिर
6. वर्गमूल की कलाओं को योजन में लाने हेतु 361 से भाग देना ऐसा करने से दक्षिण भरतार्द्ध या उत्तर ऐरावतार्द्ध का प्रतर प्रमाण प्राप्त होगा। निम्न प्रकार :-

दक्षिण भरतार्द्ध की जीवा :- 185225 कला × दक्षिण भरतार्द्ध की ईषुकला 4525 = 838143125 में 4 का भाग देने से 209535781 और शेष 1 रहा। इसका वर्ग- 209535781 × 209535781 = 43905243519279961 इनको 10 से गुणा करने से 439052435192799610 आये। इनका वर्गमूल करें-

	662610319	
6	439052435192799610	
6	36	
126	790	
6	756	वर्गमूल 662610319
1322	3452	शेष राशि 347517849
2	2644	छेद राशि 1325220638
13246	80843	
6	79476	
132521	136751	
1	132521	
13252203	42309279	
3	39756609	
132522061	255267096	
1	132522061	
1325220629	12274503510	
9	11926985661	
1325220638 छेद राशि	347517849 शेष राशि	

प्राप्त वर्गमूल में 361 का भाग देने से 662610319 ÷ 361 = 1835485 योजन बने शेष 234 में 19 का भाग देने से 12 कला 6 विकला आई।

द. भरत और (या) उत्तर ऐरवत का प्रतर 1835485 योजन 12 कला 6 विकला प्रमाण है।

प्रतर की आधुनिक पद्धति- प्रतर (1) (खंड वर्तुल का क्षेत्रफल) और प्रतर (2) (दो समांतर जीवा और बाहा से घेराये विस्तार का क्षेत्रफल) भरतार्द्ध जैसे खंडवृत्ताकार विस्तार (प्रतर 1) तथा वैताढ्यादि दूसरे (दो समांतर जीवा और बाहा से बने विस्तार) (प्रतर 2)। प्रतर (1) = खंड वर्तुल का क्षेत्रफल = ½ (धनुष्य × त्रिज्या)-जीवा (त्रिज्या-ईषु) = $\frac{\left(2 \times \text{Sin-1}\frac{\text{जीवा}}{\text{व्यास}} \times \text{वृत्त का क्षेत्रफल}\right)}{360^0} - \frac{1}{2}$ (जीवा (त्रिज्या-ईषु))

प्रतर 2 की कीमत प्राप्त करने के लिए प्रतर-1 के सूत्र अनुसार गुरुवृत्त खंड तथा लघुवृत्त खंड के प्रतर शोधने। अब प्रतर-1=गुरुवृत्त खंड का क्षेत्रफल-लघुवृत्त खंड का क्षेत्रफल।

प्रतर के लिए जैन शास्त्रों, जैन ग्रंथों, जैन संतों तथा विचारकों का चिंतन पूर्व काल में भी अत्यंत विकसित था। इस चिंतन को देखकर आश्चर्य होता है, कि कितनी प्रखर बुद्धि थी? कितना उत्कृष्ट गणित चिंतन था? नीचे अलग अलग वस्तुओं के अलग अलग प्रतर इस प्रकार-

यव, मुरज, पणव और व्रज का सन्निकट क्षेत्रफल- अंतिम और बीच के माप के योग की आधी राशि को लम्बाई से गुणा करने से ऐसे पदार्थों का क्षेत्रफल आता है। जो रेखा वक्रों के छोरों के मध्य बिंदु से मिलती हैं, ऐसी प्रत्येक सीमावर्त्ती वक्र रेखा से सीधी रेखाओं के योग के बराबर है। इस मान्यता पर उपरोक्त नियम का आधार है।

मृदंगाकार, पणवाकार, वज्राकार आकृतियों का सूक्ष्म क्षेत्रफल- महत्तम लम्बाई को मुख की चौड़ाई से गुणा करने से जो आवे, ऐसे परिणामी क्षेत्रफल में संबंधित धनुष्याकृतियों के क्षेत्रफलों के मान को जोड़ने से जो राशि प्राप्त हो वह मृदंग के आकार की आकृति का क्षेत्रफल का माप होता है।

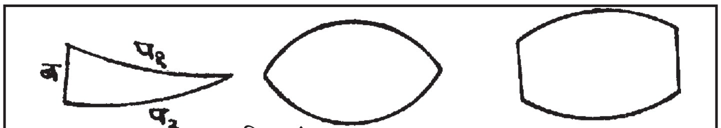

(चित्र सं. 100, 101, 102)-
हस्तदन्त क्षेत्र यवाकार क्षेत्र मुरजाकार क्षेत्र

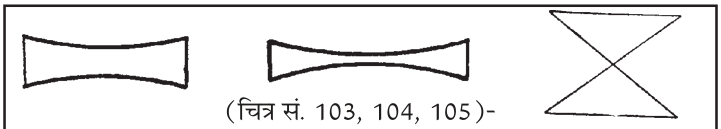
(चित्र सं. 103, 104, 105)-
पणवाकार क्षेत्र वज्राकार क्षेत्र उभयनिषेध आकृति

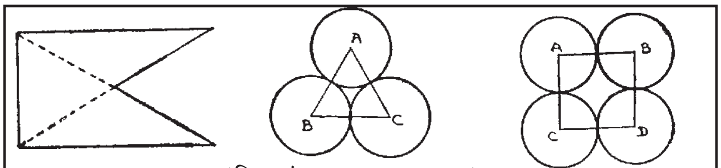

(चित्र सं. 106, 107, 108)-
एक निषेध आकृति संस्पृर्शी तीन वृत्त वाला क्षेत्र संस्पृर्शी चार वृत्त वाला क्षेत्र

पणव और वज्र की आकृति का क्षेत्रफल- महत्तम लम्बाई और मुंह की चौड़ाई के गुणनफल से मिलते क्षेत्रफल में धनुष्याकृति के क्षेत्रफल को घटाती है।

उभय निषेध और एक निषेध क्षेत्र का क्षेत्रफल- कोई चतुर्भुज को इसके दोनों विकर्णों से चार त्रिभुजों में बांटते और फिर दो सम्मुख भुजाओं को हटाने से मिलती आकृति उभय

निषेध क्षेत्र कहलाती है। जो अगर मात्र एक त्रिभुज को ही हटाएं तो जो आकृति मिलती है वह एक निषेध क्षेत्र कहलाता है।

यदि उभय निषेधी की लम्बाई I और चौड़ाई B है तो क्षेत्रफल = IB-½ IB=½ IB और एक निषेध की आकृति का क्षेत्रफल = IB-¾ IB=¼ IB

बहुविध वज्र आकार का सन्निकट क्षेत्रफल :- यदि भुजाओं के माप के योग की आधी राशि S हो और भुजाओं की संख्या N हो तो क्षेत्रफल= $\frac{S^2}{3} \times \frac{N-1}{N}$ होती है। यह सूत्र त्रिभुज, चतुर्भुज, षट्भुज और वृत्त को अनंत भुजाओं की आकृति मानने से उस संबंध में व्यावहारिक क्षेत्रफल का मान आता है।

नियमित षट्भुज के क्षेत्रफल का सूक्ष्म मानः- (नियमित षटभुज क्षेत्रफल)= $\frac{3\sqrt{3a^2}}{2}$ यहां a षट्भुज की एक भुजा है।

संस्पर्शी वृत्तों से सीमित क्षेत्र का क्षेत्रफल- अर्द्ध परिमति S और भुजाओं की संख्या N हो, तो वृत्तों से सीमित क्षेत्र का क्षेत्रफल= $\frac{1}{4}[\frac{S2}{3} \times \frac{N-1}{N}]$ होता है, स्पष्टीकरण इस प्रकार है।

प्रश्न- तीन गोलाकार प्रत्येक का व्यास का माप अनुक्रम से 6, 5 और 4 है, एक दूसरे से स्पर्शित है, तो बताइये इस गोले से घेरे क्षेत्र का क्षेत्रफल कितना है?

उत्तर- संस्पर्शी तीन वर्तुल वाला चित्र प्रमाण से तीनों गोलाकार का व्यास स्पर्श-बिन्दुओं में निकलते Δ ABC बनते हैं। Δ की परिमिति 6+5+4=15 हुई और भुजाओं की संख्या तीन है। इससे गोलाकार घेरे हुए क्षेत्र का क्षेत्रफल = $\frac{1}{4}(\frac{1}{3}(\frac{15}{2})^2 \times \frac{3-1}{3}) = \frac{1}{4} \times \frac{1}{3} \times \frac{15}{2} \times \frac{15}{2} \times \frac{2}{3} = \frac{25}{8} = 3\frac{1}{8}$

धनुषाकार आकृति का सन्निकट क्षेत्रफलः- धनुषाकार क्षेत्र, गोलाकार का आधा भाग जैसा होता है। यहां धनुष, वर्तुल की चाप, धनुष की डोरी, और बाण, चाप और डोरी के बीच का सबसे बड़ा लंब का अंतर होता है।

जो बाण = 1 और डोरी K हो तो, धनुषाकार आकृति का क्षेत्रफल= (K+1) × ½ और धनुषाकार आकृति का सूक्ष्म क्षेत्रफल= $K \times \frac{1}{4}\sqrt{10}$

जवाकार आकृति का सूक्ष्म क्षेत्रफलः- जवाकार आकृति का सूक्ष्म क्षेत्रफल= $K \times \frac{1}{4} \times \sqrt{10}$ जबकि 1 दोनों की तरफ पूर्ण बाणों की लम्बाई है।

चतुर्भुज के परिगत और अंतर्गत वृत्त का सन्निकट क्षेत्रफलः- परिगत वृत्त (वर्त्तुल) का क्षेत्रफल = $\frac{3}{2}$ × चतुर्भुज का क्षेत्रफल तथा अंतर्गत वृत्त का क्षेत्रफल = $\frac{3}{4}$ × चतुर्भुज का क्षेत्रफल।

गोम्मटसार तथा त्रिलोकसार में क्षेत्रफल के लिए लिखे सूत्र इस प्रकार मिलते हैं-

1. समद्विबाहु समलंब चतुर्भुज का क्षेत्रफल = $\frac{1}{2}$ (मुख+भूमि) × ऊंचाई
2. वृत्त (वर्त्तुल) का क्षेत्रफल = $\frac{1}{4}$ × परिध × व्यास
3. वृत्त-खंड का सन्निकट क्षेत्रफल= $\sqrt{10}$ जीवा × $\frac{\text{बाण}}{4}$
4. वृत्त-खंड का सूक्ष्म क्षेत्रफल = $\frac{1}{2}$ (जीवा+बाण) × बाण

त्रिभुज की अवधाओं तथा लंब निकालने का नियम- $स_1 = \frac{1}{2}\left[\frac{स+अ^2-ब^2}{स}\right]$

$स_2 = \frac{1}{2}\left[\frac{स+अ^2-ब^2}{स}\right]$ तथा $ल = \sqrt{अ^2-स_1^2}$ अथवा $\sqrt{ब^2-स_2^2}$

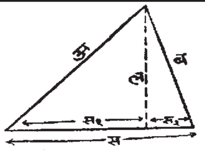

(चित्र सं. 109)- त्रिभुज की अवधाएं

यहां अ ब स त्रिभुज की भुजाओं का निरूपण करती है। $स_1$ और $स_2$ के आधार के ऐसे दो खंड है, जिनका योग ''स'' है तथा ल= शीर्ष के आधार से लंब हुआ है।

चतुर्भुज के विकर्णो का मान निकालने के नियम- अगर अ ब स द चतुर्भुज की भुजाओं को माप हों तो चतुर्भुज का विकर्ण=

$$\sqrt{\frac{(अ.स+ब.द)\ (अ.ब+स.द)}{अ.ब+स.द}} \text{ अथवा } \sqrt{\frac{(अ.स+ब.द)\ (अ.द+ब.स)}{अ.ब.+स.द}}$$

आयतन (लम्बाई) के लिए सूत्र- ''तिलोय पण्णति'' में लम्बाई के लिए नीचे के सूत्र मिलते हैं। लंब संपार्श्व का आयतन (लंबाई) = आधार का क्षेत्रफल × संपार्श्व की ऊंचाई। घनाकार सांद्र (नक्कर) की लम्बाई = 1^3, यह 1 घनाकार नक्कर की एक बाजू की लम्बाई है। आयत का आयतन= लंबाई × चौड़ाई × ऊंचाई। बेलन का आयतन = $\sqrt{10}$ (त्रिज्या)^2× ऊंचाई।

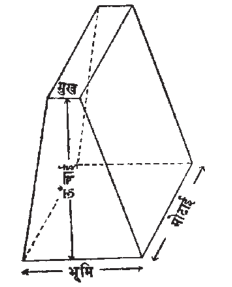

(चित्र सं. 110)- आयतन

समांतरानीक (Parallelepiped) का आयतन = लम्बाई × चौड़ाई × उत्सेध (गहराई) ''जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति'' में वेत्रासन जैसे क्षेत्र के आयतन का सूत्र इस प्रकार बताया है-

वेत्रासन जैसे क्षेत्र का आयतन= $\frac{मुख + भूमि}{2}$ × ऊंचाई × लम्बाई।

शंखाकार का आयतन= आधार का क्षेत्रफल × उत्सेध।

आचार्य महावीर ने आयतन के वर्णन में ''खात व्यवहार'' में तीन प्रकार के आयतन का उल्लेख किया है 1. कर्मांतिक घनफल 2. औन्द्र घनफल 3. सूक्ष्म घनफल। बेलन का घनफल, खाई (खोदी हुई) का घनफल, गोला का घनफल, त्रिभुजाकार आधार वाले स्तूप का घनफल अलग अलग तरह की ईंटों और लकड़ियों की गणित का सुन्दर वर्णन किया है।

खड्डे के सन्निकट का क्षेत्रफल- खड्डे के सन्निकट का आयतन= खड्डे के आधार का सन्निकट क्षेत्रफल × गहराई। खाई का सूक्ष्म आयतन निकालने के लिए महावीराचार्य ने तीन माप बताये हैं। कर्मांतिक, औंड्र, सूक्ष्म घनफल। कर्मांतिक और औंड्र का माप समाइयों को सूक्ष्म मान कर किया है। इन दोनों सूक्ष्म मानों की मदद से सूक्ष्म घनफल की गिनती की है।

सूक्ष्म घनफल = $\frac{a-k}{3} + K = \frac{2}{3}K + \frac{1}{3}2$ जहां a औंड्र और K कर्मांतिक घनफल है। कटे हुए वर्ग के आधार वाले स्तूप के ऊपर नीचे के तलिये की भुजाओं का माप अनुक्रम से a और b तथा ऊंचाई h हो तो कर्मांतिक घनफल = $\left(\frac{a+b}{2}\right)^2 \times h$ और औंड्र का घनफल = $\frac{a^2+b^2}{2} \times h$

गोला का आयतन- गोला का सन्निकट का आयतन = $\frac{9}{2}\left(\frac{d}{2}\right)^2$

और गोला का सूक्ष्म आयतन = $\frac{9(d)^2}{2 \times 2} \times \frac{9}{10}$ जबकि d गोला का व्यास है, यदि स्तूप के आधर की एक भुजा a हो तो, स्तूप का सन्निकट आयतन = $\sqrt{10(\frac{1^2}{2})^3} = \sqrt{\frac{5}{18} \times a^3}$ तथा स्तूप का सूक्ष्म

आयतन = $\sqrt{\frac{3}{10}} \times \sqrt{\frac{5}{18}} a^3 = \frac{a^3\sqrt{2}}{12}$

गोम्मट सार में आयतन के सूत्र- संपार्श्व का आयतन = आधार × ऊंचाई। शंकु या सूचि स्तंभ का आयतन = $\frac{1}{3}\times$ आधार का क्षेत्रफल × ऊंचाई। गोला का आयतन = $\frac{9}{2}\times$ (R^3) शंकु आकार के ढ़गले (सरसों आदि के) का आयतन = $(\frac{\text{परिधि}}{6})^2$ × ऊंचाई। यह नियम इस प्रकार बनता है- आधार का क्षेत्रफल = $\pi R^2 = \frac{1}{12}$ (परिधि)^2 (π का मान 3 रखने से) इससे आयतन = $\frac{1}{3}\times$ आधार का क्षेत्रफल × ऊंचाई = $\frac{1}{3}\times\frac{1}{12}$ (परिधि)^2 × ऊंचाई = (परिधि^{2} × ऊंचाई)।

8. घन :- पर्वत आदि का जो प्रतर आता है उस प्रतर को उस पर्वतादि की ऊंचाई के साथ गुणा करने से पर्वतादि का घन आता है।

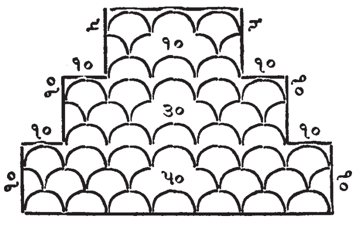

(चित्र सं. 111)- वैताढ्य पर्वत

पर्वतों की ऊंचाई और समुद्रों की गहराई होती है। इसलिए घनफल का उपयोग पर्वतों और समुद्रों के लिए है। भूमि के प्रतर को ऊंचाई तथा गहराई से गुणा करने से उसका घनफल आता है। जिस प्रकार प्रतर में भूमि स्थान पर समचौरस खंड का माप आता है, उसी प्रकार घनफल में पूरी वस्तु का समचौरस खंड का माप आता है।

उच्च त्वस्यापि यन्मानं, सर्वतो योजना दिभिः।
एतत् घन क्षेत्रफलं, र्पतेष्वेव सम्भवेत ।।11।। लोकप्रकाश-सर्ग 16

किसी भी क्षेत्र के लम्बाई चौड़ाई ऊंचाई का जो प्रमाण होता है वह घन क्षेत्रफल कहलाता है, इस प्रकार का पर्वतों का क्षेत्रफल होता है।

वैताढ्य पर्वत की दो मेखला है (पर्वत का एक सरीखा ऊंचाई तथा क्षेत्रफल वाला भाग) उसका क्षेत्रफल इस प्रकार- वैताढ्य का भूमि प्रतर 512307 योजन 12 कला है। प्रथम मेखला तक यह भूमि प्रतर 50 योजन चौड़ा 10 योजन ऊंचा है, इससे भूमि प्रतर 512307 योजन 12 कला को 10 योजन की ऊंचाई से गुणा करने से 5123070 योजन + 6 योजन 6 कला (120 कला का) कुल 5123076 योजन 6 कला घनफल वैताढ्य का हुआ यह घन गणित है।

पहली मेखला तक वैताढ्य संकड़ा है, क्योंकि वहां पर्वत 30 योजन चौड़ा है, यानि पहली मेखला पर तलिया 30 योजन है, पहली मेखला की ऊंचाई 10 योजन है। पहली मेखला का प्रतर 307384 योजन 11 कला है, उसे 10 योजन ऊंचाई से गुणा करने से 3073840 + 5 योजन 15 कला जुड़ने से 3073845 योजन 15 कला यह पहली मेखला का घनफल हुआ। दूसरी मेखला पर वैताढ्य पर्वत 10 योजन चौड़ा है दोनों तरफ ऊंचाई 5 योजन है। दूसरी मेखला का प्रतर 102460 योजन 10 कला है इसे 5 योजन ऊंचाई से गुणा करने से 512307 योजन 12 कला आती है। इस प्रकार तीन विभागों का अलग अलग घनफल हुआ।

तीनों गणित को शामिल करने से 5123076 योजन 6 कला भूमि वैताढ्य का घनफल
+ 3073845 योजन 15 कला पहली मेखला का घनफल
+ 512307 योजन 12 कला दूसरी मेखला का घनफल
= **8709228 योजन 33 कला** (8709229 योजन 14 कला)

इस प्रकार 8709229 योजन 14 कला पूरे वैताढ्य पर्वत का घनफल हुआ। यानि कि वैताढ्य पर्वत के योजन प्रमाण से खंड करें तो इतने खंड हो सकते हैं। वास्तव में वैताढ्य का प्रतर गणित 922153 योजन 14 कला है, परन्तु वैताढ्य पर्वत की ऊंचाई तीन राशि और अलग अलग ऊंचाई के योजन साथ गिनने तथा तीनों तरीके से गुणा करने से 8709229 योजन 14 कला आती है।

घन गणित निकालने का तरीका : पर्वतों और समुद्रों की घन गणित निकाली जाती है। जम्बूद्वीप के सभी पर्वतों की नहीं अपितु जो पर्वत जमीन से शिखा पर्यंत एक समान विस्तार वाले होते हैं, उनका घन गणित निकालने के लिए पर्वतों का जो प्रतर गणित है, उसे उस उस पर्वत की ऊँचाई से गुणा करने पर उनका घन गणित आता है।

समुद्रों का घन गणित निकालना हो तो लवण समुद्र को छोड़कर शेष समुद्रों का जो प्रतर होता है, उसे उस उस समुद्र की गहराई से गुणा करने पर घन गणित निकल जाता है।

लवण समुद्र की घन गणित इसलिए नहीं निकाली जाती, क्योंकि यह समुद्र प्रदेश-प्रदेश गहरा है। प्रदेश-प्रदेश गहराई होने से एक समान गहराई नहीं होने के कारण घन गणित नहीं निकल सकती है। अन्य शेष असंख्यात समुद्र एक समान गहराई (एक हजार योजन) होने से, सुगमता से घन गणित निकाली जा सकती है।

वैताढ्य पर्वत का घन गणित :- वैताढ्य पर्वत का शिखर का प्रतर गणित 102461 योजन 10 कला है। वैताढ्य पर्वत की ऊँचाई 25 योजन, वैताढ्य पर्वत का विस्तार 50 योजन, वैताढ्य पर्वत की तीन मेखला है- पहली मेखला 50 योजन विस्तार वाली 10 योजन ऊंची है। दूसरी मेखला 30 योजन विस्तार 10 योजन ऊंची है। तीसरी मेखला 10 योजन विस्तार 5 योजन ऊंची है।

1. वैताढ्य पर्वत की पहली मेखला - पहले खंड में पूर्व-पश्चिम लम्बी बाहा की कला राशि $194676\frac{29377}{32446}$ है इसे 50 योजन विस्तार से गुणा करें $194676 \times 50 = 9733800$ योजन। $29377 \times 50 = 146850 \div$ छेद राशि 32446 से भाग देने से 45 योजन तथा शेष 8780 रहा, ये 45 योजन जोड़ने से 9733845 योजन हुआ यह इसका प्रतर प्रमाण हुआ, इसे ऊँचाई 10 योजन से गुणा करने से 97338450 हुआ इसमें 19 का भाग देने से 5123076 योजन 6 कला घन गणित हुआ। प्रतर गणित 512307 योजन 12 कला हुई। यों वैताढ्य पर्वत की पहली मेखला का घन गणित 5123076 योजन कला प्रमाण है।

2. वैताढ्य पर्वत की दूसरी मेखला :- पहले खंड में पूर्व-पश्चिम लम्बी बाहा की कला राशि $194676\frac{29377}{32446}$ है, इसे 30 योजन विस्तार से गुणा करें $= 194676 \times 30 = 5840280$ अब शेष राशि $29377 \times 30 = 881310 \div$ छेद राशि $32446 = 27$ एवं शेष 5268 रहे। $5840280 + 27 = 5840307$ में योजन बनाने हेतु 19 का भाग दें तो 307384 योजन 11 कला प्रमाण वैताढ्य पर्वत की दूसरी मेखला का प्रतर गणित है।

दूसरी मेखला 10 योजन (पहली मेखला से) ऊंची है इसका घन गणित :- $307384 \times 10 = 3073840$ तथा $11\times10=110$ कला के 19 का भाग देने से 5 योजन 15 कला जोड़ने से 3073845 योजन 15 कला है। यह घन गणित दूसरी मेखला का, तथा इसका प्रतर गणित 307384 योजन 11 कला है।

3. वैताढ्य पर्वत की तीसरी मेखला :- तीसरी मेखला 5 योजन (दूसरी से) ऊंची है। वैताढ्य का शिखर पर का प्रतर गणित 102461 योजन 10 कला प्रमाण $\times$ 5 योजन ऊंची $= 512305 + 2$ योजन 12 कला $(10\times5=50\div19) =512307$ योजन 12 कला प्रमाण है। यों कुल-

पहली मेखला 10 योजन ऊंची घन गणित 5123076 योजन 6 कला प्रमाण है।

दूसरी मेखला 10 योजन ऊंची घनगणित 3073845 योजन 15 कला प्रमाण है।

तीसरी मेखला 5 योजन ऊंची घन गणित 512307 योजन 12 कला प्रमाण है।

सम्पूर्ण वैताढ्य पर्वत का घन गणित 8709229 योजन 14 कला प्रमाण हुआ।

चुल्ल हिमवंत शिखरी पर्वत का घन गणित :- चुल्ल हिमवंत का प्रतर गणित 21456971 योजन 8 कला 10 विकला है। प्रतर को पर्वत की ऊंचाई (100) से गुणा करें- 2145697100 योजन हुए अब इनमें 8 कला × 100 = 800 कला और 10 × 100 = 1000 विकला (विकला के 52 कला 12 विकला) 800 + 52 = 852 कला के ÷ 19 से 44 योजन 16 कला बनी इनका योग करने से यों कुल 2145697144 योजन 16 कला 12 विकला चुल्ल हिमवंत का घन गणित हुआ।

महाहिमवंत और रूक्मि पर्वत का घन गणित :- महा हिमवंत का प्रतर गणित 195868186 योजन 10 कला 5 विकला प्रमाण है, इस पर्वत की ऊंचाई 200 योजन से गुणा करने से 39173637200 और 10 कला × 200 = 2000 कला तथा 5 × 200 = 1000 विकला हुई। 1000 ÷ 19 = 52 कला 12 विकला तथा 2000+52=2052 कला ÷ 19 = 108 योजन हुआ। यों कुल 39173637200 + 108 = 39173637308 योजन 12 विकला प्रमाण है। महाहिमवंत का घन गणित 39173637308 योजन 12 विकला प्रमाण है।

निषध और नीलवंत पर्वत का घन गणित :- निषध-नीलवंत का प्रतर प्रमाण 1425466569 योजन 18 कला से कुछ कम (17 कला 17 विकला) है। ऊंचाई 400 योजन से गुणा करने से 570186627600 योजन तथा 7200 कला के योजन बनाने से ÷ 19 से 378 योजन और 18 शेष का एक योजन गिनने से 379 योजन बनते हैं। यों निषध नीलवंत का घन गणित 570186627979 योजन प्रमाण हैं।

घनफल के लिए आधुनिक पद्धति- वर्त्तुल के कद को घन कहते हैं। अलग अलग आकार प्रमाण के घनफल बनाने के अलग अलग सूत्र हैं, इस प्रकार-

घनाकार का घनफल = लम्बाई × चौड़ाई × ऊंचाई

नलाकार का घनफल = π × त्रि.^{2}×ऊंचाई (यानि पाया का प्रतर × ऊंचाई) वगैरह।

परिधि = $\sqrt{10 \times \text{विष्कंभ}}$। परिधि = 2π × त्रिज्या।

स्थान	विष्कंभ (योजन)	परिधि (योजन) शास्त्रीय पद्धति	परिधि (योजन) आधुनिक पद्धति
कमलादिक	1	3.162	3.142
कमलादिक	2	6.324	6.285
कमलादिक	4	12.649	12.571
द्वीपादिक	8	25.298	25.142
चूलिका मूल	12	37.947	37.714

क्रोश कूट	25	79.056	78.571
कांचन गिरि शिखर	50	158.113	157.142
कांचन गिरि मूल	100	316.227	314.285
कुंडादिक	120	379.473	377.142
कुंडादिक	240	758.946	754.285
कूट शिखरादिक	250	790.569	785.714
कुंडादिक	480	1517.893	1508.571
कूट मूलादिक	500	1581.138	1571.428
मेरु शिखर	1000	3162.277	3142.857
मेरु भूतल	10000	31622.776	31428.571
जम्बूद्वीप	100000	316227.766	314285.714

शास्त्रीय पद्धति- $\sqrt{10}$=3.16227766016837

आधुनिक पद्धति- $\pi = \frac{22}{7}$=3.142857142857

गणित पद = $\sqrt{10 \div \frac{(\text{विष्कंभ})}{2}}$ (आधुनिक क्षेत्रफल = π त्रिज्या^{2})

स्थान	विष्कंभ	$\left(\frac{\text{विष्कंभ}}{2}\right)^2$ = त्रिज्या^{2} अ	$\sqrt{10}$×अ गणित पद (शास्त्रीय पद्धति से)	चोरस योजन π×त्रिज्या^{2} (क्षेत्रफल आधुनिक)
जम्बूद्वीप	100000	2500000000	7905694150.42	7857142857.14

जीवा=2 $\sqrt{(\text{विष्कंभ-ईषु}) \times \text{ईषु}}$ [विष्कंभ = 100000 योजन]

स्थान	ईषु अ	विष्कंभ-ईषु ब	अ × ब क	योजन जीवा 2$\sqrt{\text{क}}$ (शास्त्रीय तथा आधुनिक पद्धति)
दक्षिण भरतार्द्ध	238.157	99761.843	23758981.24	9748.632
वैताढ्य	288.157	99711.843	28732665.54	10720.579
पूर्ण-भरत	526.315	99473.685	52354492.52	14471.263
हिमवंत पर्वत	1578.947	98421.053	155401626.37	24932.026
हिमवंत युगल क्षेत्र	3684.210	96315.790	354847596.68	37674.789

महाहिमवंत पर्वत	7894.736	92105.263	727146735.60	53931.342
हरिवर्ष क्षेत्र	16315.789	83684.211	1365373929.30	73901.922
निषध पर्वत	33157.894	66842.106	2216343465.48	94156.105
महाविदेह मध्य	50000.000	50000.000	2500000000.00	100000.000

ईषु = ½ (विष्कंभ-$\sqrt{(\text{विष्कंभ-जीवा}) \times (\text{विष्कंभ+जीवा})}$) विष्कंभ = 100000 योजन

स्थान	जीवा अ	विष्कंभ-जीवा ब	विष्कंभ+जीवा क	ब × क ड	√ड ई	योजन ½(विष्कंभ-ई.) ईषु शास्त्रीय एवं आ.पद्धति
दक्षिण भरतार्द्ध	9748.632	90251.368	109748.632	9904964174.12	99523.686	238.157
वैताढ्य	10720.579	89279.421	110720.579	9885069185.90	99423.686	288.157
पूर्ण भरत	14471.263	85528.737	114471.263	9790582547.18	98947.370	526.315
हिमवंत पर्वत	24932.026	75067.974	124932.026	9378394079.53	96842.106	1578.947
हिमवंत यु. क्षेत्र	37674.789	62325.211	137674.789	8580610273.80	92631.580	3684.210
महाहिमवंत पर्वत	53931.342	46068.658	153931.342	7091410350.07	84210.528	7894.736
हरिवर्ष क्षेत्र	73901.922	26098.078	173901.922	4538505924.70	67368.422	16315.789
निषध पर्वत	94156.105	5843.895	194156.105	1134627891.22	33684.212	33157.894
महाविदेह मध्य	100000.000	-	200000.000	-	-	50000.000

धनु:पृष्ठ= $\sqrt{2\ \text{ईषु}\ (\text{ईषु} \times 2 \times \text{विष्कंभ})}$ विष्कंभ = 100000 योजन

स्थान	ईषु (अ)	ईषु + 2 × विष्कंभ (ब)	2 × अ × ब (क)	√क धनु:पृष्ठ (शास्त्रीय पद्धति)
दक्षिण भरतार्द्ध	238.157	200238.157	95376237.51	9766.052
वैताढ्य	288.157	200288.157	115428868.91	10743.789
पूर्ण भरत	526.315	200526.315	211080014.95	14528.578
हिमवंत पर्वत	1578.947	201578.947	636564947.25	25230.210
हिमवंत यु. क्षेत्र	3684.210	203684.210	1500830806.64	38740.526
महाहिमवंत पर्वत	7894.736	207894.736	3282548113.01	57293.526
हरिवर्ष क्षेत्र	16315.789	216315.789	7058725541.38	84016.210
निषध पर्वत	33157.894	233157.894	15462049469.11	124346.473
महाविदेह मध्य	50000.000	250000.000	25000000000.00	158113.868

$$\text{धनुःपृष्ठ} = \frac{2 \times \text{Sin-1}\frac{\text{जीवा}}{\text{व्यास}}}{360^0} \times \text{परिधि}$$

स्थान	जीवा क	जीवा / व्यास ($\frac{\text{क}}{100000}$) ख	Si-1 ख कला विकला ग			2 × ग कला विकला घ			दशांश में घ की कीमत च	च / 360⁰ छ	छः×परिधि (314287.7) धनुःपृष्ठ 3 आधु. पद्धति
भरतार्द्ध	9748.6	.097486	5⁰	35	40	11⁰	11	20	11.188888⁰	.0310802	9768
वैताढ्य	10720.6	.107206	6⁰	9	11	12⁰	18	22	12.306111⁰	.341836	10743
पूर्ण भरत	10471.3	.104713	8⁰	19	4	16⁰	38	8	16.635555⁰	.0462098	14523
हिमवंत गिरि	24932.0	.249320	14⁰	26	7	28⁰	52	14	28.870554⁰	.0801959	25204
हिमवंत क्षेत्र	37674.8	.376748	22⁰	8	3	44⁰	16	6	44.268332⁰	.1229675	38647
महाहिमवंत प.	53931.3	.539313	32⁰	38	9	65⁰	16	17	65.271666⁰	.1813101	56983
हरिवर्ष क्षेत्र	73901.9	.739019	47⁰	38	44	95⁰	17	27	95.290833⁰	.2646967	83190
निषध पर्वत	94156.1	.941561	70⁰	18	36	140⁰	37	12	140.619999⁰	.3906110	122763
महाविदेहार्द्ध	100000.0	1.00000	90⁰	0	0	180⁰	0	0	180.000000⁰	.5000000	157143

$$\text{बाहा} = \frac{\text{महाधनुःपृष्ठ - लघु धनुःपृष्ठ}}{2}$$

स्थान	धनुःपृष्ठ ख	महा धनुःपृष्ठ - लघु धनुःपृष्ठ	ख / 2 =बाहा
दक्षिण भरतार्द्ध	9766.052	-	-
वैताढ्य	10743.789	977.737	488.868
पूर्व-भरत	14528.578	3784.189	1892.394
हिमवंत पर्वत	25230.210	10701.632	5350.816
हिमवंत युगल क्षेत्र	38740.526	13510.316	6755.158
महाहिमवंत पर्वत	57293.526	18553.000	9276.500
हरिवर्ष क्षेत्र	84016.210	26722.684	13361.342
निषध पर्वत	124346.473	40330.263	20165.131
महाविदेह मध्य	158113.868	33767.395	16883.697

$$\text{बाहा} = \frac{\text{गुरूधनुःपृष्ठ - लघु धनुःपृष्ठ}}{2}$$

स्थान	धनुःपृष्ठ क	गुरु धनुःपृष्ठ - लघु धनुःपृष्ठ ख	ख / 2 बाहा आधुनिक पद्धति
भरतार्द्ध	9768	-	-
वैताढ्य	10743	975	488
पूर्ण-भरत	14523	3780	1890
हिमवंत गिरि	25204	10681	5342
हिमवंत क्षेत्र	38647	13443	6742
महाहिमवंत	56983	18336	9168
हरिवर्ष क्षेत्र	83190	26207	13104
निषध पर्वत	122763	39573	19787
महाविदेहार्द्ध	157143	34380	17190

$$\text{प्रतर क्षेत्र} = \sqrt{10} \times \frac{\text{ईषु} \times \text{जीवा}}{4}$$ [धनुष्याकार क्षेत्र - वृत खंड तक सीमित]

स्थान	ईषु अ	जीवा ब	$\frac{\text{अ} \times \text{ब}}{4}$ क	$\sqrt{10}\times$क प्रतर चोरस (योजन)
दक्षिण भरतार्द्ध, उत्तर एरवत	238.157	9748.684	580431.645	1835485.642

उपरोक्त में 9748 यो. 12 से कुछ ज्यादा होने से 13 कला लेने में आयी है।

$$\text{प्रतर क्षेत्र} = (\text{गुरु ईषु-लघु ईषु}) \times \frac{\sqrt{\text{लघु जीवा}^2\text{-गुरु जीवा}^2}}{2}$$ अन्य क्षेत्र-दो बाहा और दो समांतर जीवा से घिरे क्षेत्र तक सीमित

स्थान	ईषु	ईषु (मर्यादित क्षेत्रों) का (गुरुईषु-लघुईषु) (अ)	जीवा	जीवा ^{2}	$\frac{\text{लघुजीवा}^2 + \text{गुरुजीवा}^2}{2}$ (ब)	अ $\times \sqrt{\text{ब}}$ प्रतर
दक्षिण भरतार्द्ध	238.157	-	9748.632	95035825.87	-	1835485.642
वैताढ्य	288.157	50.000	10720.579	114930814.10	104983319.98	512307.632
पूर्ण भरत	526.315	238.157	14471.263	209417452.82	162174133.46	3032888.632
हिमवंत पर्वत	1578.947	1052.634	24932.026	621605920.46	415511686.64	21456971.408
हिमवंत यु. क्षेत्र	3684.210	2105.263	37674.789	1419389726.19	1020497823.32	67253145.285
महाहिमवंत पर्वत	7894.736	4210.526	53931.342	2908589649.92	216389688.05	195868186.540
हरिवर्ष क्षेत्र	16315.789	8421.053	73901.922	5461494075.29	4185041862.60	544773870.368
निषध पर्वत	33157.894	16842.105	94156.105	8865372108.77	7163433092.03	1425466569.947
महाविदेह मध्य	50000	16842.106	100000	10000000000	9432686054.39	1635739302.035

प्रतर = गुरु वृत्त खंड का क्षेत्रफल - लघु वृत्त खंड का क्षेत्रफल

वृत्त खंड का क्षेत्रफल = ½[(धनु:पृष्ठ × त्रिज्या) - जीवा (त्रिज्या - ईषु)]

$$= \left(\frac{2 \times \text{Sin-}\frac{\text{जीवा}}{\text{व्यास}}}{360^0} \times \text{वृत्त का क्षेत्रफल}\right) - \tfrac{1}{2}\,(\text{जीवा}\,(\text{त्रिज्या-ईषु}))$$

स्थान	$2\times\text{Sin-}1\frac{\text{जीवा}}{\text{व्यास}}$ / 360^0 (क)	क×वृत्त का क्षेत्र. (क×7857142857) (ख)	जीवा ग	ईषु घ	त्रिज्या-ईषु (50000-घ) च	½जीवा (त्रिज्या-ईषु) ½ × ग × च छ	वृत्त खंड का क्षेत्रफल (ख-छ) ज	गुरु खंड वृत्त क्षेत्र. -लघु वृत्त खंड क्षेत्रफल
भरतार्द्ध	.310802	244201571	9748.6	238.158	49761.842	242554146	1647425	1647425
वैताढ्य	.341836	268585429	10720.6	288.158	49711.842	266470386	2115043	467618
पूर्णभरत	.462098	363077000	14471.3	526.316	49473.684	357974262	5102738	2987695
हिमवंतगिरि	.0801959	630110643	24932.0	1578.948	48421.052	603646834	26493809	21391071
हिम. क्षेत्र	.1229675	966173214	37674.8	3684.211	46315.789	872469074	93704170	67210361
महाहिमवंत	.1813101	1424579357	53931.3	7894.737	42105.263	1135395785	289183572	195479402
हरिवर्ष क्षे.	.2646967	2079759786	73901.9	16315.790	33684.210	1244663559	835096227	545912655
निषध प.	.3906110	3069086429	94156.1	33157.890	16842.110	792893697	2276192732	1441096505
महाविदेहार्द्ध	.5000000	3928571429	100000	50000	-	-	3928571429	1652378697

घनफल = प्रतर × ऊंचाई

स्थान	प्रतर (चौरस योजन)	ऊंचाई	घनफल (घन योजन) शास्त्रीय पद्धति से
दक्षिण भरतार्द्ध	1835485.642	-	-
वैताढ्य-भूमिस्थ	512307.632	10	5123076.316
प्रथम मेखला	307384.578	10	3073845.789
दूसरी मेखला	102461.526	5	512307.631 (कुल 8709229.736)
पूर्ण-भरत	3032888.631	-	-
हिमवंत पर्वत	21456971.448	100	2145697144.875
हिमवंत युगल क्षेत्र	67253145.285	-	-
महाहिमवंत पर्वत	195868186.540	200	39173637308.033
हरिवर्ष क्षेत्र	544773870.368	-	-
निषध पर्वत	142566569.947	400	57018662797 8.800
महाविदेह मध्य	1635739302.035	-	-

जंबूद्वीप के क्षेत्रों, पर्वतों के इषु आदि का कोठाः-

क्षेत्रादि का नाम	ईषु यो.-कला	विष्कंभ यो. - कला	देश परिधि धनु:पृष्ठ यो. - कला	जीवा यो. - कला	बाहा यो. - कला	प्रतर (क्षेत्रफल) यो. कला.प्र.कला	घनफल योजन- कला
दक्षिण भरत	238-3	238-3	9766-1	9748-12	-	1835485-12-6	(ऊंचाई या गहराई नहीं होने से घनफल नहीं होता)
उत्तर एरवत	238-3	238-3	9766-1	9748-12	-	1835485-12-6	
दीर्घ वैताढ्य पर्वत	288-3	50	10743-15	10720-11	488-16½	पहला भाग 512307-12 दूसरा भाग 307384-11 तीसरा भाग 102461-10	5123076-6 भूमिस्थ 3073845-15 पहली मेखला का 512307-12 दूसरी मेखला का
						कुल घनफल-	**8709229-14**
उत्तर भरत	526-6	238-3	14528-11	14471-3	1892-7½	3032888-12-11	-
दक्षिण एरवत	526-6	238-3	14528-11	14471-3	1892-7½	3032888-12-11	-
चुल्ल हिमवंत प.	1578-18	1052-12	25230-4	24932-0½	5350-15½	21456971-8-10	2145697144-16-12
शिखरी पर्वत	1578-18	1052-12	25230-4	24932-0½	5350-15½	21456971-8-10	2145697144-16-12
हिमवंत क्षेत्र	3684-4	2105-5	38740-10	37674-15	6755-3	67253145-5-8	-
हेरण्य वंत क्षेत्र	3684-4	2105-5	38740-10	37674-15	6755-3	67253145-5-8	-
महाहिमवंत पर्वत	7894-14	4210-10	57293-10	53931-6½	9276-9½	195868186-10-5	39173637308-0-12
रूक्मी पर्वत	7894-14	4210-10	57293-10	53931-6½	9276-9½	195868186-10-5	39173637308-0-12
हरिवर्ष क्षेत्र	16315-15	8421-1	84016-4	73901-17½	13361-6½	544773870-7	-
रम्यक क्षेत्र	16315-15	8421-1	84016-4	73901-17½	13361-6½	544773870-7	-
निषध पर्वत	33157-17	16842-2	124346-9	94156-2	20165-2½	1425466569-18	57018662979
नीलवंत पर्वत	33157-17	16842-2	124346-9	94156-2	20165-2½	1425466569-18	57018662979
उत्तर विदेहार्द्ध	50000-	16842-2	158113-16½	100000	16683-13	1635739302-$\frac{10}{15}$	-
दक्षिण विदेहार्द्ध	50000-	16842-2	158113-16½	100000	16683-13	1635739302-$\frac{10}{15}$	-

जीवा प्रमुख गणित की संग्रह गाथा-

जीवा संग्रह गाथाएं-

जोयण सहस्स नवगं, स तेव सया हवंति अडयाला
बारसय कला सकला, दाहिण भरहद्ध जीवाओ ।।1।।
दस चेव सहस्साइं, जीवा सत्तय सयाइ वीसाइं।
बारसय कला ऊणा, वेयड्ढ गिरिस्स विन्नेया ।।2।।
चउदसय सहस्साइं, सयाइं चत्तारि एग सयराइं।
भरहड्ढुत्तर जीवा, छच्चकला उणिया किंचि ।।3।।

चउवीस सहस्साइं, नवयसए जोयणाण बत्तीसे।
चुल्ल हिमवंत जीवा, आयमेणं कलद्धंच ।।4।।
सतत्तीस सहस्सा, छच्चसया जोयणाण चउसयरा।
हेमवयवास जीवा, किंचूणा सोलस कला य ।।5।।
तेवन्न सहस्साइं, नवयसया जोयणाण इकत्तीसा।
जीवाय महाहिमवे, उद्धकला चक्कलाओ य ।।6।।
एगुत्तरा नवसया, तेवत्तरिमेव जोयण सहस्स।
जीवा सत्तरस कला, अद्धकला चेव हरिवासे ।।7।।
चउणवइ सहस्साइं, छप्पनहियं सयंकला दोय।
जीवा निसहस्सेसे, लकखं जीवा विदेहद्धे ।।8।।

धनुःपृष्ठ-बाहा संग्रह गाथा-

नवचेव सहस्साइं, छावट्ठाइं सयाइं सत्तेतेव।
सविसेस कलाचेगा, दाहिण भरहद्ध धणुं पिट्ठं ।।9।।
दसचेव सहस्साइं, स-तेव सया हवंति तेयाला।
धणुं पिठ्ठं वेयड्ढे, कलाय पन्नरस हवंति ।।10।।
सोलस चेव कलाओ, अहियाओ हुंति अद्धभागेणं
बाहा वेयड्ढसउ, अठ्ठासिया तहा चउरो ।।11।।
चउदस य सहस्साइं, पंचेव सयाइं अठ्ठावीसाइं।
इक्कारस य कलाओ, धणुं पिठ्ठं उत्तरद्धस्स ।।12।।
भरहद्धुत्तर, बाहा, अठ्ठारस हुंति जोयण सयाइं।
बाहाउय जोयणाणिय, अद्धकला सत्तय कलाओ ।।13।।
धणु हिमवेकल चउरो, पणवीस सहस्स दुसय तिसद्धिया।
बाहा सोलद्ध कला, तेवन्न सया य पन्नहिया ।।14।।
अड़तीस सहस्स सगसय, चत्ता धणु दस कलाय हेमवये।
बाहा सत्तठ्ठिसए, पणपन्ने तिन्निय कलाओ ।।15।।
धणु महहिमवे दसकला, दोसय तेणउ सहस्स सगवन्ना।
बाहा बाणउयसये, छहत्तरे नवकलद्धं च ।।16।।
चुलसी सहसा सोलस, धणु हरिवासे कला चउक्कंच।
बाहा तेरसहस्सा, तिसय इगसठ्ठा छकल सड्ढा ।।17।।

निसह धणु नवकला लकखु, सहस चउवीस तिसय छायालो।
बाहा पन्नठ्ठिसयं, सहस्स वीस्सं दुकल अद्धं ।।18।।
सोलस सहस्स अडसय, तेसीया सड्ढ तेरस कलाय।
बाहा विदेहमज्झे, धनुपिठ्ठ परियरस्सद्धं ।।19।।

प्रतर प्रमाण संग्रह गाथाएं-

लक्खाठ्ठारसएण, ससहस्सा चउरसया य पणसीया।
बार कल छव्विकला, दाहिण भरहद्ध पयरंतु ।।20।।
सत्तहिया तिन्निसया, बार सयसहस्स पंच लक्खाय।
बारसय कला पयरं, वेयड्ढ़ गिरिस्स धरणि तले ।।21।।
जोयण तीसं वासे, पढ़माए मेहलाइ पयरमियं।
लक्ख तिग तिसयरिसया, चुलसी इक्कार सकलाओ ।।22।।
दस जोयण विकखंभे, बीयाइं मेहलय पयरमिमं।
लक्खो चउवीस सया, इगसट्ठा दस कलाओ य ।।23।।
अड़सीया अठ्ठसया, बत्तीस सहस्स तीस लक्खा य।
कलबार विकलिगारस, उत्तर भरहद्ध पयरमिमं ।।24।।
दो कोडि चवद लक्खा, सहसा छप्पन्न नवसइग सयरा।
अठ्ठकला दस विकला, पियरममं चुल्ल हिमवंते ।।25।।
हेमवये छक्कोड़ि, बावत्तरि लक्ख सहस्स तेवन्ना।
पणयालसयं पयरो, पंचकला अठ्ठविकला य ।।26।।
गुणवीस कोडि अडवन्न, लक्ख अडसठ्ठि सहस्स सयमेयं।
चुलसीयं दससय कला, पण विकला पयरु महहिमवे ।।27।।
चउवन्नं कोड़ियो, लक्खा सीयाल तिसयरि सहस्सा।
अठ्ठसय सतरिसत्तय, कलाउ पयरं तु हरिवासे ।।28।।
बायालं कोडिसयं, लक्खा चउपन्न सहस्स छासठ्ठी।
पणसय गुणत्तर कल, अठ्ठारस निसह पयरमिमं ।।29।।
तेसठ्ठिं कोडिसयं, लक्खा सगवन्न सहस्स गुणयाला।
तिसय दुडुत्तर दसकल, पन्नस्स कला विदेहद्धे ।।30।।

घन गणित संग्रह गाथा :-

दस जोयणुसए पुण, तेवीस सहस्स लक्ख इगवन्ना।
जोयण छावत्तरि छ, क्कलाय वेयड्ढ़ घण गणियं ।।31।।
अठ्ठसया पणयाला, तीसं लक्खातिहत्तरि सहस्सा।
पन्नरस कलाय घणो, दसस्सुए होइ बीयम्मि ।।32।।
सत्तहिया तिन्निसया, बारसय सहस्सा पंच लक्खाय।
अवराय बारसकला, पणुस्सये होइ घण गणियं ।।33।।
सत्तासीइ लक्खा, उणवीसहियाय विणवइ सयाइं।
अउणावीसयभागा, चउदस वेयड्ढ़ घण गणियं ।।34।।
हिमवंति दुसय चउदस, कोडी छप्पन्न लक्ख सग नउइ।
सहसा चउयाल सयं, सोलस कलबार विकल घणं ।।35।।
गुणयाल सयासत्तर, कोडी छत्तीस लक्ख सगतीसा।
सहसातिसय अडुत्तर, बार विकल घण महाहिमवे ।।36।।
छगवन्न सहस्स अठ्ठार, कोडि बासठ्ठि लक्ख गुणतीसं।
सहसा नव सयअे, गुणसीइ निसहस्स घणगणियं ।।37।।

जम्बू द्वीप अधिकार में क्षेत्र गणित का सारांश यह है कि इन सभी का भारतीय गणित में ही नहीं, विश्व गणित में भी बहुत महत्व है। क्षेत्र गणित में त्रिभुज, वर्ग, चतुर्भुज, दीर्घ वृत्त, परवलय आदि की गणित, गणित के स्वरुप को स्पष्ट करने वाले तत्त्व हैं। क्षेत्र गणित में इन तत्त्वों की उत्पत्ति और विकास के बारे में जैनाचार्यों का यह प्रदान कभी भी भूलने जैसा नहीं है। क्षेत्र गणित के कितनेक तत्त्वों की उत्पत्ति और विकास पर चिंतन करने से यह प्रमाणित होता है कि जैनाचार्यों द्वारा गणित को उनकी कितनी उत्तम भेंट है? आधुनिक शोध में वृत्त का गहन अर्थ गणितज्ञ मुश्किल से समझ पाते है, उसे जैनाचार्यों ने अपनी बुद्धि कौशल्य से कितने सहज रूप से समझाया है। हिन्दु गणित में हीं नहीं यहां तक कि विश्व गणित में भी ऐसे दीर्घवृत्त का अध्ययन करने वाले महावीराचार्य का स्वयं का अपना विशिष्ट स्थान है। ब्रह्मगुप्त ने वृत्तीय चतुर्भुजों के सभी सूत्र दिये हैं, वे सभी महावीराचार्य ने भी दिये हैं। परन्तु महावीराचार्य द्वारा प्रदत्त सूत्रों की शैली अति विशिष्ट है। यवाकार, मुरजाकार, पणवाकार, वज्राकार आदि अलग अलग क्षेत्रों का वर्णन, इनके क्षेत्रफलों का प्रतिपादन जैनाचार्यों की अमूल्य भेंट है। और इसी कारण आज इन्हें समझने में सरलता होती है। क्षेत्र गणित में π की चतुर्मुखी प्रतिभा है। आधुनिक शोध में मिलता π का मान 355/113 मान नवमी शताब्दी के गणितज्ञ धवलाकार वीर सेनाचार्य की अनुपम भेंट है।

अंत में- क्षेत्र गणित की व्यापकता ने जैनाचार्यों को चिरस्मरणीय बना दिया है। जैनाचार्य गणित का अपूर्व हिस्सा बन गये हैं, ऐसा कह सकते हैं। जैनाचार्यों ने क्षेत्र गणित जैसे शुष्क (निरस) विषय को भी सरलता, सुबोधता, स्वाभाविकता जैसा त्रिगुणी बनाकर महान् गौरव स्थापित किया है।

-: ज्योतिषी देव :-

यह मध्य लोक (तिरछा) 1800 योजन का है। समतल भूमि से नीचे 900 योजन तक रत्नप्रभा पृथ्वी का ऊपरी तल है। समतल भूमि से ऊपर 900 योजन तक उसमें से 790 योजन ऊपर से 900 योजन यानि 110 योजन क्षेत्र में ज्योतिषी देव रहते हैं। 790 यो. पर तारा, 800 यो. पर सूर्य, 880 यो. पर चंद्र, 884 यो. पर नक्षत्र, 887 यो. पर बुध, 891 यो. पर शुक्र, 894 यो. पर गुरु, 897 यो. पर मंगल, 900 यो. पर शनि ग्रह हैं।

चन्द्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारा ये 5 प्रकार के ज्योतिषी देव होते हैं। (प्रज्ञापना पद 1, ठाणांग सूत्र, उ. 1, भगवती शतक 5 उ. 9)। इस रत्नप्रभा पृथ्वी के समभूतल से 790 योजन ऊंचाई से 110 योजन ऊंचाई तक के (900 योजन तक) ज्योतिषीयों के असंख्य स्थान हैं। उन देवों के असंख्यात लाख विमान हैं। ये इनके निवास स्थान रूप विमान हैं। ये विमान आधे कविठ (कोठ) के आकार के, संपूर्ण स्फटिकमय, ऊंचे और स्वयं के तेजयुक्त हैं, अलग अलग मणियों, स्वर्ण और रत्नों से रंगबिरंगे हैं। हवा से उड़ती विजय ध्वज और छत्रों से सुशोभित और गगनचुंबी शिखरों वाले हैं। उनकी जालियों में भी रत्न और मणियां जड़ी हैं, खिले हुए कमलों के समान शोभायुक्त मणियों से श्रृंगारित, अन्दर बाहर चमकते और सुकोमल स्पर्श युक्त हैं। यहां पर्याप्त, अपर्याप्त देवों के स्थान हैं, स्वयं के स्थान, उत्पत्ति और विक्रिया इन तीनों दृष्टियों से लोक के असंख्यातवें भाग में हैं। (पन्नवणा पद 2, समवायांग, ठाणांग ठाणा 2 उ. 3 एवं जीवाभिगम सूत्र में वर्णन है) ये सभी विमान छत्राकार है (सूर्य चन्द्र प्रज्ञप्ति)।

जंबूद्वीप में दो चंद्र प्रकाशित है, प्रकाश करते है, प्रकाश करेंगे। दो सूर्य तपते थे, तपते हैं, तपेंगे। 56 नक्षत्र, 176 ग्रह और एक लाख, तेतीस हजार, नो सो पचास, क्रोड़क्रोड़ तारागण भ्रमण करते हैं, विचरण करते है-

दो चंदा, दो सूरा, णक्खत्ता खलु हवंति छप्पण्णा।
छावत्तरं गहसतं, जंबूदीवे विचारीणं ।।1।।
एगं च सयसहस्सं, तित्तिसं खलु भवे सहस्साइं।
णव य सत्ता पण्णासा, तारागण कोडि कोडिणं ।।2।।

(सूर्य-चन्द्र प्रज्ञप्ति, जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति, जीवाभिगम, भगवती सूत्र शतक 9 उ. पहला)

लवण समुद्र में चार चन्द्र प्रकाशित हैं, चार सूर्य तपते हैं, 112 नक्षत्रों के साथ चन्द्र जुड़ता है, 352 ग्रह चलते हैं और 2679000000000000000 (दो लाख सतसठ हजार नौ सौ क्रोड़ा क्रोड़) तारा शोभित हैं। (जीवाभिगम सूत्र)

धातकी खंड :- धातकी खंड में 12 चंद्र 12 सूर्य है-

चउवीसं ससि-रविणों, णक्खत्त सत्ताय तिन्नि छत्तीसा।
एगं च गहसहस्सं, छप्पन्नं धाइयसंडे ।।1।।
अट्ठेव सयसहस्सा, तिण्णि सहस्साइं सत्तय सयाइं।
धायइसंडे दीवे, तारागण कोडिकोडीणं ।।2।।

बारह चन्द्र बारह सूर्य कुल 24 चन्द्र सूर्य तीन सौ छत्तीस नक्षत्र 1056 ग्रह तथा आठ लाख तीन हजार सात सौ क्रोड़ा क्रोड़ तारा शोभित हैं (जीवाभिगम, चन्द्र सूर्य प्रज्ञ., भगवती सूत्र श. 9 उ.2)

कालोदधि समुद्र- इस समुद्र में 42 चन्द्र और 42 सूर्य अपनी प्रभा फैलाते हैं-

बायालीसं चन्दा, बायालीसं च दिणयरादित्ता।
कालोदधिम्मि ऐते, चरंति संबद्ध लेसागा ।।1।।
णक्खत्ताणु सहस्सं, एगं छहत्तरं च सतमण्णं।
छच्च सता छण्णउया, महा गहा तिण्ण य सहस्सा ।।2।।
अट्ठावीसं कोलोदहिम्म, बारस य सय सहस्साइं।
नव य सया पन्नासा, तारा गण कोडिकोडिणं ।।3।।

कालोदधि समुद्र में संबद्ध लेश्या वाले 42 चंद्र, 42 सूर्य, 1176 नक्षत्र, 3696 महा ग्रह और 28 लाख 12 हजार 950 क्रोड़ा क्रोड़ तारा शोभित हैं। (जीवाभिगम सूत्र, चन्द्र-सूर्य प्रज्ञप्ति, भगवती सूत्र शतक 9 उ. 2, समवायांग सूत्र 42 समवाय)

पुष्करवर द्वीप-

चोयालं चंदसयं, चउयालं चेव सूरियाण सयं।
पुक्खरवर दीवंमि, चरंति ऐते पभासेंति ।।1।।
चत्तारि सहस्साइं, बत्तीसं चेव होंति णक्खत्ता।
छच्च सया बावत्तर, महग्गहा बारस सहस्सा ।।2।।
छण्णउइ सयसहस्सा, चत्तालीसं भवे सहस्साइं।
चत्तारि सया पुक्खरवर, तारागण कोडी कोडीणं ।।3।।

पुष्करवर द्वीप में 144 चन्द्र, 144 सूर्य, 4032 नक्षत्र, 12672 महाग्रह और 96 लाख 44 हजार 400 क्रोड़क्रोड़ तारागण शोभित हैं। (जीवाभिगम, सूर्य-चन्द्र प्रज्ञप्ति, भगवती शतक 9 उ. 2 एवं समवायांग सूत्र 72वां समवाय)

आभ्यंतर पुष्करार्द्ध द्वीप-

बावत्तरिं य चंदा, बावत्तरिमेव दिणकरादित्ताः।
पुक्खरवर दीवड्ढे, चरंति एते पभासेंता ।।1।।
तिन्न सया छत्तीसा, छच्च सहस्सा महग्गहाणंतु।
णक्खत्ताणं तु भवे, सोलाइ दुवे सहस्साइं ।।2।।
अडयाल सय सहस्सा, बावीसं खलु भवे सहस्साइं।
दोनिस्सया पुक्खरेद्ध, तारागण कोड़ी कोडीणं ।।3।।

पुष्करार्द्ध द्वीप में 72 चन्द, 72 सूर्य, 6336 महाग्रह, 2016 नक्षत्र और 48 लाख, 22 हजार, 200 क्रोड़ाक्रोड़ तारा शोभित है। (जीवाभिगम सूत्र, सूर्य-चन्द्र प्रज्ञ., भगवती शतक 9 उ. 2 एवं समवायांग सूत्र 72वां समवाय)

मनुष्य क्षेत्र में-

बत्तीसं चंद सयं, बत्तीसं चेव सूरियाण सयं।
सयलं मणुस्सलोयं, चरेंति एता, पभासेंति ।।1।।
एक्कारस य सहस्सा, छप्पिय सोला महग्गाहाणंतु।
छच्च सया छण्णउया, णक्खत्ता तिण्णिय सहस्सा ।।2।।
अडसीई सयसहस्सा, चत्तालीसं सहस्स मणुयलोगंमि।
सतय सता अणूणा, तारागण कोडि कोडीणं ।।3।।

मनुष्य क्षेत्र में 132 चन्द्र, 132 सूर्य 11616 महाग्रह, 3696 नक्षत्र तथा 88 लाख 40 हजार 700 क्रोड़ा क्रोड़ तारागण शोभायमान है। (जीवाभिगम सूत्र, चन्द्र-सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र, भगवती सूत्र शतक 9 उ. 2)

ज्योतिषी देवों में चंद्र और सूर्य दोनों सरीखे हैं। अन्य ज्योतिषी देवों में नक्षत्र सबसे कम हैं, ग्रह इनसे संख्यात गुणा है, तारागण इनसे भी संख्यात गुणा है। (जंबूद्वीप, चंद्रसूर्य प्रज्ञप्ति, जीवाभिगम सूत्र)। ताराओं से नक्षत्र महर्द्धिक है, नक्षत्रों से ग्रह, ग्रहों से सूर्य, सूर्य से चंद्र महर्द्धिक हैं। अर्थात् तारा सबसे अल्प ऋद्धि वाले हैं। चंद्र सबसे अधिक ऋद्धि युक्त होते हैं। (जंबूद्वीप, चंद्र-सूर्य प्रज्ञप्ति, ठाणांग सूत्र दूसरा और चौथा ठाणा)।

इस जंबूद्वीप में दो चंद्र और दो सूर्य है। लवण समुद्र में चार चंद्र, चार सूर्य है। धातकी खंड में 12-12 चंद सूर्य, कालोदधि में 42-42 चन्द्र सूर्य है। अर्द्ध पुष्कर द्वीप में 72-72 चन्द्र सूर्य हैं, यों अढ़ाई द्वीप में कुल 132 चन्द्र और 132 सूर्य हैं। मनुष्य क्षेत्र में रहे ये सभी चन्द्र और सूर्य घूमते हैं।

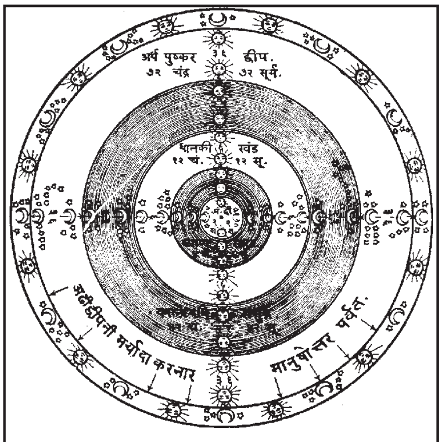

(चित्र सं. 112) - चन्द्र सूर्य की माला

मेरु के पूर्व दिशा में 66 चंद्र एक समश्रेणि में मेरु की प्रदक्षिणा करते हैं। और दूसरे 66 चंद्र भी समश्रेणि में इसी प्रकार मेरु पर्वत के पश्चिम दिशा में प्रदक्षिणा करते हैं। चंद्र और सूर्य अपनी-अपनी समश्रेणि में ही रहते हैं। खिसकते नहीं। यह प्रदक्षिणा जंबूद्वीप के मेरु के आसपास ही है। ग्रह नक्षत्र और ताराओं की समश्रेणियां अभिजित आदि नक्षत्रों के अनुक्रम से 28-28 की है। इस प्रकार मेरु के आसपास नक्षत्रों की 56 श्रेणियां हैं। 88-88 ग्रहों की यों 176 श्रेणियां हैं। इसी प्रकार ताराओं की श्रमश्रेणियां भी समझनी चाहिए। चन्द्र सबसे मंद गति वाला है। उससे सूर्य अधिक गति वाला है, इसी अनुक्रम से ग्रह नक्षत्र और तारा अधिक-अधिक गति वाले होते हैं।

लघु क्षेत्र समास में ज्योतिषी देवों में चंद्र को मुख्य माना है, इसी से चंद्र का ही परिवार माना है, अन्य सभी ज्योतिषी देव चंद्र में समाविष्ट किये हैं। 28 नक्षत्र, 88 ग्रह और 66975 क्रोड़ाक्रोड़ तारा यह चंद्र का परिवार है। चंद्र सूर्य से महर्द्धिक देव हैं। अधिक पुण्यवान है, अतः चंद्र परिवार बताया है, सूर्य का परिवार नहीं कहा है। चंद्र-सूर्य दोनों को ही इन्द्र पदवी प्राप्त है।

मनुष्य क्षेत्र के बाहर भी चन्द्र सूर्य है, परन्तु वे सभी स्थिर है (चर नहीं है)। बाहर के चन्द्र सूर्यादि समश्रेणि हैं या नहीं यह एक प्रश्न हैं? हालांकि दोनों की गिनती श्रेणि तरीके से की जाती है। इन्हें समश्रेणि में मानकर तीन गुणा करके पीछे के द्वीपों समुद्रों के चंद्र एवं सूर्य की गिनती जोड़कर आगे के चन्द्र सूर्य कहते हैं। जैसे धातकी खंड में 12-12 चंद्र सूर्य है, इन्हें तीन गुणा करने से 36 हुए, इसमें पीछे के 6-6 चन्द्र सूर्य जोड़ने से 42-42 हुए। इसी प्रकार इसी प्रमाण से बाहर के चन्द्रादि अन्य द्वीप-समुद्रों में गिने जाते हैं। वलय श्रेणि में रहे मानें तो आने वाली संख्या जितने चंद्र सूर्य होते हैं। समश्रेणि के मत से मानुषोत्तर पर्वत के बाहर आठ लाख योजन के पुष्करार्द्ध द्वीप में 72-72 चन्द्र सूर्य होने से 36-36 की दो दो पंक्तियां होती है, और वलय श्रेणि से मानें तो मानुषोत्तर पर्वत से 50 हजार योजन दूर प्रथम पंक्ति है उसमें 72 चन्द्र 72 सूर्य परस्पर अन्तर से (चन्द्र-सूर्य-चन्द्र-सूर्य) रहे हैं। उसके बाद एक लाख योजन दूर दूसरी पंक्ति में दो चंद्र दो सूर्य अधिक गिनने से 74-74 चन्द्र सूर्य परस्पर अन्तर से हैं। इस प्रकार आठवी पंक्ति में 172 चन्द्र सूर्य रहे हैं। प्रत्येक पंक्ति एक-एक लाख योजन के अन्तर से है। इससे पुष्करार्द्ध से आगे प्रत्येक द्वीप या समुद्र जितने लाख योजन का है, उतनी पंक्तियां होती हैं। जैसे पुष्करार्द्ध से आगे वारुणी वर द्वीप 64 लाख योजन का है, तो वहां 64 पंक्तियां वलयाकार हैं। इस प्रकार बाह्य पुष्करार्द्ध में 8 पंक्तियों में 1264 चंद्र सूर्य (632+632) है। इस प्रकार से प्रत्येक पंक्ति में 2-2 चंद्र सूर्य अधिक जोड़ना। इस प्रकार मनुष्य क्षेत्र के बाहर शास्त्र में दो अभिप्राय मिलने से निर्णय नहीं हो पाता। बाहर के चंद्र सूर्य स्थिर होने से जहां रात्रि वहां हमेशा रात्रि, जहां दिन वहां हमेशा दिन होता है। मनुष्य क्षेत्र के बाहर के ज्योतिषी के विमान अन्दर के विमानों से आधे प्रमाण के होते हैं। चन्द्र का विमान एक योजन का 28वां भाग, सूर्य का विमान एक योजन का 24वां भाग, ग्रह का एक गाऊ का, नक्षत्र का आधा गाऊ का और तारा का 250 धनुष का होता है। बाहर के ज्योतिषीयों के विमान पक्की ईंट की तरह लंब चौरस होते हैं। विमानों की रक्त कांति होने के कारण पक्की ईंट आकार का कहा है।

चन्द्रमंडल :- चन्द्र के 15 मंडल हैं। जम्बूद्वीप में 180 योजन विस्तार में 5 मंडल हैं। इस द्वीप में मंडल क्षेत्र का विस्तार 180 योजन है, इसमें 5 मंडल पूरे तथा छठे मंडल का बहुत सा भाग भी आता है, और लवण समुद्र में 330 योजन और 48/61 भाग में चन्द्र के 10 मंडल है। यों कुल चन्द्र के 15 मंडल है। (जंबूद्वीप, चन्द्र सूर्य प्रज्ञप्ति)। सर्वाभ्यंतर चंद्र मंडल से सर्व बाह्य चंद्र मंडल 510 योजन दूर है, इतना अंतर है।

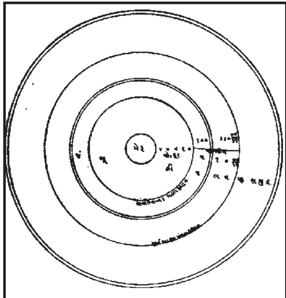

(चित्र सं. 113)-
सूर्य चन्द्र मंडल

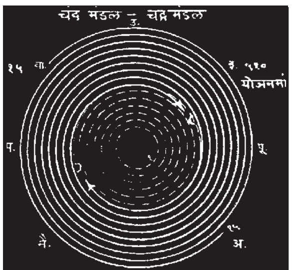

(चित्र सं. 114)-
चन्द्र मंडल

अर्थात् जम्बूद्वीप के 2 चन्द्र 2 सूर्य का चार गति क्षेत्र उत्तर-दक्षिण या दक्षिण से उत्तर यों 510 योजन तथा एक योजन का 48/ 61वां भाग जितना अन्तर है, इस क्षेत्र में ही चन्द्र अपने 15 मंडल फिरता है। प्रत्येक चन्द मंडल 56/61 योजन लम्बा यानि चन्द्र विमान एक योजन के 61 भाग में से 56 भाग जितना वृत्त विस्तार वाला है, इसकी परिधि त्रिगुणी से कुछ अधिक तथा 28/61 योजन जाडा है।

सर्वाभ्यंतर चन्द्र मंडल 99640 योजन लम्बा चौड़ा और 315089 योजन से कुछ अधिक परिधि युक्त है। इसके बाद दूसरा मंडल 99712 $\frac{51}{61}+\left\{\frac{1}{61}\times\frac{1}{7}\right\}$ योजन लम्बा चौड़ा और 315319 योजन से कुछ अधिक के घेरावा वाला है। तीसरा मंडल (आभ्यंतर) 99785 $\frac{41}{61}+\left\{\frac{1}{61}\times\frac{1}{7}\times\frac{1}{2}\right\}$ योजन लम्बा चौड़ा और 315549 योजन से कुछ अधिक घेराव वाला है। इस प्रकार से क्रम से निकलता चन्द्र यावत् संक्रमण करता 72 $\frac{51}{61}+\left\{\frac{1}{61}\times\frac{1}{7}\right\}$ योजन प्रत्येक मंडल में लम्बाई चौड़ाई में बढ़ता हुआ 230 योजन परिधि में बढ़ता हुआ सर्व बाह्य मंडल की ओर उपसंक्रमण करता हुआ गति करता है। यानि जम्बूद्वीप की जगती से द्वीप के अन्दर 180 योजन अन्दर की ओर चन्द्र का पहला मंडल है (सर्वाभ्यंतर)। इससे पूर्व के 180 पश्चिम के 180 योजन कुल 360 योजन, एक लाख योजन के जंबूद्वीप के व्यास में से कम करते हुए 99640 योजन जितना अंतर सर्वाभ्यंतर मंडल में वर्तते हुए एक चन्द्र से दूसरा चन्द्र दूर रहता है। इसी 99640 योजन में मेरु पर्वत की भूमिस्थ व्यास 10000 योजन कम करने से 89640 योजन होता है इसके पूर्व पश्चिम दो भाग करने से 44820 योजन आता है, यह एक चन्द्र से दूसरे चन्द्र का मध्य का अंतर है। (दोनों चन्द्र से मेरु पर्वत के मध्य का इतना अंतर होता है)।

सर्व बाह्य चन्द्र मण्डल 100660 योजन लम्बा चौड़ा और 318315 योजन की परिधि वाला है। उसके पश्चात् दूसरे बाह्य मंडल 100587 $\frac{9}{61}+\left\{\frac{1}{61}\times\frac{1}{7}\times\frac{6}{1}\right\}$ योजन लम्बा चौड़ा एवं 318085 योजन परिधि का होता है। तीसरा बाह्य मंडल 100514 $\frac{19}{61}+\left\{\frac{1}{61}\times\frac{1}{7}\times\frac{5}{1}\right\}$ योजन लम्बा चौड़ा एवं 317855 योजन की परिधि होती है। इसी क्रम से अन्दर आता हुआ चन्द्र संक्रमण करता हुआ 72 $\frac{51}{61}+\left\{\frac{1}{61}\times\frac{1}{7}\right\}$ योजन प्रत्येक मंडल में लम्बाई चौड़ाई में कम करता हुआ, परिधि में 230 योजन कम करता हुआ सर्व बाह्य मंडल पर संक्रमण करता हुआ गति करता है। सर्व बाह्य मंडल लवण समुद्र में जम्बूद्वीप के किनारे से 330 योजन दूर तक सभी तरफ से घूमता होने से दोनों तरफ के 330-330 योजन गिनने से 100660 योजन होता है। यानि एक से दूसरे चन्द्र का उत्कृष्ट अंतर 100660 योजन होता है।

एक चन्द्र मंडल से दूसरे चंद्र मंडल का अंतर 35 $\frac{30}{61}+\left\{\frac{1}{61}\times\frac{1}{7}\times\frac{4}{7}\right\}$ योजन का अंतर होता है। मंडल का क्षेत्र 510 योजन और 48 इकसठिया भाग अधिक कहा है। उसका इकसठिया भाग बनाने से 31110 + 48 = 31158 होते हैं। चन्द्र मंडल 15 है, प्रत्येक 56 भाग जितना होने से 56 × 15 = 840 भाग हुए इन्हे घटाने से अंतरों का अंतर 30318 भाग रहा, इनके योजन करने के लिए 61 का भाग देने से तथा अंतर लाने हेतु पुनः 14 का भाग देने से 35 योजन और 30 $\frac{4}{7}$ भाग आता है। (15 मंडलों में अंतर 14 ही होते हैं) अंतर = चन्द्र, सूर्य के स्पर्श बिना का खाली शून्य स्थान। इस प्रकार एक चंद्र मंडल से दूसरे चंद्र मंडल का अंतर 35 योजन एवं एक योजन का 30 $\frac{4}{7}$ भाग हुआ। यह एक तरफ का हुआ, यों दुगुना करने से दोनों का अंतर 70 योजन 60 भाग एवं 8 प्रति भाग हुआ। चंद्र मंडल 56 भाग का है दोनों तरफ का दुगुना करने से 112 भाग इसमें 60 भाग जोड़ने से 172 भाग तथा सातिया आठ प्रति भाग में से सात प्रति भाग का एक भाग 172 में मिलाने से 173 भाग और एक प्रतिभाग रहा। इनके योजन बनाने 61 का भाग देने से 2 योजन 51 भाग 1 प्रतिभाग को 70 योजन में जोड़ने पर 72 योजन 51 $\frac{1}{7}$ भाग हुआ। यह अंतर बढ़ता जाता है। (जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र)

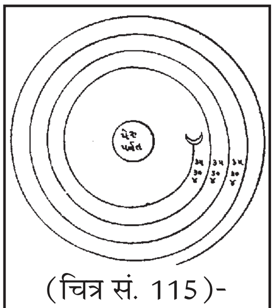

(चित्र सं. 115)-
चन्द्र मंडल और आंतरे

सूर्य मंडल :- सूर्य मंडल $\frac{48}{61}$ योजन लम्बा चौड़ा तीन गुणी से कुछ ज्यादा परिधि वाला तथा $\frac{24}{61}$ योजन जाड़ा है। (चन्द्र सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र)

जम्बूद्वीप में सूर्य ईशानकोण में उदय होता है और आग्नेय कोण में अस्त होता है। आग्नेय से उदय होकर नैऋत्य कोण में अस्त होता है। नैऋत्य कोण से उदय होकर वायव्य कोण में अस्त होता है, और वायव्य कोण में उदय होकर ईशान कोण में अस्त होता है। जम्बूद्वीप में दक्षिणार्द्ध में दिन होता है तब उत्तरार्द्ध में भी दिन होता है। और जब उत्तरार्द्ध में दिन होता है, तब जम्बूद्वीप के मेरु पर्वत के पूर्व पश्चिम में रात्रि होती है। जंबूद्वीप में पूर्व में दिन होता है, तब पश्चिम में भी दिन होता है, जब पश्चिम में दिन होता है, तब मेरु पर्वत के उत्तर दक्षिण में रात्रि होती है।

जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में जब 18 मुहुर्त्त का उत्कृष्ट दिन होता है, तब उत्तरार्द्ध में भी उत्कृष्ट 18 मुहुर्त्त का दिन होता है। जब उत्तरार्द्ध में उत्कृष्ट 18 मुहुर्त्त का दिन होता है, तब जंबूद्वीप के मेरू के पूर्व-पश्चिम में जघन्य 12 मुहुर्त्त की रात्रि होती है। जब जम्बूद्वीप के मेरू के पूर्व में उत्कृष्ट 18 मुहुर्त्त का दिन होता है, तब जम्बूद्वीप के उत्तर में जघन्य 12 मुहुर्त्त की रात्रि होती है।

जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में 18 मुहुर्त्त से कुछ कम दिवस होता है, तब उत्तरार्द्ध में भी 18 मुहुर्त्त से कुछ कम दिवस होता है, उसी प्रकार जब उत्तरार्द्ध में 18 मुहुर्त्त से कुछ कम का दिवस होता है, तब जम्बू के मेरु की पूर्व पश्चिम में 12 मुहुर्त्त से कुछ अधिक रात्रि होती है। जब जंबू के मेरु पर्वत के पूर्व में 18 मुहुर्त्त से कुछ कम का दिवस होता है, तब पश्चिम में भी इतना ही दिवस होता है, तब मेरु पर्वत के उत्तर-दक्षिण में 12 मुहुर्त्त से कुछ अधिक की रात्रि होती है।

इस प्रकार 17 मुहुर्त्त का दिन 13 मुहुर्त्त की रात्रि, 17 मुहुर्त्त से कुछ कम का दिवस और 13 मुहुर्त्त से अधिक की रात्रि, 16 मुहुर्त्त का दिवस 14 मुहुर्त्त की रात्रि, 16 से कुछ कम का दिन, 14 से कुछ अधिक मुहुर्त्त की रात्रि इसी प्रकार 13 मुहुर्त्त का दिन तो 17 मुहुर्त्त की रात्रि और 13 मुहुर्त से कुछ कम का दिवस 17 मुहुर्त्त से कुछ अधिक की रात्रि होती है। जब जम्बूद्वीप के दक्षिणार्द्ध में जघन्य 12 मुहुर्त्त का दिवस होता है, तब जम्बूद्वीप के पूर्व में उत्कृष्ट 18 मुहुर्त्त की रात्रि होती है। जब मेरू के पूर्व में 12 मुहुर्त्त का दिवस होता है तब मेरू के उत्तर दक्षिण में उत्कृष्ट 18 मुहुर्त्त की रात्रि होती है। (भग.श. 5 उ. 1)

सूर्य के 184 मंडल है। जम्बूद्वीप में 180 योजन क्षेत्र में 65 सूर्य के मंडल तथा लवण समुद्र में 330 योजन क्षेत्र में 119 सूर्य के मंडल हैं। बाह्य और आभ्यंतर सूर्य मंडल जितने आकाश प्रदेश स्पर्श कर रहे हैं, उतने प्रदेश उन मंडलों का क्षेत्र कहलाते हैं। यों कुल 184 सूर्य मंडल हैं। 48 अंश का एक सूर्य मंडल ऐसे 184 मंडल हैं। सूर्य मंडल का विस्तार $\frac{48}{61}$ और चन्द्र मंडल का $\frac{56}{61}$ योजन है। (जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र)। निषध और नीलवंत पर्वत पर 63 सूर्योदय (सूर्य मंडल) कहे हैं। (समवायांग - 63वां समवाय)

जम्बूद्वीप में 65 सूर्य मंडल हैं परन्तु भरत सूर्य (सूर्य वर्ष के प्रारंभ में जो सूर्य भरत क्षेत्र में उदय होकर सूर्य वर्ष का प्रथम मंडल और 184 का दूसरा मंडल निषध पर्वत पर प्रारंभ करता है वह भरत सूर्य कहलाता है (इसी प्रकार ऐरवत सूर्य का भी समझ लेना) के 63 मंडल निषध पर्वत पर और 2 मंडल हरिवर्ष क्षेत्र में ईशान

कोण में होते हैं। इसी प्रकार ऐरवत सूर्य के 63 मंडल नीलवंत पर और 2 मंडल रम्यक क्षेत्र के नैऋत्य कोण में होते हैं (क्षेत्र दिशा की अपेक्षा से)।

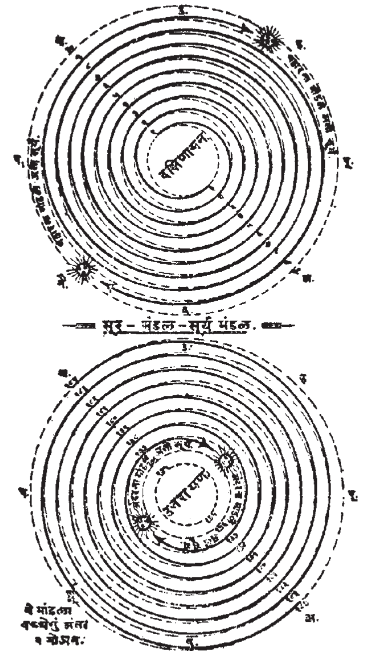

(चित्र सं. 116-117)-
सूर्य मंडल के मांडले

सर्वाभ्यंतर सूर्य मंडल से सर्व बाह्य सूर्य मंडल 510 योजन दूर है (जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति)। जम्बूद्वीप में दो सूर्य हैं भरत सूर्य, एरवत सूर्य। दोनों सूर्य अलग अलग तीस-तीस मुहुर्त्त प्रत्येक अर्द्ध मंडल में गमन करते हैं। इसी प्रकार साठ मुहुर्त्त में एक मंडल (प्रत्येक सूर्य) पूरा करता है। निकलते समय दोनों एक दूसरे के क्षेत्र में नहीं चलते, प्रवेश करते समय दोनों सूर्य एक-दूसरे के क्षेत्र में चलते हैं, ये प्रवेश क्षेत्र 184 (मंडल) है। भरत का सूर्य जंबूद्वीप की पूर्व पश्चिम की लम्बाई और उत्तर-दक्षिण की चौड़ाई की जीवा के मंडल के 124 भाग करने से दक्षिण पूर्व (आग्नेय कोण) के चतुर्भाग मंडल में जब 91वें मंडल से निकलता है, तब वह सूर्य स्वयं के क्षेत्र में जाता है।

यह भरत का सूर्य ऐरवत के सूर्य मंडल के जंबूद्वीप की पूर्व पश्चिम की लम्बाई और उत्तर-दक्षिण की चौड़ाई की जीवा के मंडल के 124 भाग करने से उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) के चतुर्भाग मंडल में 92 वें मंडल से निकलते दूसरे क्षेत्र में चलते हैं। और दक्षिण-पश्चिम (नैऋत्य-कोण) के चतुर्भाग मंडल में 91वें मंडल निकलकर दूसरे के क्षेत्र में जाते है।

ऐरवत का सूर्य जम्बूद्वीप की पूर्व-पश्चिम की लम्बाई और उत्तर दक्षिण की चौड़ाई की जीवा के मंडल के 124 भाग करने से उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) के चतुर्भाग मंडल में जब 92वें मंडल से निकलता है, तब वह स्वयं के क्षेत्र में ही विचरता है, इसी प्रकार जब दक्षिण-पूर्व (आग्नेय कोण) के चतुर्भाग मंडल मे 91वें मंडल में से निकलता है, तब वह स्वयं के ही क्षेत्र में विचरण करता है।

ऐरवत का सूर्य जंबूद्वीप की पूर्व-पश्चिम की लम्बाई और उत्तर-दक्षिण की चौड़ाई की जीवा के 124 भाग करने से, दक्षिण-पश्चिम (नैऋत्य कोण) के चतुर्भाग मंडल के 92वें मंडल से निकलने के बाद से दूसरे के क्षेत्र में जाता है। उसी प्रकार उत्तर-पूर्व (ईशान कोण) के चतुर्भाग मंडल से निकल कर दूसरे के क्षेत्र में जाता है। प्रवेश करते समय दोनों सूर्य एक दूसरे के क्षेत्र में इसी कारण से चलते हैं। (चन्द्र-सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र)

ये सभी मंडल $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ा, अनियत लम्बाई चौड़ाई परिधि वाले हैं। इसका कारण यह है कि इस जंबूद्वीप में जब सूर्य सर्वाभ्यंतर मंडल पर संक्रांत कर गति करता है, तब वह मंडल $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ा, 99640 योजन लम्बा चौड़ा (इसका वर्णन चन्द्रमंडल में बताया है, उसी प्रकार 99640 योजन बनता है) और 315089 योजन से कुछ अधिक परिधि वाला होता है। उस समय उत्कृष्ट 18 मुहुर्त्त का दिन होता है। और जघन्य 12 मुहुर्त्त

की रात्रि होती है। वहां से निकलता सूर्य नये संवत्सर में आते प्रथम दिन रात में आभ्यंतर के दूसरे मंडल पर उपसंक्रांत करके गति करता है।

जब सूर्य आभ्यंतर के दूसरे मंडल पर उपसंक्रांत होकर गति करता है, तब $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ा 99645$\frac{35}{61}$ योजन लम्बा चौड़ा 315107 योजन से कुछ कम परिधि वाला होता है, इस समय दिन रात का प्रमाण भी इसी हिसाब से होता है। वहां से निकलता सूर्य दूसरी अहोरात्रि में आभ्यंतर के तीसरे मंडल पर उपसंक्रांत करके गति करता है, तब वह मंडल $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ा तथा 99651$\frac{9}{61}$ योजन लम्बा चौड़ा और 315125 योजन परिधि वाला होता है। इसी हिसाब से इस समय दिन रात होते हैं। इस प्रकार से निकलता हुआ सूर्य एक से दूसरे पर उपसंक्रांत करता हुआ प्रत्येक मंडल में 5$\frac{35}{61}$ योजन लम्बाई चौड़ाई सहित 18 योजन परिधि में बढ़ता हुआ सर्व बाह्य मंडल पर उपसंक्रांत करता हुआ गति करता है।

सूर्य जब सर्व बाह्य मंडल पर उपसंक्रांत होकर गति करता है, तब वह मंडल $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ा 100660 योजन लम्बा चौड़ा (यह लम्बाई चंद्र मंडल की तरह है, वहां के वर्णन में देखें) और 318315 योजन परिधि युक्त है। उत्कृष्ट 18 मुहुर्त्त की इस समय रात्रि होती है और जघन्य 12 मुहुर्त्त का दिन होता है। यह प्रथम 6 मास और प्रथम 6 मास के अंत के संबंध में है। वहां से प्रवेश करता सूर्य दूसरे 6 मास में पहली अहोरात्रि बाह्य के दूसरे मंडल पर उपसंक्रांत करके युति करता है। जब सूर्य बाह्य के दूसरे मंडल पर उपसंक्रांत होकर गति करता है, तब वह मंडल $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ा 100654$\frac{26}{61}$ योजन लम्बा चौड़ा और 318297 योजन की परिधि वाला होता है। इस समय रात दिन इसी हिसाब से होता है, वहां से प्रवेश करता सूर्य दूसरी अहोरात्रि में बाह्य के तीसरे मंडल पर उपसंक्रांत करके गति करता है, तब वह मंडल $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ा 100648$\frac{52}{61}$ योजन लम्बा चौड़ा और 318279 योजन की परिधि वाला होता है। दिन रात भी इसी हिसाब से होते हैं, इसी प्रकार से प्रवेश करता हुआ सूर्य एक के बाद एक अन्य मंडलों पर संक्रमण करता हुआ प्रत्येक मंडल में 5$\frac{35}{61}$ योजन की लम्बाई चौड़ाई तथा 18 योजन को परिधि में कम करता हुआ, सर्वाभ्यंतर मंडल पर उपसंक्रांत करके गति करता है। सूर्य मंडल में प्रत्येक मंडल 2 योजन अंतर पर है, तथा 48 भाग मंडल का जोड़ने से एक तरफ की अंतरवृद्धि होती है। इसी तरह दूसरी तरफ का जोड़ने से 4 योजन 96 भाग (96-61=35 भाग) यानि 5 योजन 35 भाग आता है, अतः यह स्पष्ट होता है कि प्रत्येक मंडल में दो सूर्य का परस्पर अंतर 5$\frac{35}{61}$ योजन बढ़ता है। इसी प्रमाण से बढ़ता हुआ यह सर्व बाह्य मंडल पर 100660 योजन जितना अंतर दो सूर्य का परस्पर अंतर है।

सूर्य जब सर्वाभ्यंतर मंडल पर उपसंक्रांत करके गति करता है, तब वह मंडल 48/61 योजन जाडा, 99640 योजन लम्बा चौड़ा और 315089 योजन से कुछ अधिक परिधि वाला होता है, उस समय उत्कृष्ट 18 मुहुर्त्त का दिन होता है, जघन्य 12 मुहुर्त्त की रात्रि होती है, यह दूसरे 6 मास तथा दूसरे 6 मास के अंत के विषय में है, यह आदित्य संवत्सर तथा आदित्य संवत्सर के अंत के लिए समझना।

सभी मंडल $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ा है, सभी मंडलों का अंतर 2 योजन है (लम्बाई चौड़ाई) मंडल क्षेत्र पहले 510 योजन तथा 48 इकसठिया भाग अधिक कहा है यहां गणित की सरलता के लिए 510 × 61= 31110 + 48 भाग जोड़ने से 31158 इकसठिया भाग होता है, इसमें 184 सूर्य मंडल है, प्रत्येक 48 भाग का है 184 ×

48 = 8832 भाग आये उसमें से 311158-8832=22326 क्षेत्रांश आता है उसमें 183 अंतर से भाग देने से 122 अंश आता है इसके योजन बनाने के लिए इसमें 61 का भाग देने से 2 योजन का अंतर आता है, इस प्रमाण से पहले सूर्य मंडल से दूसरा सूर्य मंडल 2 योजन दूर है। यों एक, दो, तीन यों जाते जाते 183वें मंडल से 184वां मंडल 2 योजन है, ऊपर के मार्ग को 183 दिन में पूरा हो जाने वाला 510 योजन का अंतर है। आभ्यंतर मंडल के अंतर का अंत से बाह्य मंडल के अंतर के अंत तक 510 योजन का मार्ग है।

आभ्यंतर मंडल के अन्दर के अंत से बाह्य मंडल के बाह्यान्त तक और बाह्य मंडल के बाह्यान्त से आभ्यंतर मंडल के अंत तक 510 $\frac{48}{61}$ योजन का मार्ग है। सूर्य मंडल के 2 योजन के अंतरे को 183 अंतरों से गुणा करने से 366 तथा 48 एक मंडलांश को 184 से गुणा करने से 8832 ÷ 61 से 144 योजन 48 अंश, उसमें 366 जोड़ने से 510 योजन 48 अंश यों कुल 510 $\frac{48}{61}$ योजन संपूर्ण मंडल क्षेत्र होता है। आभ्यंतर मंडल के बाह्यांत से बाह्य मंडल के अन्दर के अंत तक और बाह्य मंडल के अन्दर के अंत से आभ्यंतर मंडल के बाह्यांत तक का 509 $\frac{13}{61}$ योजन का मार्ग है। आभ्यंतर मंडल के बाह्यांत से बाह्य मंडल बाह्यांत और बाह्य मंडल के बाह्यांत से आभ्यंतर मंडल के बाह्यांत तक 510 योजन का मार्ग है। (जम्बूद्वीप, चन्द्र सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र)

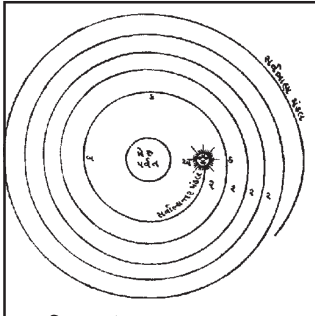

(चित्र सं. 118-119)- सूर्य मंडल एवं उनके आंतरे

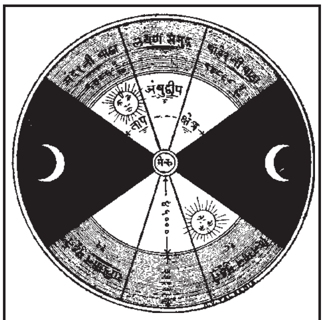

(चित्र सं. 120)- तापक्षेत्र

सूर्य के 184 मंडल हैं, जिनके 183 अंतरे है चित्र में अ से ब तक सीधी लकीर का मंडल क्षेत्र है, यह 510 $\frac{48}{61}$ योजन है ''अ ब क ड'' गोल (वर्त्तुल) लकीरे $\frac{48}{61}$ योजन जाड़ी है। यह पहला मंडल पूरा होता है, ऐसे 184 मंडल है। सूर्य 'स' तक जाकर दिखाई गई लकीर अनुसार मेरू पर्वत तरफ खिसकता जाता है। दूसरा सूर्य 'ब' स्थान से इसी प्रकार अन्य 184 मंडल करता है। दोनों सूर्य के मंडल एक लकीर में नहीं आते, परन्तु स्वयं की अन्य लकीरें बनाते हैं, प्रत्येक मंडल दो-दो योजन के अंतर से है।

जम्बूद्वीप में रहे सर्वाभ्यंतर सूर्य मंडल 99640 योजन लम्बा चौड़ा और 315089 योजन से कुछ अधिक परिधि वाला है। आभ्यंतर के बाद का दूसरा सूर्य मंडल 99645 $\frac{35}{61}$ योजन लम्बा चौड़ा 315107 योजन परिधि वाला है, आभ्यंतर तीसरा मंडल 99650 $\frac{9}{61}$ योजन लम्बा चौड़ा और 315125 योजन परिधि वाला है। इस क्रम से निकलता सूर्य एक के बाद एक दूसरे मंडल पर जाता हुआ प्रत्येक मंडल में 5 $\frac{35}{61}$ योजन लम्बाई-चौड़ाई सहित 18 योजन परिधि में बढ़ता हुआ सर्व बाह्य मंडल की ओर भ्रमण करता है।

सर्व बाह्य मंडल (सूर्य मंडल) 100660 योजन लम्बा चौड़ा 318315 योजन परिधि वाला है। बाह्य का दूसरा मंडल 100654 $\frac{26}{61}$ योजन लम्बा-चौड़ा और 318297 योजन परिधि वाला है। बाह्य का तीसरा मंडल 100648 $\frac{52}{61}$ योजन लम्बा चौड़ा और 318279 योजन परिधि वाला है, इस क्रम से अन्दर की तरफ प्रवेश करता

सूर्य एक के बाद एक मंडल पर जाता हुआ प्रत्येक मंडल $5\frac{35}{61}$ योजन लम्बाई चौड़ाई और 18 योजन परिधि कम करता हुआ सर्वाभ्यंतर मंडल की तरफ गति करता है (जम्बूद्वीप, चन्द्र-सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र)।

सूर्य का ताप क्षेत्र- जम्बूद्वीप में सूर्य ऊपर में 110 योजन क्षेत्र तपाता है, 1800 योजन नीचे के क्षेत्र को तपाता है। तिरछा $47213\frac{21}{60}$ योजन क्षेत्र तपाता है। (जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति, चन्द्र-सूर्य प्रज्ञप्ति, भगवती सूत्र शतक 8 उ. 8)।

चन्द्र सूर्यादि देवों में चन्द्र को मुख्य माना है, उसी का परिवार माना है। अन्य सभी ज्योतिषी चन्द्र परिवार में समाविष्ट है। एक चन्द्र के साथ 88 ग्रह, 28 नक्षत्र तथा 66975 क्रोड़ा क्रोड़ी तारा होते हैं। यह एक चन्द्र का परिवार है। सूर्य का अलग परिवार शास्त्र में नही बताया है, चन्द्र सूर्य से महर्द्धिक देव है, अधिक पुण्यवान है, वैसे चन्द्र एवं सूर्य दोनों को इन्द्र की पदवी प्राप्त है।

ग्रहों का वर्णन :- चन्द्र एवं सूर्य के नियमित मंडल होते है, परन्तु ग्रहों के मंडल नियमित नहीं होते, मेरू के आसपास अनियमित मंडलों की तरह भ्रमण करते हैं। कभी कभी घूमते हुए दूर चले जाते हैं, कभी नजदीक आ जाते हैं, कभी पीछे हटकर पीछे चलते हैं, यों अनियमित गति के कारण शास्त्र में नियमित गति नहीं दी है। राहु, केतु, मंगल आदि ग्रह कुछ नियमित गति से चलते हैं, अतः इनकी गति दी है। ग्रह 88 (चन्द्र सूर्य प्रज्ञप्ति) है- 1. अंगारक 2. विकारक 3. लोहित्यक 4. शनैश्चर 5. आधुनिक 6. प्राधुनिक 7. कण 8. कणक 9. कण कणक 10. कण वितानक 11. कण संतानक 12. सोम 13. सहित 14. आश्वासन 15. कार्योपग 16. कर्बटक 17. अजकरक 18. दुंदुभक 19. शंख 20. शंखनाभ 21. शंखवर्णाभ 22. कंस 23. कंसनाभ (कंसवर्ण-ठाणांग ठाणा 2 उ. 3) 24. कंस वर्णाभ 25. नील 26. नीलावभास 27. रुप्पी 28. रुप्यकभास (ठाणांग में पहले रुप्पी, रुप्यवभास है यहां पहले नील, नीलावभास है) 29. भस्म 30. भस्मराशि 31. तिल 32. तिलपुष्प वर्णक 33. दक 34. दकवर्ण 35. काय 36. लंध्य (ठाणांग में काय की जगह काक, लंध्य की जगह कर्कंध दिया है) 37. इन्द्राग्नि 38. धूमकेतु 39. हरि 40. पिंगल 41. बुध 42. शुक्र (जिस दिन पूर्व दिशा में शुक्र उदय होता है, उसके ठीक साढे आठ महिनें बाद पूर्व दिशा में ही अस्त होता है। ढाई महिने तक बराबर अस्त रहने के बाद पुनः पश्चिम में उदय होता है, फिर नौ महीनें तक बराबर उदित रहकर 10 दिन तक सूर्य के प्रचंड तेज में अदृश्य रहकर बाद में अस्त होता है।) 43. बृहस्पति 44. राहु 45. अगस्ति 46. माणवक 47. काम स्पर्श (ठाणांग में काम और स्पर्श दो बताकर 47-48 भेद किये हैं) 48. धुर 49. प्रमुख 50. विकट 51. विसंधि कल्प (ठाणांग में विसंधि नाम है, 52वां नम्बर है इसके बाद 53वां नियल्ल नाम है) 52. प्रकल्प 53. जटाल 54. अरूण 55. अग्नि 56. काल 57. महाकाल 58. स्वस्तिक 59. सौवस्तिक 60. वर्धमानक 61. प्रलंब (वर्धमानक के बाद ठाणांग में पूसमानक और अंकुश दो ज्यादा नाम दिये हैं) 62. नित्यलोक 63. नित्योद्योत 64. स्वयंप्रभ 65. अवभास 66. श्रेयस्कर 67. क्षेमंकर 68. आभंकर 69. प्रभंकर 70. अरजा 71. विरजा (अरजा के बाद विरजा नहीं बताया) 72. अशोक 73. वीतशोक 74. विवर्त 75. विवस्त्र 76. विशाल 77. शाल 78. सुव्रत 79. अनिवृत्ति 80. एक जटी 81. द्विजटी 82. कर (ठाणांग में 85वां नम्बर कर करिक एक ही गिना है और 86 में राजर्गल एक साथ दिया है) 83. करिक 84. राज 85. अर्गल 86. पुष्प (ठाणांग में 87वां नम्बर पुष्पकेतु 88वां में भावकेतु बताया है, इस प्रकार चन्द्र-सूर्य प्रज्ञप्ति तथा ठाणांग सूत्र में फेरफार रहा है, विद्वान-शास्त्रज्ञ संत और बहुश्रुत-गीतार्थ मुनिगण चिंतन करें) 87. भावक 88. केतु (ठाणांग पृष्ठ 139 जैन विश्व भारती प्रकाशन)।

तिलोय पण्णत्ती नामक ग्रंथ (लोक प्रकाश सर्ग 20 गाथा 700 से 714) में इस प्रकार 88 ग्रहों के नाम हैं- बुध, शुक्र, बृहस्पति, मंगल, शनि, काल, लोहित, कनक, नील, विकाल, केश, कवयव, कनक संस्थान, दुंदुभक, रक्तनील, नीलाभास, अशोक संस्थान, कंस, रूपनिल, कसकवर्ण, शंख परिणाम, तिलपुच्छ, शंखवर्ण, उदकवर्ण, पंचवर्ण, उत्पात, धूमकेतु, तिल, नभ, क्षारराशि, विजिष्णु, सदह, संधि, कलेवर, अभिन्न, ग्रंथि, मानवक, कालक, कालकेतु, निलय, अनय, विद्युजिह, सिंह, अलख, निर्हुख, काल, महाकाल, रुद्र, महारुद्र, संतान, विपुल, संभव, सर्वार्थी, क्षेम, चन्द्र, निर्मंत्र, ज्योतिषमान, दिशसंस्थित, विरत, वीतशोक, निश्चछल, प्रलंब, भासुर, स्वयंप्रभ, विजय, वैजयंत, सीमंकर, अपराजित, जयंत, विमल, अभयंकर, विकस, काष्ठी, विकट, कज्जली, अग्निज्वाल, अशोक, केतु, क्षीरस, अघ, श्रवण, जलकेतु, केतु, अंतरद, एक संस्थान, अश्व, भावग्रह, महाग्रह।

विकाल कोंगारकश्च, लोहितांकः शनैश्चरः।
आधुनिकः प्राधुनिकः, कणःकणक एव च ।।700।।
नवमः कणकणकः, तथा कण वितानकः।
कण संतानकश्चैवं, सोमः सहित एवं च ।।701।।
अश्वसेनः तथा कार्योपग, कर्बुरकोऽपिच।
तथा जकरको दुन्दुभकः, शंखाभिदः परः ।।702।।
शंखनाभस्तथा, शंख वर्णाभः कंस एव च।
कंसनाभस्तथा कंस वर्णाभः नील एव च ।।703।।
नीलावभासो रुप्यी च रुप्यावभास भस्मकौ।
भस्मराशि तिलतिल, पुष्पवर्णादिकाभिधाः ।।704।।
दकवर्णः तथा कायोऽवंध्य इन्द्राग्निरेव च।
धूमकेतुः हरिः पिंगलको बुद्धस्तथैव च ।।705।।
शुक्रो बृहस्पती, राहवगस्ति माणवकास्तथा।
काम स्पर्शश्च धुरकः प्रमुखो विकटोऽपि ।।706।।
विसंधि कल्पः प्रकल्पः स्युर्ज टाला रुणाग्नयः।
षट् पंचाशत्तमः कालो, महाकाल स्ततः परः ।।707।।
स्वस्तिकः सौवस्तिकश्च, वर्धमानः प्रलंबकः।
नित्थालोको नित्योद्योतः स्वयं प्रभोऽवभासकः ।।708।।
श्रेयस्कर स्तथा क्षेमंकर, आभंकरोऽपिच।
प्रंभकरो रजाश्चैव, विरजानाम कीर्तितः ।।709।।
अशोको वीतशोकश्च, विमलाख्यो वितप्तकः।
विवस्त्रश्च विशालश्च शालः, सुव्रत एव च ।।710।।
अनिवृत्तिश्चैकजटी, द्विजटी करिकः करः।
राजार्गलः पुष्पकेतुः भाव केतुरिति ग्रहाः ।।711।।

इस प्रकार 12 गाथाओं में 88 ग्रहों के नाम दिये हैं।

ग्रहास्तु सर्वे वक्रातिचारादिगति भावतः।

राजावनियताः तेन नैतेषां प्राकतनैःकृता ।।712।।

गति प्ररूपणा नापि, मंडला नां प्ररूपणा।

लोकान्तु केषांचित्, किंचित गत्यादि श्रुयतेऽपिहि ।।713।। युग्मम्

इन सभी ग्रहों की वक्र और अनियमित गति होने से पूर्वाचार्यों ने इनकी गति के मंडल के विषय पर कुछ कहा नहीं है, हालांकि कुछ ग्रहों की गति आदि स्वरूप लोगों से सुनने मिलता है। (712-713)

मेरोः प्रदक्षिणावर्त्तं, भ्रमन्त्येतेऽपि मंडलैः।

सदानवस्थितैरेव, दिवाकर शशांत वत् ।।714।।

वे (ग्रह) भी सूर्य-चन्द्र की तरह हमेशा अनियमित मंडलों से घूमते हुए भ्रमण (मेरु की प्रदक्षिणा) करते रहते हैं (714)।

राहु ग्रह :- राहु ग्रह का वर्णन शास्त्रों में मिलता है। ध्रुवराहु (नित्य राहु) और पर्वराहु ये दो प्रकार के राहु है। कृष्ण पक्ष की एकम से स्वयं के 15वें भाग से चन्द्र के प्रकाश को आच्छादित (ढंकने) का प्रयास नित्य (ध्रुव) राहु करता है। यानि एकम को एक भाग, दूज को दो भाग, यों करते अमावस को पूरा भाग चंद्रमा का ढंकता है। बाकी समय में चन्द्र ढंका और खुला दोनों प्रकार रहता है। शुक्ल पक्ष में चन्द्र का एक-एक भाग उघाडता है, खोलता है। एकम को एक भाग, दूज को दो भाग यों पूर्णिमा को पन्द्रहवां भाग भी उघाड़ता है। बाकी समय खुला या ढंका (चन्द्र) रहता है। इसमें जो पूर्व राहु है वह जघन्य 6 मास में चन्द्र तथा सूर्य को और उत्कृष्ट 42 महिने में चन्द्र को तथा 48 वर्ष में सूर्य को ढ़ंकता है। (चन्द्र-सूर्य प्रज्ञप्ति, भगवती शतक 12 उ. 6) पर्वराहु से ग्रहण तथा ध्रुवराहु से शुक्ल, कृष्ण पक्ष बनता है। राहु महर्द्धिक देव, महानुभाव श्रेष्ठ वस्त्रधारी और श्रेष्ठ आभूषण धारण करने वाला देव हैं, राहु के 9 नाम हैं।

श्रंगाटकश्च जटिलः, क्षत्रकः खरकस्तथा।

दुर्धरः सगरो मत्स्यः, कृष्ण सर्पश्च कच्छपः ।।455।।

इत्यस्य नव नामानि, विमानास्त्वस्य पचधा।

कृष्णनील रक्तपीत शुक्ल वर्ण मनोहराः ।।456।। युग्मम्।।

श्रृंगाटक, जटिल, क्षत्रक, खरक, दुर्धर, सगर (लोक प्रकाश सर्ग 20, लोक प्रकाश में सगर नाम है, शास्त्र में मगर है), मत्स्य, कृष्णसर्प और कच्छप ये राहु के नौ नाम हैं। काला, नीला, लाल, पीला, सफेद पंचवर्णी मनोहर विमान हैं।

1. जब राहुदेव आते जाते विकुर्वणा या परिचारणा करते चन्द्र या सूर्य की लेश्या (प्रकाश) को पूर्व से ढ़ंककर कर पश्चिम तरफ जाता है, तब सूर्य या चन्द्र पूर्व में दिखता है और राहु पश्चिम में दिखता है।

2. जब राहुदेव आते जाते क्रियाएं वगैरह करते चन्द्र या सूर्य प्रकाश को दक्षिण से ढ़ंककर उत्तर तरफ जाता है, तब दक्षिण में चन्द्र या सूर्य तथा उत्तर में राहु दिखता है।

3. इसी प्रकार विक्रियादि करते चन्द्र या सूर्य प्रकाश को अग्निकोण से ढ़ंककर वायव्य कोण की तरफ जाता है, तब चन्द्र या सूर्य अग्निकोण में जबकि राहु वायव्य कोण में दिखता है।

4. जब राहु देव जाते आते क्रियाएं आदि करते चन्द्र या सूर्य के प्रकाश को नैऋृत्य कोण से ढ़ंककर ईशान कोण की तरफ जाता है, तब नैऋृत्य में सूर्य-चंद्र एवं ईशानकोण में राहु होता है।

5. जब राहु देव आते जाते क्रियाएं करते चन्द्र सूर्य के प्रकाश को ढ़ंककर स्थिर रहता है, तब मनुष्य लोक में राहु ने चन्द्र या सूर्य को ग्रसित किया ऐसा मनुष्य कहते हैं।

6. जब राहु देव जाते आते क्रियाएं आदि करते चन्द या सूर्य के प्रकाश को ढ़ंककर कर पास से निकलते हैं, तब मनुष्य लोक में चन्द्र या सूर्य ने राहु की कुक्षि भेदी ऐसा मनुष्य कहते हैं।

7. जब राहु देव उपरोक्त क्रियाएं करते चन्द या सूर्य के प्रकाश को ढ़ंक कर वापस फिरता है, तब राहु ने चन्द्र सूर्य का वमन किया, ऐसा मनुष्य लोक के मनुष्य कहते हैं।

8. जब राहु देव उक्त क्रियाएं करते चन्द्र या सूर्य प्रकाश को ढ़ंक कर बीचों बीच स्थिर रहता है, तब राहु ने चन्द्र या सूर्य को बीच में भेदन किया ऐसा मनुष्य लोक में कहते हैं।

9. जब राहु देव चन्द्र या सूर्य के प्रकाश को उक्त क्रियाएं करते उनके प्रकाश को सभी तरफ से ढ़ंकता है, तब राहु ने चन्द्र या सूर्य को सभी तरह से ग्रसित किया ऐसा मनुष्य लोक में मनुष्य कहते हैं। (सूर्य प्रज्ञप्ति सूत्र)

नक्षत्र :- चन्द्र परिवार में नक्षत्रों का भी स्थान है। नक्षत्रों की गणना भिन्न-भिन्न मान्यताओं से है। अभिजित से शुरू होकर श्रवण आदि के क्रम से उत्तराषाढ़ा तक है। अर्थात् प्रथम अभिजित और अन्तिम उत्तराषाढ़ा नक्षत्र है। (चन्द्र सूर्य प्रज्ञप्ति में इस प्रकार कहा है।) जैनागमों में अभिजित नक्षत्र से प्रारंभ होकर उत्तराषाढ़ा का क्रम है, और व्यावहारिक ग्रंथों में अश्विनि से प्रारंभ होना माना है। यह फरक इसलिए है कि अवसर्पिणि-उत्सर्पिणि वगैरह काल का प्रारंभ चन्द्र अभिजित नक्षत्र योग में होता है, इसीलिए अभिजित नक्षत्र प्रथम माना है। नक्षत्रों के स्वयं के 8-8 मंडल है। ये नक्षत्र मंडल चन्द्र के 1-3-6-7-8-10-11-15 इन आठ मंडलों में एकत्रित है। आकाश में दिखते ये नक्षत्र, इन नक्षत्र देवों के विमान हैं। इन विमानों में नक्षत्र अधिपति देव रहते हैं। 28 नक्षत्र देवों के नाम ये हैं-

अभिजित श्रवणं चैव, धनिष्ठा शत तारिका।
पूर्वाभाद्रपदा, सैवोत्तरादिकाथ रेवती ।।499।।
अश्विनी भरणी चैव, कृतिका रोहिणी तथा।
मृगशीर्ष तथा चार्द्रा, पुनर्वसु ततः परम् ।।500।।
पुष्योऽश्लेषा मघा, पूर्वा फाल्गुन्युत्तर फाल्गुनी।
हस्तश्चित्रा तथा स्वातिः, विशाखा चानुराधिका ।।501।।
ज्येष्ठा मूलं तथा पूर्वाषाढ़ा सैवोत्तरापि च।
जिन प्रवचनो पज्ञो नक्षत्राणामयं क्रमः ।।202।। लोकप्रकाश सर्ग 20

1. अभिच (अभिजित) 2. श्रवण 3. धनिष्ठा 4. शतभिषा 5. पूर्वाभाद्रपद 6. उत्तराभाद्रपद 7. रेवती 8. अश्विनी 9. भरणी 10. कृतिका 11. रोहिणी 12. मृगशीर्ष 13. आर्द्रा 14. पुनर्वसु 15. पुष्य 16. अश्लेषा 17. मघा 18. पूर्वा फाल्गुनी 19. उत्तरा फाल्गुनी 20. हस्त 21. चित्रा 22. स्वाति 23. विशाखा 24. अनुराधा 25. ज्येष्ठा 26. मूल 27. पूर्वा षाढ़ा 28. उत्तरा षाढ़ा (जम्बूद्वीप-सूर्यप्रज्ञप्ति)

लौकिक क्रम में पहला अश्विनी भरणी आदि से प्रारंभ माना है, उसके बदले युग की आदि में चन्द्र के साथ पहला अभिजित नक्षत्र का योग होता है। इसी से ऊपर का क्रम बताया है (लोकप्रकाश सर्ग 20)। सप्तशलाकादि स्थानों में कृतिका से क्रम प्रारंभ हुआ है। अभिजित से नक्षत्रों का क्रम माना है परन्तु बाकी के नक्षत्रों की तरह अभिजित नक्षत्र को व्यवहार में क्यों नहीं माना? यह एक स्वाभाविक प्रश्न है? चन्द्र के साथ अभिजित का संयोग बहुत कम समय का होता है, फिर चन्द्र दूसरे नक्षत्र में प्रवेश करता है, अतः अभिजित नक्षत्र व्यवहार में नहीं लिया है (ज्योतिष ग्रंथों में यह विषय वर्णित है)।

''जम्बूद्वीवे दीवे अभिइवज्जेहिं सत्तावीसाए णक्खत्तेहिं संववहारे वट्टई।''

जम्बूद्वीप नामक द्वीप में अभिजित नक्षत्र के सिवाय बाकी के 27 नक्षत्रों के साथ व्यवहार चलता है। इस प्रकार से समवायांग सूत्र 27वें समवाय में कहा है। अभिजित नक्षत्र का उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के चौथे पाये में समावेश होने से उसकी गणना यहां नहीं की है, यह व्यवहार मात्र जम्बूद्वीप में ही चलता है। धातकी खंड आदि में नहीं चलता है।

वेध, सत्ता आदि देखने हेतु उत्तरा षाढ़ा का संयोग अभिजित नक्षत्र के साथ अंतिम पाद की मात्र चार घड़ी जितना ही होता है (लोक प्रकाश सर्ग - 20)

यजुर्वेद के एक मंत्र में 27 नक्षत्रों का गंधर्व कहा है (ठाणं पृष्ठ 139 जैन विश्व भारती प्रकाशन)। इसी प्रकार तैत्तिरीय श्रुति में 27 नक्षत्रों के नाम, देवता, वंदन और लिंग (चिन्ह) भी बताये है वहां उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र का नाम छूट गया है। नक्षत्रों का क्रम इस सूत्र प्रमाण से ही है और देवताओं के नाम भी लगभग एक सरीखे ही आते हैं।

कत्तिय[1], रोहिणि[2], मगसिर[3], अद्दा[4] य पुणव्वसु[5] य पूसो[6] य।

तत्तो वि अस्सलेसा[7], महा[8] य दो फग्गुणीयो[9-10] य ।।1।।

हत्थो[11] चित्ता[12] साइ[13] विसाहा[14] तह य होइ अणुराहा[15]।

जेट्ठा[16] मूलो[17] पुव्वा य असाढ़ा[18], उत्तरा[19] चेव ।।2।।

अभिइ[20] सवण[21] घणिट्ठा[22] सय भिसया[23] दो य होंति भद्दवया[24-25]।

रेवइ[26] अस्सिणी[27] भरणी[28], णेयव्वा आणपुव्वी ये ।।3।। (ठाणांग ठाणा 2 उ. 2)

इस प्रकार कृतिका से प्रारंभ होकर भरणी तक 28 नक्षत्र भी दिये हैं।

आगे 28 नक्षत्रों के स्वामी देव का नाम अभिजित नक्षत्र के अनुक्रम से कहा जाता है-

नक्षत्रों के स्वामी देव :-

ब्रह्मा विष्णुर्वसुश्चैव, वरुणाजाभिवृद्धयः।

पूषाश्वश्च, यमोऽग्निश्च, प्रजापति स्ततः परम् ।।615।।

सोमोरूद्रोदितिश्चैव, बृहस्पतिस्तथा परः।
सर्पो परः पितृनामा, भगोऽर्य माभिधोऽपि च ।।616।।
सूरस्त्वष्टा तथा वायुरिन्द्राग्री एक नायकौ।
मित्रेन्द्र नैर्ऋता आपो विश्व देवा स्त्रयोदश ।।617।।

इस प्रकार ''लोक प्रकाश'' ग्रंथ में नक्षत्रों के स्वामी 28 देवों के नाम दिये है। 1. ब्रह्मा 2. विष्णु 3. वसु 4. वरूण 5. अज 6. अभिवृद्धि 7. पूषा 8. अश्व 9. यम 10. अग्नि 11. प्रजापति 12. सोम 13. रूद्र 14. अदिति 15. बृहस्पति 16. सर्प 17. पितृ 18. भग 19. अर्यमा 20. सविता 21. त्वष्टा 22. वायु 23. इन्द्राग्नि 24. मित्र 25. इन्द्र 26. नैर्ऋत 27. अप् 28. विश्व। इस प्रकार 28 नक्षत्राधिपति देवों के नाम जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति, चन्द्र तथा सूर्य प्रज्ञप्ति में भी दिये है। अग्नि से प्रारंभ करके अनुक्रम से यम तक का क्रम ठाणांग सूत्र के दूसरे ठाणे के तीसरे उद्देशे में है।

दस्त्रों यमोऽनलो धाता चंद्रो रूद्रोऽदितिर्गुरुः।
भुजंगमश्च पितरो भगोऽर्य्यम दिवाकरो ।।239।।
त्वष्टा वायुः शक्रवहनी मित्रः शक्रश्च निर्ऋति।
जलं विश्वे विधिर्विष्णुर्वासवो वरुणस्तथा ।।240।।
अजैक पदहिर्बुध्न्यः पृषेति कथिता बुधैः।
अष्टाविंशति संख्यानां, नक्षणामधीश्वराः ।।241।। (शीघ्र बोध)

काशीनाथ दैवज्ञ विरचितः ''शीघ्रबोध'' प्रकरण दो में ऊपर दिये 28 नक्षत्रों के देवों के नाम अश्विनी के क्रम से दिये हैं।

अभिवृद्धे रहिर्बुघ्न इत्याख्यान्यत्र गीयते।
सोमश्चन्द्रो रविः सूरः इद्दशाख्या परे सुराः ।।618।।

।। अभिजिदादीनां तारा संख्या आकारः रात्रि संख्या मासक्रमश्च ।।

क्रम	नक्षत्र	तारा संख्या	आकार	रात्रि संख्या	मास क्रमश्च		
1	अभिजित्	3	गोशीर्षावली	7		श्रावण	7
2	श्रवण	3	कासार	8			8
3	धनिष्ठा	5	पक्षि पंजर	15	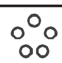	भाद्रपद	1/14
4	शतभिषक्	100	पुष्पमाला	7	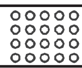		7
5	पूर्वाभाद्रपदा	2	अर्द्ध वापी	8			8
6	उत्तरा भाद्रपदा	2	अर्द्ध वापी	15		आश्विन	1/14
7	रेवती	32	नौका संस्थान	15	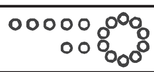		15

8	अश्विनी	3	अश्व स्कंध	15		कार्तिक	1/14
9	भरणी	3	भग संस्थान	15			15
10	कृतिका	6	क्षुरधारा	15		मागसिर	1/14
11	रोहिणी	5	शकटोद्धि	15			15
12	मृगशीर्ष	3	मृगशीर	15		पोष	1/14
13	आर्द्रा	1	रूधिर बिन्दु	8			8
14	पुनर्वसु	5	तुला	7			7
15	पुष्य	3	वर्द्धमानक	15		माह	1/14
16	अश्लेषा	6	पताका	15			15
17	मघा	7	प्राकार	15		फागुण	1/14
18	पूर्वा फाल्गुनी	2	अर्द्ध पल्यंक	15			15
19	उत्तरा फाल्गुनी	2	अर्द्ध पल्यंक	15		चैत्र	1/14
20	हस्त	5	हस्त तल	15			15
21	चित्रा	1	मुख मंडन सुवर्ण पुष्प	15		वैसाख	1/14
22	स्वाति	1	कीलक	15			15
23	विशाखा	5	पशुदामन	15		ज्येष्ठ	1/14
24.	अनुराधा	4	एकावली	7			7
25.	ज्येष्ठा	3	गजदंत	8			8
26.	मूल	11	वृश्चिक पुच्छ	15		आषाढ़	1/14
27.	पूर्वाषाढ़ा	4	गज विक्रम (पाद)	15			15
28.	उत्तराषाढ़ा	4	सिंह नीषदन	15		श्रावण	1/14

(चित्र सं. 121)

अभिवृद्धि का दूसरा नाम अहिर्बुध्न भी कहा है। सोम को चन्द्र तथा सूर को रवि कहा है। इस प्रकार लोक प्रकाश के बीसवें सर्ग की 618वीं गाथा में कहा है।

नक्षत्रों के तारा :-

तिग[1] तिग[2] पंचग[3] सय[4] दुग[5] दुग[6] बत्तिस[7] तिग[8] तह तिगं[9] च।

छ[10] प्पंचग[11] तिग[12] इक्कग[13] पंचग[14] तिग[15] छक्कंग[16] चे ।।1।।

सत्तग[17] दुग[18] दुग[19] पंचग[20] इक्कि[21] ककग[22] पंच[23] चउ[24] तिगं[25] चेव।

इक्कारसग[26] चउक्कं[27] चउक्कगं[28] चेव तारग्गं ।।2।। (जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र)

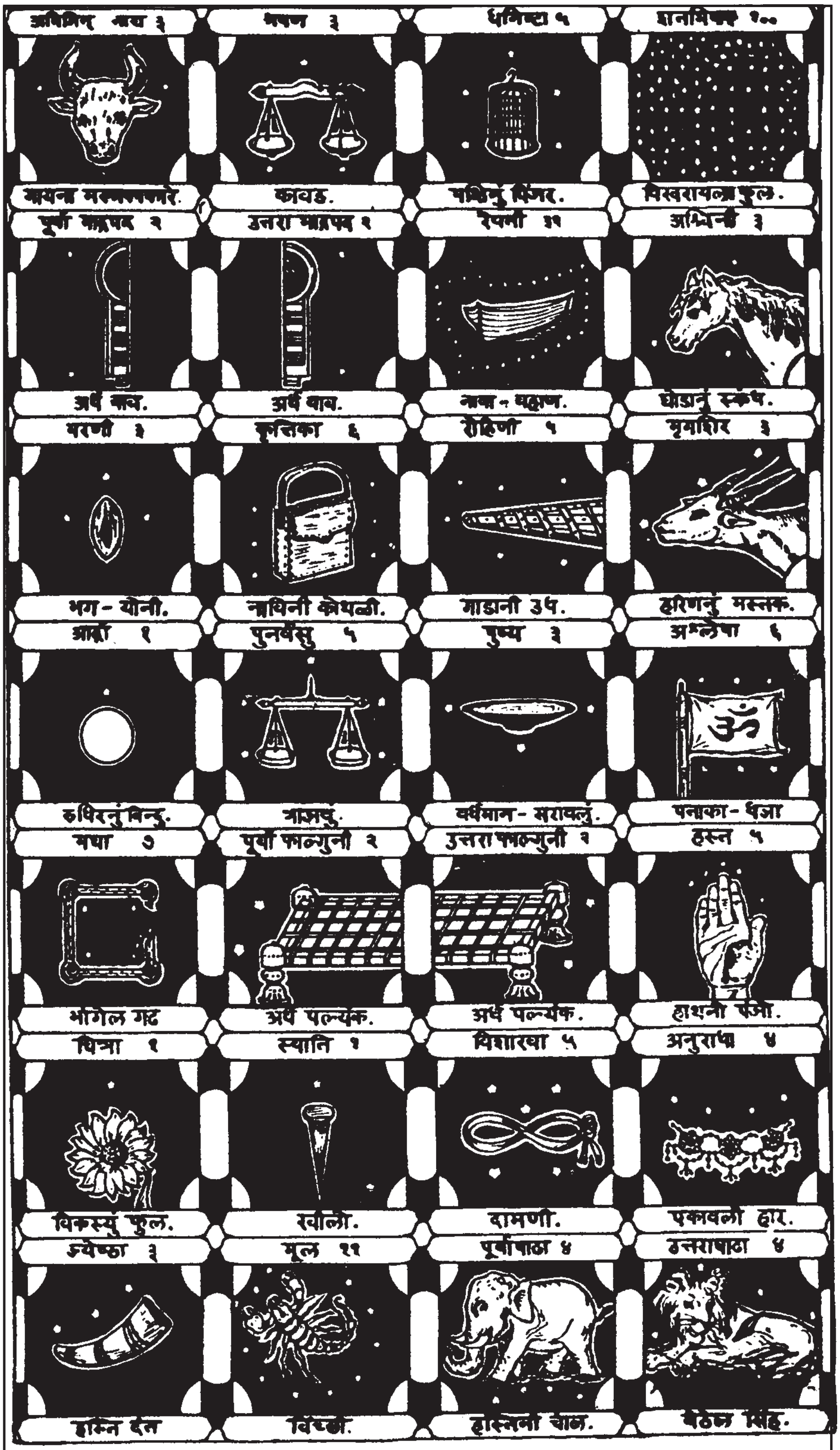

(चित्र सं. 122)-नक्षत्रों के तारा आकार सहित

1. तीन 2. तीन 3. पांच 4. सौ 5. दो 6. दो 7. बत्तीस 8. तीन 9. तीन 10 6 11. पांच 12. तीन 13. एक 14. पांच 15. तीन 16. छह 17. सात 18. दो 19. दो 20. पांच 21. एक 22. एक 23. पांच 24. चार 25. तीन 26. ग्यारह 27. चार 28. चार तारा हैं। (चार्ट में देखें)।

इस प्रकार अभिजित से उत्तराषाढ़ा तक 28 नक्षत्रों के अनुक्रम से उपरोक्त तारा हैं। ये जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति के आधार से कहे हैं। इसी तरह जिस नक्षत्र में जितने हैं, वे समवायांग सूत्र में उतने उतने समवायों में भी कहे हैं, ठाणांग सूत्र में भी तारा बताये हैं। समवायांग में 98 समवाय में रेवती से प्रारंभ करके ज्येष्ठा तक 19 नक्षत्रों के 98 तारा बताये हैं, जबकि जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति के आधार से 97 तारा होते हैं।

नक्षत्रों के संस्थान :-

गोसीसावललि[1], काहार[2] सउणि[3] पुप्फोवयार[4] वावीय[5-6]।
णावा[7] आसक खंधग[8] भग[9], छुरधरएय[10] सयहद्धी[11] ।।1।।
मिगसीसावलि[12] रूहिर बिन्दु[13] तुल्ल[14] वध्धमाणग[15] पडागा[16]।
पागारे[17] पलिअंक[18-19] हत्थे[20] मुह फुल्लये[21] चेव ।।2।।
खीलग[22] दामणि[23] एगावलीअ[24] गयदंत[25] बिरछुअलेय[26]।
गयविक्कमे[27] अ ततो सीहनिसीहि[28] अ संठाणा ।।3।। (जंबूद्वीप, चन्द्र सूर्य प्र. सूत्र)

1. गोशीर्षावली (गाय के मस्तक जैसा आकार) 2. कावड़ 3. शकुनि पिंजर (तोते का पिंजरा) 4. पुष्पोचार (बिखराये फूल) 5-6 आधी-आधी वाव (दोनों मिलकर एक वाव होती है अतः मूल में वावी शब्द कहा है) 7. नाव (नौका) 8. घोड़े के स्कंध (खंभा) 9. भग (स्त्री का मर्म स्थान) 10. क्षुरधारा 11. शकटोद्धि (गाड़ी के ऊध जैसा) 12. मृग शीर्षावली (मृग के मुख) 13. लोहिबिंदु 14. तुला (तराजू) 15. वर्द्धमानक (जुड़े हुए राम पात्र जैसे) 16. पताका 17. प्राकार (गढ़ की दीवाल गिरी हो जैसे) 18-19 पर्यंक (आधे-आधे पलंग जैसा दो भाग मिलकर एक पलंग बने) 20. हस्त (हाथ का पंजा जैसा) 21. मुख पुष्प (मुख मंडन-स्वर्ण पुष्प या खिले पुष्प जैसा) 22. खूंटी जैसा 23. दामणी (पशु रज्जु-घोड़े की दामणी जैसा) 24. एकावली (एकावली हार जैसा) 25. गजदंत 26. बिच्छू की पूंछ जैसा 27. गज विक्रम (हाथी की चाल जैसा, कदम जैसा) 28. सिंह निषीदन (बैठे सिंह जैसे) ये आकार हैं।

नक्षत्रों के द्वार :- अभिजित, श्रवण, घनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वा-उत्तरा भाद्रपद और रेवती ये 7 नक्षत्र पूर्व द्वार वाले हैं। अश्विनी, भरणी, कृतिका, रोहिणी, मृगसर, आर्द्रा और पुनर्वसु ये सात नक्षत्र दक्षिण द्वार वाले हैं। पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वा-उत्तरा फाल्गुनी, हस्त, चित्रा ये 7 नक्षत्र पश्चिम द्वार वाले हैं। स्वाति, विशाखा, अनुराधा ज्येष्ठा, मूल और पूर्वा-उत्तराषाढ़ा ये सात नक्षत्र उत्तर द्वार वाले हैं। यह वर्णन चन्द्र-सूर्य प्रज्ञप्ति में है, तथा समवायांग के सातवें समवाय में तथा ठाणांग सूत्र में भी इस प्रकार का वर्णन है।

नक्षत्रों के 8 मंडल हैं, जम्बूद्वीप के 180 योजन क्षेत्र को अवगाहते हुए 2 नक्षत्र मंडल हैं, और लवण समुद्र के 330 योजन क्षेत्र को अवगाहते 6 नक्षत्र मंडल हैं। इस प्रकार दोनों में 8 नक्षत्र मंडल है। अन्दर से सबसे बाहर के नक्षत्र मंडल की 510 योजन की दूरी है। यह नक्षत्र मंडल 1 कोस लम्बा चौड़ा और तीन गुणी परिधि वाला तथा आधा कोस जाड़ा है। एक से दूसरे नक्षत्र मंडल का अंतर 2 योजन है (जम्बूद्वीप प्र.)

तारा :- चन्द्र सूर्य के नीचे समान और ऊपर छोटे सरीखे तारे हैं। इन देवों ने पूर्व भव में जिस प्रकार उत्कृष्ट तप, नियम, ब्रह्मचर्य आदि का पालन किया है, उस प्रकार ऋद्धि इनको प्राप्त हुई है। एक तारा से दूसरे तारा के बीच व्याघाती निर्व्याघाती यों दो प्रकार का अंतर है। निर्व्याघाती अंतर जघन्य 500 धनुष और उत्कृष्ट दो कोस का है। व्याघाती अंतर जघन्य 266 योजन उत्कृष्ट 12242 योजन है। इस रत्नप्रभा पृथ्वी के अति सम और रमणीय भू भाग से 900-900 योजन ऊपर अबाध रूप से ऊपर के तारे परिभ्रमण करते हैं। (ठाणांग ठाणा-9) (जंबूद्वीप-चन्द्र सूर्या प्रज्ञप्ति तथा जीवाभिगम सूत्र)

शुक्र, बुध, गुरू, अंगारक मंगल, शनि और केतु ये 6 तारा ग्रह यानि तारा के आकार कहे हैं। (ठाणांग ठाणा 6)।

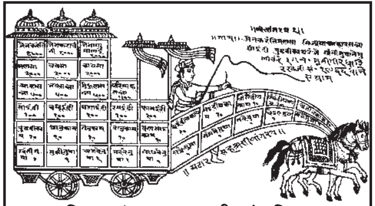
(चित्र सं. 123)-शीलांगादि रथ

(चित्र सं. 124)-शीलांगादि रथ

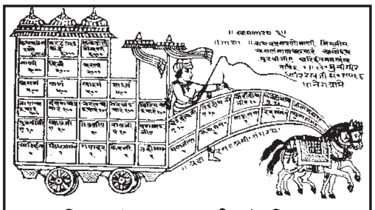
(चित्र सं. 125)-शीलांगादि रथ

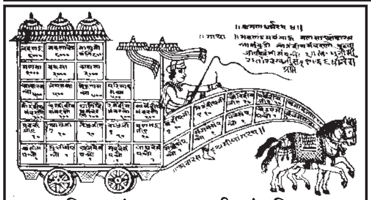
(चित्र सं. 126)-शीलांगादि रथ

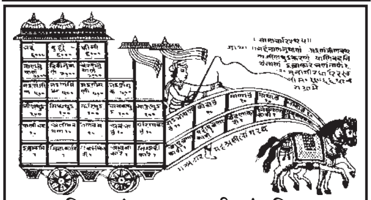
(चित्र सं. 127)-शीलांगादि रथ

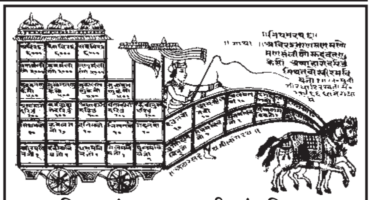
(चित्र सं. 128)-शीलांगादि रथ

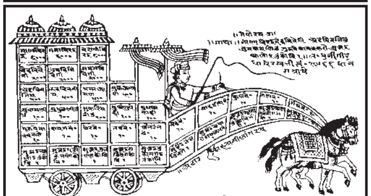
(चित्र सं. 129)-शीलांगादि रथ

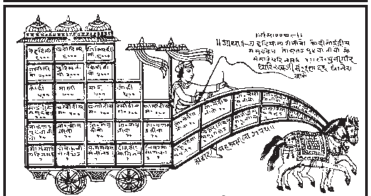
(चित्र सं. 130)-शीलांगादि रथ

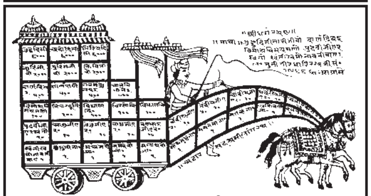
(चित्र सं. 131)-शीलांगादि रथ

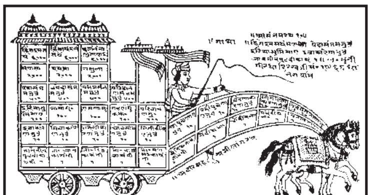
(चित्र सं. 132)-शीलांगादि रथ

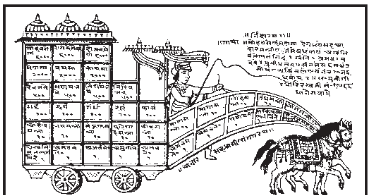
(चित्र सं. 133)-शीलांगादि रथ

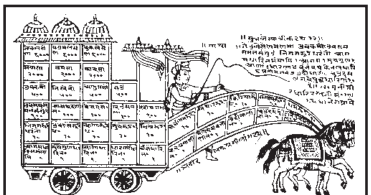
(चित्र सं. 134)-शीलांगादि रथ

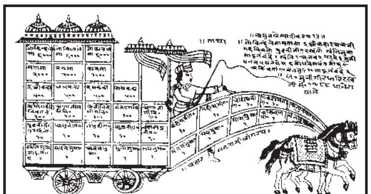
(चित्र सं. 135)-शीलांगादि रथ

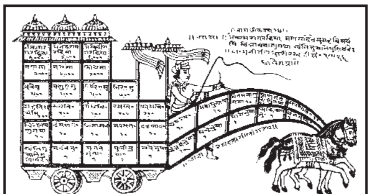
(चित्र सं. 136)-शीलांगादि रथ

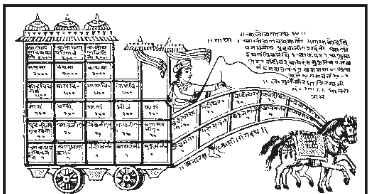
(चित्र सं. 137)-शीलांगादि रथ

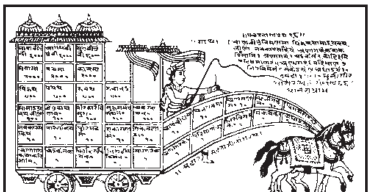
(चित्र सं. 138)-शीलांगादि रथ

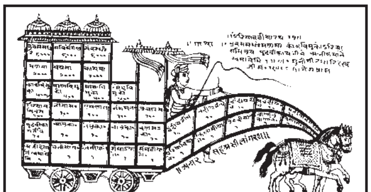
(चित्र सं. 139)-शीलांगादि रथ

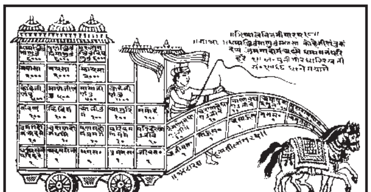
(चित्र सं. 140)-शीलांगादि रथ

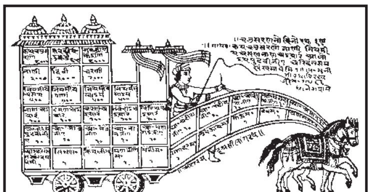
(चित्र सं. 141)-शीलांगादि रथ

(चित्र सं. 142)-शीलांगादि रथ

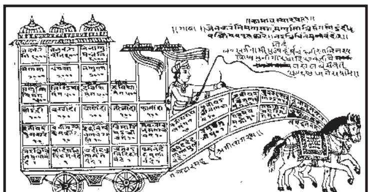
(चित्र सं. 143)-शीलांगादि रथ

शीलांगादि इक्कीस रथ

स्वाध्याय का महत्वपूर्ण स्थान जैनागमों में वर्णित है। स्वाध्याय में अति उपयोगी ऐसे पांचवे श्रमण सूत्र में ''अट्ठारस सहस्त्र सीलांग रथ धारा'' अठारह हजार शील के (आचार-चारित्र पालन के) रथ को धारण करने वाले महामुनि होते हैं। शीलांग रथ बहुत पुस्तकों में प्रकाशित हैं, जिन्हें विचारवंत आचारवंत आत्माएं समझकर उनका स्वाध्याय करते है। इनका स्वाध्याय करते करते कितना समय व्यतीत हो जाता है, इसका भी ख्याल नहीं रहता, इस प्रकार यह स्वाध्याय हेतु बहुत महत्व रखता है।

शीलांग रथ जैसे बहुत से अन्य रथ शास्त्रज्ञ, गीतार्थ बहुश्रुत मनिषियों ने भी बनाये हैं, हालांकि ये रथ बनाना सरल कार्य नहीं है। इनके लिए शास्त्रों का विशाल अध्ययन और वह भी गुरुगम से होना आवश्यक होता है। सुज्ञ जन इनका पठन पाठन कर स्वाध्याय कर उपयोग कर अपने जीवन को धन्य बनाएं यहीं शुभाकांक्षा। (संपादक)

-:जैन मान्यतानुसार लोक का वर्णन:-

अनंत आकाश के मध्य भाग में हमारा लोक है (गणितानुयोग प्रस्तावना)। इसका आकार नीचे पल्यंक जैसा, मध्य में वज्र समान और ऊपर खड़े मृदंग समान है। यह लोक नीचे से चौड़ा (विस्तार मय) मध्य में संकड़ा और ऊपर में ऊर्ध्व मुंह वाले मृदंग के समान है। ये तीनों मिलकर पुरूष जैसा लोक का आकार बनता है। जैसे कोई पुरूष दोनों पांव चौड़े करके, दोनों हाथ कमर पर रखकर खड़ा हो इस प्रकार का लोक का आकार बनता है। तिलोय पण्णत्ती अ. 1 गाथा 137-38 में तथा ''उब्भिय दलेक्क मुखद्ध संचय सण्णिहो हवे लोगो'' इस प्रकार त्रिलोक सार की छठी गाथा में कहा है। कमर के नीचे के भाग को अधोलोक, ऊपर के स्थान को ऊर्ध्वलोक और कमर के स्थान को मध्य लोक कहते हैं। इस तीन विभाग वाले लोक को लोकाकाश कहते हैं। क्योंकि इसी में ही जीव-पुद्‌गल आदि चेतन-अचेतन द्रव्य मिल सकते हैं। लोकाकाश के चारों तरफ रहे हुए अनंत आकाश को अलोकाकाश कहते हैं, क्योंकि वहां सिर्फ आकाश सिवाय अन्य कोई चेतन या अचेतन द्रव्य नहीं मिलता।

सामान्यतया लोक स्वरूप

सामान्यतया लोकाकाश 14 रज्जू ऊंचा है ''चौदस रज्जू दयो लोगो''-त्रिलोक सार गाथा 6, ''जग सेढ़ि सत्त भागो रज्जू'' त्रिलोक सार गाथा-7, ''चउदस्स रज्जू लोओ बुद्धिकओ होई सत्तराजूधणो'' पांचवां कर्म ग्रंथ गा. 97, ''सयंभु परिमंताओ अवरंतो जाव रज्जू माइओ-'' प्रवचन सारोद्धार 143-31 स्वयंभू रमण द्वीप के पूर्व भाग से शुरू करके पश्चिम भाग तक जगत श्रेणि के सातवें भाग बराबर एक रज्जू होता है। एक रज्जू में असंख्याता योजन होते हैं। अधोलोक सबसे नीचे सात रज्जू विस्तार का है, जो अनुक्रम से घटता हुआ कमर के (मध्य) भाग में एक रज्जू चौड़ा है। इसके ऊपर अनुक्रम से बढ़ता हुआ दोनों हाथ की कोहनी के स्थान पर पांच रज्जू का है, फिर अनुक्रम से घटता हुआ मस्तक वाले भाग के अग्र भाग पर एक रज्जू का है। यह पूरा लोक सभी तरफ से घनोदधि, घनवात और तनवात इन तीन से वलयाकार लिपटा हुआ है। पहला वलय बहुत मजबूत है जिसको घनोदधि कहते हैं। दूसरा वलय तीसरे की अपेक्षा मजबूत है जो घनवात कहलाता है।

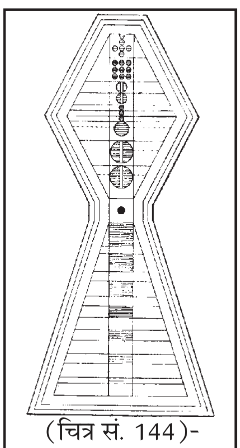

(चित्र सं. 144)-
14 रज्जूमय तीन लोक

तीसरा वलय प्रथम दो से बहुत सूक्ष्म या पतला है, इससे इसे तनवात कहते हैं। दिगंबर शास्त्रों में घनोदधि वात का वर्ण गोमूत्रिका समान, घनवात का मूंग समान, तनुवात का अव्यक्त वर्ण कहा है।

2. अधोलोक :- कमर के स्थान पर झालर के आकार वाले मध्यलोक (तिरछे लोक) के नीचे धम्मा, वंशा, शीला, अंजना, रिट्ठा (अरिष्टा), मघा, माघवती नामक सात पृथ्वियां है। रत्नप्रभादि इनके गोत्र हैं। इनमें से पहली पृथ्वी के तीन भाग हैं 1. खर भाग 2. पंक भाग 3. अप्प बहुल भाग। खर भाग 16 हजार योजन जाड़ा, पंक भाग 84 हजार योजन जाड़ा अप्प बहुल भाग 80 हजार योजन जाड़ा है। इस प्रकार रत्नप्रभा पृथ्वी की जाडाई 1 लाख 80 हजार योजन है। इन तीन विभाग वाली रत्न प्रभा पृथ्वी के नीचे असंख्यात हजार योजन के अंतरे के (अंतराल के) बाद दूसरी शर्करा प्रभा पृथ्वी है। यह 1 लाख 32 हजार योजन जाड़ी है। इसके नीचे भी असंख्यात हजार योजन के अंतरे के बाद तीसरी बालुका पृथ्वी है जो 1 लाख 28 हजार योजन जाड़ी है। उससे असंख्यात हजार योजन नीचे चौथी पंक प्रभा पृथ्वी 1 लाख 24 हजार योजन जाड़ी है। इस पृथ्वी का तलिया मध्य लोक से तीन रज्जू नीचे है। इससे असंख्यात हजार योजन नीचे पांचवी घूम प्रभा पृथ्वी एक लाख बीस हजार योजन जाड़ी है। इसका तलिया मध्य लोक के 4 रज्जू नीचे हैं। पांचवी से असंख्यात हजार योजन नीचे जाने पर छठी तमः प्रभा पृथ्वी 1 लाख 16 हजार योजन जाडी है इसका तलिया मध्य भाग से पांच रज्जू नीचा है। छठ्ठी पृथ्वी से असंख्यात हजार योजन नीचे जाने पर सातवीं तमःतमा (महातमाः) पृथ्वी है, जो 1 लाख आठ हजार योजन जाड़ी है इसके तलिया का भाग मध्य लोक से 6 राजु नीचा है। (दिगम्बर परम्परा में शर्करा आदि की जाडाई अनुक्रम से 48 हजार, 32 हजार, 28 हजार, 24 हजार, 20 हजार, 16 हजार, 8 हजार योजन मानी है, तिलोय पण्णत्ती में पाठांतर देकर ऊपर की जाड़ाई का समावेश है)।

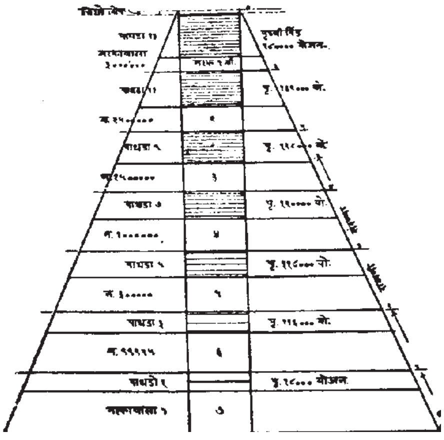

(चित्र सं. 145)- अधोलोक

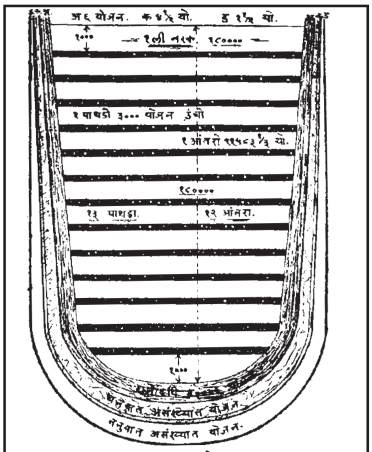

(चित्र सं. 146)- घनोदधि (नरक)

रत्नप्रभा पृथ्वी के 1 लाख 80 हजार योजन क्षेत्र में से ऊपर और नीचे के एक-एक हजार योजन जितने भाग को छोड़कर मध्य क्षेत्र में (बीच के क्षेत्र में) ऊपर भवनपति देवों के 7 करोड़ 72 लाख भवन हैं तथा नीचे नारकीयों के 30 लाख नरकावासा है। परन्तु त्रिलोक प्रज्ञप्ति और तत्त्वार्थवार्तिक आदि दिगंबर ग्रंथों में रत्नप्रभा के तीन भागों में से पहले भाग के 1000-1000 योजन क्षेत्र छोड़कर बीच के 14 हजार योजन क्षेत्र में किन्नर आदि सात व्यंतर देवों के तथा नागकुमारादि नव भवनपति देवों के निवास हैं, रत्नप्रभा के दूसरे भाग में असुर कुमार भवनपति और राक्षस व्यंतरपति के आवास हैं, तीसरे भाग में नारकों के आवास है (तिलोय पण्णत्ती अ. 3 गा. 7 और तत्त्वार्थ वार्त्तिक अ. 3 सू. 1)

दूसरी पृथ्वी के ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन भूमि को छोड़कर बीच के भाग में नारकों के 25 लाख नरकावास है। इसी प्रकार तीसरी से सातवीं पृथ्वी तक की इनकी जाडाई के ऊपर नीचे के एक-एक हजार योजन पृथ्वी का भाग कम करके बीच के भागों में क्रमशः 15 लाख, 10 लाख, 3 लाख, एक लाख में 5 कम और पांच नरकावासा है। ये नरकावासा पाथड़ों में विभक्त है। पहली आदि पृथ्वी में अनुक्रम से 13,11,9,7,5,3 और एक पाथड़ा है। इस प्रकार सात पृथ्वियों के नरकावासा के 49 पाथड़ा है। इन 49 पाथड़ाओं में सात पृथ्वियों के 84 लाख नरकावासा है। इनमें असंख्यात नारकी के जीव हमेशा रहते हैं, जो अनेक प्रकार के क्षेत्रजन्य, परस्पर उत्पन्न किये हुए शारीरिक और मानसिक दुःख भोगते रहते हैं। इन नरकों में क्रूर कर्म करने वाले पापी मनुष्य और पशु पक्षी तिर्यंच आदि नारक रूप में उत्पन्न होते हैं। पहली पृथ्वी में कम से कम दस हजार वर्ष के आयुष्य से लेकर 7वीं नरक पृथ्वी में 33 सागरोपम तक अलग-अलग दुःख भोगते रहते हैं। इनकी अकाल मृत्यु नहीं होती। इनका शरीर वैक्रिय और औपपातिक होता है। जन्म लेने के अन्तर्मुहुर्त्त में ही इनका पूर्ण (पूरा) शरीर बन जाता है। उत्पन्न होते समय पांव ऊपर और माथा (सिर) नीचे रखकर नीचे नरक भूमि पर पड़ते हैं। सातवीं पृथ्वी के नीचे एक राजू जाडा और सात राजू विस्तार वाला क्षेत्र है, जिसमें सिर्फ एकेन्द्रिय जीव ही रहते हैं।

3. मध्य (तिरछा) लोक :- तिरछे लोक का आकार झालर या चूड़ी के समान गोल है। इसके खास मध्य भाग में एक लाख योजन विस्तार का जम्बूद्वीप है। इसको चारों तरफ से घेरे हुए 2 लाख योजन के विस्तार वाला लवण समुद्र है। इसको चारों तरफ से घेरकर चार लाख योजन के विस्तार वाला धातकी खंड द्वीप है। इसे चारों तरफ से घेरे हुए 8 लाख योजन का कालोदधि समुद्र है, इसे चारों ओर से घेरकर 16 लाख योजन का विस्तार वाला पुष्कर द्वीप है। इस पुष्कर द्वीप के बराबर मध्य भाग में गोलाकार मानुषोत्तर पर्वत है। इस पर्वत के आगे के पुष्करार्द्ध द्वीप में तथा इसके आगे के द्वीप समुद्रों में वैक्रिय लब्धिवान या चारण मुनि के सिवाय अन्य मनुष्य नहीं जा सकते हैं। दिगंबर मान्यता से ऋद्धिवंत पुरूष भी नहीं जा सकते हैं।

पुष्कर द्वीप को घेरकर इससे दुगुने विस्तार का पुष्करोद समुद्र है। इसके बाद इसे घेरकर दुगुने-दुगुने विस्तार के वरूणवर द्वीप, वरूणवर समुद्र, क्षीरवर द्वीप, क्षीरोद समुद्र, घृतवर द्वीप, घृतवर समुद्र, क्षोदवर द्वीप, क्षोदवर समुद्र, नंदीश्वर द्वीप, नंदीश्वर समुद्र आदि नाम वाले असंख्यात द्वीप और समुद्र हैं। सबसे अन्त में असंख्यात योजन विस्तार वाला स्वयंभूरमण समुद्र है।

असंख्यात द्वीप-समुद्रों वाले मध्य लोक के मध्य भाग में एक लाख योजन के विस्तार वाला जम्बूद्वीप है। इसके भी मध्य भाग में मूल में 10 हजार योजन विस्तार का और एक लाख योजन ऊंचा मेरू पर्वत है। इसके उत्तर दिशा में रहे उत्तर कुरू में एक अनादि-निधन पृथ्वी का बना जम्बू वृक्ष है। इसके कारण इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप है। हिमवंत, महाहिमवंत, निषध, नील, रूक्मी और शिखरी ये 6 पूर्व से पश्चिम तक लम्बे और इस द्वीप के विभाग करने वाले वर्षधर पर्वत है। इन वर्षधर पर्वतों से विभाग होने के कारण भरत, हेमवत, हरि, विदेह, रम्यक्, हैरण्यवत् और ऐरवत ये सात विभाग होते हैं। भरतादि क्षेत्रों का क्रम दक्षिण तरफ से गिना जाता है। इन क्षेत्रों में से विदेह क्षेत्र के मध्य भाग में मेरू पर्वत है, इनके दक्षिण तरफ के भाग में भरत आदि तीन क्षेत्र हैं, और उत्तर तरफ के भाग में रम्यक् आदि तीन क्षेत्र हैं।

4. कर्मभूमियां और अकर्मभूमियां :- उपरोक्त सात क्षेत्रों में से भरत, ऐरवत और (देवकुरू-उत्तर कुरू क्षेत्र के सिवाय के) विदेह क्षेत्र को कर्मभूमि कहते हैं। इन क्षेत्रों के मनुष्य असि, मषि, कृषि वगैरह कर्मों (व्यापारों) से अपनी आजीविका चलाते हैं। इन क्षेत्रों के मनुष्य-तिर्यंच अपने अपने पुण्य पाप के प्रमाण से नरक, तिर्यंच आदि चारों गतियों में उत्पन्न होते हैं। तथा इन क्षेत्रों के मनुष्य पुरूषार्थ से कर्म क्षय करके मोक्ष प्राप्त करते हैं। इन कर्मभूमि के सिवाय के बाकी के क्षेत्र अकर्मभूमि या भोग भूमि कहलाते हैं। उनका असि, मषि आदि के बदले स्वाभाविक प्राप्त कल्पवृक्षों से जीवन निर्वाह होता है। उनकी अकाल मृत्यु नहीं होती, परन्तु हमेशा स्वस्थ रहकर आयुष्यपूर्ण हो तब तक प्राप्त दिव्य भोग भोगते रहते हैं।

5. छप्पन अन्तर्द्वीपा :- हिमवंत पर्वत के लवण समुद्र में निकले हुए भाग की चारों विदिशाओं में (कोणों में) तीन सौ-तीन सौ योजन लवण समुद्र में जाने पर चार अन्तरद्वीप है। इसी प्रकार लवण समुद्र में चार सौ, पांच सौ, छः सौ, सात सौ, आठ सौ और नौ सौ योजन आगे जाने पर चारों कोणों में पर्वत के भाग में चार-चार अन्तर्द्वीप हैं। यों चुल्ल हिमवंत पर्वत के 28 अन्तरद्वीप हैं। इसी प्रकार छठे शिखरी पर्वत के लवण समुद्र में आये भाग में इसी तरह से 28 अन्तरद्वीप हैं। दोनों के योग करने से 56 अन्तरद्वीप होते हैं। दिगंबर परम्परा में 96 अन्तरद्वीप कहे हैं। (जिज्ञासु सज्जन तिलोय पण्णत्ती अ. 4 गाथा 2478-90 तथा तत्त्वार्थ वार्त्तिक अ. 3 सूत्र 37 की टीका आदि देखें) इन द्वीपों में एकोरूक आदि बहुत ही अलग अलग आकृतियों के मनुष्य रहते हैं। वे कल्पवृक्षों के फल फूलों से जीवन चलाते हैं। स्त्री पुरुष युगल रूप में उत्पन्न होते हैं, साथ ही रहते हैं, उनके मरण के कुछ दिनों पूर्व ही उनके एक युगल संतान उत्पन्न होती है।

पूर्व में 6 वर्षधर पर्वत कहे हैं, उनमें क्रमशः पद्म, महापद्म, तिगिच्छ, केसरी, महापुंडरीक और पुंडरीक नाम के एक-एक द्रह है। इन द्रहों के मध्य में पद्म (कमल) हैं (इसी पुस्तक के पृष्ठ क्रमांक 8 पर 20वें बोले द्रह संख्या तथा पृष्ठ संख्या 33 पर चुल्ल हिमवंत वर्षधर पर्वत का वर्णन देखें।

चुल्ल हिमवंत पर्वत के पद्मद्रह के पूर्व भाग से गंगा महानदी निकलती है। यह पर्वत से गिरकर नीचे भरत क्षेत्र में बहती हुई पूर्वमुखी बनकर लवण समुद्र में गिरती है (मिलती है)। इसी पद्मद्रह के पश्चिम दिशा भाग में से सिंधु महानदी निकलकर भरत क्षेत्र के दक्षिण भाग में बहती हुई पश्चिमाभिमुखी बनकर पश्चिम लवण समुद्र में मिलती है। इसी द्रह के उत्तर भाग से रोहितांसा नदी निकलती है, जो हिमवंत क्षेत्र में बहती है। अंतिम शिखरी पर्वत पर रहे पुंडरीक द्रह के पूर्व भाग से रक्ता और पश्चिम भाग से रक्तावती (रक्तोदा) नदी निकलती है, जो ऐरवत क्षेत्र में अनुक्रम से पूर्व-पश्चिम समुद्र में मिलती है। इसी पुंडरीक द्रह के दक्षिण भाग से सुवर्ण कूला नदी निकलती है जो हैरण्यवत क्षेत्र में बहती है। बाकी के मध्य में रहे वर्षधर पर्वतों के द्रहों में से दो-दो नदियां निकलती है, जो अपने अपने क्षेत्रों में बहती हुई पूर्व और पश्चिम के समुद्र में जाकर मिलती है। इन मुख्य महानदियों में अन्य हज़ारों नदियां भी आकर मिलती हैं।

विदेह क्षेत्र में मेरू पर्वत के ईशान आदि चारों कोणों में अनुक्रम से गंधमादन, माल्यवंत, सौमनस और विद्युत्प्रभ ये चार गजदंत पर्वत है। इनसे विभाग होने के कारण मेरू के दक्षिण तरफ के भाग को देव कुरू, उत्तर तरफ के भाग को उत्तर कुरू कहते हैं। ये दोनों भोग भूमियां है। मेरू के पूर्व तरफ के भाग को पूर्वविदेह और

पश्चिम तरफ के भाग को पश्चिम विदेह कहते हैं। इन दोनों स्थानों के मध्य में से सीता-सीतोदा नदियां बहने के कारण इनके दो-दो खंड हो जाते हैं। इन चारों खंडों में कर्मभूमि है। इन्हीं में वर्तमान समय में सीमंधर आदि तीर्थंकर है, तीर्थंकर हमेशा विहार करते एवं धर्मोपदेश देते, विराजते हैं। और अभी भी वहां की पुरुषार्थी आत्माएं कर्म क्षय कर मोक्ष जाती हैं।

6. ज्योतिषी लोक :- जम्बूद्वीप की समतल भूमि से 790 योजन की ऊंचाई से प्रारंभ होकर 900 योजन तक की ऊंचाई तक ज्योतिषी लोक है। इस 110 योजन विस्तार में चंद्र, सूर्य, ग्रह, नक्षत्र और तारा ये पांच जाति के ज्योतिषी देवों के विमान हैं। ये सभी विमान ज्योति अथवा प्रकाश स्वभाव वाले होने से इन्हे ज्योतिषी कहते हैं। इनमें रहने वाले ज्योतिषी देवों के निवास के कारण इस क्षेत्र को ज्योतिषी लोक कहते हैं। तिरछे रूप से यह ज्योतिषी लोक स्वयंभूरमण समुद्र तक फैला हुआ है। इनमें सर्वप्रथम 790 योजन की ऊंचाई पर ताराओं के विमान है, इनसे 10 योजन की ऊंचाई पर सूर्य का विमान है, सूर्य से 80 योजन ऊपर चन्द्र विमान है, चन्द्र से 4 योजन ऊपर नक्षत्र है, नक्षत्रों से 4 योजन ऊपर बुध का विमान है, उससे तीन योजन ऊपर शुक्र का विमान है, शुक्र से 3 योजन ऊपर गुरू (बृहस्पति) का विमान है। उससे तीन योजन ऊपर मंगल का विमान है। मंगल से तीन योजन ऊपर शनि का विमान है। इस प्रकार ज्योतिषी विमान समुदाय 110 योजन क्षेत्र (790 से 900 यो.) में है।

तिरछे लोक में तीसरे द्वीप पुष्कर द्वीप के मध्य में मानुषोत्तर पर्वत है। यहां तक का क्षेत्र मनुष्य लोक कहलाता है। इस मनुष्य लोक के अन्दर सभी ज्योतिषी विमान मेरू की प्रदक्षिणा करते हैं, हमेशा भ्रमण करते रहते हैं, यहां सूर्य के उदय-अस्त से दिन-रात का व्यवहार होता है। मनुष्य लोक के बाहर से प्रारंभ होकर स्वयंभू रमण समुद्र तक के असंख्यात योजन विस्तार वाले क्षेत्र में असंख्याता ज्योतिषी विमान है, परन्तु वे घूमते नहीं है। हमेशा अवस्थित रहते हैं। जम्बूद्वीप के मेरू पर्वत के चारों तरफ 1121 योजन तक ज्योतिषी मंडल नहीं है। लोकांत में भी इतने ही योजन छोड़कर ज्योतिषी मंडल है, इसके मध्य में यथा संभव अंतराल सहित फेले हुए हैं।

जैन मान्यतानुसार जम्बूद्वीप में दो सूर्य-दो चंद्र है। एक सूर्य मेरू पर्वत की पूरी प्रदक्षिणा दो दिनों (दिन-रात) में करता है। यह परिभ्रमण का क्षेत्र जम्बूद्वीप में 180 योजन और लवण समुद्र में 330 योजन है। सूर्य के भ्रमण के 184 मंडल है, एक मंडल से दूसरे मंडल के बीच का अन्तर दो योजन है, इस प्रकार पहले मंडल से अन्तिम मंडल तक के भ्रमण में 366 दिन लगते हैं। सौर मास प्रमाण से एक वर्ष में इतने ही दिन होते हैं। चन्द्र के परिभ्रमण के मात्र 15 मंडल है। चन्द्र को भी मेरू की प्रदक्षिणा में दो दिन-रात से कुछ अधिक समय लगता है। चन्द्र की गति सूर्य से धीमी है, इसलिए भ्रमण में सूर्य से चन्द्र को अधिक समय लगता है। इसी कारण से चन्द्र के उदय में सूर्य की अपेक्षा आगे-पीछे पणा दिखता है। एक चन्द्र स्वयं के मंडलों में (15 मंडलों में) $14\frac{1}{4} + \frac{1}{124}$ मंडल ही चलता है, इस कारण चन्द्र मास प्रमाण से वर्ष में 354 दिवस होते हैं।

जैन मान्यतानुसार लवण समुद्र में 4 सूर्य 4 चन्द्र है। धातकी खंड में 12 सूर्य 12 चंद्र है। कालोदधि समुद्र में 42 सूर्य 42 चंद्र है और पुष्करार्द्ध द्वीप में 72 सूर्य और 72 चंद्र है। पुष्करार्द्ध द्वीप के पीछे वाले आधे भाग में भी 72 सूर्य 72 चन्द्र है। इसके बाद आगे आगे स्वयंभू रमण समुद्र तक सूर्य और चन्द्र की संख्या उत्तरोत्तर पीछे के द्वीप या समुद्र से तिगुनी तथा पीछे के सभी द्वीप समुद्रों की संख्या को भी जोड़कर जितनी बने उतनी आगे-आगे होती जाती है।

एक चन्द्र परिवार में एक सूर्य 28 नक्षत्र, 88 ग्रह और 66975 क्रोड़ा क्रोड़ तारा होते हैं। जम्बूद्वीप में 2 चंद्र होने से नक्षत्रादि संख्या भी दुगुनी समझनी। इस प्रकार पूरे ज्योतिषी लोक में असंख्य चन्द्र-सूर्य हैं, इनसे 28 गुणा नक्षत्र और 88 गुणा ग्रह होते है, सूर्य से 66975 क्रोड़ा क्रोड़ी गुणा तारा होते हैं।

मध्य लोक में रहे ज्योतिषीयों के विमान हालांकि स्वयं गति स्वभाव वाले हैं। फिर भी अभियोगिक जाति के देव सूर्य-चन्द्र आदि के विमानों को चलने में निमित्त रूप बनते हैं। ये देव सिंह हाथी बैल और घोड़ा का आकार बनाकर और पूर्व आदि चारों दिशाओं में रहकर अनुक्रम से सूर्यादि को भ्रमण कराते हैं।

7. ऊर्ध्वलोक :- मेरू पर्वत को तीन लोक का विभाजन करने वाला मानते हैं। मेरू के नीचे का भाग अधोलोक, मेरू के ऊपर का भाग को ऊर्ध्वलोक को स्पर्श करता है। ऊर्ध्वलोक में 12 देवलोक है। दिगंबर मान्यता से 16 देवलोक हैं। इन देवलोकों में कल्पवासी देव देवी रहते हैं। इनके ऊपर नव ग्रैवेयक और पांच अणुत्तर विमान हैं। दिगंबर मान्यतानुसार 16 देवलोक के ऊपर नव अनुदिश और इनके ऊपर पांच अणुत्तर विमान हैं। इन विमानों में रहने वाले देव कल्पातीत होते हैं। इन देवों में इन्द्र, सामानिक आदि व्यवस्था नहीं होती, सभी अहमिंद्र कहलाते हैं। इन विमानों में रहने वाले सभी देव सरीखे वैभव वाले होते हैं।

देवलोक में जो कल्पवासी देव होते हैं उनमें इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंशक, परिषद, आत्मरक्षक, लोकपाल, अनीक, प्रकीर्णक, आभियोगिक और किल्विषी आदि 10 विभाग होते हैं। सामानिक आदि 9 प्रकार के देवों के स्वामी होते हैं, जिन्हे इंद्र कहते हैं। इन्द्र की आज्ञा सभी देव मानते हैं। इन इन्द्रों का वैभव ऐश्वर्य अन्य देवों से बहुत अधिक होता है। आज्ञा और ऐश्वर्य के सिवाय अन्य सभी बाबतों में इन्द्र जैसे होते है, उन्हे सामानिक कहते हैं। मंत्री और पुरोहित का काम करने वाले त्रायस्त्रिंशक कहलाते है ये 33 ही होते हैं। इसीलिए ये त्रायस्त्रिंशक कहलाते हैं। इन्द्र की सभा या परिषद के सदस्यों को परिषद कहते हैं। इन्द्र के अंगरक्षक देव आत्म रक्षक कहलाते हैं। सभी देवों का रक्षण करने वाले लोकपाल कहलाते हैं। सेना का काम करने वाले देव अनीक कहलाते हैं। सामान्य जन जैसे देव, प्रकीर्णक देव कहलाते हैं। देवलोक में सबसे कम पुण्यशाली देव किल्विषी देव कहलाते हैं।

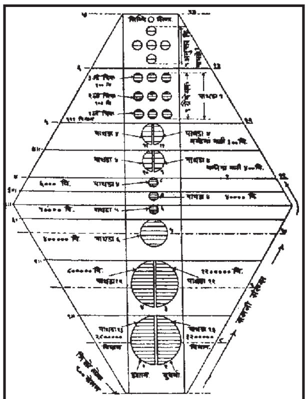
(चित्र सं. 147)-ऊर्ध्वलोक

इनके अतिरिक्त भवनपति वाणव्यंतर और ज्योतिषी भी देव होते हैं। भवनपति देवों में भी उपरोक्त 10 भेद होते हैं। वाण व्यंतर ज्योतिषी में त्रायस्त्रिंशक और लोकपाल के अलावा शेष 8 भेद होते हैं। रत्नप्रभा पृथ्वी के ऊपर के अंतरों के भाग में तथा मध्यलोक में रहे हुए असंख्यात द्वीप समुद्रों में भी भवनपति और वाण व्यंतर देव होते हैं।

पांचवे ब्रह्म देवलोक के किनारे (छोर) पर सारस्वत आदि लोकांतिक देव रहते हैं। देवलोक के देवों में ये लोकांतिक देव सर्वाधिक ज्ञानवान होते हैं। ये देव तीर्थंकर भगवान के दीक्षा कल्याणक के समय आते है, ये देव एक भवावतारी होते हैं।

भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी और वैमानिक (कल्पवासी) इन सभी देवों का जन्म औपपातिक होता है। अपनी उपपात शैया में जन्म लेने के एक अन्तमुहुर्त्त में ही पूरबहार यौवनावस्था प्राप्त कर लेते हैं।

8. तमस्काय :- जम्बूद्वीप से असंख्यात द्वीप समुद्र उल्लंघन करने के बाद अरूणवर द्वीप के बाहर की वेदिका के अंत से अरूणोदय समुद्र में 42 हजार योजन अवगाहन करने पर पानी के ऊपर के भाग से एक प्रदेश की श्रेणी वाली तमस्काय (अंधकार पिंड) शुरू होती है। फिर यह 1721 योजन ऊपर चढ़कर फैलती-फैलती सुधर्मा आदि 4 देवलोकों को घेरकर पांचवे देवलोक के तीसरे रिष्ट विमान तक पूरी होती है। इसका आकार नीचे मल्लक मूल ऊपर मुर्गे के पिंजरे जैसा होता है। इसके लोकतमिस्त्र आदि 13 नाम हैं। और इसकी 8 कृष्णराजियां बताई है।

9. सिद्धलोक :- ऊर्ध्वलोक के अन्त में सर्वार्थ सिद्ध विमान के अग्रभाग से 12 योजन ऊपर ईषत्प्रागभार पृथ्वी है। यह 45 लाख योजन विस्तार की और गोलाकार है। मध्य भाग में 8 योजन जाड़ी (मोटी) है, और अनुक्रम से पतली होते होते किनारे के प्रदेशों में मक्खी के पंख से भी पतली है। दिगंबर मान्यता से ईषत्प्रागभार पृथ्वी लोकांत तक विस्तरित होने से 1 रज्जू चौड़ी और 7 रज्जू लम्बी है। इसके बराबर मध्य भाग में मनुष्य क्षेत्र के ऊपर 45 लाख योजन लम्बा-चौड़ा गोलाकार सिद्ध क्षेत्र है। इसका आकार रूपा (चांदी) के छत्र जैसा है। इस सिद्ध क्षेत्र के सिद्ध लोक में कर्मों का क्षय करके संसार चक्र से छूटते मुक्त जीव रहते (बसते) हैं। और अनंत काल तक अपना आत्मिक अव्याबाध अनुपम सुख भोगते हैं।

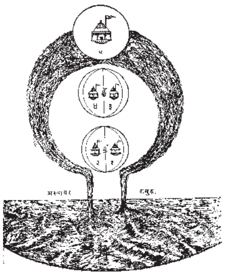

(चित्र सं. 148)-
तमस्काय

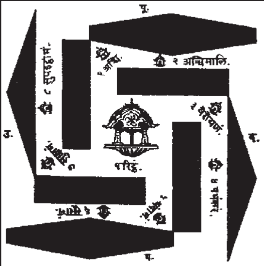

(चित्र सं. 149)-
कृष्ण राजी

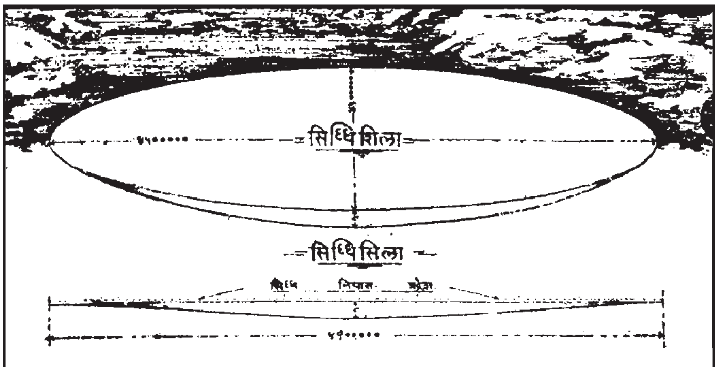

(चित्र सं. 150)-सिद्ध शिला

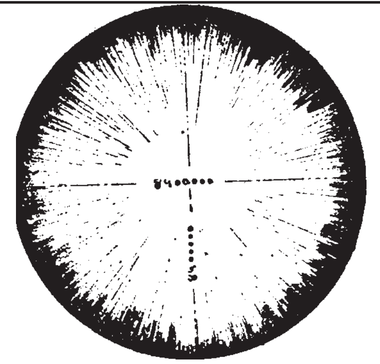

(चित्र सं. 151)-सिद्ध शिला

10. माप क्षेत्र :- क्षेत्र माप में सर्वप्रथम परमाणु बताया है। सूक्ष्मातिसूक्ष्म रजकण परमाणु वह अतीन्द्रिय होता है। जिसका भाग, खंड, टुकड़ा किसी भी प्रकार से न हो सके, ऐसा सूक्ष्मातिसूक्ष्म भाग परमाणु कहलाता है।

परमाणु	=	पुद्‌गल का सूक्ष्मातिसूक्ष्म अविभागी अंश
अनंत सूक्ष्म परमाणु	=	एक व्यवहार परमाणु
अनंत व्यवहार परमाणु	=	एक उष्ण स्निग्ध परमाणु
अनंत उष्ण स्निग्ध परमाणु	=	एक शीत स्निग्ध परमाणु
आठ शीत स्निग्ध परमाणु	=	एक ऊर्ध्व रेणु
आठ ऊर्ध्व रेणु	=	एक त्रस रेणु

आठ त्रस रेणु = एक रथ रेणु। आठ रथ रेणु = देवकुरू उत्तर कुरू के मनुष्यों का एक बालाग्र।

देवकुरू-उत्तरकुरू मनुष्यों के 8 बालाग्र = हरिवर्ष रम्यक वर्ष के मनुष्यों का एक बालाग्र।

हरिवर्ष रम्यक वर्ष के मनुष्यों के 8 बालाग्र = हेमवय हैरण्यवय मनुष्यों का एक बालाग्र।

हेमवय-हैरण्य वय के मनुष्यों के 8 बालाग्र = पूर्व पश्चिम महाविदेह के मनुष्यों का एक बालाग्र।

पूर्व पश्चिम महाविदेह के मनुष्यों के 8 बालाग्र = भरत एरवत के मनुष्यों का एक बालाग्र।

भरत एरवत के मनुष्यों के 8 बालाग्र = एक लीख। 8 लीख = जूं। 8 जूं = एक यव मध्य, 8 यव मध्य (जो (जव) का आधा भाग) = एक उत्सेधांगुल। 6 उत्सेधांगुल = एक पग। 2 पग = एक वेंत। 2 वेंत (वितस्ति)= एक हाथ। 2 हाथ (रत्नि)=एक कुक्षि। 2 कुक्षि (दिगंबर मान्यता से कुष्कि) = एक दंड (धनुष)। 2 हजार धनुष = एक गाऊ (कोस) 4 गाऊ = एक योजन।

ऊपर के माप का वर्णन उत्सेधांगुल से संबंध है। उत्सेधांगुल से प्रमाणांगुल 500 गुणा होता है। एक उत्सेधांगुल लम्बी एक प्रदेश की श्रेणि (पंक्ति) को सूचि अंगुल कहते हैं। सूचि अंगुल के वर्ग को प्रतरांगुल कहते हैं। और सूचि अंगुल के घन को घनांगुल कहते हैं। असंख्यात क्रोड़ा क्रोड़ी घनांगुल गुणा योजनों की पंक्ति को श्रेणि या जगत्श्रेणी कहते हैं। जगत्श्रेणी के वर्ग को जगत्प्रतर कहते हैं। और जगत्श्रेणी के घन को लोक का घनलोक कहते हैं। इसमें से जगत्श्रेणी के 7वां भाग प्रमाण को रज्जू कहते हैं। लोकाकाश का घनफल 343 रज्जू प्रमाण है।

11. काल माप :- काल का सूक्ष्माति सूक्ष्म अंश 'समय' है।

असंख्यात समय = एक आवलिका। 3773 आवलिका = एक उच्छवास (एक निःश्वास में भी इतना) 7546 आवलिका = एक श्वासोच्छवास। $4446\frac{2458}{3773}$ आवलिका = एक प्राण। सात प्राण = एक स्तोक। सात स्तोक = एक लव। 38½ लव = एक घड़ी। 2 घड़ी = एक मुहुर्त्त (48 मिनिट)। 30 मुहुर्त्त = एक अहोरात्र। 15 अहोरात्रि = एक पक्ष, 30 अहोरात्रि = एक मास। दो मास = एक ऋतु। तीन ऋतु = एक अयन। दो अयन (बारह मास)= एक वर्ष (संवत्सर)। पांच संवत्सर = एक युग। बीस युग = 100 वर्ष। दस 100 वर्ष = एक हजार वर्ष। सौ हजार वर्ष = एक लाख वर्ष, 84 लाख वर्ष = पूर्वांग। 84 लाख पूर्वांग = एक पूर्व (70 लाख क्रोड़ 56 हजार क्रोड वर्ष) (1 पूर्व अथवा 70560000000000) 84 लाख पूर्व = एक त्रुटितांग। 84 लाख त्रुटितांग = एक त्रुटित। इसके बाद आगे आगे की प्रत्येक संख्या को 84 लाख से गुणा करने से अडडांग, अडड, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थ निपुरांग, अर्थ निपुर, अयुतांग, अयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, नयुतांग, नयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्ष प्रहेलिकांग, शीर्ष प्रहेलिका होती है। उसके आगे फिर उपमा काल होता है।

दिगंबर मान्यता से- काल माप का वर्णन इस प्रकार- समय-काल का सबसे छोटा अविभागी अंश। असंख्यात समय = एक आवली। संख्यात आवली = एक प्राण (श्वासोच्छवास)। सात प्राण = एक स्तोक। सात स्तोक = एक लव। 77 लव = एक मुहुर्त्त। 30 मुहुर्त्त = एक अहोरात्रि। 15 अहोरात्रि = एक पक्ष। 2 पक्ष = एक मास। दो मास = एक ऋतु। तीन ऋतु= एक अयन। दो अयन=एक वर्ष। 84 लाख वर्ष= एक पूर्वांग। 84 लाख पूर्वांग = एक पूर्व। 84 लाख पूर्व = एक पर्वांग। 84 लाख पर्वांग = एक पर्व। 84 लाख पर्व = एक नयुतांग। 84 लाख नयुतांग = एक नयुत। 84 लाख नयुत = कुमुदांग। 84 लाख कुमुदांग = एक कुमुद। 84 लाख कुमुद = एक पद्मांग। 84 लाख पद्मांग = एक पद्म। 84 लाख पद्म = एक नलिनांग। 84 लाख नलिनांग = एक नलिन।

इस प्रकार आगे कमलांग, कमल, तुटयांग, तुटय, अटटांग, अटट, अममांग, अमम, हूहूअंग, हूहू, लतांग, लता, महालतांग, महालता, शिरःप्रकंपित, हस्त प्रेहिलित, और अचलात्म इनको उत्तरोत्तर 84 लाख से गुणा समझना। ये सभी संख्याएं संख्यात की गिनती में हैं। पल्योपम और सागरोपम आदि असंख्यात की गिनती में है। इनसे आगे अंतरहित राशि है, जिन्हे अनंत कहते हैं।

बौद्ध मतानुसार लोक का वर्णन :-

1. लोक-रचना :- अभिधर्म कोश में आचार्य सुबंधु ने लोक रचना इस प्रकार बतायी है। लोक के नीचे के भाग में 16 लाख योजन ऊंचा घना वायुमंडल है (अभिधर्म कोश 3; 45) इसके ऊपर 11 लाख 20 हजार योजन ऊंचा जल मंडल हैं, इसमें 3 लाख 20 हजार योजन कंचनमय भू मंडल है (अभिधर्म कोश 3, 46) जल मंडल और कंचन मंडल का विस्तार 1203450 योजन तथा परिधि 3610350 योजन प्रमाण से है (अभिधर्म कोश 3, 47-48)

कंचनमय भूमंडल के मध्य में मेरू पर्वत है। यह 80 हजार योजन नीचे जल में डूबा है, तथा इतना ही ऊपर निकला है (अभिधर्म कोश- 3, 50) इससे आगे 80 हजार योजन विस्तार का और 2 लाख 40 हजार योजन परिधि वाला प्रथम सीता (समुद्र) है। इसे घेरकर मेरू रहा हुआ है। इससे आगे 40 हजार योजन विस्तार का युगंधर पर्वत वलयाकार है, इससे आगे भी इसी प्रकार एक-एक सीता और अन्तरे में आधे-आधे विस्तार के अनुक्रम से युगंधर, ईशाधर, खदीरक, सुदर्शन, अश्वकर्ण, वितनक और निमिन्धर पर्वत है। सीताओं का विस्तार भी उत्तरोत्तर आधा-आधा हो गया है (अभिधर्म कोश 3-51-52)

इन पर्वतों में से मेरू चतुरत्नमय और बाकी के सात पर्वत सुवर्णमय है। सबसे बाहर रहे सीता (महासमुद्र) का विस्तार तीन लाख 22 हजार योजन का है। अन्त में लोहमय चक्रवाल पर्वत है।

निमिन्धर और चक्रवाल पर्वतों के बीच में जो समुद्र है इसमें जम्बूद्वीप, पूर्वविदेह, अवर गोदानीय और उत्तर कुरू ये चार द्वीप हैं। इसमें जम्बूद्वीप मेरू के दक्षिण भाग में है इसका आकार गाडा (गाड़ी) जैसा है। इसकी तीन भुजाओं में से दो भुजाएं 2-2 हजार योजन और एक भुजा तीन हजार पचास योजन की है। (अभिधर्म कोश 3, 53)

मेरू के पूर्व भाग में अर्द्ध चन्द्राकार पूर्व विदेह नामक द्वीप है। इसकी भुजाओं का प्रमाण जंबूद्वीप की तीनों भुजाओं जैसा है। (अभिधर्म कोश- 3, 54)। मेरू के पश्चिम में मंडल-भार अवर गोदानीय द्वीप है। इसका विस्तार अढ़ाई हजार योजन और परिधि साढ़े सात हजार योजन प्रमाण है (अभिधर्म कोश- 3, 55)। मेरू के उत्तर भाग सम चतुष्कोण उत्तर कुरू द्वीप है, इसकी एक-एक भुजा दो-दो हजार योजन की है। इसमें से पूर्व विदेह के पास देह-विदेह, उत्तर कुरू के पास कुरू-कौरव, जम्बूद्वीप के पास चामर, अवर चामर तथा गोदानीय द्वीप के पास शाटा और उत्तर मंत्री नामक अन्तर्द्वीप रहे है। इनमें से चमर द्वीप में राक्षसों का और बाकी द्वीपों में मनुष्यों का निवास है। (अभिधर्म कोश 3, 56)

मेरू पर्वत के चार परिखंड हैं पहला परिखंड (विभाग) शीताजल से 10 हजार योजन तक माना है, इससे आगे अनुक्रम से 10-10 हजार योजन ऊपर जाते दूसरे, तीसरे, चौथे परिखंड है, इसमें से पहला परिखंड 16 हजार योजन, दूसरा 8 हजार योजन तीसरा चार हजार योजन चौथा 2 हजार योजन मेरू से बाहर निकला है।

पहले परिखंड में पूर्व की तरफ करोट-पाणि-यक्ष रहते है। दूसरे परिखंड में दक्षिण तरफ मालाधर हैं। तीसरे में पश्चिम तरफ सदामद रहते हैं। चौथे मे चातुर्माहाराजिक देव रहते हैं। इसी प्रकार बाकी के सात पर्वतों पर भी ऊपर के देवों का निवास है। (अभिधर्म कोश 3, 63-64)

जम्बूद्वीप में उत्तर तरफ कीटादि और आगे हिमवान पर्वत रहा है। हिमवान से आगे उत्तर में 500 योजन विस्तार का अनवतप्त नामक अगाध समुद्र है, इसमें से गंगा, सिंधु, वक्षु और सीता नाम की चार नदियां निकली है। इस सरोवर के पास जम्बूवृक्ष है। इससे इस द्वीप का नाम जम्बूद्वीप पड़ा है। (अभिधर्म 3, 57)

2. नरकलोक :- जम्बूद्वीप के नीचे 20 हजार योजन विस्तार का अवीचि नामक नरक है। इसके ऊपर अनुक्रम से प्रतापन, तपन, महारौरव, रौरव, सन्धात, कालासूत्र, संजीव नाम के अन्य सात नरक है (अभिधर्म कोश 3, 58)। इन नरकों के चारों तरफ (पड़खों) के भागों में कुकुल, कुणप, क्षुर्मार्गादिक (असिपत्रवन, श्याम सबल, अयःशाल्मलीवन) और खारोदक वाली, वैतरणी नदी के ये चार उत्सद है, अर्बुद, निर्बुद, अटट अहहब, उत्पल, पद्म और महापद्म वाले ये 8 अन्य शीत नरक हैं। ये जम्बूद्वीप के अधो भाग में महानरकों के धरातल (जमीन) में रहे हैं (अभिधर्म को 3, 59)

3. ज्योतिर्लोक :- मेरू पर्वत के आधे भाग यानि भूमि से 40 हजार योजन ऊपर चन्द्र और सूर्य भ्रमण करते हैं। चन्द्र मंडल 50 योजन का सूर्य मंडल 51 योजन का है। जब जम्बूद्वीप में मध्यान्ह होता है, तब उत्तर कुरू में आधी रात होती है, पूर्व विदेह में अस्त, और अवर गोदानीय में सूर्योदय होता है (अ. को. 3, 60)। भाद्रमास के सुद की नवमी की रात से वृद्धि और फागण मास के सुद की नवमी से इसकी हानि शुरू होती है। रात्रि की वृद्धि, दिवस की हानि और रात्रि की हानि दिवस की वृद्धि होती है। सूर्य के दक्षिणायन में रात्रि की वृद्धि और उत्तरायण में दिवस की वृद्धि होती है। (अ.को. 3, 61)

4. स्वर्गलोक :- मेरू शिखर पर त्रायस्त्रिंश (स्वर्ग) लोक है। इसका विस्तार 80 हजार योजन है। वहां त्रायस्त्रिंश देव रहते हैं। इनकी चार विदिशा (कोणों) में वज्रपाणि नामक देवों का निवास है (अ.को. 3, 65)। त्रायस्त्रिंश-लोक के मध्य में सुदर्शन नगर है, जो स्वर्णमय है। इसका एक-एक पार्श्वभाग 2500 योजन विस्तार का है। इसके मध्य भाग में इन्द्र के 250 योजन विस्तार का वैजयंत नामक प्रासाद (महल) है। नगर के बाहर के भाग में चारों तरफ चैत्ररथ, पारूष्य, मिश्र और नंदन ये चार वन हैं (अ. को. 3 ,66-67)। इनके चारों तरफ 20 हजार योजन के अन्तर में देवों का क्रीड़ा स्थल है (अ.को. 3, 68)

त्रायस्त्रिंश-लोक के ऊपर विमानों में याम, तुषित, निर्माण रति, परनिर्मित वशवर्ती आदि देव रहते है। काम धातु गत देवों में से चातुर्माहाराजिक और त्रायस्त्रिंश मनुष्य की तरह काम सेवन करते हैं। यान, तुषित, निर्माण रति, परनिर्मित वशवर्त्ती देव अनुक्रम से आलिंगन, पाणि संयोग, हसित और अवलोकन से ही तृप्त होते हैं। (अभिधर्म कोश 3, 69)

कामधातु के ऊपर 17 स्थानों में रूप धातु है।ये 17 स्थान-पहले स्थान में ब्रह्म कायिक ब्रह्मपुरोहित और महा ब्रह्मलोक है। दूसरे स्थान में परिताभ, अपभाणाभ और आभस्वर लोक है। तीसरे स्थान में परितशुभ, अप्रमाण शुभ, शुभ कृत्सन लोक है। चौथे स्थान में अभ्रनक, पुण्य प्रसव, वृहदफल, पंचशुद्धावासिक, अवृह, अतप, सुदृश-सुदर्शन और अकनिष्ठ नामक आठ लोक है। ये सभी देव लोक अनुक्रम से ऊपर ऊपर रहे हैं। इनमें रहने वाले देव ऋषि बल या दूसरे देव की मदद से ही अपने से ऊपर के देवलोक को देख सकते हैं। (अ.को. 3, 71-72)

जम्बूद्वीप में रहे मनुष्यों का शरीर साढ़े तीन या चार हाथ का, पूर्व विदेहवासी का 7-8 हाथ, गोदानीय द्वीपवासियों का 14-16 हाथ और उत्तर कुरू के मनुष्यों का 28-32 हाथ ऊंचा होता है। कामधातु वासी देवों में चातुर्माहाराजिक देवों का शरीर ½ कोस का, यामों का ¾ कोस का, तुषितों का 1 कोश का, निर्माण रति का 1¼ कोस का और परनिर्मित वशवर्त्ती देवों का शरीर 1½ कोस का ऊंचा होता है। आगे ब्रह्म पुरोहित, महाब्रह्म, परिताभ, अप्रभाणाभ, आभस्वर, परित्त शुभ, अप्रमाण शुभ, और शुभ कृत्सन देवों का शरीर अनुक्रम से- 1, 1½, 2, 4, 8, 16, 32 और 64 योजन का ऊंचा होता है। अनभ्र देवों का शरीर 125 योजन ऊंचा है। इससे आगे के पुण्य प्रसव आदि देवों का शरीर उत्तरोत्तर दुगुनी ऊंचाई का है। (अभिधर्म कोस 3, 75-77)

5. क्षेत्रमाप :- बौद्ध ग्रंथों में योजन का प्रमाण इस प्रकार (अ.को. 3, 85-87) 7 परमाणु=1 अणु, 7 अणु =1 लौहरज, 7 लौहरज =1 जलरज, 7 जलरज =1 शशरज, 7 शशरज =1 मेघरज, 7 मेघरज = 1 गोरज, 7 गोरज = 1 छिद्ररज, 7 छिद्ररज =1 लीख, 7 लीख = 1 जव, 7 जव = 1 अंगुली पर्व, 24 अंगुली पर्व = 1 हाथ, 4 हाथ =1 धनुष, 500 धनुष = 1 कोस, 8 कोस = 1 योजन (अ.को. 3, 85-87)

6. कालमाप :- बौद्ध ग्रंथों में काल का प्रमाण इस प्रकार (अ.को. 3, 88-89-90) 120 क्षण =1 तत्क्षण, 60 तत्क्षण = 1 लव, 30 लव = 1 मुहुर्त्त, 60 मुहुर्त्त = 1 अहोरात्रि, 30 अहोरात्रि = 1 मास, 12 मास = 1 संवत्सर। कल्पों के अन्तरकल्प, संवर्तकल्प और महाकल्प आदि अनेक भेद बताये हैं। (अ.को. 3, 88-89-90)

तुलना और समीक्षा :- बौद्धों ने नरक लोक, प्रेतलोक, तिर्यकलोक, मनुष्य लोक और 6 देवलोक ये 10 लोक माने है (अ.को. 3, 1)। चातुर्माहाराजिक, त्रायस्त्रिंश, याम, तुषित, निर्माण रति और परनिर्मित वशवर्ती ये 6 देवलोकों के नाम है। इन्हे ऊपर के 6 देवलोकों में समाविष्ट करने से बाकी 4 लोक नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देव ये चार लोक ही साबित होते हैं। ये जैन मत की चार गतियों की याद दिलाता है।

बौद्धों ने प्रेत योनि को एक अलग गति मानकर पांच गति भेद किया है-

''नरकादि स्वनामोकता गतयः पंच तेषुताः' (अभिधर्म कोष 3,4)

ऊपर बताये देवों में से चातुर्माहाराजिक देवेन्द्र का, तुषित-लोकांतिक देवों का, त्रायस्त्रिंश त्रायस्त्रिंश देवों का तथा बाकी भेद व्यंतर देवों की स्पष्ट याद दिलाता है।

जैनों की तरह बौद्ध भी देवों और नारकीयों को औपपातिक जन्म वाले मानते हैं। जैसे- नारका उपपादुकाः अन्तरा भव देवाश्च।। अभिधर्म कोश 3, 4

बौद्ध भी जैनों की तरह नारकी जीवों की उत्पत्ति की साथ ही ऊर्ध्वपाद और अधोमुख नरक भूमि में जाने वाला माना है- ऐसे पतंति निरय उद्धपादा अवंसिरा (सुत्त निपात) उर्ध्व पादास्तु नारकाः (अ.भि. 3, 15)

-:वैदिक धर्म अनुसार लोक का वर्णन:-

1. मर्त्त्य लोक :- जैन ग्रंथों में जिस प्रकार पहले भूगोल का वर्णन किया है, लगभग इसी तरीके से हिन्दू-पुराणों में भी भूगोल वर्णन मिलता है। इस पृथ्वी पर 1. जंबू 2. प्लक्ष 3. शाल्मल 4. कुश 5. क्रोंच 6. शाक 7. पुष्कर ये 7 द्वीप है। ये सभी चूड़ी आकार से गोलाकार और अनुक्रम से 1. लवणोद 2. इक्षुरस 3. मदिरा रस 4.

घृतोद 5. दधि रस 6. दूध रस 7. मधुर रस के 7 समुद्रों से लिपटे हुए हैं। इन सभी के मध्य में जंबूद्वीप है। इसका विस्तार एक लाख योजन है, इसके मध्य भाग में मेरू पर्वत स्वर्णमय 84 हजार योजन ऊंचा है। इसका मूल पृथ्वी के अन्दर 16 हजार योजन है। मेरू का मूल में 16 हजार योजन है अनुक्रम से बढ़ते बढ़ते शिखर पर 32 हजार योजन है। (विष्णु पुराण द्वितीयांश, द्वितीय अध्ययन, श्लोक 5-9, मार्कंदेय पुराण अ. 4 श्लोक 5-7)

इस जम्बूद्वीप में मेरू पर्वत के दक्षिण भाग में हिमवान, हेमकूट और निषध तथा उत्तर भाग में नील, श्वेत, और श्रंगी ये 6 पर्वत हैं, इनसे जम्बूद्वीप के 7 विभाग होते हैं। मेरू के दक्षिण तरफ रहे निषध और उत्तर तरफ नील पर्वत, पूर्व पश्चिम लवण समुद्र तक एक लाख योजन लम्बे और 2-2 हजार योजन ऊंचे और इतने ही जाड़े (मोटे) है। इसके बाद हेमकूट और श्वेत पर्वत लवण समुद्र तक पूर्व पश्चिम में 90 हजार योजन लम्बे 2-2 हजार योजन ऊंचे और इतने ही विस्तार के हैं। इन पर्वतों के कारण जम्बूद्वीप के सात विभाग हुए 1. भारत वर्ष 2. किंपुरूष 3. हरिवर्ष 4. ईलावृत्त 5. रम्यक 6. हिरण्यमय 7. उत्तर कुरू ये सात नाम हैं। (विष्णु पुराण द्वितीयांश, द्वितीय अध्याय, श्लोक 10 से 15 तथा मार्कन्डेय पुराण अ. 54 श्लोक 8-14) इसमें ईलावृत्त के अलावा बाकी 6 का विस्तार उत्तर दक्षिण में 9 हजार योजन का है, ईलावृत्त वर्ष मेरू के पूर्व, दक्षिण पश्चिम और उत्तर ये चारों दिशाओं में 9-9 हजार योजन विस्तार का है। इस प्रकार सभी पर्वतों तथा वर्षों का विस्तार जोडने से जम्बूद्वीप एक लाख योजन का होता है।

मेरू पर्वत के दोनों तरफ पूर्व-पश्चिम में इलावृत्त वर्ष की मर्यादा रूप माल्यवान और गंध मादन पर्वत हैं, ये पर्वत नील और निषध तक विस्तार किये हैं। इससे इनके दोनों तरफ दो और विभाग है इनके नाम भद्राश्व और केतुमाल है। इस प्रकार ऊपर के 7 वर्षों में ये 2 वर्ष मिलाने से जम्बूद्वीप के सभी वर्ष (क्षेत्र) 9 होते हैं। (विष्णु पुराण द्वितीयांश, द्वितीय अध्याय श्लोक 16 तथा मार्कंडेय पुराण अ. 54 श्लोक 14-19)

मेरू के चारों तरफ पूर्वादि दिशाओं में अनुक्रम से मंदर, गंधमादन, विपुल, सुपार्श्व ये चार पर्वत हैं। उनके ऊपर अनुक्रम से 1100 योजन ऊंचे कदंब, जम्बू, पीपल और बड़ के वृक्ष हैं। इनमें से जम्बू वृक्ष के नाम से यह जम्बूद्वीप कहलाता है। (विष्णु पुराण, द्वितीयांश, द्वितीय अध्याय श्लोक 17-19, तथा मार्कंडेय पुराण अ. 54 श्लोक 9)

जम्बूद्वीप में रहे भारत वर्ष महेन्द्र, मलय, सहय, सूक्तिमान, ऋक्ष, विंध्य, पारित्राय ये सात कुल पर्वत है (विष्णु पु. द्वि. द्वि. अ. श्लो. 16 तथा मा. पु. अ. 54 श्लोक 14-19) इनमें से हिमवान में से शतद्र और चंद्रभाग वगैरह पारित्राय में से वेद और स्मृति आदि तथा विंध्य में से नर्मदा और सुरसा आदि, ऋक्ष में से तापी, पयोष्णी और निर्विंध्यादि, सहय में से गोदावरी, भीमरथी और कृष्णवेणी आदि, मलय में से कृतमाला और ताम्रपर्णीआदि महेन्द्र में से त्रिमासा, आर्य कूला आदि तथा सुक्तिमान में से ऋषि कुल्या और कुमारी आदि नदियां निकलती है। (विष्णु पु. द्वि. द्वि. अ. श्लोक 16, मार्कं. पु.अ. 45 श्लो. 14-19, 10-14)। इन नदियों के किनारे मध्य देश से शुरू करके कुरू और पांचाल, पूर्व देश से शुरू करके सौराष्ट्र, सूर, आभीर और अर्बुद तथा उत्तर देश से शुरू करके मालव, कोसभ, सौवीर, सैंधव, हूण, शाल्व और पारसीको से शुरू करके भाद्र, आराम और अंबष्ठ देशवासी रहते हैं। (विष्णु पुराण द्वितीयांश, द्वितीय अध्याय श्लोक 15-17)

ऊपर के 7 क्षेत्रों में मात्र भारतवर्ष में ही कृत (सत), त्रेता, द्वापर और कलि ये चार काल युगों से बदलते हैं। किंपुरुष आदि बाकी क्षेत्रों में काल नहीं बदलता। इन आठ क्षेत्रों में रहती प्रजा को शोक, परिश्रम, उद्वेग, भूख आदि परेशानियां भी नहीं होती। वहां के लोग हमेशा तंदरूस्त, निरोगी और दुःखमुक्त रहते हैं। वहां के लोग बुढ़ापा मृत्यु से निर्भय होकर आनंद अनुभव करते हैं। इसीलिए वहां भोग भूमि कही है। पुण्य पाप ऊंच नीच का भेद नहीं होता। मात्र भारत वर्ष के लोगों में ही व्रत-तप आदि से स्वर्ग-मोक्ष आदि मिलना संभव है, इसीलिए भारत वर्ष को सभी क्षेत्रों में श्रेष्ठ माना है। यहां के लोग असि मसि कृषि से आजीविका चलाते हैं। इसी से इसे कर्मभूमि कहते हैं। (वि.पु.द्वि.तृ.अ. श्लोक 19-22)

जम्बूद्वीप को चारों तरफ से घेरकर लवण समुद्र है, जो एक लाख योजन का है। (वि.पु.द्वि.तृ.अ.श्लोक 28) लवण समुद्र को घेरकर 2 लाख योजन का प्लक्ष द्वीप है। इसमं गोमेध, चन्द्र, नारद, दुंदुभि, सोमक और सुमना ये 6 पर्वत हैं इनके विभाग करने वाले शांतद्वय, शिशिर, सुखोध्य, आनंद, शिव, क्षेमक और ध्रुव ये 7 वर्ष हैं। इन वर्षों और पर्वतों पर देव रहते हैं जो आधि व्याधि रहित अत्यंत पुण्यवान हैं। वहां युग नहीं बदलते, हमेशा मात्र त्रेता युग जैसा समय रहता है। इनमें चतुर्वर्ण व्यवस्था है और अहिंसा सत्य आदि 5 धर्मों का पालन करते हैं। इस द्वीप में एक प्लक्ष वृक्ष है इससे इस द्वीप का नाम प्लक्ष द्वीप प्रसिद्ध है। (वि.पु.द्वि.च.अ. श्लोक 1-18)

प्लक्ष द्वीप को चारों तरफ से इक्षुरसोद समुद्र ने घेर रखा है, यह समुद्र भी प्लक्ष द्वीप जितना ही बड़ा है। इसे चारों ओर से घेरकर चार लाख योजन का शाल्मल द्वीप है। इसी क्रम से सुरोद समुद्र, कुशद्वीप, घृतोद समुद्र, क्रोंचद्वीप, दधि रसोद समुद्र, शाकद्वीप और क्षीर समुद्र रहा है। ये सभी द्वीप स्वयं के पूर्व के द्वीप के दुगुने विस्तार के हैं और समुद्रों का विस्तार स्वयं के द्वीप जितना ही होता है। इन द्वीपों की रचना प्लक्ष द्वीप जैसी है। (विष्णु पुराण द्वितीयांश चतुर्थअध्याय श्लोक 20-72)

क्षीर समुद्र को घेरकर पुष्कर द्वीप है (सातवां)। इसके बराबर मध्य भाग में गोलाकार मानसोत्तर पर्वत हैं। इसके बाहर के भाग को महावीर वर्ष और अन्दर के भाग को धातकी वर्ष कहते हैं। इस द्वीप में रहने वाले लोग भी रोग-शोक, रागद्वेष रहित होते हैं। वहां ऊंच नीच का भेद नहीं, वर्णव्यवस्था भी नहीं होती इस पुष्कर द्वीप में नदियां और पर्वत भी नहीं है। (विष्णु.पु.द्वि.च.अ.श्लोक 73-80)

इस द्वीप को घेरकर मधुरोदक समुद्र है, इससे आगे प्राणी नहीं है। मधुरोदक समुद्र से आगे इससे दुगने विस्तार की सुवर्णभूमि है, इससे आगे 10 हजार योजन विस्तार का और इतना ही ऊंचा लोकालोक नामक पर्वत है, इसके चारों ओर लिपटाया हुआ तमस्तंभ है। इस अंडकडाया के साथ ऊपर के द्वीप समुद्र वाला यह पूरा भूमंडल 50 करोड़ योजन का है। इसकी ऊँचाई 70 हजार योजन की है। (वि.पु.द्विच.अ. श्लोक 93-96)

इस भूमंडल के नीचे 10-10 हजार योजन के 7 पाताल है। अतल, वितल, नितल, गभस्तिमत, महातल, सूतल और पाताल ये सात नाम है। अनुक्रम से सफेद, काला, लाल, पीला, शर्करा, शल और कांचन रूप है। यहां उत्तम भवनों वाली भूमियां है। यहां दानव, दैत्य, यक्ष और नाग आदि बसते हैं (वि.पु.द्वि. पंचम अ. श्लोक 2-4)

पातालों के नीचे विष्णु भगवान का शेष नामक तामस शरीर है जो अनंत कहलाता है। यह शरीर हजार फणों से पूरी पृथ्वी को धारण करके पाताल के मूल में रहा है। कल्पांत के समय इसके मुंह से निकली संकर्ष वाली रूद्र विषाग्नि-शिखा तीनों लोक को खा जाती है। (विष्णु पुराण द्वितीयांश पंचम अध्याय श्लोक 13-15-19-20)

2. नरक लोक :- पृथ्वी और जल के नीचे शैरव, सूकर, रौध, ताल, विशासन, महाज्वाल, तप्तकुंभ, लवण, विलोहित, रूधिर, वैतरणी, कृमीश, कृमि भोजन, असिपत्रवन, कृष्ण, अलाभक्ष, दारुण, पूयवह, वन्हिज्वाल, अध:शिरा, सैदेस, कालसूत्र, तम, आवीचि, श्वभोजन, अप्रतिष्ठा और अग्रवि आदि अनेक महाभयानक नरक है। इनमें पापी जीव मरकर इन नरकों में जन्म लेते हैं। (वि.पु.द्वि.ष.अ. श्लोक 1-6)। वहां से निकलकर वे जीव स्थावर, कृमि, जलचर, मनुष्य और देव आदि होते हैं। जितने जीव स्वर्ग में हैं, उतने ही जीव नरकों में भी रहते हैं। (वि.पु.द्वि.ष.अ. श्लोक 34)

3. ज्योतिर्लोक :- भूमि से एक लाख योजन दूर ऊपर सौरमंडल, इससे एक लाख योजन ऊपर चंद्रमंडल, इससे एक लाख योजन ऊपर नक्षत्रमंडल इनसे दो लाख योजन ऊपर बुध, इससे दो लाख योजन ऊपर शुक्र, इससे दो लाख योजन ऊपर मंगल, इससे दो लाख योजन ऊपर बृहस्पति, इससे दो लाख योजन ऊपर शनि इससे एक लाख योजन ऊपर सप्तर्षि मंडल तथा इससे एक लाख योजन ऊपर ध्रुव तारा है। (विष्णु पु. द्वितीयांश सप्तम अध्याय श्लोक 2-9)

4. महर्लोक (स्वर्ग लोक) :- ध्रुव तारा से एक करोड़ योजन ऊपर जाने पर महर्लोक है। यहां कल्पकाल तक जीने वाले कल्पवासियों का निवास है, इनसे दो करोड़ योजन ऊपर जनलोक है यहां नंदनादि के साथ ब्रह्माजी के प्रसिद्ध पुत्र रहते हैं। इनसे आठ करोड़ योजन ऊपर तपलोक है यहां वैराज देव रहते हैं। इनसे 12 करोड़ योजन ऊपर सत्यलोक है, यहां कभी भी नहीं मरने वाले अमर (अपुनमरिक) रहते हैं। इसे ब्रह्मलोक भी कहते हैं। भूमि (भूलोक) और सूर्य के बीच सिद्धजनों और मुनिजनों द्वारा सेवित स्थान भुवर्लोक कहलाता है। सूर्य और ध्रुव के बीच 14 लाख योजन का क्षेत्र स्वर्लोक कहलाता है (वि.पु.दि.ष.अ. श्लोक 12-18)। भूलोक, भुवर्लोक और स्वर्लोक ये तीन कृतक तथा जनलोक, तपलोक और सत्यलोक ये तीनों लोक अकृतक है। इन दोनों लोक के बीच में महर्लोक है। यह कल्पांत के समय जन रहित बनता है, परन्तु संपूर्ण नष्ट नहीं होता। (वि.पु. द्वितीयांश, ष.अ. श्लोक 19-20)

तुलना और समीक्षा- विष्णु पुराण के आधार से जिस प्रकार की लोक स्थिति या भूगोल का वर्णन किया है, उसे हमारे जैन मान्यता के अनुसार किये लोक के वर्णन से मिलान करें तो कईं तथ्य उजागर होते हैं, जिनका यहां उल्लेख किया है-

द्वीप	जैन मान्यता	द्वीप	वैदिक मान्यता
1. द्वीप समुद्र	असंख्यात	1. द्वीप समुद्र	सात
2. पहला द्वीप	जम्बूद्वीप	2. पहला द्वीप	जम्बूद्वीप
3. कुशक	15वां द्वीप (तिलोय प.)	3. कुश	चौथा द्वीप
4. क्रोंच	16वां द्वीप (तिलोय प.)	4. क्रोंच	पांचवा द्वीप
5. पुष्कर	तीसरा द्वीप	5. पुष्कर	सातवां द्वीप

समुद्र	जैन मान्यता	समुद्र	वैदिक मान्यता
1. लवणोद	पहला समुद्र	लवणोद	पहला समुद्र
2. वारुणी रस	चौथा समुद्र	मदिरा रस	तीसरा समुद्र
3. क्षीर सागर	पांचवा समुद्र	दूध रस	छठा समुद्र
4. घृतवर	छठा समुद्र	मधुर रस	सातवां समुद्र
5. इक्षुरस	सातवां समुद्र	इक्षुरस	दूसरा समुद्र

क्षेत्र	जैन परम्परा	वैदिक परम्परा
1.	भारतवर्ष	भारतवर्ष
2.	हैमवत	किंपुरूष
3.	हरिवर्ष	हरिवर्ष
4.	विदेह	ईलावृत्त
5.	रम्यक	रम्यक
6.	हैरण्यवत्	हिरण्यमय
7.	ऐरावत	उत्तरकुरू

जैन मान्यतानुसार उत्तर कुरू विदेह क्षेत्र का एक भाग है, इलावृत्त ऐरावत का रूपान्तर है, दूसरे हेमवत के स्थान पर किंपुरूष नया नाम है।

पर्वत	जैन मान्यता	वैदिक मान्यता
1.	हिमवान	हिमवान
2.	महाहिमवान	हेमकूट
3.	निषध	निषध
4.	नील	नील
5.	रूक्मी	श्वेत
6.	शिखरी	श्रृंगी

शिखरी और श्रृंगी ये दोनों एकार्थक नाम है। पांचवा रूक्मी पर्वत का वर्णन जैन मान्यता अनुसार सफेद ही माना है, और वैदिक मान्यता अनुसार भी श्वेत (सफेद) बोध कराता है। मात्र महाहिमवान के स्थान पर हेमकूट यह नया नाम है।

जैन और वैदिक दोनों मान्यतानुसार मेरू पर्वत जम्बूद्वीप के मध्य भाग में रहा है, मात्र ऊंचाई में अन्तर है वैदिक मान्यतानुसार 84 हजार योजन और जैन मान्यतानुसार एक लाख योजन ऊंचा है। जमीन के अंदर और बाहर को जोड़ें तो एक लाख योजन दोनों का होता है। 99+01=1 लाख, 84+16=1 लाख योजन।

7. नदियां :- वैदिक मान्यतानुसार नदियों के नाम अधिकांश रूप से आधुनिक नदियों के ही नाम हैं। जैन मान्यतानुसार सात क्षेत्रों में 14 मुख्य नदियां है- गंगा, सिंधु, रोहिता, रोहितांशा, हरित, हरिकांता, शीता, शीतोदा, नारीकांता, नरकांता, रक्ता, रक्तवती। भारतवर्ष आदि क्षेत्रों में अनुक्रम से दो-दो नदियां बहती है, पहली नदी पूर्वी समुद्र और दूसरी नदी पश्चिमी समुद्र में मिलती है, इस प्रकार नदियों के नाम अलग-अलग है।

8. नरक स्थिति :- जैन और वैदिक दोनों मान्यताओं में बहुत और भयानक दुःख भोगने वाले नारकी जीवों का स्थान पृथ्वी के नीचे ही माना है, नामों में कई जगह साम्यता है, कईं जगह अलग-अलग नाम हैं।

9. ज्योतिर्लोक :- जैन मान्यतानुसार सम पृथ्वी तल से सूर्य चन्द्र की जो ऊंचाई बताई है, उससे वैदिक मान्यता में बहुत अन्तर है।

10. स्वर्गलोक :- दोनों ही मान्यताओं में स्वर्गलोक ज्योतिर्लोक से ऊपर माना है। वैदिक मान्यता में महर्लोक नाम दिया है, उस जगह रहने वालों को भी जैन मान्यता जैसे ही कल्पवासी कहा है। वैदिक मान्यता प्रमाण से स्वर्गलोक की स्थिति सूर्य और ध्रुव तारा के मध्य 14 लाख योजन क्षेत्र में है। जैन मान्यतानुसार मेरू से ऊपर असंख्यात योजन ऊपर के क्षेत्र में है।

11. कर्मभूमि-भोगभूमि :- जैनागमों में कई कर्मभूमि भोग भूमि (अकर्म भूमि) का वर्णन है। ऐसा ही वर्णन हिन्दु पुराणों में भी है। विष्णु पुराण द्वितीयांश के तीसरे अध्याय में कर्मभूमि का वर्णन है-

उत्तरं यत्समुद्रस्य, हिमाद्रेश्च दक्षिणम्
वर्ष तद्भारतं नाम, भारती यत्र संततिः ।।1।।
नव योजन सहस्त्रो, विस्तारोऽस्य महामुने।
कर्म भूरियं स्वर्गमपवर्गंच, गच्छताम् ।।2।।
अतः संप्राप्यते स्वर्गो, मुक्तिमस्मात् प्रयांति वै।
तिर्यक्त्वं नरकं चापि यांत्यतः पुरूषा मुने ।।3।।
इतः स्वर्गश्च मोक्षश्च, मध्यं चांतश्च गम्यते।
न खल्वन्यत्र मर्त्यानां, कर्म भूमौविधीयते ।।4।।

भावार्थ :- समुद्र के उत्तर और हिमाद्रि के दक्षिण में भारतवर्ष है, इसका विस्तार नौ हजार योजन का है। यह स्वर्ग और मोक्ष में जाने वाले पुरुषों की कर्मभूमि है। इसी स्थान से मनुष्य स्वर्ग और मोक्ष प्राप्त करता है और यहीं से तिर्यंच और नरक गति में भी जाता है। इसी से यह कर्मभूमि है। भारतवर्ष के अलावा अन्य क्षेत्र में **कर्मभूमि** नहीं है।

अग्निपुराण के 118वें अध्ययन से दूसरे श्लोक में भी भारतवर्ष को कर्मभूमि कहा है जैसे-

''कर्म भूमिरिय स्वर्गमपर्गंच गच्छताम् ।।''

विष्णु पुराण में अंत में कर्मभूमि का उपसंहार करते हुए लिखा है- भारतवर्ष में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र रहते हैं, तथा वे अनुक्रम से पूजन पाठ, आयुध धारण, वाणिज्य कर्म (व्यापार) और सेवा वगैरह का काम करते है-

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्या मध्ये शुद्राश्च भागशः ।

ईज्याऽऽयुध वाणिज्या, द्यौर्वर्तयन्तो व्यवस्थिताः ।।9।।

इस अध्याय का उपसंहार करते हुए लिखा है कि भारतवर्ष के सिवाय अन्य सभी क्षेत्रों में भोगभूमि है- अत्रापि भारत श्रेष्ठं जंबूद्वीपे महामुने यतोह कर्मभूरेषा, हयन्तोऽन्या भोगभूमयः।।

भावार्थ- इस जंबूद्वीप में भारतवर्ष सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि यहां स्वर्ग और मोक्ष देने वाली कर्मभूमि है, भारत भूमि के सिवाय अन्य क्षेत्रों की भूमि तो भोग भूमियां है। क्योंकि वहां रहने वाले जीव हमेशा, किसी भी प्रकार के रोग-शोक-पीड़ा अनुभवते नहीं हैं। मार्कंडेय पुराण के 55वें अध्ययन के श्लोक 20-21 में भोग भूमि और कर्मभूमि का वर्णन मिलता है।

12. उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल :- जिस काल में मनुष्यों के आयुष्य, सम्पत्ति, सुख समृद्धि तथा भोगोपभोगों में वृद्धि होती है, वह उत्सर्पिणी काल कहलाता है और जब इन सभी वस्तुओं की हानि होती है, वह अवसर्पिणी काल कहलाता है। जैन मान्यतानुसार काल के परिवर्तन का सम्पूर्ण स्वरूप बताया है। यह दोनों प्रकार का काल परिवर्तन कर्मभूमि पृथ्वी में ही होता है, भोग भूमि में नहीं होता। विष्णु पुराण में भी इसका उल्लेख मिलता है-

अवसर्पिणी न तेषां वै न चोत्सर्पिणी द्विज ।

नत्वेषाऽस्ति युगावस्था तेषु स्थानेषु सप्तसु ।।

(वि.पु.द्वि.अ. 4 श्लोक 13)

हे द्विज ! जम्बूद्वीप में रहे हुए अन्य सात क्षेत्रों में भारतवर्ष जैसी अवसर्पिणी काल अवस्था और उत्सर्पिणी काल अवस्था भी नहीं होती है।

13. वर्षधर पर्वतों पर समुद्र :- जैन मान्यता की तरह मार्कंडेय पुराण में भी वर्षधर पर्वतों पर सरोवरों तथा इनमें कमलों का उल्लेख आता है-

एतेषां पर्वतानां तु, द्रोण्योऽतीव मनोहराः।

वनैरमल पानी यैः सरोभिरुपशोभिताः ।।

(अ. 55 श्लोक 14-15)

इन सरोवरों में कमलों का उल्लेख-तद्देतत पार्थिवं पद्मं चतुष्पत्रं मयोदितम् (अ.55 श्लोक 30) जैन मान्यतानुसार पुराणकार ने भी पद्म (कमल) पार्थिव (पृथ्वी का) ही माना है।

14. भारतवर्ष का नामः- जम्बूद्वीप के पहले क्षेत्र का नाम भारतवर्ष है इसका नाम कैसे पड़ा? जैन मान्यता यह है कि आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभ देव के सौ पुत्रों में भरत सबसे बड़े थे, और चक्रवर्त्ती थे। उन्होंने इस क्षेत्र का सर्वप्रथम राज सुख प्राप्त किया इससे इसका नाम भारतवर्ष प्रसिद्ध हुआ। (जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र तीसरा वक्षस्कार) श्रीमद् उमास्वाति रचित तत्त्वार्थाधिगम् सूत्र के महान् भाष्यकार श्रीमद् अकलंक देव ने तीसरे अध्याय के 10वें सूत्र की व्याख्या करते हुए लिखा ''भरत क्षत्रिय योगाद्वर्षो भरतः विजयार्धस्य दक्षिणतो जलघेरु त्तरतः गंगाध्वोब्हु मध्य देश भागे विनीता नाम नगरी तस्यामुत्पन्नः सर्व राज लक्षण सम्पन्नो भरतो नामाद्यश्चक्रधरः षट् खंडाधिपतिः। अवसपिण्या राज्यविभाग काले तेनार्दो भुक्तत्वाद तद्योगाद् ''भरत'' इत्याख्यायते वर्षः।

हिन्दुओं के प्रसिद्ध मार्कंडेय पुराण में महर्षि व्यास ने इसका समर्थन करते 53वें अध्याय में कहा-

ऋषभाद् भरतो जज्ञे, वीरः पुत्रंशताद्वर।
सोऽभिषिच्यर्षभः पुत्रं, महाप्राव्राज्य मास्थितः ।।41।।
तपस्तेपे महाभागः पुलहा श्रम संश्रयः।
हिमाहवं दक्षिणं वर्षं, भरताय पिता ददो ।।42।।
तस्मात्तु भारतवर्षं, तस्य नाम्ना महात्मनः ।।43।।

ऋषभ से उत्पन्न हुए भरत, सौ पुत्रों में सर्वश्रेष्ठ (ज्येष्ठ) थे, इनका राज्याभिषेक करके ऋषभ महानुभाव दीक्षा लेकर पुलहाश्रम गये। जंबूद्वीप के हिम नामक दक्षिण क्षेत्र को पिता ने भरत को दिया, इसी से इन महात्मा के नाम से यह क्षेत्र भारतवर्ष कहलाया।

इसके अतिरिक्त जंबूद्वीप प्रज्ञप्ति सूत्र में भरत क्षेत्र के नामकरण के अन्य भी कईं कारण बताये है, एक तो इस क्षेत्र का अधिष्ठाता भरत नामक देव है, दूसरा यह नाम शाश्वत् है। प्रत्येक उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल के पहले चक्रवर्त्ती का नाम भरत ही होता है इन कारणों से यह क्षेत्र भरत क्षेत्र के नाम से प्रसिद्ध है।

कुछ लोग कहते हैं, दुष्यंत पुत्र भरत के नाम पर इसका नाम भरत हुआ, परन्तु इस भरत का व्यक्तित्व इतना महान् (विशेष) नहीं था। इस नाम से हुआ हो यह बराबर जांचता नहीं है, इसके अलावा इससे पहले क्या नाम था? इतिहासकार ने भी नहीं बताया, इसलिए विचारवान इतिहासज्ञों को यह मत स्वीकार नहीं है।

वैज्ञानिकों के मतानुसार आधुनिक विश्वः

1. भूमंडल :- जिस पृथ्वी पर हम निवास करते है वह पृथ्वी मिट्टी पत्थर की तथा नारंगी जैसी चपटी गोलाकार है। इसका व्यास लगभग 8 हजार माइल ($\frac{7926.3}{7899.6}$-26.7) और परिधि लगभ 25 हजार माइल ($\frac{24902}{24860}$-42) है।

वैज्ञानिकों के मतानुसार आज से करोड़ों वर्ष पूर्व किसी समय यह एक जाज्वल्यमान अग्नि का गोला था। यह अग्नि धीरे धीरे ठंडी होती गई, अब जबकि पृथ्वी का भूमिभाग सभी जगह ठंडा हो गया है, फिर भी इसके अन्दर में अग्नि अभी भी तीव्रता से सुलग रही है, इसी कारण से पृथ्वी का भूतल भी कुछ उष्णता वाला है। नीचे की तरफ खोदने से उत्तरोत्तर ज्यादा गर्मी मिलती है। कभी कभी अन्दर की गर्मी और ज्वाला तीव्र बनकर भूकंप पैदा करती है और कभी कभी ज्वालामुखी फूट जाता है। इससे पर्वत, जमीन, नदी समुद्र आदि के पानी में, स्थल में फेरफार होता है। इस अग्नि की गर्मी से पृथ्वी के द्रव्य यथायोग्य दबाव और शीतलता प्राप्त कर अलग अलग प्रकार की धातुओं और उपधातुओं और द्रवित पदार्थ (बहने वाला) रूप परिवर्तन हो जाते है। कोयला, लोहा, सोना, चांदी तथा पानी और वायुमंडल पृथ्वी के भूतल से उत्तरोत्तर सुधरता हुआ लगभग 400 माइल तक फैला है। पृथ्वी का भूतल सभी जगह समतल (सरीखा) नहीं है। हिमालय के गौरीशंकर (माउन्ट एवरेस्ट) को पृथ्वी तल का सबसे ऊंचा भाग माना है। समुद्र तल (सतह) से माउंट एवरेस्ट 29 हजार फुट यानि लगभग साढ़े पांच माइल ऊंचा है। समुद्र की सर्वाधिक गहराई 35400 फुट यानि लगभग 6 माइल तक मापी गई है। इस प्रकार पृथ्वी तल की ऊंचाई और गहराई में साढ़े ग्यारह माइल का अंतर है।

पृथ्वी के ठंडी होने पर उस पर 70 माइल का पड़ (प्रतर) जमा माना है। यह प्रतर जमते हुए लगभग 3½ करोड़ वर्ष हुए हैं। इस प्रकार पृथ्वी की द्रव्य रचना से एवं उसके अध्ययन से यह अनुमान लगाया जा सकता है।

सजीव तत्व के चिन्ह मात्र 34 माइल तक के ऊपर के प्रतर (पड़) में मिलते हैं। पृथ्वी पर जीव तत्व उत्पन्न हुए दो करोड़ वर्ष से ज्यादा समय हो गया हो, ऐसा नहीं लगता। इस प्रकार इस प्रतर के आधार से यह अनुमान हो सकता है। इसमें भी मनुष्य का विकास मात्र एक करोड़ वर्ष में ही हुआ होगा, ऐसा ज्ञात होता है।

पृथ्वी तल ठंडा होने पर उस पर जीवन का विकास जीव शास्त्र के अनुसार इस प्रकार क्रमिक हुआ है- सबसे प्रथम स्थिर जल पर जीवकोश उत्पन्न हुए और ये जीव कोश पत्थर आदि जड़ पदार्थों से मुख्यतया तीन प्रकार से अलग पहचाने जाते थे, एक तो वे आहार लेते और आगे जाते, दूसरे कहीं भी चले जा सकते थे, तीसरा वे स्वयं के जैसे अन्य जीव कोश भी उत्पन्न कर सकते थे। काल क्रम से कितनेक कोश भूमि में मूल रूप से जमकर स्थावरकाय-वनस्पतिकाय बन गये और कितनेक जीव कोश पानी में विकास होते होते माछले बन गये। परन्तु स्थल पर भी श्वास ले सके ऐसी वनस्पति और मेंढ़क आदि प्राणी अनुक्रम से धीरे-धीरे उत्पन्न हुए। इन्ही स्थानों पर प्राणियों में से पेट की ताकत से रेंगकर चलने वाले कछुए, सर्प आदि प्राणी उत्पन्न हुए। इनका विकास दो प्रकार से हुआ। एक पक्षी रूप और दूसरा स्तन वाले प्राणी रूप। स्तन वाले प्राणी अंडे से उत्पन्न न होकर गर्भ से उत्पन्न होते है और पक्षी अंडे से उत्पन्न होते हैं। मगरमच्छ से लेकर भेड़, बकरी, गाय, भेंस, घोड़ा आदि स्तनधारी जाति के प्राणी है। इन स्तन वाले प्राणियों में एक बंदर जाति उत्पन्न हुई। किसी समय बंदर ने अपने दोनों आगे के पैर उठाकर और पीछे के दोनों पावों पर हलना-चलना सीख लिया। बस यहीं से मनुष्य जाति के विकास की शुरूआत मानी जाती है। ऊपर के जीव कोश में से शुरू करके मनुष्य के विकास तक की प्रत्येक नईं धारा उत्पन्न होने में लाखों करोड़ों वर्षों का अंतर माना जाता है।

इस विकास क्रम में समय-समय पर परिस्थिति के अनुरूप अलग अलग तरह-तरह के जीवों की जातियां उत्पन्न हुईं, इनमें से अनेक जातियां समय के परिवर्तन, क्रांति और स्वयं की अयोग्यता के कारण नाश भी हुई। इनके अवशेषों के मिलते रहने से (भूगर्भ में) हमें पता चलता है।

पृथ्वी पर जमीन से पानी तीन गुणा विस्तार में है (जमीन 29 प्रतिशत, पानी 71 प्रतिशत) पानी के विभाग प्रमाण से एशिया, यूरोप और अफ्रीका मिलकर एक, उत्तर दक्षिण अमेरिका एक, आस्ट्रेलिया, उत्तर ध्रुव, दक्षिण ध्रुव ये पृथ्वी के पांच खंड हैं। इनके अतिरिक्त छोटे बड़े टापू और भी कईं हैं। बहुत वर्ष पहले ये सभी मुख्य पृथ्वी के भाग परस्पर जुड़े हुए थे, ऐसा भी अनुमान कर सकते हैं। युरोप अफ्रीका की पश्चिम तरफ की समुद्र रेखा उत्तर दक्षिण अमेरिका की पूर्व तरफ के समुद्र की रेखा बराबर मिल जाती हो ऐसा लगता है, तथा हिंद महासागर के द्वीप समूहों की सांकल (श्रंखला) एशिया खंड को आस्ट्रेलिया साथ जोड़ती दिखती है। अब नहरें खोदकर अफ्रीका को एशिया यूरोप के भूमि खंड से तथा उत्तर अमेरिका को दक्षिण अमेरिका भूमिखंड से अलग कर दिया है। इन भूमिखंडों का आकार, प्रकार, प्रमाण और स्थिति बहुत विषम है।

भारतवर्ष एशिया खंड का दक्षिण-पूर्व (अग्निकोण) भाग है। यह त्रिकोणाकार है। दक्षिण तरफ का कोना लंका द्वीप को अधिकांशतः स्पर्श करता है। भारत वर्ष की सीमा उत्तर तरफ पूर्व पश्चिम दिशाओं में फैलती गई है, और हिमाचल पर्वत की श्रेणियों में ऊपर जाकर पूरी हो जाती है। भारत का पूर्व पश्चिम और उत्तर दक्षिण विस्तार लगभग 2-2 हजार माइल का है। इसकी उत्तर सीमा पर हिमालय पर्वत है, मध्य में विंध्य और सातपुड़ा (सतपुड़ा) पर्वतमाला है तथा दक्षिण में पूर्व और पश्चिम किनारों पर (समुद्र) पूर्व घाट और पश्चिम घाट है।

भारतवर्ष की मुख्य नदियों में हिमालय के अधिकांशतः मध्य भाग से निकलकर पूर्व तरफ के समुद्र में मिलती ब्रह्मपुत्र और गंगा है। इसकी सहायक नदियों में यमुना, चम्बल, बेतवा और सोन आदि है। हिमालय से निकलकर पश्चिम के समुद्र में मिलती सिंधु और इसकी सहायक नदियां झेलम, चिनाब, रावी, व्यास और सतलज है। गंगा और सिंधु की लम्बाई लगभग 1500 माइल की है। देश के मध्य में विंध्य और सतपुड़ा के मध्य पूर्व से पश्चिम तरफ समुद्र तक बहती हुई नर्मदा नदी है। सतपुड़ा के दक्षिण में तापी नदी बहती है। दक्षिण भारत की गोदावरी, कृष्णा, कावेरी आदि नदियां पश्चिम से पूर्व की तरफ बहती है।

देश के उत्तर में सिंधु से गंगा तक आर्य जाति के तथा सतपुड़ा से दूर दक्षिण में द्रविड़ जाति के और पहाड़ी प्रदेशों में गोंड, भील, कोल, किरात आदि आदिवासी जाति के लोग रहते हैं।

वर्त्तमान में दिखाई देने वाले 8 हजार माइल विस्तार के और पच्चीस हजार माइल की परिधि वाले भूमंडल के चारों और अनंत आकाश है। इसमें दिन में सूर्य और रात्रि में चन्द्र और तारागण दिखते हैं। उनसे प्रकाश मिलता है। इनमें पृथ्वी के सबसे नजदीक चन्द्र है और यह भूमंडल से अढ़ाई लाख माइल दूर है। यह पृथ्वी जैसा और पृथ्वी से बहुत छोटा एक भूमंडल है और इसी के (पृथ्वी) चारों तरफ घूमता रहता है, इसी से यहां सुद पक्ष (शुक्ल) और बुद पक्ष (कृष्ण) होते हैं। चन्द्र में स्वयं का प्रकाश नहीं है, परन्तु वह सूर्य प्रकाश से प्रकाशित होता है। इससे स्वयं के परिभ्रमण के प्रमाण से घटता बढ़ता दिखता है। चन्द्र एकदम ठंडा हो गया है। इसमें पृथ्वी के भूगर्भ जैसी गरमी नहीं है, ऐसा आविष्कार में देखा गया है। इसके आसपास वायुमंडल भी नहीं है, इसकी जमीन पर पानी भी नहीं है। इसी कारण वहां श्वासोच्छवास वाले प्राणी और वनस्पति नहीं मिलते। वहां पर्वतों और गुफाओं के अतिरिक्त कुछ नहीं है। चन्द्र पृथ्वी का ही एक भाग है, और टूटकर अलग हुए 5-6 करोड़ वर्ष हो गये हैं, ऐसा अनुमान कर सकते हैं।

2. चन्द्र का क्षेत्रफल :- आज के वैज्ञानिकों ने चन्द्र के लिए जो प्रमाण प्राप्त किये हैं इनमें से कुछ इस प्रकार है-चन्द्र का व्यास 2160 माइल अथवा 3546 किलो मीटर (पृथ्वी का चौथा भाग) चन्द्र की परिधि-10864 किलोमीटर चन्द्र का पृथ्वी से अंतर 381171 किलोमीटर

चंद्र का तापमान - 117 सेंटीमीटर, जब सूर्य सिर पर हो तब मालूम होता है ऐसा।

चन्द्र के रास्ता में तापमान-137 सेंटीमीटर

चन्द्र के धरातल पर गुरूत्वाकर्षण - पृथ्वी का छठा अंश।

पृथ्वी पर जिस वस्तु का वजन 27 किलो हो उसका चन्द्र पर 4-5 किलो होता है। चन्द्र का विस्तार या बिंब पृथ्वी का 100वां अंश है, इसकी लम्बाई पृथ्वी की लम्बाई से पांचवें भाग की है।

चन्द्र की परिभ्रमण कक्षा की गति प्रति घंटा 3669 किलोमीटर है। चन्द्र को पृथ्वी की परिक्रमा करने में 27 दिन, 7 घंटे 33 मिनट लगते हैं, क्योंकि यह लगभग इसी गति से स्वयं की धुरी पर भ्रमण करता है।

चन्द्र के बाद अनुकम से शुक्र, बुध, मंगल, गुरू और शनि आदि ग्रह है, ये सभी पृथ्वी की तरह ही भूमंडल वाले है और सूर्य की परिक्रमा करते हैं। सूर्य के प्रकाश से ही प्रकाशित होते हैं। इन ग्रहों में से किसी में भी अपनी पृथ्वी की तरह जीवों की संभावना नहीं दिखती। क्योंकि वहां कि परिस्थिति जीवन के साधनों से पूर्णतया विपरीत है।

इन ग्रहों के बाद पृथ्वी से लगभग 9½ करोड़ माइल दूर सूर्य मंडल है। यह पृथ्वी से 15 लाख गुणा बड़ा है, यानि पृथ्वी जैसे लगभग 15 लाख भूमंडल इसमें समा जाते हैं। सूर्य का व्यास 860000 माइल है। यह महाकाय सूर्यमंडल अग्नि से प्रज्वलित है इसकी ज्वाला लाखों माइल तक दिखती है। सूर्य की ज्वाला से करोड़ों माइल विस्तार के सौर-मंडल में प्रकाश और गरमी फैलती है। सूर्य की भूमि पर 10000 फेरन हाइट गरमी है। जेम्स जीन्स नामक वैज्ञानिक का मत है कि इसी सूर्य मंडल से अलग हुए पृथ्वी, बुध, गुरू, आदि ग्रह एवं उपग्रह बने है और ये सभी अभी तक इसके आकर्षण में होकर इसके चारों ओर फिरते (भ्रमण) है। हमारा भूमंडल सूर्य की परिक्रमा 365¼ दिन में तथा प्रत्येक चौथे वर्ष 366 दिन में पूरी करता है। इसी आधार से हमारा वर्षमान चल रहा है। इसकी परिक्रमा में पृथ्वी हमेशा अपनी धुरी पर प्रति घंटा 60 माइल की रफ्तार से घूमती है और इसी से हमारे यहां दिन-रात होते हैं। पृथ्वी का जो गोलार्द्ध सूर्य के सामने आता है वहां दिन और बाकी के गोलार्द्ध में रात होती है। यह पृथ्वी और उपरोक्त उपग्रह पुनः सूर्य की तरफ खिंच रहे है।

ऊपर जिस महाकाय सूर्य मंडल का वर्णन किया है, इसकी बराबर का कोई भी दूसरा ज्योतिर्मंडल आकाश में नहीं दिखता, परन्तु बहुत छोटे छोटे दिखते तारों में सूर्य जैसा कोई महान् नहीं ऐसा नहीं समझना, वास्तव में जो छोटे छोटे तारे हमें दिखाई देते हैं, इनमें सूर्य से छोटे और सूर्य की बराबर के तारा तो बहुत कम है, परन्तु बहुत से तारा तो सूर्य से भी अति विशाल है, सूर्य से भी सेंकड़ों, हजारों, लाखों गुणा बड़े है। परन्तु सूर्य की अपेक्षा बहुत दूर होने से ये छोटे दिखते है। ज्येष्ठा नक्षत्र इतना विशाल है कि इसमें 70000000000000 पृथ्वियां समा सकती है।

3. प्रकाशवर्ष :- ताराओं के अन्तर को समझने के लिए हमारे संख्यावाचक शब्द उपयोगी नहीं हो पाते, इनकी गिनती के लिए वैज्ञानिकों की दूसरी रीति है। प्रकाश की गति प्रति सैकंड एक लाख छियासी हजार (186000) माइल तथा प्रत्येक मिनट 1,11,60,000 माइल मापी गई है। इस प्रमाण से सूर्य का प्रकाश हमारी पृथ्वी पर पहुंचने में 8½ मिनट लगते हैं। तारा हमसे इतने दूर हैं कि इनका प्रकाश हमारे पास अमुक वर्षों के बाद आ सकता है। जितने वर्षों में प्रकाश आता है, इतने ही प्रकाश वर्ष वे हमसे दूर है। सेंचुरी नामक तारा हमारे अत्यंत नजदीक है जो हमसे 4½ प्रकाश वर्ष दूर है, क्योंकि इसका प्रकाश हमारे पास आते 4½ वर्ष लगते हैं। इसी प्रकार 10, 20, 50 और सैंकड़ों प्रकाश वर्ष ही नहीं परन्तु 10 लाख प्रकाश वर्ष दूर हों ऐसे तारागण भी है और ऐसे तारा हमारी पृथ्वी तो क्या हमारे सूर्य से भी लाखों गुणा बड़े हैं।

ताराओं की संख्या अपार है, हमारी दृष्टि से तो अधिक से अधिक छठे भाग तक लगभग 6-7 हजार तारा ही दिखते हैं, परन्तु दूरबीन की जितनी शक्ति बढ़ती जाती है, इतने अधिक तारा दिखते हैं। अभी तक 20वें भाग तक के तारा देखे जा सके ऐसी मशीनें बनी है, इनसे दो अरब से भी अधिक तारा देख सके हैं।

4. वैज्ञानिकों की मान्यतानुसार ताराओं की संख्या :- अभी तक वैज्ञानिकों ने प्रकाश की न्यूनाधिकता के आधार को कुछ विभाग में विभक्त किया है। प्रथम, द्वितीय, तृतीय वर्ग (विभाग) के तारा ज्यादा चमकते हैं, परन्तु ये कम संख्या में है। आठवें वर्ग तक के तारा आंखों से देख या गिन नहीं सकते, परन्तु इनसे आगे के वर्गों के तारा दूरबीन की मदद से देख-गिन सके हैं। वैज्ञानिकों ने 20 वर्गों में विभक्त किये तारों की संख्या इस प्रमाण से है-

वर्ग	संख्या	वर्ग	संख्या
1.	19	11.	87000
2.	65	12.	2270000
3.	200	13.	5700000
4.	530	14.	13800000
5.	1620	15.	32000000
6.	4850	16.	71000000
7.	14300	17.	150000000
8.	41000	18.	296000000
9.	117000	19.	560000000
10.	324000	20.	1000000000

जेम्स जीन्स नामक वैज्ञानिक ज्योतिषी की यह मान्यता है कि हमारी पृथ्वी के सभी समुद्र के किनारे की रेती के कण जितने तारा हो तो आश्चर्य नहीं है। सूर्य से अत्यंत नज़दीक का तारा 4½ प्रकाश वर्ष यानि अरबों माइल दूर है। इस प्रकार इस प्रमाण से एक से दूसरा तारा कितने दूर है इसका अनुमान इससे किया जा सकता है। ये सभी तारा अत्यंत तीव्रता से गति करते हैं इनका प्रवाह (मंडल) है अलग अलग दिशाओं में मिल सकते हैं।

5. निहारिका :- बिखरी हुई भाप जैसे (धुंआ) अनेक ताराओं के समूह मिलते हैं। इनको निहारिका कहते हैं। हमारी आंखों से दूरबीन की सहायता के बिना एकाद निहारिका दिखाई दे सकती है और दिखने में तारों जैसी ही होती है। दूरबीन से देखेने में कितनी ही निहारिकाएं गोल होती है, कोई शंख के चक्कर जैसी होती है। हमारे विश्व या आकाश गंगा के तारों के झूमके जैसी गोल निहारिकाएं हैं। चक्कर जैसी निहारिकाएं है वे विश्व से छोटी है परन्तु करोड़ों ताराओं के झूमखों का बना छोटा विश्व है। हालांकि खोज करने से विशेष विवरण के साथ सबसे कम निहारिकाएं है। परन्तु दूरबीन से लगभग 20 लाख चक्कर वाली निहारिकाएं देखी गई हैं। आकाश गंगा भी इसी श्रेणि का एक द्वीप (विश्व) है। बृहस्पति (गुरु) की तरह हमारी पृथ्वी विशाल नहीं या शुक्र की तरह छोटा ग्रह भी नहीं। सूर्य भी मध्यम आकार का एक ग्रह है। परन्तु आकाश गंगा स्वयं की श्रेणि का द्वीप विश्वों से बहुत बड़ा है। आकाश गंगा भी एक मध्यम आकार की निहारिका जैसा है। इसका प्रमाण एक अरब सूर्यों से भी अधिक है। सूर्य हमारी पृथ्वी से तीन लाख तेरह हजार गुणा बड़ा है।

6. आकाश गंगा :- रात्रि में आकाश में एक सफेद (रेती या गंगा जैसी) मार्ग जैसी सफेद चौड़ी धारा नैऋत्य से ईशान तरफ लम्बी धारा दिखाई देती है। इसे आकाश गंगा कहते हैं। आकाश गंगा ताराओं का एक समूह है। इसमें सूर्य जैसे लगभग दो खरब तारा होते हैं। इनका आकार अंडे जैसी जेब घड़ी या दो जुड़े हुए तवे जैसी बीच में जाड़ी और धार (किनारे) पर पतली है। इसका व्यास तीन लाख प्रकाश वर्ष और जाड़ाई दस हजार प्रकाश वर्ष है।

7. ग्रह :- ज्योतिर्मंडल में ग्रहों का महत्वपूर्ण स्थान है। इनका परिचय कुछ इस प्रकार-

क्रम	ग्रह का नाम	सूर्य से लगभग (माइलों में) अन्तर	लगभग व्यास (माइलों में)	परिक्रमा का समय (वर्षों में)	उपग्रहों की संख्या
1	बुध	36000000	3030	0.22	0
2	शुक्र	67200000	7700	0.62	0
3	पृथ्वी	92900000	7918	1.00	1
4	मंगल	141500000	4230	1.88	2
5	गुरू	483200000	86500	11.86	9
6	शनि	885900000	73000	29.46	9
7	अरूण	1782200000	31900	84.02	4
8	वरूण	2791600000	34800	164.78	1
9	कुबेर	3700000000	3605	250.00	अनिश्चित

सूर्य तथा इसके ग्रह कुटुम्ब मिलकर सौर्य मंडल बनता है।

जिसे हम ब्रह्माण्ड कहते हैं, इसमें कई सूर्य मंडल है, ऐसे सौर्य मंडलों की संख्या लगभग 10 करोड़ है, ऐसा अनुमान किया जाता है। हमारा सौर्य मंडल ऐरावत पथ (मिल्की वे) नामक ब्रह्मांड में रहता है। ऐरावत पथ के चंद्र रूपी मार्ग के लगभग 2/3 भाग पर एक पीला बिन्दु है। यही बिन्दु हमारा सूर्य है, और यह अपने ग्रहों को साथ लेकर ऐरावत पथ पर बराबर भ्रमण करता है। पूर्व ऐरावत पथ में लगभग 500 करोड़ तारा रहे हैं, इनमें से कईं तो हम देख भी नहीं सकते, क्योंकि वे हमारे सामने से दिन में निकल जाते हैं, इसलिए सूर्य प्रकाश में इनका प्रकाश हमें दिखता नहीं। ताराओं के अतिरिक्त ऐरावत पथ में धुम्मस (धुंअर) गेस और धूल (मिट्टी कण) भी बहुत प्रमाण में है। रात्रि में बहुत ताराओं का प्रकाश साथ में मिलने से यह गेस और धूल आदि को प्रकाशित करता है।

इस प्रकार संपूर्ण विश्व या लोक का प्रमाण असंख्य है और आकाश का तो कहीं अन्त दिखता ही नहीं है। ताराओं के आकाश में जिस प्रकार विभाग बने हैं, तथा आकाश गंगा में ताराओं के पुंज दिखते हैं, इन पर से अनुमान होता है कि तारामंडल सहित पूरे लोक का आकार लेंस जैसा होता है यानि ऊपर नीचे उभरा हुआ (फूला हुआ) और बीच (मध्य) में फैलाया हुआ गोल है। इसकी परिधि पर आकाश गंगा दिखाई देती है और उभरे हुए भाग के मध्य में सूर्य मंडल है।

अष्ट मंगल

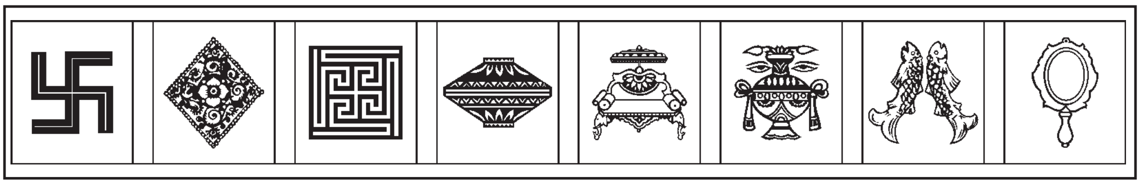

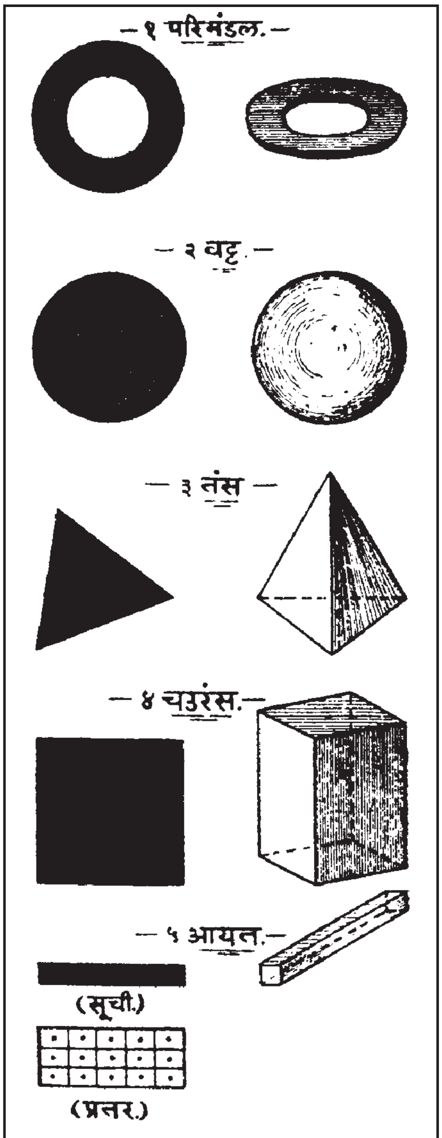
— १ परिमंडल —
— २ वट्ट —
— ३ तंस —
— ४ चउरंस —
— ५ आयत —
(सूची)
(प्रतर)

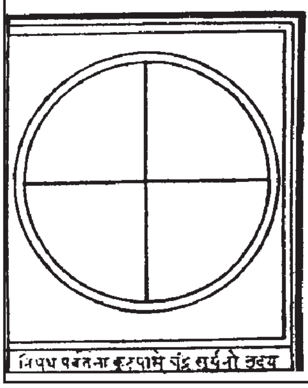

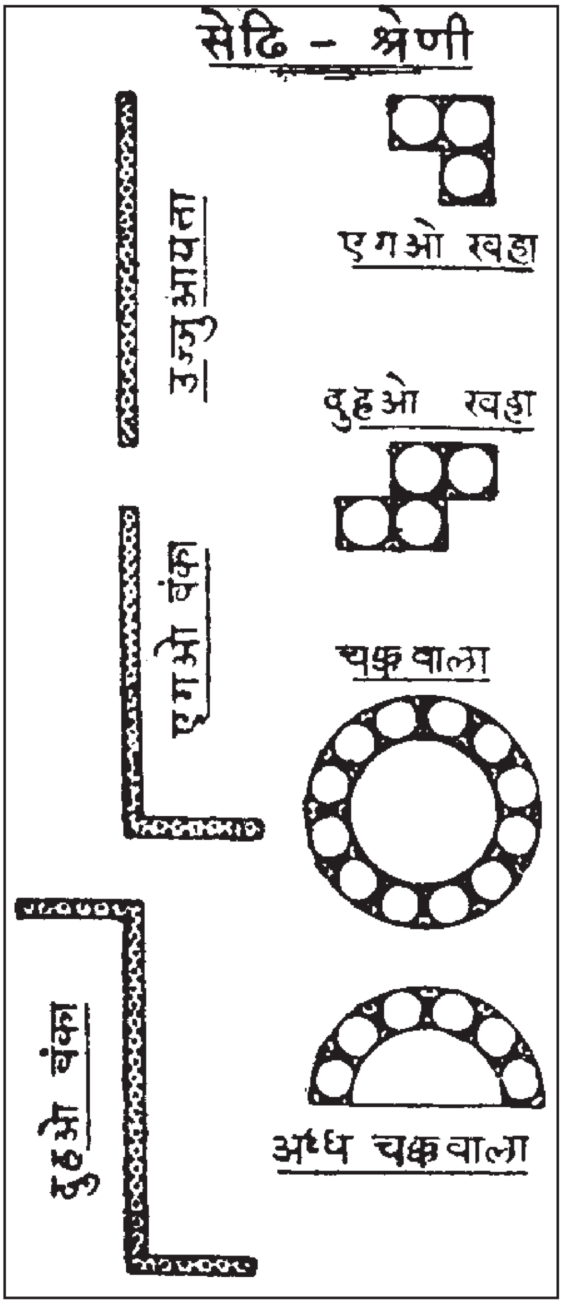
सेढि - श्रेणी
उज्जुआयता
एगओ खहा
दुहओ खहा
एगओ वंका
चक्कवाला
दुहओ वंका
अर्ध चक्कवाला

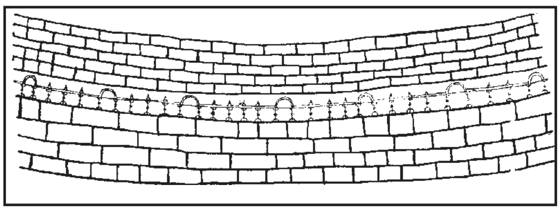

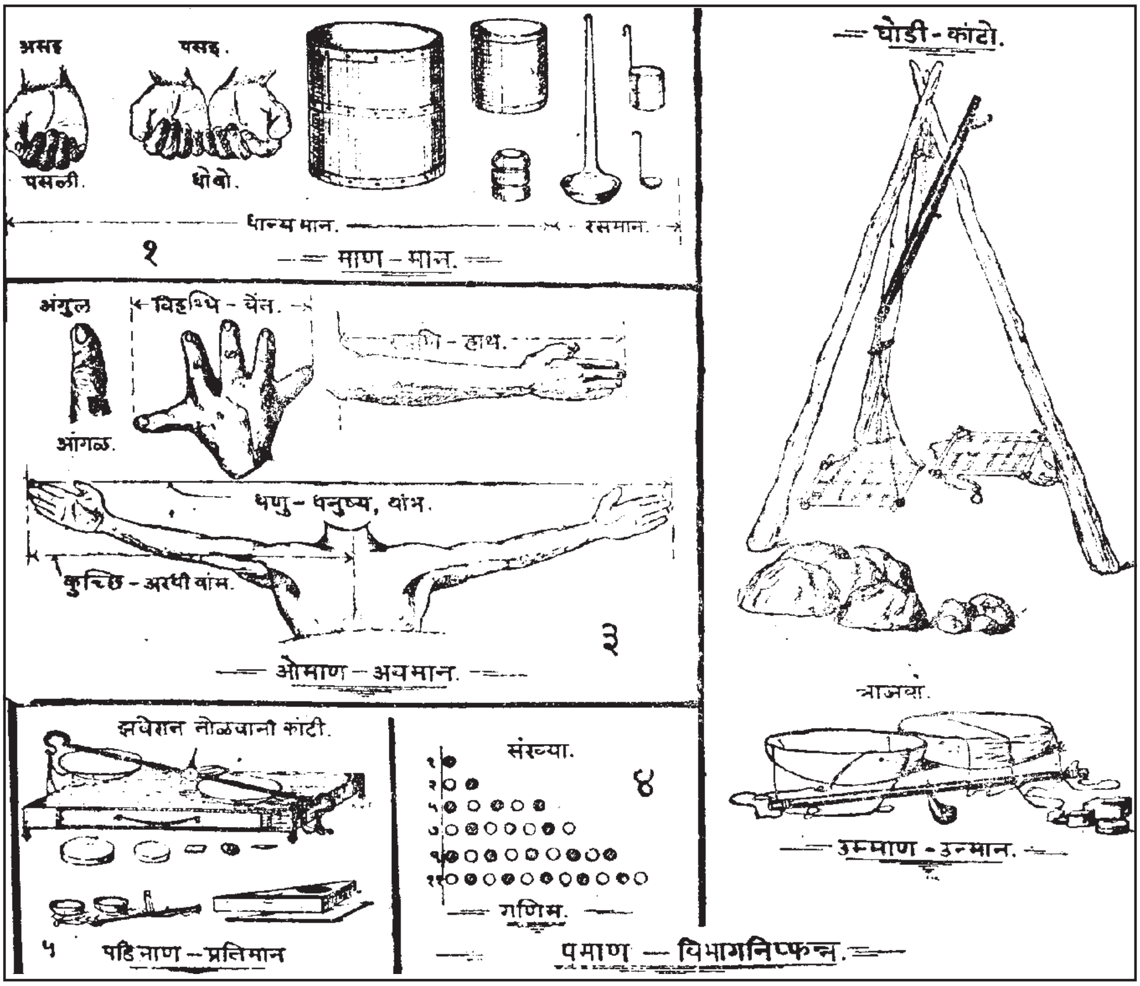
असइ
पसइ
पसली.
धोबो.
धान्य मान.
रसमान.
१
माण - मान.
अंगुल
विहत्थि - वेंत.
हाथ.
आंगळ.
धणु - धनुष्य, वांभ.
कुच्छि - अरधी वांम.
३
ओमाण - अवमान.
घोडी - कांटो.
त्राजवो.
उम्माण - उन्मान.
संख्या.
४
गणिम.
५
पडिमाण - प्रतिमान
पमाण — विभागनिप्फन्न.

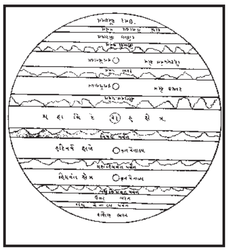

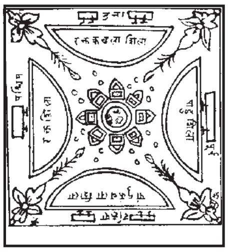

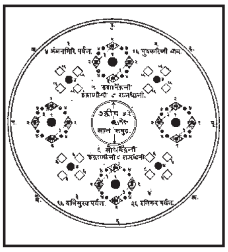

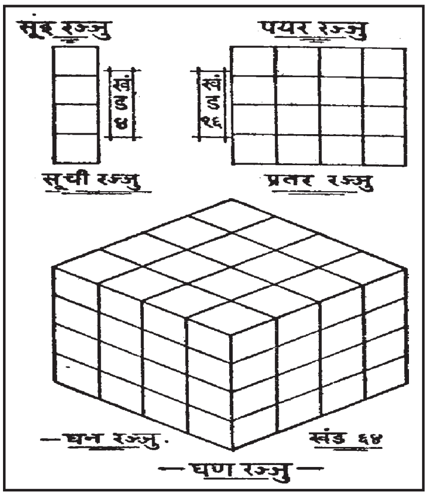
सूइ रज्जु
पयर रज्जु
खंड ४
खंड १६
सूची रज्जु
प्रतर रज्जु
घन रज्जु
खंड ६४
घण रज्जु

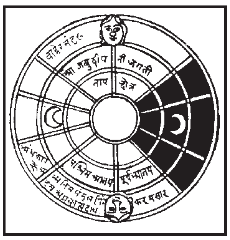

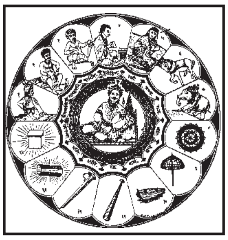

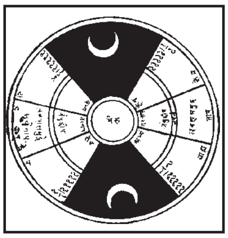

लेखक
वरिष्ठ स्वाध्यायी तत्त्व चिंतक
श्री विमल कुमार नवलखा

परिचय

प्रस्तुत 'जैन आगमों में मध्यलोक' ग्रंथ के रचनाकर तत्त्वचिन्तक आगमों के अध्येता श्री विमल कुमारजी नवलखा का जन्म वि.सं. २०११ के कार्तिक सुदी ५ ज्ञान पंचमी दि. १-११-१९५४ को भीलवाड़ा जिलान्तर्गत आसीन्द तहसील के जगपुरा ग्राम में हुआ।

पुण्योदय से आप आचार्य श्री गणेशीलालजी म.सा. एवं मेवाड़ संघ शिरोमणि पू. प्रवर्तक श्रद्धेय श्री अम्बालालजी म.सा. एवं अनुयोग प्रवर्त्तक उपाध्याय श्री कन्हैयालालजी म. सा. 'कमल' के सम्पर्क में आये। गुरुदेवों के शुभाशीर्वाद से अपनी प्रामाणिकता के बल पर व्यावसायिक क्षेत्र में प्रतिष्ठित होकर परिवार व समाज की सेवा में अग्रसर बनें। आपकी धार्मिक-भावना एवं श्रुत-सेवा की रूचि प्रबल से प्रबलत्तर होती गई।

सन् १९७५ में आप श्री स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा के सक्रिय एवं कर्मठ सदस्य बनें तथा पूरे भारतवर्ष में प्रत्येक राज्य के प्रमुख नगरों में पधारकर पर्युषण पर्वाराधनार्थ सेवाएं प्रदान की। जैन-समाज के लिए अति उपयोगी जैनागमों के हिन्दी सारांश तथा जैन तत्त्व दर्शन के दो खण्ड (भगवती, प्रज्ञापना एवं विविध सुत्तागमों के थोकड़े) तथा अन्तर्मन के मोती (पर्युषण प्रवचनोपयोगी) जैन-धर्म-दर्शन के लिए अप्रतिम देन है। आपकी इस श्रुत-सेवा से सम्पूर्ण जैन समाज गौरवान्वित हुआ है।

श्री विमल कुमारजी नवलखा के पुज्यनीय पिताजी श्रीमान् फतेहलालजी सा. नवलखा एवं मातृश्री श्रीमती उगमदेवीजी नवलखा भी अत्यन्त धर्म परायण, महान् व्यक्तित्व के धनी है। धर्मपत्नि श्रीमती सुशीलादेवीजी नवलखा की सेवा तो अतुल्य है। इन्होंने दो-दो मासखण की तपस्याएं भी की हैं। आज भी पीपोदरा में जैन संतमुनिराजों एवं महासतियांजी की सेवा में (शेखे काल में पधारने वाले सभी सम्प्रदायों के) अनवरत लगे रहते हैं। समाज की सेवा तो इस परिवार का प्रमुख गुण है। श्री विमलजी नवलखा कई वर्षो से दक्षिण गुजरात राजस्थान स्थानकवासी जैन महासंघ के मंत्री के रूप में समाज सेवा में अग्रसर हैं।

इनके पाँच पुत्र रत्न हैं। श्री विनय कुमार, तरूण कुमार, चेतन प्रकाश, विकास एवं लोकेश ये पाँचों ही सुपुत्र अत्यन्त धर्मानुरागी, निर्व्यसनी, सदाचारी और समस्त सद्गुणों से युक्त चरित्रनिष्ठ सुश्रावक युवा रत्न हैं। साधुसंतों की सेवा, समाज की सेवा तो मानों विरासत से मिले सद्गुण हैं। श्री विनय कुमार की धर्मपत्नि श्रीमती सोनु यथानाम तथा गुण है। समाज सेवा में हमेशा अग्रसर रहता यह सम्पूर्ण परिवार वास्तव में समाज के लिए एक उदाहरण है, दृष्टान्त है। श्री विमलजी के दो पोतियाँ है कृति और दीक्षा अत्यन्त स्वरूपवान और दादा-दादी की प्रिय पात्र हैं।

आपकी दो बहिनें श्रद्धेया शीलप्रभाजी म.सा. एवं श्रद्धेया सत्यप्रभाजी म.सा. आचार्य श्री विजयराजजी म.सा. के सानिध्य में संयम-साधना में निरंतर अग्रसर है।

जिन शासन की सेवा में अग्रसर इस परिवार की पारिवारिक और सामाजिक समृद्धि हमेशा बनी रहे।

इसी आशा के साथ...

Printed By : Swadeshi Offset, Udr. Ph. : 0294-2417204, Mo. : 9784845675